"युद्ध विषयक आधुनिक युगीन हिन्दी काव्य रचनाओं का अनुशीलन"

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की पी-एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध
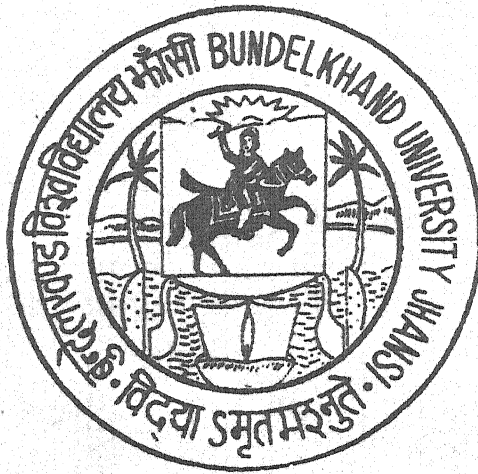
शोध निर्देशक
डॉ. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित *'ललित'*
डी.लिट्.
उपाचार्य, हिन्दी विभाग
पं. जवाहर लाल नेहरू महाविद्यालय,
बाँदा (उ.प्र.)

शोधकर्त्री
कु. अर्चना मिश्रा
एम.ए. (हिन्दी)

माँ सरस्वते ! शारदे साहित्य का श्रृंगार दे।
सौरभ सेवा साहित्य हो, अरु साधना संचार दे।।

प्रमाण-पत्र

मैं प्रमाणित करता हूँ कि कु. अर्चना मिश्रा ने बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय में पी-एच.डी. उपाधि हेतु ''युद्ध विषयक आधुनिक युगीन हिन्दी काव्य रचनाओं का अनुशीलन'' नामक शोध-प्रबन्ध मेरे निर्देशन में शोध अध्यादेश 7 के अनुसार निर्धारित उपस्थिति देकर पूर्ण किया है।

इन्हें विश्वविद्यालय के पत्रांक बु. वि. वि./ शोध/99/16282-84 दिनाँक 19-2-99 के द्वारा विषय की स्वीकृति प्रदान की गई थी।

कु. अर्चना मिश्रा का यह शोध-प्रबन्ध मौलिक एवं साहित्यिक-अभिव्यक्तिगत-सौष्ठव से युक्त है।

अतएव मैं इसे मूल्यांकनार्थ बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी में प्रस्तुति हेतु संस्तुति करता हूँ।

डॉ. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित 'ललित',
डी.लिट्.
उपाचार्य, हिन्दी विभाग
पं. जवाहर लाल नेहरू महाविद्यालय
बाँदा, (उ.प्र.)

प्राक्कथन

अनादिकाल से देवासुर संग्राम की बात प्रसिद्ध ही है। युद्ध के पश्चात् युद्ध के परिणामों से भी मानव जाति भली–भाँति परिचित हैं, फिर भी युद्ध होते रहे हैं। बीसवीं सदी में विश्व युद्ध हुआ जिसकी विभीषिका को देखकर विश्व शान्ति की बातें होने लगीं, तरह–तरह की शान्ति समितियाँ बनीं किन्तु उनका अनुपालन कड़ाई के साथ नहीं हुआ। जिसकी परिणति द्वितीय विश्व युद्ध में के रूप में सामने आई जब हिरोशिमा और नागासाकी पर अणु बम गिराया गया जिसके वीभत्स परिणामों से बेखबर पीढ़ी ने जाना कि परमाणु युद्ध क्या होगा। दुनिया के भयावह भविष्य की तस्वीरें एक नहीं अनेक हैं तभी तो तीसरे विश्व युद्ध की भयावह आशंका में मानवता सांस ले रही है। सर्वत्र एक आपाधापी–सी मची है। प्रत्येक व्यक्ति एवं राष्ट्र अपने को विश्व समुदाय के बीच मशीन से भी त्वरित अपने को स्थापित करनेके लिए दत्तचित्त हैं। चुनौतियाँ प्रत्येक मोर्चे पर पग–पग पर परीक्षा ले रही है। ऐसे वातावरण में रहते हुए आज मानव – जीवन विषम तथा तनाव ग्रस्त है। रचनाकार आज मानव जीवन की स्थितियों–परिस्थितियों को सम्यक समझकर, उनकी मनोभावनाओं से परिचित होकर अपनी रचना कर रहा है। रचनाकार के लिए यह साधारण कार्य नहीं है, एक चुनौती है।

कविता हिन्दी साहित्य की सर्वाधिक भावपूर्ण, सरलतम एवं बुद्धि द्वारा नियन्त्रित विधा के रूप में समादृत है।यही कारण है कि युद्धमय वातावरण को रचनाकारों ने भावों के साथ बुद्धि द्वारा नियन्त्रित करके प्रस्तुत किया है। आधुनिक शब्द कविता में काल–विशेष एवं काल–शेष की सीमा को पार कर नई विचार पद्धति अथवा नए जीवन–दर्शन से सम्बद्ध हैं। इससे एक विशिष्ट प्रवृत्ति का भी बोध होता है जो परम्परा का विरोध नहीं करती, परन्तु उसे अपरिवर्तनीय भी नहीं मानती। इस अर्थ में आधुनिकता की प्रवृत्ति, परम्परा को नदी के प्रवाह रूप में लेती है। अतः यह सम–सामयिकता को अभिव्यक्ति देती हैं।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध आठ परिवर्त्तों में विभक्त है। प्रथम परिवर्त्त में युद्ध का स्वरूप दिखाने वाले भारतीय महाकाव्य एवं युद्ध के प्रमुख प्रसंगों को चयनित किया गया है तथा पौराणिक युद्ध काव्यों की प्रेरक स्थितियों के प्रभाव को आधुनिक कविता के माध्यम से व्यक्त किया है। द्वितीय विश्व युद्ध के विनाशकारी भीषण परिणामों ने युद्ध की प्रवृत्ति के उभरने का सन्दर्भ उपस्थित किया है। इस सन्दर्भ को हम भारत–पाक, भारत–चीन, बांग्लादेश एवं कारगिल युद्ध के माध्यम से देखते चले आ रहे हैं।

आधुनिक कवियों ने युद्ध के सन्दर्भों पर गम्भीरतापूर्वक चिन्तन किया है। चिन्तनशील कवियों ने दुनिया में व्याप्त अनेकानेक समस्याओं को पीछे छोड़ते हुए युद्ध जैसी विध्वंसक घटना का चित्रण युद्ध परक रचनाओं में किया है। युद्धमय वातावरण से जीवन के अकस्मात ही समाप्त हो जाने के खतरे से मनुष्य विक्षुब्ध एवं व्यग्र है, लाखों परमाणविक हथियार उसके सर पर लटक रहे हैं। सभ्यता के इतने लम्बे इतिहास ने कभी इतनी लम्बी कल्पना तक नहीं की थी। नाभिकीय हथियारों की दौड़ भयानक गति से बढ़ रही है। पिछले कुछ वर्षों से अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ न केवल बिगड़ी हैं, बल्कि उनसे लगातार युद्ध का खतरा बढ़ा है। यदि तीसरा युद्ध हुआ तो राजनीतिक शिविरों, विचारधाराओं, विश्लेषणों, दृष्टिकोणों और भविष्य की कल्पनाओं के सारे भेदों को समाप्त करता हुआ वह समान रूप से दोनों को खत्म कर देगा।

आधुनिक युग युद्ध की समस्या से ग्रस्त है, जहाँ युद्ध विराम दिखाई नहीं देता। मानव जाति के इतिहास में यह पहला मौका है जब मनुष्य के पास संहार की इतनी बड़ी शक्ति उपलब्ध है, जिसके उपयोग का मतलब सम्पूर्ण सृष्टि के संहार से है युद्धमय वातावरण में अन्तर्राष्ट्रीय तनाव की निरन्तरता अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में शामिल हो चुकी है। विश्व के सभी भागों में आज यह प्रश्न गम्भीर रुप से उठ रहा है कि क्या अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र के प्रभाव और उपयोगिता का ह्रास होता जा रहा है। आज विश्व संस्था के सदस्य राष्ट्रों में संयुक्त राष्ट्र संघ के अधिकार –पत्र और उसके द्वारा किए गए निर्णयों की उपेक्षा करने की प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ चुकी है। किसी भी देश में व्याप्त अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार, शोषण और असमानता, साम्प्रदायिकता तथा हिंसा आदि को दूर करने के लिए युद्ध होता है, जिसे हम गृह युद्ध कहते हैं। यह युद्ध किसी भी देश के अन्दर संकीर्णता की भावना को जन्म देता है। काव्य में हम मानव जीवन की अनुभूतियों एवं चित्तवृत्तियों के व्यक्त स्वरूप के दर्शन पाते हैं। मानव जीवन की इस अनुभूतियों पर अपने युग की सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है। युद्ध की समस्या से प्रभावित आलोच्य काव्यों में कुछ कृतियों में सशस्त्र युद्ध एवं कुछ कृतियों में भावात्मक युद्ध के दर्शन होते हैं।

युद्ध परक काव्यों में निराशा, आक्रोश, आस्था, अनास्था, कुण्ठा, विक्षोभ, अस्तित्व बोध, विद्रोह, क्रान्ति, संकल्प, विकल्प, संशय, स्थिरता आदि भावों को प्रमुख स्थान दिया गया है। प्रस्तुत मनोवैज्ञानिक भावों को कभी युद्ध वर्णन की अनिवार्यता, विजय की आकांक्षा एवं अस्तित्व रक्षा हेतु रेखांकित किया गया है तो कभी युद्ध के वीभत्सकारी परिणामों एवं सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था के लिए।

युद्ध का परिणाम संहार ही संहार है जो मानवता के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। युद्ध अपवना प्रलयंकर ताण्डव करने के अनन्तर ऐसा प्रसाद देता है जिसे ग्रहण करने वाले ही नहीं दिखाई देते, इसके अतिरिक्त जो कुछ भी बचता है–वह है विधवाओं का आर्त्त पुकारें, अपार धन हानि, रोते बिलखते अनाथ बच्चे, बंजर भूमि, अशिक्षा, रोग, अविकास आदि–आदि।

शान्ति की अनिवार्यता से आज कोई इंकार नहीं कर सकता यह तब तक नहीं हो सकता जब तक अधिकांश लोगों को यह विश्वास न हो जाए कि राष्ट्र का शान्तिवादी होना न केवल ठीक है अपितु सैनिक संगठन का त्याग कर देना व्यवहारिक भी है। दुनिया को समानता और न्याय पर आधारित शान्ति की जरूरत है न कि शमशान की शान्ति की। शान्ति ही एक मात्र ऐसा आधार है जिस पर विश्व के सारे स्रोत और ऊर्जा का मानवता के कल्याण के लिए सदुप्रयोग हो सकता है। शान्ति मानव अधिकारों के लिए आवश्यक है, उसके अभाव में न केवल वे निरर्थक होते हैं बल्कि सबसे पहले उनका ही खात्मा होता है। युद्ध परक काव्य कृतियाँ इस दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इस शोध–प्रबन्ध में युद्ध से सम्बन्धित आधुनिक युद्ध परक काव्यों का सम्यक तथा समग्रता के साथ समीक्षा करने का प्रयत्न किया गया है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध मेरे तीन वर्ष के कठोर परिश्रम और अध्यवसाय का प्रतिफल है। लगभग ढाई सौ पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं एवं समीक्षा ग्रन्थों से गुजरते हुए मैंने जो कुछ सोचा समझा उसका नवनीत इसमें है। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस कार्य को पूरा करके मैं पूरी तरह सन्तुष्ट हूँ, किन्तु यह मेरे शोध–प्रबन्ध के अध्ययन एवं आलोचना की इतिश्री नहीं है।

मानती हूँ कि कृतज्ञता ज्ञापन मात्र औपचारिकता है फिर भी जिनकी मैं कृतज्ञ हूँ उनका स्मरण इस समय न करने पर मेरे मन में ग्लानि ही होती। यों तो मेरे हर सम्बन्ध, रिश्ते एवं परिचय ने

मुझे प्रत्यक्ष–परोक्ष सहयोग दिया है पर कुछ महानुभाव ऐसे हैं जिनकी कृपा के अभाव में मेरे शोध कार्य में निश्चय ही कठिनाइयां आतीं। पं. जवाहर लाल नेहरू महाविद्यालय बाँदा के उपाचार्य मेरे शोध निर्देशक डॉ. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित *'ललित'* जी के पितृ तुल्य स्नेह, धैर्य, सतत् प्रेरणा एवं कुशल निर्देशन से सारे संकट एक–एक कर सुलझते चले गए। यह मेरा सौभाग्य ही है कि मुझे एक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यकार और योग्य शोध निर्देशक का निर्देशन प्राप्त हुआ। मैं अपने गुरुवर के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ किन्तु गुरु ऋण से कभी मुक्त नहीं हो सकती। हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. रामगोपाल गुप्त एवं डॉ. मनोरमा अग्रवाल के प्रति मैं श्रद्धावनत् हूँ। शोध कार्य में खुले हृदय एवं निःस्वार्थ भाव से सहयोग देने वाले श्रद्धेय विद्वद्वर श्री दुर्गा शंकर पाण्डेय, विदुषी श्रीमती सुमन पाण्डेय एवं कविवर श्री श्याम लाल शुक्ल जी के प्रति मैं आभार व्यक्त करती हूँ। जिनसे समय–समय पर मार्गदर्शन प्राप्त करके मैंने अपने शोध–कार्य को आगे बढ़ाया है, जिन्होंने अत्यन्त व्यस्तता में भी मेरा पूर्ण सहयोग किया है। मैं डॉ. जसवन्त प्रसाद नाग विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र पं. जवाहर लाल नेहरू महाविद्यालय बाँदा, डॉ. वेद प्रकाश द्विवेदी पोस्ट ग्रेजुएट कालेज अतर्रा, डॉ. रतन कुमार पाण्डेय बम्बई विश्व विद्यालय, श्री बृजराज सिंह तोमर, श्री कमलेश कुमार 'चातक' जी, डॉ0 जी0 आर0 गुप्त, श्री अर्जुन सिंह परिहार एवं श्री रामआसरे पाण्डेय जी के उचित परामर्श के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ। मेरे इस कार्य को पूर्ण करने में पिता श्री (देवशरण मिश्र) एवं माता जी (श्रीमती कमला मिश्रा) के भरपूर वात्सल्य पूर्ण सहयोग के प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। मेरे अग्रज श्री अजय कुमार मिश्र एवं अनुज श्री अतुल कुमार मिश्र ने सदैव आत्मिक बल प्रदान किया है। इनके इस स्नेहपूर्ण अमूल्य सहयोग को मैं सदैव स्मरण रखूँगी। जीजा जी श्री मनीष पाण्डेय एवं दीदी श्रीमती वन्दना पाण्डेय जी के आत्मीय सहयोग से मुझे पुस्तकों को लेकर कतई परेशानी नहीं हुई जिसके लिए मैं आजीवन आभारी रहूँगी। मेरे छात्र श्री सुरेन्द्र कुमार मिश्र (एम.ए. उत्तरार्द्ध राजनीति शास्त्र) एवं अमित वर्मा (एम.ए. पूर्वार्द्ध हिन्दी) ने मेरे शोध–कार्य में रुचि दिखाई जिसकी मैं आभारी हूँ।

सीमा प्रिन्टर्स वाले आदरणीय अग्रज श्री दिनेश मिश्र 'सुमन' जिनके स्नेहपूर्ण सहयोग के अभाव में यह शोध–प्रबन्ध इतना शीघ्र पूरा हो ही नहीं सकता था, इस सहयोग के लिए मैं सदैव इनकी आभारी रहूँगी।

अन्त में मैं उन समस्त रचनाकारों, समीक्षकों एवं विचारकों के प्रति आभार प्रकट करना अपना नैतिक कर्तव्य समझती हूँ, जिनकी रचनाओं, समीक्षापरक सामग्री तथा विचारों का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से उपयोग अपने शोध–प्रबन्ध के प्रणयन हेतु किया है।

विक्रम संवत 2059
पौष कृष्ण, द्वितीया
दिसम्बर 21–2002

कु. अर्चना मिश्रा
एम0 ए0 हिन्दी

विषय सूची

प्रथम परिवर्त्त

आधुनिक हिन्दी के युद्ध काव्यों की पूर्व पृष्ठभूमि एवं विकास क्रम

अ- युद्ध परक भारतीय महाकाव्य

ब- रामायण के युद्ध प्रसंग

स- महाभारत के युद्ध प्रसंग

द- पौराणिक युद्ध काव्यों की प्रेरक स्थितियाँ

य- द्वितीय विश्व युद्ध की परिस्थितयाँ और उनका प्रभाव

र- आधुनिक हिन्दी युद्ध काव्यों का विकास

आधुनिक हिन्दी के युद्ध काव्यों की पूर्व पृष्ठभूमि एव विकास क्रम

(अ)– युद्ध परक भारतीय महाकाव्य–

युद्ध को भली–भांति समझने के लिए हमें सृष्टि रचना के मूल तत्वों पर एक विहंगम दृष्टि डालनी होगी। यह सारी दुनिया द्वन्द्वात्मक दिखाई पड़ती है, दुनिया का अर्थ ही होता है जहां दो विरुद्ध धर्मों वाले जोड़े (संघात) जैसे सर्दी–गर्मी, सुख–दुःख, दिन–रात, पाप–पुण्य, दानव–देव, साधु–असाधु, अमृत–जहर, जीवन–मृत्यु, जीव–ईश्वर, अमीर–गरीब, काशी–मगहर, गंगा–कर्मनाशा, स्वर्ग–नर्क, सूर्य–चन्द्रमा तथा धनात्मक आवेश, ऋणात्मक आवेश आदि। सृष्टि के मूल में इस प्रकार के विरुद्ध धर्मों वाले जोड़ों के कारण ही एक प्रकार का द्वन्द्व अथवा युद्ध छिड़ा दिखाई पड़ता है। प्राचीन महाकाव्यों में सृष्टि के असन्तुलित हो जाने पर अर्थात जब आसुरी या विध्वंसात्मक प्रकृति वालों का बोल–बाला (सत्ता) इस प्रकार हो जाता है कि सृष्टि का संचालन विवादित हो उठता है तब सृष्टि संचालक शक्तियां देवासुर संग्राम के रूप में युद्ध की घटना को उपस्थित करती हैं इनका परिणाम प्रायः ही आसुरी प्रकृति वालों पर दैवी प्रकृति वालों की विजय दिखाई जाती है। आध्यात्मिक पक्ष में ऐसा माना जाता है कि मनुष्य के अन्तःकरण में भी आसुरी वृत्तियों (जैसे– काम, क्रोध, मद, लोभ आदि) तथा दैवी वृत्तियों (जैसे– दया, करुणा, परोपकार, सेवा, प्रेम आदि में अन्तर्द्वन्द्व चलता रहता है वे वैसे ही आसुरी विध्वंसात्मक) तथा दैवी (रचनात्मक) प्रवृत्ति वाले माने जाते हैं। आसुरी प्रवृत्ति वाले अत्यन्त स्वार्थी होते हैं और अन्य जीवों की उपेक्षा करके सारे विषय भागों के आधार पर जैसे– धन, भूमि, शक्ति, स्त्री आदि पर अपना अधिपत्य स्थिर करना चाहते हैं। इसी से सृष्टि में असन्तुलन बढ़ता है और सारे प्राचीन एवं आधुनिक युद्धों की आधार शिला का यही कारण बनते हैं।

भारतीय साहित्य में पुराणों की संख्या अट्ठारह मानी जाती है, इन सभी में विभिन्न युद्ध गाथाएं हैं। मैंने प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में पुराणों के अन्तर्गत श्री मार्कण्डेय पुराण में युद्ध का स्वरूप दिखाने वाली 'श्री दुर्गा सप्तशती' का चयन किया है जो समाज में आज भी बहुत प्रचलित है। इनके बाद युद्ध का स्वरूप बाल्मीकि रामायण एवं महाभारत में मिलता है जिनको मैं क्रमशः प्रस्तुत कर रही हूँ।

'श्री दुर्गा सप्तशती'

पौराणिक कथा के रूप में समाज के सामान्य जन 'दुर्गा सप्तशती' में दिखाए गए युद्धों से भली–भांति परिचित हैं। दुर्गा सप्तशती में तीन युद्धों का वर्णन है– पहले युद्ध में महाकाली के रूप में देवी जी 'मधु–कैटभ' नाम के असुरों का वध करती है, दूसरा युद्ध अट्ठारह भुजाओं वाली महालक्ष्मी के नाम से जानी जाने वाली देवी और महिषासुर के बीच होता है, जिसमें अन्ततः महिषासुर का वध किया जाता है, तीसरा युद्ध देवी महा सरस्वती एवं शुम्भ–निशुम्भ के बीच होता है। जिसमें देवी जी की विजय होती है। यूं तो इन युद्धों से हमें अनेक शिक्षाएं मिलती हैं, लेकिन यहां पर केवल तीन का उल्लेख किया जा रहा है–

(i)– 'मधु–कैटभ' निद्रा लेते हुए भगवान विष्णु के कान के मैल से उत्पन्न होते हैं, 'मधु–कैटभ' और कुछ न होकर स्तुति–निन्दा सुनने के कारण उत्पन्न होने वाली वृत्तियां हैं जिन पर आध्यात्मिक विकास चाहने वाले व्यक्ति को सबसे पहले अंकुश लगाना चाहिए, इसीलिए भगवान विष्णु सबसे पहले प्रथम चरित्र में 'मधु–कैटभ' का वध करते हैं।

(ii)– मध्य क्षेत्र में मोह रूपी महिषासुर का वध किया जाता है। मोह का अर्थ होता है विपरीत ज्ञान, जीव अपने अनुष्ठान परमात्मा को भूलकर कष्टकारी जगत के पीछे दौड़ने लगता है इसी विपरीत ज्ञान के कारण वह सारे अनर्थों में पड़ जाता है।

(iii)– अन्तिम तीसरे युद्ध में अहंकार एवं विषय के प्रतीक 'शुम्भ–निशुम्भ' का वध किया जाता है, इसके साथ–साथ उसके सहायक धूम्रलोचन, रागद्वेष रूपी 'चण्ड मुण्ड' एवं वासना रूपी 'रक्तबीज' का भी संहार होता है।

प्रथम चरित्र से हमें यह शिक्षा मिलती है कि जगत का कोई भी कार्य अपनी प्रसुप्त शक्ति को जागृत किए बिना नहीं किया जा सकता। भगवान होते हुए भी भगवान विष्णु को जगाकर ही 'मधु कैटभ' का वध करना पड़ा। यदि पशुबल अधिक बलवान हो तो उसे बुद्धिबल के सहारे ही मारा जा सकता है, जैसा भगवान विष्णु ने किया। दूसरे चरित्र से संगठन शक्ति का महत्व परिलक्षित होता है। सारेदेव अलग–अलग महिषासुर से हारते हैं, लेकिन जब उन सबकी शक्तियां संवेद होकर देवी रूप में प्रकट हुईं तो महिषासुर का वध करने में समर्थ हो गईं। युद्ध के बीच देवी जी को मधुपान करते दिखाया गया है, इससे यह पता चलता है कि अपने उत्साह वर्धन के लिए बाहरी साधनों का उपयोग करने में हिचक नहीं करनी चाहिए। युद्ध हमें यह भी बताता है कि यदि सत्–कार्य के लिए कोई अकेली शक्ति ही अग्रसर हो जाए तो समष्टि की शुद्ध शक्तियां आप–ही–आप उसकी सहायता के लिए दौड़ पड़ती हैं। यह भी दिखाया गया है कि देवी जी ने पहले भगवान शंकर को शान्ति स्थापित करने के लिए असुरों के पास भेजा था, शान्ति प्रस्ताव न मानने पर ही संहार कार्य करना न्याय युक्त है।

पौराणिक युद्धों में प्रायः यह देखा जाता है कि समय–समय पर आसुरी शक्तियां इन्द्र आदि देवताओं को हराकर सत्ता पर अधिकार कर लेते हैं। यह प्रश्न हो सकता है कि आखिर दैवीय शक्ति जो परमात्मा का प्रतिनिधित्व करती है वह असुरों से कैसे हार जाती है, वास्तव में बात यह है कि असुर लोग लक्ष्य न होते हुए भी अपने गुरु शुक्राचार्य के मार्गदर्शन के अनुसार तप के द्वारा शक्ति का अर्जन कर लेते हैं।

रामायण

'रामायण' युद्ध परक सर्वमान्य एवं सर्वपूज्य हिन्दू महाकाव्य है। यह महाकाव्य त्रेतायुग में हुए विष्णु अवतार भगवान श्रीराम उनकी पत्नी मां भगवती सीता एवं मुनि पुलत्स्य के पौत्र मुनि विश्रश्वा के राक्षस पुत्र त्रिलोक विजयी महाज्ञानी, महायोद्धा रावण एवं उनके भाई परम् योद्धा कुम्भकर्ण पुत्र मेघनाद एवं रामभक्त विभीषण जैसे पात्रों पर केन्द्रित है। राम–रावण युद्ध में सनातन धर्म संस्कृति का विशेष महत्व है। सर्वोच्च शक्तिमान भगवान विष्णु के अवतार श्रीराम एवं राक्षस संस्कृति के बीच वर्चस्व की लड़ाई के साथ–साथ युद्ध के कारणों में से प्रमुख कारण स्त्री अर्थात भगवती जानकी का अभिमानी रावण द्वारा छल एवं बलपूर्वक हरण करना है। रावण आसुरी वृत्तियों को बढ़ाने का नेतृत्व कर रहा है और राम सत्य के धर्म को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं यह पात्र मनोवृत्तियों के प्रतीक होते हैं जिसका वर्णन 'विनय पत्रिका' में मिलता है जो इनकी प्रतीकात्मकता की पुष्टि करते हैं–

"मोह दशमौलि, तदभ्रात अहंकार, पाकारिजित काम–विश्रामहारी।

लोभ अतिकाय, मत्सर महोदर दुष्ट, क्रोध पापिष्ठ–विबुधांतकारी।।
द्वेष दुर्मुख, दंभ खर, अकंपन कपट, दर्प मनुजाद मद–शूलपानी।
अमितबल परम दुर्जय निशाचर–निकर सहित षडवर्ग गा– यातुधानी।"[1]

आसुरी वृत्तियों के वर्णन से यह स्पष्ट है कि रामायण के प्रसंगों में आध्यात्मिक विकास का रहस्य छुपा है। इन युद्धों की एक विशेषता और भी है कि प्रायः आसुरी पक्ष को अत्यन्त दिखाया गया है। दूसरी ओर दैवीय प्रकृति से सम्पन्न लोक अपेक्षाकृत कम साधन युक्त एवं सत्ता शक्ति से अलग है फिर भी विजय हमेशा सत्य की ही दिखाई गई है। इस दृष्टि से रामचरित मानस के लंकाकाण्ड से धर्मरथ का वर्णन दृष्टव्य है–

"रावनुरथी विरथ रघुवीरा। देखि विभीषण भयउ अधीरा।।
अधिक प्रीति मन भा संदेहा। बंदि चरन कह सहित सनेहा।।
नाथ न रथ नहिं तन पद त्रामा। केहि विधि जितब वीर बलवाना।।
सुनहु सखा कह कृपा निधाना। जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।।"[2]

विभीषण रावण की साधन सम्पन्नता को राम की साधनहीनता से तुलना करते हैं एवं राम की विजय पर सशंकित हो जाते हैं, किन्तु राम विभीषण को विजय का मूलमंत्र बताते हैं।

अन्याय एवं स्त्री–अपमान की दूसरी कथा रामायण में कपिराज बलशाली बालि एवं सुग्रीव से जुड़ी है जिसमें बालि द्वारा अपने अनुज के प्रति भ्रमवश अविश्वास पैदा हो जाता है जिससे वह उस पर घोर अन्याय करता है। वह अनुज वधु रूमा को बलपूर्वक अपनी उपपत्नी बनाता है एवं सम्पूर्ण राज्य का स्वामी बन जाता है–

"तेनाहमपविद्वश्र ह्रहदारश्र राघव।
तद्भयाच्च महीं सर्वा क्रान्तवान् सवनार्णवाम्।।
ऋष्यमूकं गिरिवरं भार्याहरणदुःखितः।
प्रविष्टोऽस्मि दुराधर्ष वालिनः कारणान्तरे।।"[3]

राम सुग्रीव को अपने ही समान शोक में डूबा जानकर पत्नी एवं विशाल राज्य का स्वामी बनाने का संकल्प लेते है–

"आत्मानुमानात् पश्यामि मग्नस्त्वं शोकसागरे।
त्वामाहं तारमिष्यामि वाढं प्राप्स्यसि पुष्कलम्।।"[4]

मन्थरा की कुमन्त्रणा से कैकेयी के मन में राज्य लिप्सा एवं सम्मान की भावना जागी जिसका परिणाम सम्पूर्ण अयोध्या नगरी को भुगतना पड़ा। युद्ध अन्तर्वृत्तियों का हो या वाह्य विनाश ही होता है। मन्थरा द्वारा प्रेषित सुझाव निम्नलिखित हैं–

"ध्रुवं तु भरतं रामः प्राप्य राज्यमकण्टकम्।
देशान्तं नाययिता लोकान्तरमथापि वा।।"[5]

मन्थरा के कथन का कैकेयी पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि उसकी मनोदशा ही बदल गई वह प्रतिज्ञा करती है कि मैं राम को वनवासी एवं भरत को युवराज बनाऊंगी कार्य सिद्धि हेतु वह राजा दशरथ से वरदान मांगती

है–

"नव पंच च वर्षाणि दण्डकारण्यमाश्रितः।।

चीराजिनधरो धीरो रामो भवतु तापसः।

भरतो भजतामद्य यौवराज्यमकण्टकम्।।"[6]

इस स्थिति में परिवार का युद्ध, विनाशक युद्ध में परिवर्तित हो सकता था यदि श्रीराम एवं भरत त्याग की कामना को छोड़ देते।

मारीच के समझाने पर रावण ने सीताहरण का कुविचार छोड़ दिया था, किन्तु सूर्पणखा ने रावण के मन में एक ओर यह भय कि तुम्हारी भूमि तुम्हारे अधिकार क्षेत्र से बाहर हो जाएगी और दूसरी ओर लोभ की उत्पत्ति कराने में सीता की सुन्दरता का ऐसा हृदयग्राही वर्णन किया कि रावण के लिए सीता हरण आवश्यक हो गया। सूर्पणखा ने अपना दोष नही बताया और जाकर यह झूठे कथन प्रस्तुत किए कि मुझे पकड़कर मेरी यह दुर्दशा वनवासियों ने की, यह नहीं बताया कि मैंने सीता पर आक्रमण किया और मैं उनके साथ प्रणय सम्बन्ध ा बनाना चाहती थी। इधर राम और लक्ष्मण ने प्रबल प्रलोभन के आक्रमण से अपनी रक्षा मात्र की थी। अब रावण को समझाना व्यर्थ था जैसे मरणासन्न व्यक्ति को अपने लिए हितकारी बातें भी निरर्थक लगती हैं असत् वृत्तियां इतनी भारी होती हैं कि कुछ भी सोचने की सामर्थ्य का ह्रास हो जाता है–

'परेतकल्पा हि गतायुषो नरा

हितं न गृछन्ति सुहृद्भिरीरितम्।"[7]

रामायण में युद्ध को धर्म के रूप में स्वीकारा गया है। रामायण में राष्ट्रीय जीवन, सामाजिक, धार्मिक और भौतिक आदर्शो का मर्यादित रूप दिखाई पड़ता है। भक्ति भावना, मर्यादा, दया, करुणा, परोपकार, पतिव्रत धर्म आदि का सजीव चित्रण मिलता है। इसका कथानक अनेकानेक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करते हुए आदर्श जीवन की झलक के साथ उपस्थित होता है, ऐसे गम्भीर भावों को महर्षि बाल्मीकि ने प्रस्तुत कर संस्कृति का एक मूर्त रूप प्रस्तुत किया है।

महाभारत–

महर्षि व्यास द्वारा रचित यह अमर आर्षकाव्य महाभारत, भारतीय लौकिक साहित्य में बाल्मीकि रामायण के पश्चात द्वितीय, अद्वितीय रचना है। वैदिक वाङ्मय के पश्चात भारतीय संस्कृति को अक्षुण्ण रखने में पुराणेतिहास का अमूल्य योगदान है। यह हमारे देश के प्राचीन इतिहास के अनन्यतम स्त्रोत हैं। भारतीय संस्कृति के जिस भव्य रूप का निदर्शन इन ग्रन्थों में है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।

महाभारत ऐतिहासिक कोटि का महाकाव्य जैसा प्रबन्ध है और इसमें इतिहास तथा काव्य का मंजुल निबन्धन सा प्रतीत होता है। इतिहास इसलिए कि इसमें युद्ध के तथ्यात्मक वर्णन हैं घटनाचक्र है देशकाल की भौगोलिक एवं ऐतिहासिक घटनावलियां हैं। काव्य इसलिए है क्योंकि इसमें कविता जैसी भाव प्रवणता, कल्पनाशीलता एवं हृदयस्पर्शी मार्मिकता भी पाई जाती है। वस्तुतः महाभारत विश्वकोष की भांति का एक महनीय महाग्रन्थ है जिसकी आधार भूमि युद्ध मूलक है। युद्ध जीवन में चलने वाली एक सतत् प्रक्रिया है युद्ध बहिरंग

हो या अंतरंग उनसे मनुष्य को निरन्तर जूझना पड़ता है। "संग्राम अविरत प्रक्रिया है और उस प्रक्रिया का नाम है जीवन संग्राम Struggle For Life। देह–देह से लड़ती है, जीव–जीव से लड़ता है यह संघर्ष नित्य है बाहर भी और भीतर भी। द्वन्द्व चाहे अन्तः हो चाहे बाह्य वह चलता ही रहता है– जीवन के इस पार भी और उस पार भी।"[8] युद्ध मानव जाति के लिए अपरिहार्य है क्योंकि उसके अन्तःकरण भी विद्यमान हैं। सत्–असत् प्रवृत्तियों के कारण देह के भीतर की द्वन्द्व की स्थिति बनी रहती है।

प्रत्येक शरीर कुरुक्षेत्र है और उसमें महाभारत होता रहता है। यह द्वन्द्व ही महाभारत कराता है इसलिए इसे द्वन्द्व कहिये, संघर्ष कहिये अथवा युद्ध कहिये– वह शाश्वत है, अनिवार्य है। युद्ध जहां एक ओर अपरिहार्य है वहीं उनसे उत्पन्न होने वाले परिणाम कहीं–कहीं असत्य भयावह भी होते है। परमाणु युद्धों का परिणाम तो और भी विनाशकारी होता है। महाभारत में राज्य लिप्सा एवं सम्पत्ति को लेकर युद्ध का प्रारम्भ होता है। पाण्डव के पुत्र युधिष्ठिर राज्य के अधिकारी थे क्योंकि पाण्डु ही राजा थे उनके मरने के बाद युधिष्ठिर को राजगद्दी मिलनी चाहिए, परन्तु धृतराष्ट्र जो पाण्डु के बड़े भाई थे, अन्धे होने के कारण राज्य के अधिकारी नहीं थे वह पाण्डवों को वनवास दिलवाकर अपने पुत्र दुर्योधन को राजा बनाना चाहते थे–

युद्ध का दूसरा प्रकरण द्रोपदी से सम्बद्ध है– द्रोपदी को दुर्योधन की आज्ञा से राज सभा में लाना दुःशासन द्वारा चीर हरण करके अपमानिक करने के कारण युद्ध का संकट उत्पन्न हुआ। युद्ध काएक अन्य कारण भूमि पर एक छत्र अधिकार का है जिसमें कौरव सम्पूर्ण भूमि को अपने अधिकार में लेना चाहते हैं इधर पाण्डवों का भूमि हीन रहना, यहां तक कि कृष्ण के समझाने के बावजूद भी आधे राज्य या पांच गांवों की कौन कहे? कौरव द्वारा 'सूचिकाग्रम न दास्यामि' के विद्रोह में महाभारत का विनाशकारी युद्ध होता है।

पाण्डवों के निर्वासन से पूर्व समस्त कुरुकुल की मर्यादा और लज्जा को निर्वसन करने का प्रयास किया था। पाण्डवों का वह मौन निर्वासन ही युद्ध यज्ञ की वेदिका बना तथा दुर्योधन की छदम् शान्ति कुछ ऐसी ही थी जैसी कि भयंकर तूफान आने से पहले होती है। युद्ध तो सुनिश्चित ही था, हारने वाला रहा ही नहीं, जीतने वाला! जीत कर भी हार गया। यही सत्य है और इस सत्य के व्यापक स्वरूप को भीष्म पितामह के चरित्र में देखना चाहिए जिन्होंने सम्पत्ति संघर्ष को बचाने के लिए आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया, निरन्तर महाभारत कायुद्ध टालने के लिए लगे रहे, पाण्डवों का सत्यपक्ष जानकर भी कौरवों के पक्ष से युद्ध में खड़े हुए। पाण्डवों ने दुःख को मनुष्य की चुनौती के रूप में स्वीकार कर उसे ललकारा।

श्रीमद्भगवद् गीता–

युद्ध के सन्दर्भ में श्रीमद्भगवद् गीता का विशेष महत्व है। 'गीता' भारतीय मनीषा का वह आदर्श है जिसमें मानव धर्म व विशद प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है। मूलतः गीता स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं है। यह महाभारत के अन्तर्गत 'भीष्म पर्व' का एक अंश है। 'भीष्म पर्व' के दूसरे अध्याय से लेकर उन्नीसवें अध्याय तक का भाग श्रीमद्भगवद् गीता के रूप में जाना जाता है। युद्ध के लिए सन्नद्ध कौरवों और पाण्डवों की सेनाओं के बीच रथारूढ़ विषादग्रस्त अर्जुन को सारथि भगवान श्रीकृष्ण उपदेश देकर उनका मोह दूर करके युद्ध के लिए प्रवृत्त करते हैं। 'गीता' के महत्व के कारण, महाभारत से पृथक इसकी एक स्वतन्त्र पहचान बन गई है और महाभारत

से अधिक श्रद्धेय भी।

युद्ध का मूल, मनोभाव एवं मनोजगत है, मनोजगत कामनाओं से युक्त है। कामनाएं संकल्प–विकल्प के रूप में मानव मन को मानव चेतना को स्वप्निल बनाती है और यह कामनाएं युद्ध और विनाश की ओर ले जाती है। गीता दर्शन के आधार पर युद्ध का कोई बहिरंग कारण नहीं होता उसका कारण चित्तवृत्तियों में विद्यमान रहता है। युद्ध के अनेक कारणों पर विचार करते हुए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय घटना चक्रों के मतमतान्तर प्रस्तुत किए हैं, किन्तु मैं गीता दर्शन से अपने को जोड़ती हुई यह अनुभव करती हूं कि वस्तुतः मानव चेतना के अन्तर्पटल पर होने वाले द्वन्द्व संकल्प, विकल्प, मनोरथ, कामनाएं, स्वप्न, अभाव और भाव–पूर्ति हेतु प्रयत्न संघर्ष आदि ऐसी प्रक्रियाएं हैं जो मानव जगत में घटित होती हैं। पुनः चेतना का प्रतिबिम्ब और अन्तर्जगत की घटनाओं का प्रभाव बाह्य घटनाओं के रूप में आकार लेता है। अतः युद्ध के जितने भी कारण बताए गए हैं उनमें आंशिक सत्य होने के बावजूद वास्तविक सत्य तो यही है और मनोवैज्ञानिक आधार को सर्वोच्च्य महत्ता प्रदान किए जाने के पक्ष में मेरी मान्यता विद्वानों को भी मान्य होगी ऐसा मेरा विश्वास है। 'श्रीमद्भगवद् गीता' में सीधे युद्ध तो नहीं, किन्तु कामनाओं के जन्म और उसके परिणाम का जो उल्लेख छन्दों में प्राप्त होता है उसे हम युद्ध का भी कारण मान सकते हैं क्योंकि युद्ध भी तो एक कामना है और कामना के बिना तो कुछ भी नहीं हो सकता। कामनाएं अंतरंग हैं इसलिए युद्ध भी अंतरंग है।

(ब)– रामायण के युद्ध प्रसंग–

'रामायण' को लंका मेरी मीमांसा का लक्ष्य उसमें वर्णित युद्धों तक ही सीमित है। भारत के प्रमाणिक ग्रन्थों में जहां कहीं भी युद्ध का वर्णन मिलता है तो उसके दो मुख्य लक्ष्य दिखाई पड़ते हैं। पहला तोयह कि दुष्कृत्य करने वाले शासनाध्यक्षों से सत्ता की शक्ति लेकर सज्जन लोगों के हाथ में सौंप दी जाए और दूसरा लक्ष्य यह होता है कि हम सबके अन्दर आसुरी एवं दैवी प्रवृत्तियों का युद्ध निरन्तर होता रहता है उसे हम किस प्रकार नियन्त्रित कर अपने अन्दर केवल दैवी प्रकृति को प्रतिष्ठित करें। भारत के धर्म ग्रन्थों में वर्णित पौराणिक युद्धों कोसमझने के लिए यह आवश्यक है कि शासन के बारे में यहां के ऋषियों के दृष्टिकोण को भी समझ लिया जाए। उनके अनुसार पृथ्वीतल पर रह रहे जीवों पर तीन प्रकार की शासन व्यवस्था लागू रहती है। पहली मानवीय जो राजाओं अथवा शासनाध्यक्षों के हाथ में रहती है, दूसरी ब्रह्माण्डीय या दैवीय जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा राजा इन्द्र के नेतृत्व में तैंतीस करोड़ देवताओं द्वारा संचालित होती रहती है, तीसरी परम सत्ता जिसके अवतारी भगवान श्रीराम और श्रीकृष्ण सर्वविदित हैं। इस सिद्धान्त को लक्ष्य में रखकर रामायण में वर्णित युद्ध प्रकरणों की मीमांसा आगे प्रस्तुत की जा रही है।

रामायण काल की सामाजिक परिस्थिति–

इस काल में सामाजिक परिस्थिति इस प्रकार की बन चुकी है कि सर्वत्र आसुरी प्रवृत्तियों का बोलबाला है। पृथ्वीतल पर सारी आसुरी प्रवृत्तियों का संचालन लंकापति रावण के हाथ में है। कहने को तो भारत के अनेक भागों में क्षेत्रीय राजाओं का शासन है जैसे– दशरथ जी, जनक जी आदि। लेकिन किन्हीं भी राजाओं में यह सामर्थ्य नहीं है कि वह रावण का विरोध कर सके। रावण इतना विद्वान और शक्तिशाली है कि उसने

अलौकिक विद्याओं को सीखकर देवताओं को भी अपनेवश में कर लिया है यहां तक कि उसने ब्रह्मा जी और शिव जी से भी वरदान प्राप्त कर उनको भी असहाय कर दिया है सारी सृष्टि उसके शोषण का शिकार है और आसुरी प्रवृत्ति के लोग सज्जनों का शोषण कर उन्हें दुःख पहुंचारहे हैं। समाज कीदयनीय दशा को देखकर और अपने को असहाय समझ कर ब्रह्मा और शिव सहित सारे देवता परम सत्ता की शरण में आ जाते हैं और सृष्टि में सुव्यवस्था कायम करने के लिए भगवान से अवतार की प्रार्थना करते हैं। परिणामतः श्रीराम जी का अवतार होता है और वे आसुरी शक्तियों को नष्ट करते हैं जिनके लिए रामायण में अनेक स्थलों पर युद्ध का वर्णन किया गया है जो क्रमशः निम्नलिखित है–

(1)– 'रामायण' में पहला युद्ध प्रकरण बालकाण्ड के सर्ग 24 से 26 तक में है जिसमें श्रीराम के द्वारा विश्वामित्र की यज्ञ रक्षा के लिए ताटका का वध किया जाता है। सुन्द दैत्य की पत्नी ताटका एक श्रापित इच्छानुसार रूप धारण करने वाली यक्षिणी है, जिसके पास एक हजार हाथियों का बल है। उसके दो बेटे मारीच और सुबाहु भी बहुत ही शक्तिशाली है। रावण के संरक्षण और इशारे पर वह भारत देश में राक्षसी/आसुरी संस्कृति को स्थापित करती है। इसके लिए वह यहां के साधु–सन्तों को मार डालती है और उस समय की मूल धार्मिक साधना यज्ञ प्रक्रिया को नष्ट करती रहती है। विश्वामित्र जी उस समय के प्रतिष्ठित राजर्षि हैं औरउनके नेतृत्व में तमाम ऋषि मुनि यज्ञ करते रहते हैं। विश्वामित्र भी अयोध्या जाकर यज्ञ रक्षा के लिए राम व लक्ष्मण को अपने साथ वन के आश्रम के लिए ले जाते हैं। विश्वामित्र जी श्रीराम को उसके वध का आदेश देते हैं, विश्वामित्र का युद्ध विशयक निर्देश सभी राज्याध्यक्षों के लिए आदर्श सिद्धान्त है यथा–

"राज्यभारनियुक्तानामेद्य धर्मः सनातनः।
अधर्म्यो जहि काकुत्स्थ धर्मो हवस्यां न विद्यते।।"[12]

गुरु आज्ञा पाकर श्रीराम जी ने धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाई और उसकी टंकार से घोर शब्द हुआ। ताटका क्रोधित होकर अपना भयंकर रूप धारण करती है और राम–लक्ष्मण के साथ माया का आश्रय लेकर युद्ध करने लगती है–

'ततो मायां समास्थाय शिलावर्षेण राघवौ।
अवाकिरत सुमहता ततश्चुक्रोध राघवः।।"[13]

भगवान राम ने प्रत्युत्त्र में उसके दोनों हाथ काट दिए और सुमित्रा कुमार लक्ष्मण ने उसके नाक, कान काट दिए। इतने पर वह राक्षसी घोर गर्जना कर अन्तर्ध्यान हो गई और अन्तरिक्ष से पत्थरों की भयंकर वर्षा करने लगी। श्रीराम जी के ताटका को न मारने के भाव देखकर विश्वामित्र जी ने उन्हें दया का परित्याग कर उसे मारने का पुनः आदेश दिया।[15] यह आज्ञा पाकर रामजी ने शब्दवेधी बाण विद्या से अन्तरिक्ष में ही उसे चारों ओर से जकड़ लिया, इस पर भी वह राक्षसी घोर गर्जना करते हुए राम लक्ष्मण पर टूट पड़ी, तब राम जी ने एक बाण से उसको मार डाला। राक्षसी के मारे जाने पर श्रीराम जी देवताओं द्वारा और सिद्ध समूह द्वारा प्रशंसा के पात्र बने।16 ताटका के वध से विश्वामित्र जी अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने रामचन्द्र जी को दिव्यास्त्र प्रदान किए। दिव्यास्त्रों को समझे बिना भारतीय धर्म ग्रन्थों में वर्णित पौराणिक युद्धों को कभी भी समझा नहीं जा सकता। आज का विद्वान

इन पौराणिक युद्धों को गलत ही समझेगा जबकि वह सत्य घटनाएं है।। दिव्यास्त्र आधुनिक मिसाइल तथा एटम बम की अपेक्षा कहीं अधिक सूक्ष्म होते थे और वे केवल अवांक्षनीय लक्ष्य को ही नष्ट करते थे जबकि आजकल के आयुध बिना किसी नियन्त्रण के सृष्टि का ही संहार करते हैं, वे मात्र विध्वंसक हैं। दिव्यास्त्र मंत्र बल से काम करते थे और अदृश्य रहते थे उनका नियन्त्रण सदैव अधिकारी महापुरुषों के हाथों ही रहता था जिससे उनका दुरुपयोग न हो सके। विश्वामित्र ने जब राम की परीक्षा करके यह जान लिया कि वे दिव्यास्त्रों के लिए सर्वथा योग्य महापुरुष है तभी उन्होंने उन अस्त्रों को उन्हें दिया। इन अस्त्रों के नाम असामान्य हैं और उनकी क्रिया–कलाप आश्चर्यजनक। रामायण के सत्ताइसवें सर्ग में इनका वर्णन है इनके नाम इस प्रकार हैं– दण्डचक्र, धर्मचक्र, कामचक्र, विष्णु चक्र, ऐन्द्र चक्र, इन्द्र का वज्रास्त्र, शिव का त्रिशूल, ब्रह्मा जी का ब्रह्मसिद्ध नामक अस्त्र, ब्रह्मास्त्र, मोदकी तथा शिखरी, गदा, धर्मपाश, कालपाश, वरुण पाश, पिनाक एवं नारायणास्त्र, आग्नेयास्त्र, वायाव्य अस्त्र, हयशिरा, क्रौंच अस्त्र, शक्ति, कंकाल, घोर मूतल, कपाल तथा किंकिणी आदि अनेक अस्त्रों का वर्णन हुआ है। इन अस्त्रों को देने की प्रक्रिया भी अलौकिक है जोसामान्य मनुष्य की बुद्धि के परे है इस प्रक्रिया का वर्णन इस प्रकार है–

"जपतस्तु मुनेस्तस्य, विश्वामित्रस्य धीमतः।
उपतस्थुर्महार्हाणि सर्वाण्य स्त्राणि राघवम्।।
ऊचुश्र मुदिता रामं सर्वे प्रांजलयस्तदा।
इमे च परमोदार किंकरास्तव राघव।।
यद्यदिच्छास भद्रं ते तत्सर्व करवाम वै।"[17]

अस्त्रों का स्वरूप तथा देने की प्रक्रिया जितनी आश्चर्यजनक है, भगवान राम जी द्वारा उन अस्त्रों का ग्रहण और संग्रहण (STOREGE) भी उतना ही रोचक है। दिव्य अस्त्रों से सुसज्जित भगवान राम और लक्ष्मण विश्वामित्र जी के साथ 'सिद्ध आश्रम' पहुंच गए जो विश्वामित्र जी के रहने का मूल स्थान है। राम के यज्ञ रक्षा के आश्वासन से विश्वामित्र जी ने यज्ञ की दीक्षा ली और यज्ञ करने लगे। यह यज्ञ छः दिन और छः रातों तक चलता रहा इस बीच श्रीराम और लक्ष्मण बिना सोये हुए यज्ञ की रक्षा करते रहे। पूर्ण आहुति के समय मारीच और सुबाहु नाम के राक्षस अपने अनुचरों सहित आकाश मार्ग से यज्ञ मण्डल के चारों ओर रक्त आदि की दूषित धाराएं बहाना शुरू कर दिया। राम जी ने शीतेषु नामक मानवास्त्र मारीच के ऊपर प्रयोग किया उसके लगने से मारीच अचेत सा होकर चक्कर काटता हुआ पूरे सौ योजन की दूरी पर समुद्र में जा गिरा।18 इसके बाद उन्होंने महान आग्नेयास्त्र से सुबाहु को मार डाला। तत्पश्चात वायव्य अस्त्र से शेष निशाचरों का भी संहार कर डाला। इस प्रकार पहले युद्ध प्रकरण में भगवान राम की राक्षसों पर विजय होती है।

(2)– रामायण में दूसरा युद्ध–प्रकरण देवासुर संग्राम के रूप में 45वें सर्ग में दिया गया है। भारतीय धर्म ग्रन्थों एवं दर्शन में देवासुर संग्राम का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है, जिसे यहां पर अति संक्षेप में ही वर्णित किया गया है। यह बात प्रसिद्ध ही है कि कश्यप ऋषि की एक पत्नी दिति से होने वाले पुत्रों को दैत्य कहा जाता है और दूसरी पत्नी अदिति से होने वाले पुत्रों को देवता कहा जाता है। वैसे तो दैत्यों और देवताओं में बैर भाव चलता

रहता है, और समय–समय पर स्वर्ग के सिंहासन के आधिपत्य के लिए आपस में युद्ध भी होता रहा है, किन्तु एक बार अमृत पाने के लोभ में इन दोनों लोगों में सन्धि हुई और उन्होंने क्षीर सागर का मन्थन करना शुरू किया। वास्तव में इस सबके पीछे भगवान विष्णु की प्रेरणा थी क्योंकि दुर्वासा जी के श्राप से लक्ष्मी जी क्षीर सागर में सो रही थीं और उनको प्रकट करना था देव और दैत्य अमृत प्राप्ति के लिए समुद्र मन्थन करने लगे। मन्दराचल पर्वत को मथानी तथा वासुकि नाग को रस्सी बनाया गया जब मन्दराचल समुद्र में डूबने लगा तब भगवान ने कूर्मा अवतार लेकर अपनी पीठ पर उसे धारण किया। मन्थन से प्रथम विष निकला जिसके कुप्रभाव से सृष्टि के उपद्रव होने लगा, देवों ने शिव जी से विष पी जाने की प्रार्थना की, शिव जी ने भगवत स्मरण करके जगत कल्याण के लिए विषपान कर लिया। इसके बाद एक–एक करके समुद्र से चौदह रत्न निकले इनमें गोमाता कामधेनु, अमृत और लक्ष्मी जी मुख्य हैं। सभी रत्नों का तो बंटवारा होता रहा, लेकिन जब भगवत अवतार धन्वन्तरि जी अमृत का भरा घट लेकर निकले तो दैत्यों ने उसको छीन लिया, किन्तु उसे पीने के बंटवारे में आपस में लड़ने लगे, उस समय भगवान मोहिनी स्त्री का रूप धारण करके प्रकट हुए। परस्त्री का चिन्तन करने वाले दैत्यों के लिए स्वाभाविक था कि वे मोहिनी के रूप से आकर्षित होकर उसके पास आ जाएं। मोहिनी ने हंसते हुए दैत्यों को मोह जाल में फंसा लिया और युक्ति से अमृत बांटने का कार्य अपने हाथ में लेकर उन्होंने भक्ति युक्त देवताओं को अमृत पिला दिया और भगवान से विमुख दैत्यों को अमृत नहीं मिला। इस बात को लेकर देव और दानव में भयानक युद्ध हुआ जिसमें दैत्य लोग पराजित हो गए।

(3)– रामायण में तीसरा युद्ध प्रकरण विश्वामित्र जी एवं वशिष्ट जी के बीच में दिखाया गया है, ये बालकाण्ड के सर्ग 54 से लेकर 56 तक है। घटनाचक्र इस प्रकार का है जिसमें विश्वामित्र जी एक धर्मात्मा एवं ऐश्वर्यमान राजा थे वे एक बार पृथ्वी पर विचरण करते हुए ब्रह्मर्षि वशिष्ट जी के श्रेष्ठ आश्रम में पधारे वशिष्ट जी ने उनका यथा योग्य अतिथि सत्कार किया और आश्रम में ठहरने का आग्रह किया। गांधिनन्दन ने निमन्त्रण स्वीकार किया और आश्रम में रुक गए। तब वशिष्ट जी ने आश्रम की कामधेनु को बुलाकर उसको सेना सहित राजा का यथोचित सत्कार करने की आज्ञा दी। गाय ने आज्ञा पाकर सभी अतिथियों के लिए दिव्य वस्तुएं एकत्रित कर दी, उसमें घी, मधु, लावा, श्रेष्ठ आसव, पीने वाले रस, गरम–गरम भात, दाल, मिष्ठान आदि सुस्वादु भोजन सामग्री चांदी की सहस्त्रों थालियों में सजी थी। इसे प्राप्त कर अतिथिगण भली–भांति तृप्त हुए। विश्वामित्र जी यह सब लीला देख कर गाय के प्रति आकर्षित हो गए और उसे ले जाने की इच्छा प्रकट की। वशिष्ट जी ने उनको समझाया कि यह कामधेनु गाय ही मेरा सर्वस्व है मेरा जीवन निर्वाह इसी पर निर्भर है और मेरे अग्निहोत्र, बलि, होम, स्वाहा, वषटकार और भांति–भांति की विद्याएं इस कामधेनु के ही आधीन है। अतः मैं इस कामधेनु को कदापि नहीं दूंगा। इस पर विश्वामित्र जी बलपूर्वक उस कामधेनु को ले जाने लगे, गौ अत्यन्त दुःखी हुई और रोती हुई वशिष्ट जी के पास जा पहुंची और उनसे बोली कि भगवन क्या आपने मुझे त्याग दिया है? इस पर वशिष्ट जी ने कहा कि मैंने तुमको त्यागा नही है, किन्तु ये राजा हैं और बलवान हैं, इसलिए छीनकर ले जा रहे हैं। गौ बोली 'मैं आपके ब्रह्मबल से परिपुष्ट हुई हूं, अतः आप मुझे केवल आज्ञा दे दीजिये मैं इस दुरात्मा राजा के बल, प्रयत्न और अभिमान को चूर कर देती हूं।''[19] इस पर वशिष्टजी ने शत्रु सेना को नष्ट करने वाले सैनिकों की सृष्टि करने की आज्ञा

दे दी तब गाय के हुंकार से सैकड़ों पन्हव जाति के वीर, यवन मिश्रित शक जाति, सूर्य के समान तेजस्वी काम्बोज, बर्बर, मलेच्छ, हारीत और फिरात जाति के सैनिक पैदा हुए।[20] इन वीरों ने विश्वामित्र की सारी सेना को नष्ट कर डाला इससे विश्वामित्र के सौ पुत्र अत्यन्त क्रुद्ध होकर श्रेष्ठ वशिष्ट मुनि पर टूट पड़े महर्षि ने हुंकार मात्र से उन सबको नष्ट कर डाला।

अपने पुत्रों तथा सारी सेना का विनाश हुआ देख महायशस्वी विश्वामित्र जी बहुत लज्जित हुए। उनके एक ही पुत्र बचा था। उसको उन्होंने राज–काज सौंप दिया और हिमालय पर्वत पर जाकर शिव जी को प्रसन्न करने के लिए तपस्या करने लगे। शिव जी प्रसन्न होकर अंग–उपांग सहित धनुर्वेद और तमाम अस्त्र विद्या प्रदान करते हैं। अब विश्वामित्र जी अपने को अज्ञेय मानने लगे और वशिष्ट के आश्रम में आकर भांति–भांति के अस्त्रों का प्रयोग करने लगे। यह सब देखकर महातेजस्वी वशिष्टजी अत्यन्त क्रुद्ध हो धूम रहित अग्नि के समान उद्दीप्त हो उठे और हाथ में ब्रह्मदण्ड लेकर तुरन्त विश्वामित्र का संहार करने के लिए तैयार हो गए। गाधि पुत्र विश्वामित्र ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया जो वशिष्ट जी के ब्रह्मदण्ड से उसी प्रकार शान्त हो गया जैसे पानी पड़ने से जलती हुई अग्नि का वेग इसके बाद विश्वामित्र ने कुपित होकर क्रमशः "वरुण, रौद्र, ऐन्द्र, पाशुपत, एषीक, मानव, मोहन, गान्धर्व, स्वापन, जृम्भण, मादन, संतापन, विलापन, शोषण, विदारण, सुदुर्जय, वज्रास्त्र, ब्रह्मपाश, कालपाश, वारुणपाश, पिनाकास्त्र, दण्डास्त्र, पैशाचास्त्र, क्रौचांस्त्र, धर्म चक्र, काल चक्र, विष्णु चक्र, वायाव्यास्त्र, मन्थनास्त्र, ह्रयशिरा दो प्रकार की शक्ति, कंकाल, मुसल, महान वैद्याधरास्त्र, दारुण कालास्त्र, त्रिशूलास्त्र, कपालास्त्र, कंकणास्त्र ये सभी अस्त्र उन्होंने वशिष्ट जी के ऊपर चलाए।"[21] वशिष्ट जी ने उन सभी अस्त्रों को केवल अपने डण्डे से ही नष्ट कर दिया। विश्वामित्र जी द्वारा प्रयुक्त ब्रह्मास्त्र को वशिष्ट जी अपने ब्रह्मतेज से नष्ट कर देते हैं। पराजित विश्वामित्र जी लम्बी सांस खींच कर इस प्रकार बोले–

"धिग् बलं क्षत्रियबलं ब्रह्मतेजोबलं बलम्।
एकेन ब्रह्मदण्डेन सवस्त्रिाणि हतानि में।।
तदेतत् प्रससमीक्ष्याहं प्रसन्नेन्द्रियमानसः।
तपो महत् समास्थास्ये पद् वै ब्रह्मत्वकारणम्।।"[22]

सारे भारतीय धर्म ग्रन्थों में यह एक मात्र उदाहरण मिलता है जहां किसी ऋषि ने घोर तपस्या के बल से अपने वर्ण को बदल डाला हो।

(4)– रामायण में चौथा युद्ध प्रकरण विराध वध के नाम से दिखाया गया है जो अरण्यकाण्ड के द्वितीय सर्ग से चतुर्थ सर्ग तक है। "विराध पूर्व जन्म में तुम्बुरू नामक गन्धर्व था जो कुबेर के श्राप से भयंकर शरीर वाला राक्षस बन गया था।"[23] इसके माता–पिता का नाम शतह्रदा और जव था। वनवास काल में जब भगवान राम चित्रकूट छोड़कर आगे दण्डक वन में प्रवेश किया तो विराध राक्षस ने एकाएक उन पर हमला कर दिया। वह तेजी से राम, लक्ष्मण और सीता पर झपटा और विदेहनन्दिनी सीता को गोद में ले जाकर कुछ दूर पर खड़ा हो गया तथा नाना प्रकार के दुर्व्यवहार करने लगा। राम लक्ष्मण ने पहले आपस में कुछ बातचीत की और तब राक्षस विराध ा से राम जी का परस्पर परिचय हुआ। विराध ने अपना परिचय देते हुए बताया कि मैंने तपस्या के द्वारा ब्रह्मा

जी को प्रसनन करके यह वरदान प्राप्त कर लिया है कि किसी भी शस्त्र से मेरा वध नहीं हो सकता–

"ततः सज्यं धनुः कृत्वा रामः सुनिशितांशरान्।

सुशीघ्रमभिसंधाय राक्षसं निज धान ह।।"[24]

घायल हो जाने पर उसराक्षस ने विदेह कुमारी सीता को अलग रख दिया और स्वयं हाथ में शूल लिए अत्यन्त कुपित होकर श्रीराम एवं लक्ष्मण पर प्रहार करने लगा तब दोनों भाइयों ने भी उसके शरीर पर प्रज्ज्वलित बाणों की वर्षा की, किन्तु विराध पर वरदान के कारण कोई असर नहीं हो रहा था। दोनों भाइयों ने तलवार ले शीघ्रता से दोनों बाहों को काट डाला भुजाओं के अलग हो जाने पर वह मेघ के समान काला राक्षस व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। राम, लक्ष्मण ने उसे उठाकर पटका और कई प्रकार से मारने का प्रयास किया, किन्तु वह राक्षस वरदान के प्रभाव से मरा नही। भगवान राम यह समझकर लक्ष्मण को एक गड्ढा खोदने की आज्ञा दी जिससे राक्षस को गाड़ा जा सके। रामजी एक पैर से विराध का गलादबाकर खड़े हुए थे तब अनायास ही उसे अपने पूर्वजन्म का इतिहास याद आ गया जिसे बताते हुए रामचन्द्र जी से क्षमा याचना की और अपने को जीवित ही गड्ढे में गाड़ने की प्रक्रिया का अनुमोदन किया। अतः राम और लक्ष्मण ने उसे गड्ढे में डालकर भूमि समाधि ा दे दी और वे आगे बढ़ गए।

(5)– रामायण में पांचवां युद्ध प्रकरण खर–दूषण और उसकी सेना का वध है, जिसे अरण्यकाण्ड के सर्ग 19 से 30 तक में दिखाया गया है। खर–दूषण की बहन सूर्पणखा श्रीराम लक्ष्मण के पास जाकर उनके रूप पर मोहित हो जाती है और उनके समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखती है। अपने प्रस्ताव के अस्वीकार होने पर सीता जी को कारण मानती है और उन पर हमला कर देती है। प्रत्युत्तर में श्री लक्ष्ण जी उसके नाक, कान काटकर कुरुप बनाकर उसे वापस कर देते हैं। खून से लथपथ वह खर के पास जाती है और सीता सहित राम लक्ष्मण को मार डालने के लिए प्रेरित करती है। खर के आदेश से चौदह बलशाली राक्षस सूर्पणखा के साथ पंचवटी पहुंचते हैं। राम और इन राक्षसों के बीच युद्ध होता है और तब श्रीराम ने एक साथ चौदह नाराच बाण छोड़े जिन्होंने चौदहों राक्षसों के ह्रदय को विदीर्ण कर दिया; उनके मारे जाने पर सूर्पणखा पुनः खर के पास गई और सूचना दी। ये समाचार सुनकर अपनी चौदह हजार राक्षसी सेना के साथ खर पंचवटी की ओर प्रस्थान करता है। दूषण खर का सेनापति है। अतः खर उसे पूरी सेना को सुव्यवस्थित ढंग से आक्रमण करने की आज्ञादेता है, खर स्वयं बहुत विशाल रथ में सवार होकर युद्ध के लिए जाता है। महाबलवान खर दृढ़ प्रतिज्ञा करता है कि वह रामलक्ष्मण को मारकर अपनी बहन सूर्पणखा को दोनों का खून पिलाकर उसका मनोरथ पूर्ण करेगा। गरजते हुए राक्षसों का घोर नाद सुनकर श्रीराम जी कवच आदि धारण करके अपने को युद्ध के लिए तैयार कर लिया; राक्षसों की सेना भगवान राम के सामने आ गई और युद्ध प्रारम्भ हुआ।

आधुनिक सामान्य जनों के लिए तार्किक बुद्धि द्वारा इस युद्ध को समझना बड़ा कठिन है क्योंकि एक ओर अकेले श्रीराम हैं जो बिना रथ के ही युद्ध मैदान में खड़े हैं तो दूसरी ओर रथारूढ़ खर–दूषण तथा त्रिशिरा जैसे योद्धाओं के नेतृत्व में चौदह हजार सैनिकों की सुसज्जित सेना है। आधुनिक ढंग से विचार करने पर स्पष्टतः श्रीराम को हार जाना चाहिए, किन्तु वे विचारशील पुरुष जिन्हें विश्वामित्र द्वारा राम जी कोदी गई युद्ध विद्याओं का रहस्य

मालुम है वे श्रीराम जी की विजय पर शंका नहीं करेंगे। राक्षसों के साथ राम का भयंकर युद्ध होता रहा कुछ राक्षस प्रहार से पीड़ित होकर खर राक्षस के पास दौड़े बीच में ही दूषण ने उन्हें धैर्य बंधाया और युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गए। दुर्धर योद्धा दूषण ने जब देखा कि उसकी सेना मारी जारही है तो उसने भयंकर आक्रमणकारी तथा रणभूमि में कभी भी पीठ नहीं दिखाने वाले पांच सहस्त्र राक्षसों के साथ श्रीराम पर टूट पड़ा। प्रभु ने दूषण के रथ के घोड़ों को बींधकर तथा सारथी को मारकर दूषण की छाती पर प्रहार किया। प्रभु नेउसकी भुजाएं काट डालीं इसके साथ ही दूषण के प्राण पखेरू उड़ गए।

तत्पश्चात तीन सेनापति महाकपाल, स्थूलाक्ष एवं महाबली प्रमाथी युद्ध करने के लिए आगे बढ़े प्रभु ने इनका खेल–खेल में वध कर डाला एवं पांच हजार बाणों से सभी पांच हजार सैनिकों का भी वध कर डाला।

सैनिकों सहित दूषण को मृत जानकर खर ने अन्य सेनापयिों के साथ प्रभु पर प्रहार करना आरम्भ कर दिया–

''एकमुक्ता खरः क्रुद्धो राममेवाभिदुद्रुवे।

श्येनगामी पृथुग्रीवो यक्षशत्रुविहंगमः।।

दुर्जयः करवीराक्षः परुषः कालकार्मुकः।

हेममाली महामाली सर्पास्यो रुधिरावशनः।।

द्वादशैते महावीर्या बलाध्यक्षाः ससैनिकाः।

राममेवाभ्य धावन्त विसृजन्तः' शरोत्तमान्।।''[25]

प्रभु ने कर्णि नामक बाणों से निशाचरों का एक साथ संहार कर डाला। अब युद्ध में केवल तीन ही व्यक्ति बचे–एक शत्रु नाशक श्रीराम, महारथी खर एवं त्रिशिरा। अब खर ने त्रिशिरा को युद्ध के लिए आज्ञा दी। तीन सरों से युक्त त्रिशिया पर्वत के समान युद्ध के लिए प्रभु के पास गया व प्रभु पर बाणों से हमला करने लगा। ''भयंकर युद्ध होने लगा त्रिशिरा ने तीनबाण उनके माथे पर मारे।''[26] प्रभु ने चौदह बाण त्रिशिरा की छाती में मारे उसका वक्षस्थल विदीर्ण किया तथा तीन बाणों से तीनों सिरों को काट डाला। त्रिशिरा को भूमि में गिरा देखकर, खर अपनी वीर सेना के साथ श्रीराम पर आक्रमण करने के लिए बढ़ा। उसने विषधर पान करने वाले बाण प्रभु के ऊपर छोड़े अपनी शस्त्र विद्या का परिचय देता हुआ भांति–भांति के बाणों को छोड़ा तथा रथ में सवार होकर रणभूमि में घूमने लगा। प्रभु ने भी आग–अंगारों के सदृश बाणों से आकाश को भर दिया। खर ने अपने युद्ध कौशल से प्रभु के धनुष एवं कवच को काट डाला तथा उनके मर्मस्थल पर चोंट पहुंचाई।''[27] युद्ध की भयंकरता बढ़ती गई अन्त में श्रीराम जीने अगस्त्य द्वारा दिए गए अग्निबाण से खर के वक्षस्थल पर मारा बाण लगते ही वह पृथ्वी पर गिर पड़ा और उसकी मृत्यु हो गई।

इस युद्ध में भी भगवान ने राक्षसों को मारकर पृथ्वी का भार हल्का कर दिया जो उनके अवतार का उद्देश्य था। इस युद्ध से यह भी पता चलता है कि भारत में युद्ध–विद्या बहुत ही उन्नत अवस्था में थी और यहां के ऋषि जैसे विश्वामित्र और अगस्त्य जी दिव्यास्त्रों का संग्रह भी रखते थे जिन्हें वह केवल अधिकारियों के हाथ में सौंपते थे। ये अधिकारी व्यक्ति उन दिव्यास्त्रों का प्रयोग उन आसुरी और राक्षसी शक्तियों के प्रयोग करने में करते थे जो सृष्टि संचालन प्रक्रिया में बाधा पहुंचा रहे होते थे। युद्ध नीति की दृष्टि से भी इन राक्षसों का मारा जाना

आवश्यक था यदि राम जी बिना मारे इनका रावण वध के लिए आगे बढ़ जाते तो वे बीच में अपने युद्ध में पीछे से भी राक्षसी फौजों द्वारा घेर लिए जाते। अतः इन राक्षसों को मारकर ही आगे बढ़ना युक्ति–युक्ति था।

(6)– 'रामायण' के छठवें युद्ध प्रकरण में जटायु तथा रावण के घोर युद्ध का वर्णन किया गया है, यह अरण्यकाण्ड के 51वें सर्ग में मिलता है। रावण, श्रीराम और लक्ष्मण की अनुपस्थिति में सीता का हरण करता है। जटायु और राम का परिचय दशरथ जी के मित्र के रूप में हो चुका है। अतः वह रावण को सीता जी को ले जाते हुए देख उन्हें ललकारता है–

'तिष्ठ तिष्ठ दशाग्रीव मुहूर्तं पश्य् रावण।
वृन्तादिव फलं त्वां त पातयेयं रथोत्तमात्।
युद्धातिथ्य प्रदास्यामि यथाप्राणं निशाचर।।''[28]

जटायु के वचनों को सुनकर रावण के बीसों नेत्र क्रोध के कारण लाल हो गए तथा वह जटायु पर बड़ी तेजी से झपटा फिर तो रावण और जटायु का अद्भुत युद्ध हुआ। रावण ने तीखे बाणों की वर्षा से गिद्धराज को ढक लिया, किन्तु जटायु ने सभी प्रहारों को सहन कर लिया और उन्होंने अपने पैने नख वाले दोनों पैरों से रावण के शरीर को विदीर्ण कर दिया। रावण के कवच, रथ के घोड़े तथा रथ को भी नष्ट कर डाला क्षत्र चांवर सहित उनके सेवक राक्षसों को भी मार डाला और सारथी कासिर भी अपनी चोंच से काट डाला, तबसीता को गोद में लिए रावण पृथ्वी पर गिर पड़ा।

वृद्धावस्था के कारण पक्षीराज जटायु को श्रान्त जानकर रावण अत्यन्त प्रसन्न हुआ तथा सीता जी को लेकर आकाश मार्ग से चल दिया। श्री जानकी जी को लेकर जाते हुए रावण का जटायु ने बड़े वेग से पीछा किया और रास्ते में उसे रोक कर जटायु जी बोले–

''वज्रसंस्पर्शबाणस्य भार्यो रामस्य रावण।
अल्पबुद्धे हरस्येनां वधाय खलु रक्षसाम्।।''[29]

वाकयुद्ध में जटायु जी ने अनेक बातें रावण को कही, किन्तु श्री जटायु जी की बातों का अनादर कर रावण जब भागने लगा तब जटायु जी राक्षसराज रावण की पीठ पर लिपट गए तथा अपने पैने नाखूनों से उसकी पीठ को विदीर्ण कर डाला। नख, चोंच और पंखों के अस्त्र से लड़ने वाले जटायु ने रावण के सिर के बाल नोंच डाले। शत्रुसूदन श्री जटायु जी ने अपनी चोंच से रावण की बायीं ओर की दसों भुजाओं को काट गिराया, किन्तु यह भुजाएं तुरन्त निकल आईं। क्रुद्ध होकर रावण ने जानकी जी को तो छोड़ दिया तथा मुष्ठिका एवं लातों से गिद्धराज को मारने लगे। राक्षसराज एवं पक्षिराज का एक मुहूर्त तक घमासान युद्ध हुआ और अन्ततः जटायु जी के दोनों पंख तथा दोनों पांव तलवार से काट डाले। पंखों के कट जाने से गिद्धराज मृतप्राय होकर पृथ्वी पर गिर पड़े।

(7)– सातवें युद्ध प्रकरण में श्रीराम लक्ष्मण का युद्ध कबन्ध नाम के राक्षस से हुआ जिसे अपने आप में विचित्र घटना भी कहा जा सकता है इसका वर्णन अरण्यकाण्ड के सर्ग संख्या 69 से 72 तक है। कबन्ध पूर्व जन्म में महाबली तथा बड़ा पराक्रमी था वह सूर्य, इन्द्र तथा चन्द्रमा के समान सुन्दर भी था इच्छानुसार अपना रूप भी

बदल लेता था। अतः वह कौतूहल वश अत्यन्त भयानक रूप बनाकर वनवासी ऋषियों मुनियों को तंग किया करता था महर्षि स्थूलशिरा ने उसके इस व्यवहार से कुपित होकर उसे घोर श्राप दे दिया जिससे उसका क्रूर तथा निन्दित रूप सदा के लिए हो गया। इस पर भी तपस्या करके ब्रह्मा से दीर्घायु होने का आशीर्वाद लिया। वन के घमण्ड में आकर इन्द्र के साथ युद्ध होता है इन्द्र के प्रहार से उसकी दोनों जंघाएं तथा मस्तक शरीर में घुस गए। वरदान के कारण वह मरा नहीं जीवन रक्षा के लिए इन्द्र ने उसे एक योजन लम्बी भुजा हो जाने का वरदान दे दिया जिससे वह वन में विचरण करने वाले पशुओं को पकड़कर अपना आहार जुटा लेता था। रामचन्द्र जी जब सीता जी की खोज करते हुए गहन वन में आगे बढ़े तब यह बहुत लम्बा चौड़ा बिना मस्तक का कबन्ध ा मिला उसका मुख पेट में था और उसके शरीर में रोये कांटों की भांति नुकीले थे तथा पहाड़ की भांति ऊँचा था। इस भयंकर राक्षस ने अपनी लम्बी भुजाओं से दोनों राजकुमारों को पकड़ लिया राघवेन्द्र ने इस प्रकार फंसने पर भी धैर्य नहीं खोया तथा लक्ष्मण के साथ विचार कर श्रीराम ने दाहिनी एवं लक्ष्मण ने बायीं भुजा बड़ी शीघ्रता से काट डाली। भुजाओं के कटते ही कबन्ध मेघ की भांति गम्भीर गर्जना करके पृथ्वी, आकाश तथा समस्त दिशाओं को गुंजाता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसने पुनः बड़े दीन भाव से दोनों राजकुमारों का परिचय पूछा श्रीराम जी ने अपना यथार्थ परिचय बता दिया इस पर कबन्ध ने भी अपने पूर्वजन्म का पूरा परिचय दे दिया और उनसे निवेदन किया कि सूर्यास्त होने के पूर्व ही उसको गड़ढे में रखकर यदि दोनों भाई भस्म कर दें तो वह अपने पूर्व दिव्य रूप को प्राप्त कर लेगा और तब वह सीता जी की खोज में सहायता भी कर सकेगा भगवान राम ने वैसा ही किया।वह श्रीराम जी से बोला जगत में कार्य करने के लिए छः युक्तियां हैं– सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और समाश्रय।''[30]

अतः आप ऋष्यमूक पर्वत पर जो पम्पा सरोवर तक स्थित है जाकर सुग्रीव से मित्रता करें तथा शबरी से भी मिलने की सलाह दी। श्रीराम जी उसकी सलाह के अनुसार ही सीता जी की खोज में आगे बढ़े।

(8)– 'रामायण' में आठवां युद्ध प्रसंग बालि और सुग्रीव का है जिसमें सुग्रीव के मित्र होने के नाते श्रीराम ने बालि को मारा, इसका वर्णन किष्किन्धा काण्ड के 12वें सर्ग में है। श्रीराम सीता जी की खोज करते हुए ऋष्यमूक पर्वत पर पहुंचते हैं यहां हनुमान ही के प्रयास से श्रीराम और सुग्रीव की मैत्री हो जाती है। सुग्रीव अपने भाई के साथ हुए बैर का वृतान्त बताते हैं, भगवान सुग्रीव के कष्ट को दूर करने के लिए बालि वध की प्रतिज्ञा करते हैं। राम के संरक्षण में किष्किन्धा जाकर सुग्रीव ने बालि को भयंकर गर्जना करके ललकारा बालि युद्ध मैदान में आया और दोनों भाइयों में द्वन्द्व युद्ध प्रारम्भ हो गया, भगवान श्रीराम वृक्ष की ओट से युद्ध देख रहे थे और बाण चलाकर बालि को मारना चाहते थे, किन्तु दोनों भाइयों में इतनी समानता थी कि वे बालि को पहचान नही सके। अतः अपना प्राणान्तकारी बाण छोड़ने का विचार त्याग दिया। इस बीच युद्ध में सुग्रीव के पैर उखड़ गए और वे अपने रक्षक श्रीराम को न देखकर ऋष्यमूक पर्वत की ओर भाग गए। राम ने सुग्रीव को स्पष्ट किया कि वेशभूषा, कद और चाल–ढाल में समान होने के कारण मैं तुम्हारी सहायता नहीं कर सका। श्रीराम जी से आश्वासन पाकर सुग्रीव पुनः युद्ध के लिए तैयार हुए, किन्तु इस बार इनके गले में लक्ष्मण जी द्वारा फूलों से भरी हुई गजपुष्पी लता की माल डाल दी गई थी।

सब लोग पुनः किष्किन्धापुरी पहुंचे वहां भगवन वृक्षों की ओट से खड़े हो गए और सुग्रीव ने अपने सिंहनाद से आकाश को फाड़ने वाली घोर गर्जना की बालि ने सुग्रीव का वह सिंहनाद सुना और उसे महान क्रोध उत्पन्न हुआ, बालि पैरों की धमक से पृथ्वी को विदीर्ण सा करता हुआ बड़े वेग से युद्ध के लिए चल पड़ा। सुग्रीव के पास आने पर दोनों भाइयों में अमर्ष बढ़ाने वाला क्रोध पूर्वक वार्तालाप हुआ। इसके बाद बालि ने वेग पूर्वक आक्रमण करके सुग्रीव पर मुक्के का प्रहार किया उस चोट से घायल और कुपित हुए सुग्रीव झरनों से युक्त पर्वत की भांति मुंहसे रक्त वमन करने लगे।''[31] जब रघुनाथ जी ने देखा कि वानर राज सुग्रीव कमजोर पड़ रहे हैं और बारम्बार इधर–उधर दृष्टि दौड़ा रहे हैं सुग्रीव को पीड़ित अवस्था में देंख महातेजस्वी श्रीराम ने बालि वध ा की इच्छा से अपने बाण को धनुष पर चढ़ाया। श्री रघुनाथ जी ने वज्र की भांति गड़गड़ाहट तथा अग्नि की भांति प्रकाश पैदा करने वाला बाण छोड़ दिया तथा उसके द्वारा बालि के वक्षस्थल पर चोट पहुंचाई जिससे–

''अथोक्षितः शोणिततोयविस्त्रवैः
सुपुष्पिताशोक इवानिलोद्धतः।
विचेतनो वासवसूनुराहवे
प्रभ्रंशितेन्द्रध्वजवत् क्षितिं गतः।।''[32]

इस समय धर्म के मर्म को न जानने वाले बालि ने कठोर वाणी में भगवान की भर्त्सना की। भगवान राम नेसमयोचित बालि के शब्द आक्षेपों का उचित उत्तर दिया। बालि भगवान के धर्ममय उपदेश से सन्तुष्ट हो जाता है और भगवान की शरण में जाता है।

विद्वानों के बीच मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम ने बालि सुग्रीव के युद्ध में अदृश्य रहकर बालि का वध क्यों किया, इस बात को लेकर अनेक प्रकार की शंकाएं और समाधान होते रहते हैं। वास्तव में जो भगवान राम ने बालि को समुचित उत्तर दे ही दिया था और बालि उससे पूरी तरह सन्तुष्ट भी था। अतः अन्य किसी को इस प्रकार की शंका नही होनी चाहिए।

(9)– नवम् युद्ध प्रसंग सुन्दरकाण्ड के सर्ग 41 से 54 तक में है जिसमें श्री हनुमान द्वारा प्रमदावन के विध्वंस से लेकर लंका दहन तक युद्ध चलता है। प्रमदावन के विध्वंस को सुनकर क्रोध से भरे हुए रावण ने अपने ही समान वीर किंकर नामधारी राक्षसों को भेजा जिनके साथ श्री हनुमान जी ने भयंकर युद्ध लड़ा। किंकर नामध ारी राक्षसों का संहार करके श्री हनुमान जी युद्ध की आकांक्षा से खड़े रहे। रावण प्रहस्त पुत्र जाम्बुमाली को श्री हनुमान का सामना करने के लिए आदेश देता है, इधर श्री हनुमान जी चैत्य प्रासाद का विध्वंस करके उसकी रक्षा में नियुक्त राक्षसों को मार डालते हैं। जाम्बुमाली एवं श्री हनुमान के बीच घमासान युद्ध शुरू होता है जिसमें जाम्बुमाली श्री हनुमान पर ''अर्द्धचन्द्र नामक बाण से उनके मुख, कर्णी नामक एक बाण से मस्तक पर और दस नाराचों से उन कपीश्वर की दोनों भुजाओं पर गहरी चोंट की।''[33] प्रत्युत्तर में श्री हनुमान श्री ने परिधि से जाम्बुमाली की छाती पर प्रहार किया तब जाम्बुमाली अन्य अनेक राक्षसों के साथ मारा गया। राक्षसों की मृत्यु से रावण राज बहुत क्रोधित था अब रावण ने अपने मंत्री के पुत्र जो बड़े बलवान एवं शक्तिशाली थे उन्हें श्री हनुमान जी सेयुद्ध हेतु भेजा। यह सातों वीर फाटक पर खड़े हनुमान जी पर टूट पड़े घमासान युद्ध के दौरान

हनुमान जी ने दो को थप्पड़ से मार गिराया, किन्हीं को पैरों से कुचल डाला किन्हीं का घूंसों से काम तमाम किया और किन्हीं को नखों से फाड़ डाला।"34 मंत्री के सातों पुत्रों के मारेजाने पर बाकी सेना भयभीत होकर दसों दिशाओं में भाग गई। इनकी मृत्यु से भयभीत रावण ने अपने भय को छिपाते हुए विरुपाक्ष, यूपाक्ष, दुर्धर, प्रद्यस और भासकर्ण इन पांच सेनापतियों को जो बड़े वीर, नीति–निपुण, धैर्यवान तथा युद्ध में वायु के समान वेग शाली थे। हनुमान जी को पकड़ने की आज्ञा दे दी। यह सभी राक्षस भयंकर अस्त्र–शस्त्रों से प्रहार करते हुए श्री हनुमान पर चारों ओर से टूट पड़े। युद्ध की भयंकरता बढ़ती गई जिसमें दुर्धर्ष, वीर विरुपाक्ष एवं यूपाक्ष को वानर शिरोमणि ने साल वृक्ष द्वारा मारडाला। यह देखकर प्रद्यस एवं भासकर्ण हनुमान जी पर प्रहार करने लगे जिसके प्रत्युत्तर में श्री हनुमान जी ने पर्वत–शिखर को उखाड़ कर दोनों राक्षसों के ऊपर प्रहार किया जिससे उनका शरीर खण्ड–खण्ड हो गया। बची हुई सेना का भी संहार कर डाला, इस युद्ध को पूर्ण करके वह पुनः युद्ध की आकांक्षा से पहले की भांति ही फाटक पर खड़े हो गए।

युद्ध के ऐसे समाचार को सुनकर रावण ने अपने पुत्र अक्ष कुमार को भेजने का निर्णय लिया क्योंकि वह युद्ध के लिए उद्धत एवं उत्कंठित रहने वाला था। आज्ञानुसार अक्ष कुमार भारी सेना साथ लेकर हनुमान के पास पहुंचा युद्ध प्रारम्भ हुआ, यह युद्ध इतना भयंकर हुआ कि देवता और असुर भी घबराहट में थे सम्पूर्ण प्रकृति प्रभावित हो रही थी और अक्षकुमार अपने युद्ध कौशल की प्रवीणता दिखा रहा था। महापराक्रमी हनुमान जी अपने शरीर को बढ़ाने लगे तथा रावण सुन अक्षकुमार को दग्ध करने लगे। अक्ष कुमार के युद्ध की प्रचण्डता कोदेखकर हनुमान जी ने घोर गर्जना की और घमासान युद्ध प्रारम्भ हुआ। अक्ष कुमार की वीरता एवं कुशलता पर श्री हनुमान जी भी मोहित हो उठे, किन्तु संग्राम में अक्ष कुमार के बढ़ते हुए पराक्रम की श्री हनुमान जी के लिए उपेक्षा करना युद्ध संगत नहीं था अतः उसे मारने का विचार किया और अक्ष कुमार को हजारों बार घुमाकर पूर्ण आवेग से युद्ध भूमि में पटक दिया जिससे उसके–

"स भग्नबाहू रुकटीदयोधरः

क्षरन्न सृऽ–निर्मातितास्थिलोचनः।

सम्भिन्नसंधिः प्रविकीर्णबिन्धनो

हतः क्षितौ वायुसेतेन राक्षसः।।"35

हनुमान जी पुनः युद्ध के लिए उसी वाटिका के द्वार पर जा खड़े हुए। अक्ष कुमार के मारे जाने की खबर सुनकर रावण पुत्र शोक के कारण आवेश में आ गया और अपने पुत्र इन्द्रजीत को हनुमान को पकड़कर लाने का आदेश दिया। इन्द्रजीत संग्राम भूमि की ओर चल पड़ा, मेघनाद को देखकर वानरवीर श्री हनुमान जी ने अपने शरीर को बढ़ाया। महातेजस्वी मेघनाद एवं अपार बलशाली हनुमान एक–दूसरे से भिड़ गए, युद्ध में सम्मानित मेघनाद के बाणों को श्री हनुमान जी विफल करने लगे। दोनों ही वीर अपनी–अपनी निपुणता दिखा रहे थे यह युद्ध चिन्ताकर्षक एवं दुःसह हो उठा था। बाणों का संधान करने में एकाग्रचित रहने वाले मेघनाद के बाण जब व्यर्थ होकर गिरने लगे तो उसने हनुमान जी को बन्दी बनाने पर विचार किया। कार्य सिद्धि हेतु ब्रह्मा जी द्वारा प्राप्त अस्त्र से प्रहार करता है जिसके प्रभाव से वानरवीर निश्चेष्ट होकर पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। हनुमान जी ने विचार

किए के शत्रु द्वारा मुझे बन्दी बना लेना युद्ध नीति के हिसाब से लाभदायक ही सिद्ध होगा। प्रमदावन की दूरी तय करके वह राक्षस राज रावण की सभा में उपस्थित हुए। गहन विचार–विमर्श के बाद हनुमान जी को दण्ड देने की योजना बनाई गई–

"आज्ञापयद राक्षसेन्द्रःपुरं सर्वे सचत्वरम्।

लांगूलेन प्रदीप्तेन रक्षोभिः परिणीयताम्।।"[36]

अग्नि प्रज्ज्वलित होते ही वह लंका नगरी को राख करके अपने मनोरथ को पूर्ण करते हैं तथा सम्पूर्ण नगरी को पीड़ित कर समुद्र के जल से अपनी आग बुझाते हैं।

(10– रामायण' का प्रसिद्ध युद्ध प्रसंग राम रावण कायुद्ध है जो युद्ध काण्ड के 42वें सर्ग से 107 सर्ग तक चलता है। श्रीराम द्वारा लंका पर आक्रमण होता है जिसमें राम–रावण युद्ध वानरों और राक्षसों के द्वन्द्व युद्ध से प्रारम्भ होता है। द्वन्द्व युद्ध में वानरों द्वारा राक्षसों की पराजय होती है। रात में वानरों एवं राक्षसों का घोर युद्ध होता है। अंगद रणभूमि में शत्रुओं का संहार करने के लिए आगे बढ़े। उन्होंने रावण पुत्र इन्द्रजीत को घायल कर दिया तथा उसके सारथी एवं घोड़ों को भी यम लोक पहुंचा दिया। इस घटना से क्षुभित इन्द्रजीत भयंकर क्रोध प्रकट करते हैं तथा सर्पमय बाणों से राम–लक्ष्मण को क्षत–विक्षत कर देते हैं–

"रामं च लक्ष्मणं चैव घोरैनगिमयैः शरैः।

विभेद समरे क्रुद्धः सर्वगात्रेषु राक्षसः।।"[37]

इस प्रकार से दोनों वीर नागपाश में बद्ध हो जाते हैं। श्रीराम लक्ष्मण को अचेत अवस्था में देखकर वानर शोक संतप्त हो जाते हैं। इन्द्रजीत हर्षोन्मत हो रावण को शत्रु वध का वृतान्त बताते हैं तथा रावण इन्द्रजीत का अभिनन्दन करते हैं। श्रीराम एवं लक्ष्मण के सचेत होने का समाचार पाकर राक्षसराज रावण चिन्तित हो उठता है और धूम्राक्ष को युद्ध भूमि में जाने की आज्ञा देते हैं। सुग्रीव के नेतृत्व में वानर सेना दुर्ग पर आक्रमण करती है। धूम्राक्ष राम–लक्ष्मण वध की आकांक्षा से युद्ध भूमि में आता है इस युद्ध में वानर सेना अभूतपूर्व उत्साह से भरी हुई थी जो राक्षस सेना कासंहार करती जा रही थी राक्षसों के मुखों में विषाद चिन्ह देखकर वानरों का रोष पूर्ववत प्रहार आरम्भ कर दिया। धूम्राख की मार से व्यथित वानर सेना को देख पवन पुत्र हनुमान वानर सेना का नेतृत्व करते हुए धूम्राक्ष का सामना करते हैं। इस भयंकर युद्ध में हनुमान जी के हाथों धूम्राक्ष मारा जाता है। धूम्राक्ष को मरा हुआ देखकर राक्षस सेना वानरों से भयभीत होकर लंकापुरी में प्रवेश करते हैं। धूम्राक्ष के मारे जाने का समाचार सुनकर क्रोध कलुषित रावण, क्रूर निशाचर वज्रदंष्ट्र को श्रीराम एवं सुग्रीव को मारने का आदेश देता है। वानरों और राक्षसों के बीच घमासान युद्ध होता है। वज्रदंष्ट्र एवं बालि कुमार अंगद की आज के युद्ध को पूरा करते हैं अंगद के दुर्धर प्रहार से वज्रदंष्ट्र काल कवलित हो जाता है।

वज्रदंष्ट्र की मृत्यु का समाचार सुनकर राक्षसराज रावण सेनापति प्रहस्त की सहमति से अकम्पन को युद्ध भूमि में भेजते हैं। युद्ध–भूमि में "वानर और राक्षस एक–दूसरे पर वृक्ष, शक्ति, गदा, प्रास, शिला, परिध और तोमर आदि से बलपूर्वक जल्दी–जल्दी प्रहार करने लगे।"38 अकम्पन के दुर्धर प्रहारों से भयभीत हो वानर सेना भागने लगी वानरों की इस अवस्था को देखकर हनुमान जी अकम्पन के सम्मुख युद्ध के लिए उपस्थित हुए दोनों वीरों के

बीच भयंकर युद्ध होता है। हनुमान जी ने वृक्ष उखाड़ लिया और अकम्पन के सिर पर प्रहार किया जिससे गहरी चोंट खाकर पृथ्वी पर गिरकर मर गया। वानरों द्वारा खदेड़ने पर राक्षस अपने अस्त्र–शस्त्र छोड़–छोड़कर लंका नगरी में घुस गए। अकम्पन के संहार के बाद मुख्य सेनानायक प्रहस्त युद्ध भूमि के लिए "नरान्तक कुम्भहनु, महानाद और समुन्नत ये प्रहस्त के चार सचिव उसे चारों ओर से घेरकर निकले।"[39] युद्ध में विजय की आकांक्षा से सुग्रीव की सेना की ओर बढ़ने लगे। दोनों पक्षों के वीर सैनिक भयंकर युद्ध करने लगे।" प्रहस्त्र के चारों सचिव वानरों का संहार करने लगे। "नारान्तक को द्विविद ने एक पर्वत के शिखर से मार डाला फिर दुर्मख ने एक विशाल वृक्ष लिए उठकर शीघ्रता पूर्वक हाथ चलाने वाले राक्षस समुन्नत को कुचल डाला तत्पश्चात अत्यन्त कुपित हुए जाम्बवान ने एक बड़ी भारी शिला उठा ली और उसे महानाद की छाती पे दे मारा, कुम्भहनु तार नामक वानर से भिड़ा और अन्त में एक विशाल वृक्ष की चपेट में आकर उसे भी रणभूमि में अपने प्राणों से हाथ धोने पड़े।"[40] प्रहस्त द्वारा वेगपूर्वक वानरों का संहार देखकर नील भी बलपूर्वक राक्षस सेना का संहार करने लगे। प्रहस्त और नील में भयंकर युद्ध चलता रहा दोनों ही अपनी–अपनी सेना के प्रधान सेनानायक थे। अतः विजय की अभिलाषा से घोर युद्ध में निमग्न थे। परम उद्योगी दुर्धर राक्षस प्रहस्त नील पर घात पर घात किए जा रहा था जिसके प्रत्युत्तर में नील ने भयंकर और विशाल शिला से प्रहस्त के मस्तक पर प्रहार किया जिससे आहत हो काल के गाल में समा गया। प्रहस्त के मारे जाने का समाचार सुनकर रावण स्वयं रथारूढ़ होकर रण क्षेत्र में पहुंचते हैं। रावण की सम्पन्न सेना देखकर श्री रामचन्द्र जी विभीषण से सैनिकों के बल एवं शक्ति का परिचय प्राप्त करते हैं। राक्षस राज रावण को युद्ध स्थल में देखकर सुग्रीव एक पर्वत शिखर के द्वारा आक्रमण करता है, किन्तु रावण उसे विफल कर देता है। इससे रुष्ट होकर रावण भयंकर वेग वाले बाण के मारक प्रहार से सुग्रीव को अचेत कर देता है। हर्षित राक्षसों की सेना देखकर गवाक्ष, गवय, सुषेण, ऋषभ, ज्योतिर्मुख और नल रावण पर एक साथ टूट पड़े, किन्तु रावण के सैकड़ों तीखे बाण इन्हें घायल कर देते हैं। वानरों की पीड़ित अवस्था को देखकर श्रीराम लक्ष्मण को युद्ध विषयक परामर्श देकर युद्ध की आज्ञा देते हैं। हनुमान एवं रावण में ओजपरक वार्तालाप होता है। जो युद्ध में परिवर्तित हो जाता है। नील के साथ रावण का भयंकर युद्ध होता है। रावण द्वारा आग्नेयास्त्र के प्रहार से नील अचेत होकर गिर पड़े। नील को गहरी चोंट देते हुए रावण का रथ लक्ष्मण की ओर मुड़ा जहां भयंकर युद्ध हुआ रावण ने शक्ति के द्वारा लक्ष्मण जी पर प्रहार किया जिससे वह अपने को न बचा सके। इस घटना से क्रोधित महावीर हनुमान ने रावण पर मुष्ठि प्रहार किया जिससे रावण मूर्च्छित व अस्त–व्यस्त हो गया, कुछ ही देर में अपने को सामान्य करते हुए श्रीराम के साथ युद्ध करता है। श्रीराम के प्रहार से वह युद्ध भूमि में साधनहीन हो जाता है। अतः पराजित रावण लंका नगरी में सहसा प्रवेश करता है। पराजय से दुखी रावण की आज्ञा से कुम्भकर्ण का परिचयदेते हैं। कुम्भकर्ण रावण के भवन में प्रवेश करता है युद्ध में जाने से पूर्व कुम्भकर्ण रावण को उसके कुकर्मों एवं हितकारी बात भी न मानने के पख में अनेक आलम्भ दिए तत्पश्चात धैर्य बंधाते हुए युद्ध में जाने से पूर्व कुम्भकर्ण रावण को उसके कुकर्मों एवं राम उसे मौत के अधीन नहीं करते। रघुनाथ जी लंका नगरी में जाने की आज्ञा देते हैं। अतः पराजित रावण लंका नगरी में सहसा प्रवेश करता है। पराजय से दुःखी रावण की आज्ञा से कुम्भकर्ण को जगाया जाता है। कुम्भकर्ण युद्ध भूमि की ओर बढ़ता है जिससे भयभीत वानर

सेना इधर–उधर भागने लगती है। विभीषण श्रीराम को कुम्भकर्ण का परिचय देते हैं। कुम्भकर्ण रावण के भवन में प्रवेश करता है युद्ध में जाने से पूर्व कुम्भकर्ण रावण को उसके कुकर्मों एवं हितकारी बात भी न मानने के पख में अनेक आलम्भ दिए तत्पश्चात धैर्य बंधाते हुए युद्ध उत्साह प्रकट करता है। रामायण के युद्ध प्रसंगों में आया यह पहला पात्र है जिसने युद्ध न करने की सलाह व लाभ की चर्चा करते हुए कूटनीति की सलाह रावण को दी है। कुम्भकर्ण वानर सेना का काफी विनाश कर चुका था। अतः वानर सेना ने कुम्भकर्ण के साथ भयंकर युद्ध आरम्भ किया। द्विविद ने पर्वत फेंककर हनुमान जी ने वृक्ष एवं पर्वत शिखरों से प्रहार किया। श्री हनुमान जी ने पर्वत शिखर लेकर भयानक शरीरधारी कुम्भकर्ण पर बड़े वेग से प्रहार किया उस मार से कुम्भकर्ण व्याकुल हो उठा उसका सारा शरीर चर्बी से गीला हो गया और वह रक्त से नहा गया।''[41] प्रत्युत्तर में महाबली हनुमान पर तीक्ष्ण प्रहार किया, जिससे राक्षस सेना में हर्ष की लहर दौड़ गई और वानर सेना में भगदड़ मच गई। स्थिति को सम्भालने के लिए नील ने पर्वत शिखर से कुम्भकर्ण पर प्रहार किया, किन्तु उसने मुष्ठि प्रयोग से चूर–चूर कर दिया। कुम्भकर्ण की मार से व्यथित कुछ वानर श्रीराम की शरण में गए। कुम्भकर्ण का वानर सेना के प्रमुख सेनापतियों से युद्ध होता है। अन्त में श्रीराम द्वारा उसके अंग–अंग काटकर उसे निस्तेज कर दिया। इस घटना के बाद रावण के पुत्र एवं भाई युद्ध के लिए प्रस्थान करते हैं। जिसमें नारान्तक का अंगद के द्वारा वध हो जाता है। हनुमान द्वारा देवान्तक और त्रिशिरा का नील द्वारा महोधर तथा ऋषभ द्वारा महापार्श्व का वध वर्णित है। अतिकाय का लक्ष्मण के साथ भयंकर युद्ध होता है जिसमें लक्ष्मण के हाथों अतिकाय मारा जाता है। पुत्रों और भाइयों के वध के दुःख से निमग्न हुए रावण से राक्षसराज इन्द्रजीत युद्ध भूमि में जाने की आज्ञा लेते हैं तथा राम लक्ष्मण का जीवन समाप्त करने के दृढ़ प्रतिज्ञा भी करते हैं। इन्द्रजीत शत्रुओं केप्रति अत्यन्त क्रोध से भरा हुआ अपने पराक्रम से राक्षसों का हर्ष बढ़ा रहा था। उसने बहुसंख्यक भयानक तीखे बाणों से गन्धमादन, मैन्द, जामवंत, नील, सुग्रीव,, ऋषभ, अंगद, द्विविद आदि को निष्प्राण कर दिया तथा वानर सेना को छकाने के लिए माया विद्या को प्रयोग आरम्भ किया। ''राक्षस प्रवर इन्द्रजीत ने दिव्य मंत्रों से अभिमंत्रित प्रासों, शूलों और पैने बाणों द्वारा हनुमान, सुग्रीव, अंगद, गन्धमादन, जामवंत, सुषेण, वेगदर्शी, मैन्द, द्विविद, नील, गवाक्ष, गवय, केसरी, हरिलोमा, विद्यदंष्ट्र, सूर्यानन, ज्योतिर्मुख, दधिमुख, पावकाक्ष, नल और कुमुद आदि सभी श्रेष्ठ वानरों को घायल कर दिया।''42 तथा राम और लक्ष्मण को मुर्च्छित करके लंकापुरी लौट गया वहां जाकर पिता से प्रसन्नतापूर्वक विजय का सारा समाचार बताया। औषधि के प्रयोग से राम लक्ष्मण एवं समस्त वानर पुनः स्वस्थ होते हैं। लंकापुरी का दहन कर राक्षसों एवं वानरों के बीच भयंकर युद्ध होता है। अंगद के द्वारा कम्पन और प्रजंघ, द्विविद के द्वारा शोणिताक्ष, मैन्द के द्वारा यूपाक्ष, सुग्रीव के द्वारा कुम्भ तथा हनुमान के द्वारा निकुम्भ का वध वर्णित है। रावण की आज्ञा से मकराक्ष युद्ध भूमि में जाता है जिसका रामचन्द्र जी वध करते हैं। इन्द्रजीत दुबारा युद्ध भूमि में पहुंचकर घोर युद्ध करता है जिसको उपाय विभीषण से प्राप्त कर लक्ष्मण को इन्द्रजीत वध के लिए श्रीराम आज्ञा देते हैं। लक्ष्मण और इन्द्रजीत के बीच शेषभरी वार्ता के बाद घोर युद्ध होता है जिसमें लक्ष्मण द्वारा इन्द्रजीत का वध होता है–

''तच्छिरः सरिरास्त्राणं श्री मज्ज्वलितकुण्डलम्।

प्रमथ्येन्द्रजितः कायात् पातयामास भूतले।।''43

श्रीराम द्वारा राक्षस सेना का संहार होता है। अब युद्ध भूमि में रावण तथा बचे हुए राक्षस एक साथ युद्ध के लिए प्रस्थान करते हैं। सुग्रीव द्वारा राक्षस सेना का संहार तथा विरुपाक्ष का वध महोदर से घोर युद्ध तथा अंगद के द्वारा महापार्श्व का वध होता है तत्पश्चात श्रीराम और रावण का युद्ध होता है। रावण की शक्ति से लक्ष्मण मूर्च्छित हो जाते हैं राम इस विषाद की स्थिति को छोड़ते हुए रावण के साथ अत्यन्त भयंकर युद्ध करने लगे लक्ष्मण की परिचर्या का ध्यान रखते हुए वह दृढ़ संकल्प लेते हैं कि–

''अस्मिन मुहूर्ते नचिरात् सत्यं प्रति शृणोमि वः।

अरावणमरामं वा जगद् द्रक्ष्यथ वानराः।।''44

घमासान युद्ध से भयभीत हो रावण वहां से भाग गया। राम–रावण का परस्पर युद्ध चलतारहा तथा श्रीराम द्वारा रावण का वध होता है–

''स वज्र इव दुर्धषो वाज्रिबाहुविसंर्जितः।

कृतान्त इव चावार्यो न्यपतद् रावणोरसि।।

स विसृष्टो महावेग शरीरान्तकरः परः।

बिभेद हृदय तस्य रावणस्य दुरात्मनः।।''45

(स)– महाभारत के युद्ध प्रसंग–

भारतीय लौकिक साहित्य में वाल्मीकि रामायण के पश्चात महर्षि व्यास द्वारा रचित महाभारत दूसरा अद्वितीय महाकाव्य है। मेरी मीमांसा का लक्ष्य महाभारत में वर्णित युद्ध पर ही विचार करने तक सीमित है, वास्तव में महाभारत ग्रन्थ की आधार भूमि ही युद्ध है। कौरव पाण्डवों के बीच बचपन में जिस बैर का सूत्रपात हुआ वही द्युत सभा से मजबूत होकर क्रिया–प्रतिक्रिया के माध्यम से महासंग्राम के रूप में परिणित हो गया, जो न केवल कौरव–पाण्डवों को अपितु उस समय के समस्त क्षत्रिय कुल को लपेट कर ऐसी जटिल गांठ बंध गई जिसमें सभी क्षत्रिय कुलों का नाश हो गया। विदुर और श्रीकृष्ण इस युद्ध को टालने का प्रयास करते हैं, किन्तु धृतराष्ट्र के पुत्र मोह और दुर्योधन के हठ के कारण यह महासंग्राम टाला नहीं जा सका। इस युद्ध में कौरवों की ओर से अवन्ति, दक्षिणापथ, केरात, कम्बोज, यवन, शक, मद्र, कैकय, सैन्धव और सौवीर तथा पाण्डवों की ओर से काशी, कोशला, मगध, पांचाल, चेदि, मत्स्य और यदुजनपदों ने युद्ध में भाग लिया था। प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार दोनों दलों की ओर से ग्यारह और सात अक्षौहिणी सेनाएं इस युद्ध में भाग ले रही थीं। एक अक्षौहिणी सेना में 21878 रथ इतने ही हाथी, 65610 घुड़सवार तथा 109350 पैदल सिपाही थे।

महाभारत युद्ध का दर्शन–

सृष्टि के संचालन का दायित्व तो भगवान पर ही है और वे देवताओं के माध्यम से सृष्टि व्यापार का संचालन करते रहते हैं, किन्तु आसुरी प्रकृति वालों को यह सिद्धान्त स्वीकार नहीं है। आसुरी प्रकृति वाले मनुष्यों का कहना है कि ''यह जगत आश्रय रहित और बिना ईश्वर के अपने आप ही स्त्री–पुरुष के संयोग से उत्पन्न हुआ है इसलिए केवल भोगों को भोगने के लिए ही है।''46 इस मिथ्याज्ञान के कारण सबका अपकार करने वाले क्रूर कर्मी

आसुरी प्रकृति के मनुष्य विषय भोगों की पूर्ति के लिए अन्यायपूर्वक धन आदि बहुत से पदार्थों का संग्रह करते हैं और अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए जगत का नाश करने को उद्धत हो जाते हैं। ऐसे में सृष्टि संचालक दैवी प्रकृति की शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं और जगत व्यापार अव्यवस्थित हो उठता है तब सृष्टि संचालक परमेश्वर किसी न किसी रूप में अवतरित हो आसुरी शक्तियों का विनाश करते हैं।

महाभारत काल में भगवान ने कृष्ण रूप में अवतार लिया और वे ही इस महायुद्ध के सूत्रधार बने। महाभारत युद्ध में जिन अद्भुत चमत्कारों का उल्लेख किया है वह विशेष रूप से मंत्र जन्य है। प्राचीन काल में जिन बाणों का प्रयोग किया जाता था स्वयं उनके क्या विलक्षणता थी यह कहना तो कठिन है, किन्तु उन बाणों के साथ संकल्प और मन से जो विकल्प किए जाते थे उन्हीं से शक्ति का प्रागट्य होता था। अतः आज उनके अवशेष की खोज का कोई अर्थ नहीं है। महाभारत के समय द्वापर युग में वासनाओं का मड़जाल फैला हुआ है कौन आसुरी प्रकृति का है? कौन दैवी प्रकृति का है? कुछ स्पष्ट नहीं है। द्वापर युग निश्चित वासनाओं का काल है। व्यक्ति के जीवन में पाप और पुण्य इतने घुल मिल गए हैं कि यह कहना इतना कठिन है कि कौन पवित्र है अथवा कौन अपवित्र। व्यक्तिगत रूप से दुर्योधन अत्यन्त स्वार्थी होते हुए भी अधर्म प्रसार के लिए रावण की तरह सक्रिय नहीं है वह धर्मभ्रष्ट करने अथवा देवी देवताओं को नष्ट करने के लिए युद्धरत नहीं था उसके विद्वेष का मुख्य कारण पाण्डव थे। 'महाभारत' के दूसरे योद्धाओं के चरित्र में भी विरोधाभास दिखाई देता है चाहे वह भीष्म पितामह हो अथवा महारथी कर्ण या फिर द्रोणाचार्य या कृपाचार्य आदि। पाण्डवों के पक्ष में भी दोहरे व्यक्तित्व वाले पात्र दिखाई देते हैं चाहे वह धर्मराज युधिष्ठिर ही क्यों न हों।

अस्तु निश्चयपूर्वक यह नहीं कहा जा सकता कि महाभारत का युद्ध धर्म और अधर्म के बीच था। वास्तव में अधिक से अधिक उसे न्याय एवं अन्याय के बीच का ही युद्ध कहना चाहिए जिसमें न्याय पक्ष युधिष्ठिर के साथ है। वैसे तो यह पृथ्वी से भार उतारने के लिए भगवान कृष्ण की लीला है। महाभारत युद्ध के बाद रामराज्य जैसे किसी शासन व्यवस्था का प्रादुर्भाव नहीं हुआ। महाभारत युद्ध की परिणति सर्वनाश के रूप में हुई कौरवों की ओर केवल तीन व्यक्ति शेष रहे कृतवर्मा, कृपाचार्य, अश्वत्थामा। विजेता पक्ष भी कम शोकाकुल नहीं था क्योंकि उसके समक्ष लक्ष्य–लक्ष्य विधवाओं का आर्त्तनाद था शोक और महाशून्य को छोड़कर उनके समक्ष कुछ नहीं बचा था। बहिरंग दृष्टि से महाभारत युद्ध का तथ्य अटपटा और भयावह प्रतीत होता है, किन्तु यह भगवान कृष्ण का तटस्थ निर्पेक्ष न्याय का एक सर्वश्रेष्ठ दृष्टान्त है। त्रेता में प्रत्येक व्यक्ति में धर्म–अधर्म का मिश्रण विद्यमान होने के कारण युद्ध के एक पक्ष की समग्र विजय का तात्पर्य शुभ धर्म के विजय के रूप में प्राप्त नहीं हो सकता था, इसलिए श्रीकृष्ण एक निष्पक्ष न्यायाधीश की भांति कार्य कर रहे थे। अपने–पराये का भेद न कर उन्होंने महाभारत युद्ध के बहाने से पृथ्वी का बोझ उतारकर अपने अवतार का अवचित्त सिद्ध कर दिया।

महाभारत युद्ध प्रसंगों में गुरु द्रोणाचार्य की आज्ञा से राजा द्रुपद को बन्दी बनाना, नारद जी द्वारा सुन्द–उपसुन्द नामक दो भाइयों की कथा सुनाकर युद्ध के दृश्य उपस्थित करना, उत्तर भारत का प्रतापी सम्राट जरासंध का भीम के साथ मल्ल युद्ध, राजसूय यज्ञ के समय श्रीकृष्ण द्वारा चेदि नरेश शिशुपाल का वध, द्वैतवन में कौरवों एवं गन्धर्वों के बीच युद्ध जिसमें बन्दी कौरवों को अर्जुन गन्धर्वों पर आक्रमण कर छुड़ाते हैं, युद्ध प्रसंगों का

नामोल्लेख करते हुए मैं विराट पर्व से प्रमुख युद्ध प्रसंगों का क्रमशः विवेचन प्रस्तुत कर रही हूँ।

(I)– पाण्डवों का अज्ञातवास और कीचक वध–

प्रस्तुत युद्ध प्रसंग विराट पर्व से लिया गया है जिसका घटनाक्रम इस प्रकार है– पाण्डव अपना अज्ञातवास मत्स्यराज विराट की नगरी में व्यतीत करने की योजना बनाते हैं जिसमें युधिष्ठिर कंक नामक ब्राह्मण भीम वल्लव नामक रसोइया, अर्जुन वृहन्नला, बनकर, नकुल ग्रन्थिक बनकर, सहदेव तन्तिपाल बनकर, तथा द्रौपदी सैरन्ध्री के रूप मे राजमहिषी सुदेष्णा के पास रहने का निश्चय करते हैं। यह सब अपने वेशभूषा बदल कर विराट नगरी में प्रवेश करते है–

''एवं सम्पादयन्तस्ते तदाऽन्योन्यं महारथाः।
विराटनगरे चेरुः: पुनर्गर्भधृता इव।।''[47]

द्रौपदी सैरन्ध्री के रूप में सुदेष्णा की साज–सज्जा में निमग्न रहने लगी थी। कीचक विराट नगरी का सेनापति था और राजा विराट कीचक की वजह से ही सकुशल राज्य कर रहे थे। तेरहवां वर्ष समाप्ति की ओर था तभी महाबली कीचक ने द्रौपदी को देखा–

''तां दृष्टवा देव गर्भाभां चरन्तीं देवतामिक।
कीचकः कामयामास कामबाण प्रतीड़ितः।।''[48]

किन्तु सैरन्ध्री उसे धर्म विषय से जोड़कर समझाती है। कीचक पुनः कहता है ''हे सुन्दरमुखी! सुधड़ शरीर वाली! चारुहासिनी! तुम्हारे लिए काम पीड़ित मुझे इस प्रकार इन्कार करने लायक नहीं हो।''49 उसे पुनः समझाते हुए चेतावनी भी देती है कि मै सदैव पांच वीरों द्वारा सुरक्षित हूं तुम व्यर्थ में अपनी मृत्यु को पास मत बुलाओ। द्रौपदी द्वारा ठकराए जाने पर काम पीड़ित कीचक सैरन्ध्री को प्राप्त करने के लिए विराट पत्नी का सहयोग लेता है। महारानी सुदेष्णा की आज्ञानुसार द्रौपदी मदिरा लेकर कीचक के निवास स्थान पर जाती है जहां ना–ना विधि से वह द्रौपदी को अपने वश में करना चाहता है कीचक द्वारा उसके हाथ पकड़े जाने पर वह सहसा झटककर कीचक को भूमि में गिराकर राज सभा में पहुंचती है। सैरन्ध्री अपने अपमान का बदला विराट के सेनापति कीचक के वध से पूर्ण करने की भीम के साथ मिलकर योजना बनाती है। कीचक नृत्य शाला में पहुंचता है जहां भीम शैया पर सोए हुए थे कीचक के स्पर्श करते ही दोनों में बाहु युद्ध होने लगा। ''भीम ने उसे अपनी भुजाओं में ऐसे कस लिया जैसे रस्सी से पशु कसा जाता है। बड़े वेग से अपनी दोनों भुजाओं से उसका गला पकड़कर द्रौपदी के क्रोध की शान्ति के लिए दबा दिया। तत्पश्चात उसके सारे अंगों को तोड़कर आंखें फोड़ डाली और उस अधम कीचक की कमर में अपने घुटने से प्रहार करके हाथों से दबा–दबाकर पशु की तरह मारडाला।''50

(II) विराट नगर का युद्ध–

प्रस्तुत युद्ध प्रसंग विराट पर्व से लिया गया है जिसका घटनाक्रम इस प्रकार है– गुप्तचर कीचक वध का समाचार सुनाता है। दुर्योधन त्रिगर्त नरेश सुशर्मा को विराट नगरी में गायों को छीनकर बहुत सा धन प्राप्त करने की योजना बनाते हैं तथा कौरव सेना भी दो भागों में विभक्त हो सहायता हेतु पहुंचेगी–

''वयमप्यनुगृहणीमो द्विधा कृत्वा वरुथिनीम्।

आददे गाः सुशमऽिथ कृष्णपक्षस्य सप्तमीम्।।''[51]

राजा सुशर्मा और राजा विराट की सेनाओं में घोर युद्ध हुआ दोनों ओर असंख्य सैनिक मारे गए। सुशर्मा ने अपने साथियों समेत राजा विराट को घेर लिया और उसको रथ से उतरने पर विवश किया। अन्त में सुशर्मा ने विराट को कैद करके अपने रथ में बैठा लिया और विजय का शंख बजाता हुआ अपनी छावनी में चला गया। राजा विराट के बन्दी बना लेने से उनकी सारी सेना तितर–बितर हो गई तथा सैनिक भागने लगे। युधिष्ठिर के आदेशानुसार भीम ने सुशर्मा के साथ युद्ध किया और राजा विराट को छुड़ा लिया तथा सुशर्मा को बन्दी बना लिया। मत्स्य देश की सेना जो डर के मारे भाग रही थी वह समर भूमि में फिर आ डटी और त्रिगर्त की सेना पर विजय प्राप्त कर ली। अगले ही दिन उत्तर दिशा से राजा दुर्योधन वे विराट नगर पर आक्रमण किया और ग्वालों की बस्ती में तबाही मचाना शुरू कर दिया। कौरव सेना असंख्य गायों और पशुओं को भगाकर ले जाने लगी बस्तियों में हाहाकार मच गयी तथा ग्वालों का मुखिया राजभवन की ओर भागा और राजकुमार उत्तर से अपनी विपदा सुनाई। ग्वालों की दुःखी स्थिति को देख राजकुमार उत्तर अदम्य उत्साह से भर उठे और योग्य सारथी की समस्या सामने रखी, किन्तु सैरन्ध्री और उत्तरा के सहयोग से वृहन्नला उत्तर का सारथी बनने को तैयार हुई तथा कौरव सेना का सामना करने को चल पड़ा। वहां पहुंचकर कौरवों की विशाल सेनादेखकर जिसका संचालन भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, कर्ण और दुर्योधन जैसे महारथी कर रहे थे। यह देखकर उत्तर का आत्म विश्वास धराशायी हो गया, किन्तु वृहन्नला ने उसे अपना वास्तवित परिचय देकर उसके भय को दूर कर दिया। उत्तर को सारथी बना अर्जुन गम्भीर घोष करता हुआ आगे बढ़ा। कौरव पक्ष में पाण्डवों के प्रकट होने पर चर्चा शुरू हो गई उस समय भीष्म पितामह ने दुर्योधन से पूछा कि तुम न्यायोचित संधि चाहते हो या युद्ध? किन्तु दुर्योधन ने युद्ध का मार्ग ही अपनाने पर बल दिया। वहां दुर्योधन का रथ न देखकर अर्जुन ने उत्तर से कहारथ उसी ओर हांको जिधर से दुर्योधन वापस जा रहा था। उस ओर जाते हुए अर्जुन ने गुरु द्रोणाचार्य एवं पितामह के चरणों में प्रणाम–बाण छोड़े तत्पश्चात दुर्योधन का पीछा किया। अर्जुन ने गायें भगा ले जाती हुई कौरव सेना की टुकड़ी के पास आकर कुछ ही देर में तितर–बितर कर दिया और गायें छुड़ा लीं। ग्वालों को गायें विराट नगर की ओर लौटा ले जाने की आज्ञा देकर अर्जुन दुर्योधन का पीछा करने लगा। ऐसा देखकर सभी कौरव महारथी एकजुट होकर अर्जुन पर बाणों की वर्षा करने लगे तब अर्जुन ने भी उन सभी महारथियों को बाणों से ढक दिया। सारी सेना को डराकर महारथियों को पराभूत करके युद्ध स्थल में डट गया और

''सम्मोहन शत्रुसहोऽन्यादस्त्र

प्रादुश्रकारैन्द्रिरवारणीयम्।

उत्सृत्ज चापानि दुरासदानि

सर्वे सदा शान्तिपराबभूवुः।।''[52]

शत्रुहन्ता अर्जुन शत्रुओं को मारकर वृहन्नला का रूप धारण कर राजकुमार उत्तर के साथ विराट नगर में पहुंच गए।

(II)– महाभारत के अट्ठारह दिन का मुख्य युद्ध–

आददे गाः सुशमऽिथ कृष्णपक्षस्य सप्तमीम्।।"[51]

राजा सुशर्मा और राजा विराट की सेनाओं में घोर युद्ध हुआ दोनों ओर असंख्य सैनिक मारे गए। सुशर्मा ने अपने साथियों समेत राजा विराट को घेर लिया और उसको रथ से उतरने पर विवश किया। अन्त में सुशर्मा ने विराट को कैद करके अपने रथ में बैठा लिया और विजय का शंख बजाता हुआ अपनी छावनी में चला गया। राजा विराट के बन्दी बना लेने से उनकी सारी सेना तितर–बितर हो गई तथा सैनिक भागने लगे। युधिष्ठिर के आदेशानुसार भीम ने सुशर्मा के साथ युद्ध किया और राजा विराट को छुड़ा लिया तथा सुशर्मा को बन्दी बना लिया। मत्स्य देश की सेना जो डर के मारे भाग रही थी वह समर भूमि में फिर आ डटी और त्रिगर्त की सेना पर विजय प्राप्त कर ली। अगले ही दिन उत्तर दिशा से राजा दुर्योधन वे विराट नगर पर आक्रमण किया और ग्वालों की बस्ती में तबाही मचाना शुरू कर दिया। कौरव सेना असंख्य गायों और पशुओं को भगाकर ले जाने लगी बस्तियों में हाहाकार मच गयी तथा ग्वालों का मुखिया राजभवन की ओर भागा और राजकुमार उत्तर से अपनी विपदा सुनाई। ग्वालों की दुःखी स्थिति को देख राजकुमार उत्तर अदम्य उत्साह से भर उठे और योग्य सारथी की समस्या सामने रखी, किन्तु सैरन्ध्री और उत्तरा के सहयोग से वृहन्नला उत्तर का सारथी बनने को तैयार हुई तथा कौरव सेना का सामना करने को चल पड़ा। वहां पहुंचकर कौरवों की विशाल सेनादेखकर जिसका संचालन भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, कर्ण और दुर्योधन जैसे महारथी कर रहे थे। यह देखकर उत्तर का आत्म विश्वास धराशायी हो गया, किन्तु वृहन्नला ने उसे अपना वास्तवित परिचय देकर उसके भय को दूर कर दिया। उत्तर को सारथी बना अर्जुन गम्भीर घोष करता हुआ आगे बढ़ा। कौरव पक्ष में पाण्डवों के प्रकट होने पर चर्चा शुरू हो गई उस समय भीष्म पितामह ने दुर्योधन से पूछा कि तुम न्यायोचित संधि चाहते हो या युद्ध? किन्तु दुर्योधन ने युद्ध का मार्ग ही अपनाने पर बल दिया। वहां दुर्योधन का रथ न देखकर अर्जुन ने उत्तर से कहारथ उसी ओर हांको जिधर से दुर्योधन वापस जा रहा था। उस ओर जाते हुए अर्जुन ने गुरु द्रोणाचार्य एवं पितामह के चरणों में प्रणाम–बाण छोड़े तत्पश्चात दुर्योधन का पीछा किया। अर्जुन ने गायें भगा ले जाती हुई कौरव सेना की टुकड़ी के पास आकर कुछ ही देर में तितर–बितर कर दिया और गायें छुड़ा लीं। ग्वालों को गायें विराट नगर की ओर लौटा ले जाने की आज्ञा देकर अर्जुन दुर्योधन का पीछा करने लगा। ऐसा देखकर सभी कौरव महारथी एकजुट होकर अर्जुन पर बाणों की वर्षा करने लगे तब अर्जुन ने भी उन सभी महारथियों को बाणों से ढक दिया। सारी सेना को डराकर महारथियों को पराभूत करके युद्ध स्थल में डट गया और

"सम्मोहन शत्रुसहोऽन्यादस्त्र
प्रादुश्रकारैन्द्रिरवारणीयम्।
उत्सृत्ज चापानि दुरासदानि
सर्वे सदा शान्तिपराबभूवुः।।"[52]

शत्रुहन्ता अर्जुन शत्रुओं को मारकर वृहन्नला का रूप धारण कर राजकुमार उत्तर के साथ विराट नगर में पहुंच गए।

(II)– महाभारत के अट्ठारह दिन का मुख्य युद्ध–

(अ)– भीष्म पितामह के नेतृत्व में युद्ध–

महाभारत का तृतीय युद्ध प्रसंग भीष्म पर्व में मिलता है। भीष्म पितामह के नेतृत्व में पहले दिन से लेकर दसवें दिन तक युद्ध चलता है जिसका घटनाक्रम इस प्रकार है– कौरवों और पाण्डवों की सेनाएं युद्ध भूमि में उपस्थित हुई इधर सेनापति भीष्म पितामह एवं सेनापति धृष्टद्युम्न अपनी–अपनी सेनाओं का निरीक्षण करते हैं और युद्ध प्रारम्भ होता है। पहले दिन की लड़ाई में भीष्म ने पाण्डवों पर ऐसा हमला किया कि पाण्डव सेना थर्रा उठी। सुभद्रा पुत्र अभिमन्यु यह देखकर क्रोध में आ गया और उसने वृद्ध पितामह का बढ़ना रोका। रथ को आगे बढ़ाते हुए अभिमन्यु ने कृतवर्मा महाराज शल्य एवं भीष्म को बाणों से आहत किया। इसके बाद कौरव वीरों ने अभिमन्यु को चारों ओर से घेर लिया और एक साथ उस पर बाणों की बौछार कर दी। अभिमन्यु इससे तनिक भी वितचित नहीं हुआ। यह सब देखकर राजा विराट, उत्तर, धृष्टद्युम्न, भीमसेन आदि पाण्डव–पक्ष के वीरों ने आकर चारों ओर से अभिमन्यु को घेरकर अपने बीच में ले लिया और भीष्म पितामह पर जोरों का हमला किया। विराट पुत्र उत्तर महाराज शल्य से भिड़ा जिसमें शल्य ने अपने शक्ति नामक हथियार का प्रयोग उत्तर के ऊपर किया जो कवच को भेदते हुए छाती में समा गया और राजकुमार उत्तर का शरीर पृथ्वी मृतप्राय होकर गिर पड़ा। विराट के ज्येष्ठ पुत्र श्वेत ने देखा कि उसके भाई को शल्य ने मार डाला तो वह शल्य पर प्राणघातक हमला करने लगा। शल्य को आफत में फंसा देखकर दुर्योधन एक भारी सेना लेकर उनकी रक्षा के लिए चला। इस सेना में और पाण्डव सेना में भयानक युद्ध छिड़ गया। श्वेत ने दुर्योधन की सेना की धज्जियां उड़ा दीं और दोनों में घमासान युद्ध होने लगा। भीष्म और श्वेत के बीच भयानक युद्ध हुआ जिसमें भीष्म क्रोध के मारे आपे से बाहर हो गए और एक बाण खींचकर श्वेत पर दे मारा। बाण के लगते ही श्वेत मृत्यु का वरण करता है। इसके बाद भीष्म ने पाण्डवों की सेना में भयंकर प्रलय मचा दी जिससे घबराकर पाण्डव श्रीकृष्ण के पास जाते हैं।

भीष्म के नेतृत्व में कौरव सेना ने फिर भीषण आक्रमण किया जिससे पाण्डव सेना में हाहाकार मच गई यह देखकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन का रथ भीष्म की ओर घुमा दिया। अर्जुन के रथ को अपनी ओर तेजी से आते देखकर भीष्म ने उसका बाणों से वीरोचित स्वागत किया तथा कौरव वीर भीष्म को चारों ओर से घेरकर अर्जुन से मुकाबला करने लगे। इधर अर्जुन निधड़क कौरव सेना की पंक्ति को तोड़ता हुआ आगे बढ़ा। सभी कौरव वीरों को अपना प्रतिरोध करते देख अर्जुन ठीक उनके बीचोंबीच जा डटा और फिर अपना गाण्डीव धनुष लेकर कुशलता से युद्ध करने लगा। भीष्म और अर्जुन में ऐसा भयानक संग्राम हुआ जिसमें दोनों पक्षों को भारी हानि उठानी पड़ी। एक ओर यह अद्भुत युद्ध होता रहा, दूसरी ओर द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न, जो द्रोणाचार्य के प्रति प्रतिशोध भाव से भरे थे आचार्य के साथ भिड़ गए। आचार्य द्रोण ने धृष्टद्युम्न पर तीखे बाणों की बौछार करके उन्हें घायल कर दिया। वह घृणा पूर्वक हंसता हुआ द्रोण पर बाण बरसाता रहा। आचार्य ने सहज ही उन बाणों को काट दिया तथा ध ृष्टद्युम्न के सारथी को भी मार गिराया। पांचाल राजकुमार की यह हालत देखकर भीमसेन उसके बचाव के लिए दौड़े और द्रोणाचार्य पर बाणों से एक साथ वर्षा कर दी और मौका पाते ही धृष्टद्युम्न को युद्ध क्षेत्र से बाहर निकाल लिया। दुर्योधन की आज्ञा से कलिंग सेना ने भीम पर हमला किया, किन्तु भीमसेन ने कलिंग सेना को तहस–नहस कर दिया। कौरव सेना का यह हाल देखकर भीष्म अर्जुन से लड़ना छोड़कर उनकी सहायता के

लिए इधर आ पहुंचे। यह देखकर सात्यकि, अभिमन्यु आदि पाण्डव वीर भीम की रक्षा के लिए पहुंच गए और भीष्म पर सब ने मिलकर हमला किया। आज के युद्ध में पाण्डवों का आतंक कौरव सेना में छा गया था।
तीसरे दिन दोनों सेनों की व्यूह रचना हो जाने के बाददोनों पक्ष युद्ध में लग गए और एक दूसरे पर हमला करने लगे। अर्जुन ने कौरव सेना पर बड़ी भीषण हमला किया फिर भी वह शत्रु सैन्य का मोर्चा न तोड़ सका। इसी प्रकार कौरवों के वीरों ने भी पाण्डवों की कतारें तोड़ने की चेष्टा की और वे अपनी सारी शक्ति लेकर अर्जुन पर टूट पड़े। आते हुए हथियारों को अर्जुन ने अपनी रण–कुशलता से रोक लिया और शत्रु दल के भयानक हथियारों को प्रभावहीन कर दिया। दूसरी ओर शकुनि को भारी सेना के साथ आया देखकर सात्यकि और अभिमन्यु ने उसका मुकाबला किया। सात्यकि के रथ को उसने तहस–नहस कर दिया जिससे क्रोधित हो सात्यकि ने शकुनि पर भीषण हमला करके उसे नष्ट कर दिया। युधिष्ठिर जिस सेना कासंचालन कर रहे थे, उस पर भीष्म और द्रोणाचार्य एक साथ टूट पड़े। यह देखकर नकुल और सहदेव युधिष्ठिर की सहायता करने दौड़ पड़े। उधर भीम और घटोत्कच ने एक साथ दुर्योधन पर हमला किया। भीमसेन के चलाए एक बाण से दुर्योधन जोर का धक्का खाकरबेहोश हो गया और रथ पर गिरपड़ा। यह देखकर उसके सारथी ने दुर्योधन को लड़ाई के मैदान से हटा लिया। कौरव सैनिकों ने समझा कि दुर्योधन युद्ध क्षेत्र से भाग खड़े हुए इससे सारी कौरव सेना भयभीत हो उठी और सैनिकों में भगदड़ मच गई। तितर–बितर हो रही कौरव सेना को सेनापति भीष्म एवं आचार्य द्रोण ने किसी तरह इकट्ठा किया और फिर से व्यवस्थित रूप से व्यूह रचना की। इसी बीच दुर्योधन की मूर्च्छा दूर हुई और उसने भी मैदान में आकर परिस्थिति सम्भालने में भीष्म और द्रोण का हाथ बंटाया। भीष्म ने ऐसा भयानक हमला किया कि पाण्डव सेना के पांव उखड़ गए। युद्ध की भीषणता को देखकर पाण्डव सेना भयभीत हो तितर–बितर होकर भागने लगी। श्री कृष्ण, अर्जुन एवं शिखण्डी के प्रयत्न के बावजूद सेना अनुशासित न रह सकी। भीष्म का आक्रमण हर घड़ी बल पकड़ता जा रहा था अर्जुन के प्रहारों से श्रीकृष्ण सन्तुष्ट न हुए और स्वयं रथ से कूद पड़े तथा टूटे रथ के चक्र को हाथ में लेकर भीष्म की ओर दौड़े फिर भी भीष्म के मुख में प्रसन्नता के भाव थे। इस प्रकार श्री कृष्ण को रोकते हुए अर्जुन ने पूरी तत्परता से युद्ध करने का वचन दिया। श्री कृष्ण के इस कार्य से उत्तेजित अर्जुन कौरव सैना पर वज्र के समान गिरा। हजारों की संख्या में कौरव वीरों को उसने मौत के घाट उतार दिया शाम होते–होते कौरव सेना बुरी तरह पराजित हुई।
अगले दिन भीष्म ने कौरवों की सेना का फिर से व्यूह रचा। द्रोण, दुर्योधन आदि वीर उन्हें घेरकर खड़े हो गए। लड़ाई शुरू हो गई जिसमें अश्वत्थामा, भूरिश्रवा, शल्य, चित्रसेन, शल पुत्र आदि पांचों वीरों ने बालक अभिमन्यु को एक साथ घेर लिया और भीषण वार करने लगे। अर्जुन के आने से युद्ध में और गर्मी आ गई पीछे से धृष्टद्युम्न भी विशाल सेना के साथ वहां पहुंच गया। शल का पुत्र मारा गया यह खबर सुन शल एवं शल्य धृष्टद्युम्न पर बाणों की वर्षा करने लगे। अभिमन्यु अपने पराक्रम का परिचय दे रहा था। अतः शल्य को संकट में जानकर दुर्योध ान उसकी मदद के लिए पहुंच गया तथा भीमसेन के साथ घमासान युद्ध होने लगा। इस बीच दुर्योधन ने जो बाण चलाए थे वो भीम की छाती में लगे इससे वह चिढ़ा हुआ था। क्रोधित भीम ने दुर्योधन पर कई बाण चलाए तथा उसके आठ भाइयों को भी मार डाला। दुर्योधन के बाणों से चोंट खाकर भीम मुर्च्छित सा होकर रथ में बैठ

गया। पिता का यह हाल देखकर घटोत्कच ने कौरव सेना पर भीषण आक्रमण किया। राक्षसी शक्ति से भयभीत हो भीष्म पितामह ने युद्ध बन्द कर दिया।

अगले दिन पुनः शंख ध्वनि के साथ लड़ाई शुरू हुई। भीष्म ने धनुष तानकर बाणों की झड़ी लगा दी और शीघ्र ही पाण्डव सेना में भारी तबाही मचा दी। द्रोणाचार्य भी पाण्डवों की सेना पर टूट पड़े जिनका सामना करने सात्यकि आता है जिसकी द्रोणाचार्य बाणों के प्रहार से बुरी गति बना देते हैं। ऐसा देखते भीम उसकी सहायता के लिए दौड़ा और आचार्य पर बाणों की बौछार करने लगा। भीष्म और शल्य भी भीमसेन के मुकाबले में आ डटे। यह देखकर शिखण्डी ने बाणों की झड़ी लगा दी। भीष्म ने युद्ध भूमि छोड़ दी। द्रोणाचार्य ने शिखण्डी पर हमला कर दिया विवश होकर शिखण्डी को द्रोणाचार्य के आगे से हटना पड़ा। तीसरे पहर दुर्योधन ने सात्यकि के पीछे एक भारी सेना भेज दी, सत्यकि द्वारा उस सेना का विनाश होता है तदुपरान्त भूरिश्रवा से भिड़ गया। युद्ध की भयंकरता देखकर सात्यकि के दसों पुत्र भूरिश्रवा पर टूट पड़े। भूरिश्रवा ने शीघ्र ही सात्यकि के दसों पुत्रों को यम लोक पहुंचा दिया। भीम सेन बड़ी कुशलता के साथ सात्यकि को युद्ध भूमि से बाहर निकाल लाते हैं। भीष्म ने युद्ध बन्द करने की आज्ञा दी।

छठवें दिन सवेरे युद्ध छिड़ते ही दोनों पक्षों की बड़ी जन हानि हुई। शीघ्र ही दोनों सेनाओं के व्यूह टूट–फूट गए। इस पर दोनों पक्ष के सेना समूह बांध तोड़कर निकल पड़े और एक–दूसरे से भिड़ गए। इस युद्ध में कौरवों के साथ धृष्टद्युम्न और भीम का भयंकर युद्ध हुआ सूरज डूबने तक युद्ध जारी रहा कौरवों के बीच पराक्रम दिखाते हुए धृष्टद्युम्न और भीम सकुशल शिविर में लौटे।

सातवें दिन का युद्ध केन्द्रित न था बल्कि कई मोर्चो पर व्याप्त था। अर्जुन के विरुद्ध भीष्म, द्रोणाचार्य और राजा विराट, शिखण्डी और अश्वत्थामा, धृष्टद्युम्न और दुर्योधन, नकुल सहदेव का शल्य के साथ, अवंती के दोनों राजा युधामन्यु के साथ, दुर्योधन के चार भाइयों से भीम, घटोत्कच और भगदत्त, अलम्बुष और सात्यकि, भूरिश्रवा और धृष्टद्युम्न, युधिष्ठिर और श्रुतायु, कृपाचार्य और चेकितान एक–दूसरे मोर्चे पर भिड़े थे। दोनों सेनाओं के बीच घमासान युद्ध होता है और सूर्यास्त के साथ ही युद्ध समाप्त हो गया।

आठवें दिन का युद्ध शुरू हुआ जिसके पहले आक्रमण में ही भीमसेन ने धृतराष्ट्र के आठ बेटों का वध कर दिया यह देख दुर्योधन का हृदय विदीर्ण कर दिया। अर्जुन पुत्र वीर इरावन जो नाग कन्या से उत्पन्न हुआ था अलम्बुष नामक राक्षस के हाथों मारा गया। दुर्योधन और घटोत्कच के बीच भयंकर युद्ध हुआ। घटोत्कच की दुर्योधन के ऊपर बढ़ती हुई शक्ति को देखकर भीष्म के आदेश से आचार्य द्रोण के नेतृत्व में एक बड़ी सेना दुर्योधन की सहायता के लिए पहुंच गई, कौरव वीरों ने घटोत्कच पर एक साथ हमला किया। इधर युधिष्ठिर के आदेश पर भीमसेन घटनास्थल पर पहुंच गए जिससे युद्ध की भयंकरता और बढ़ गई। सूर्यास्त होते ही युद्ध बन्द हो गया।

नवें दिन के युद्ध में अभिमन्यु और अलम्बुष में घोर युद्ध हुआ दूसरी और सात्यकि अश्वत्थामा भिड़े। द्रोण और अर्जुन की बहुत छोटी लड़ाई हुई। इसके बाद सभी पाण्डवों ने मिलकर पितामह पर एक साथ हमला किया आज का पूरा युद्ध भीष्म पितामह और अर्जुन के मध्य ही समाप्त हो गया।

दसवें दिन का युद्ध प्रारम्भ हुआ जिसमें पाण्डवों ने शिखण्डी को अर्जुन के आगे रखा। शिखण्डी की आड़ से

अर्जुन ने पितामह पर बाण बरसाए। शिखण्डी ने बाणों से वृद्ध पितामह का वक्षस्थल बेध डाला, किन्तु शिखण्डी के बाणों का प्रत्युत्तर नहीं दिया अर्जुन ने भीष्म के प्रतिरोध को न देखकर उनके मर्म–स्थानों को लक्ष्य करके तीखे बाणों से बींधना शुरू कर दिया। इस प्रकार अर्जुन ने अपना बाण बरसाना जारी रखा। महाभारत युद्ध के दसवें दिन शक्ति की अन्तिम बूंद समाप्त हो जाने पर रथ से युद्ध भूमि में गिर पड़े और भीष्म अपने सेनापतित्व काल के भीषण युद्ध को समाप्त कर मृत्यु शैया पर लेट गए।

(ब)– गुरु द्रोणाचार्य के नेतृत्व में युद्ध–

भीष्म के पश्चात द्रोणाचार्य कौरव सेना के सेनापति नियुक्त हुए और द्रोणाचार्य के नेतृत्व में युद्ध प्रारम्भ हुआजो पांच दिनों तक चला पहले दिन के संग्राम में उन्होंने अपने पराक्रम का काफी परिचय दिया। पाण्डव सेना का व्यूह उस मोर्चे पर टूट गया जहां धृष्टद्युम्न था और महारथियों में घोर द्वन्द्व छिड़ गया। भीमसेन और विविंशति, शल्य नरेश एवं नकुल, कृपाचार्य और धृष्टकेतु, सात्यकि और कृतवर्मा, राजा विराट और कर्ण एवं द्रोणाचार्य के सेनापतित्व में युद्ध कर रहे थे। अभिमन्यु पौरव, कृतवर्मा, जयद्रथ, शल्य आदि को अकेले ही परास्त कर देता है। भीम और शल्य ने गदा युद्ध छिड़ता है जिसमें शल्य बुरी तरह हार कर युद्ध क्षेत्र से हट जाते हैं। द्रोण युधिष्ठिर को कैद करने की इच्छा से युद्ध क्षेत्र में पहुंचते हैं–

''ततो हलहला, शब्द आसीधौधिष्ठरे बले।

जिधृक्षति महासिंहे गजानामिव यूथयम।।''[53]

अर्जुन के अचानक आ जाने से द्रोणाचार्य को पीछे हटना पड़ा। युधिष्ठिर को जीवित पकड़ने का उनका प्रयत्न विफल हो गया और संध्या होते–होते उस दिन का युद्ध भी समाप्त हो गया।

बारहवें दिन के युद्ध के लिए कौरवों ने युधिष्ठिर को बन्दी बनाने की योजना के तहत अर्जुन को युधिष्ठिर से दूर रखने के लिए एक बड़ी सेना इकट्ठी की और नियमानुसार संशप्तक व्रत (वर्तमान के आत्मघाती दस्तों की भांति) की दीक्षा ली। युद्ध भूमि में संशप्तकों ने अर्जुन को युद्ध के लिए ललकारा। अर्जुन का संशप्तकों को साथ घोर संग्राम होने लगा। अर्जुन को संशप्तकों से लड़ते देख द्रोणाचार्य ने अपनी सेना को आज्ञा दी कि पाण्डवों की सेना के व्यूह के उस स्थान पर आक्रमण करें जहां युधिष्ठिर हो। युधिष्ठिर ने पाण्डव सेनापति धृष्टद्युम्न को सचेत कर दिया जिसे देख द्रोणाचार्य को स्मरण हो आया कि दृष्टद्युम्न के द्वारा मेरी मृत्यु निश्चित है अतः राजा द्रुपद की ओर युद्ध करने को घूम गए। द्रुपद की सेना को परेशान करने के बाद द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर की ओर अपना रथ बढ़ाया। आचार्य को देखते ही युधिष्ठिर विचलित भाव से बाणों की वर्षा करने लगे। इस पर सत्यजित द्रोणाचार्य पर टूट पड़ा प्रत्युत्तर में द्रोणाचार्य में–

''ततः सत्यजिंत तीक्ष्णैर्दशभिर्मर्मभेदिभिः।

अविध्यच्छी घ्रमाचार्यश्शरैश्छित्वास्तय वै धनुः।।''[54]

सत्यजित शीघ्र ही ठीक होकर द्रोणाचार्य को आहत करने लगा अतः ''द्रोणाचार्य ने अर्द्धचन्द्र बाण से उस महान वीर का सिर काट दिया।''55 विराट पुत्र शतानीक, केदम नामक राजा, वसुधान आदि को मारते हुए तथा युध ाामन्यु, सात्यकि शिखण्डी, उत्तमौजा आदि महारथियों को तितर–बितर करते हुए द्रोणाचार्य युधिष्ठिर के पास

पहुंचे। उस बीच द्रुपद पुत्र पांचाल्य द्रोण से युद्ध करते हुए काल कवलित हो गया। वृद्ध भगदत्त पाण्डव सेना के साथ घमासान युद्ध लड़े। दूसरी ओर अर्जुन संशप्तकों से लड़ रहे थे। इसे यहीं पर छोड़ अर्जुन उस स्थान पर पहुंचे जहां भगदत्त और भीम का युद्ध हो रहा था। सुशर्मा का सामना करते हुए वह आगे बढ़ गए और अर्जुन का भगदत्त के साथ घमासान युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन ने चन्द्रार्कबिम्ब बाण द्वारा भगदत्त को बींध दिया। भगदत्त को गिरते देखकर कौरव सेना तितर–बितर होने लगी। शकुनि के भाई वृषक और अचल तब भी विचलित न हुए और अर्जुन के साथ युद्ध करते हुए मृत्यु को प्राप्त हुए। शकुनि वीर भाइयों को मृत देख अर्जुन से लड़ता है, आहत हो जाने पर उसे युद्ध क्षेत्र से हटना पड़ता है। इसके बाद पाण्डव सेना द्रोणाचार्य पर टूट पड़ी अपनी सेना को भयभीत एवं साहसहीन देखकर द्रोणाचार्य को लड़ाई बन्द करनी पड़ी।

तेरहवें दिन भी संशप्तकों ने अर्जुन को युद्ध के लिए ललकारा अर्जुन और संशप्तकों के बीच घोर संग्राम छिड़ गया। द्रोणाचार्य ने आज कौरव सेना की चक्रव्यूह में रचना की और युधिष्ठिर पर धावा बोला। युधिष्ठिर की ओर से भीम, सात्यकि, चेकितान, धृष्टद्युम्न, कुन्तिभोज, उत्तमौजा, विराटराज, कैकेय आदि वीरों ने द्रोणाचार्य के आक्रमण को रोकने का प्रयास किया। फिर भी द्रोण का वेग न रोक सके और सभी महारथी चिन्ता में पड़ गए। पाण्डव पक्ष की रक्षा के लिए अभिमन्यु द्रोणाचार्य के देखते–देखते चक्रव्यूह को तोड़कर अन्दर दाखिल हो गया। जो भी अभिमन्यु के सामने आया बाणों की मार से मारा गया। दुर्योधन अभिमन्यु से युद्ध करने गया। अभिमन्यु के पराक्रम से दुर्योधन को बड़े परिश्रम से छुटाया गया। कौरवों ने जब अभिमन्यु की युद्ध में कुशलता देखी तो युद्ध धर्म एवं लज्जा को त्याग एकजुट हो अकेले बालक पर टूट पड़े। अभिमन्यु ने कर्ण के अभेद्य कवच को छेद डाला और उसको बुरी तरह घायल कर दिया। दुःशासन ने अभिमन्यु पर बाणों से हमला किया अन्त में दुःशासन घायल होकर रथ में ही अचेत हो जाता है। इधर पाण्डवों की सेना अभिमन्यु के पीछे–पीछे चली जहां से व्यूह तोड़कर अभिमन्यु अन्दर घुसा था। पाण्डवों को व्यूह में प्रवेश करते देख सिंध देश का पराक्रमी राजा जयद्रथ उन पर टूट पड़ा। जयद्रथ के साहसपूर्ण काम और सूझ को देखकर कौरव सेना में उत्साह की लहर दौड़ गई। जयद्रथ की कुशलता और बहादुरी के चलते पाण्डव व्यूह में प्रवेश न कर सके। अभिमन्यु व्यूह के अन्दर अकेला रह गया। कौरव सेना के विनाश को देख दुर्योधन पुत्र लक्ष्मण अभिमन्यु से भिड़ गया तथा अपनी बहादुरी दिखाते हुए अभिमन्यु के भाला प्रहार से मृत होकर गिर पड़ा। लक्ष्मण को मृतप्राय देखकर दुर्योधन चिल्ला पड़ा। अतः कौरवों में अभिमन्यु वध के लिए भरसक प्रयास किए। तब द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, कर्ण, अश्वत्थामा, वृहद्बल और हृदिक पुत्र कृतवर्मा इनछः महारथियों ने अभिमन्यु को घेर लिया।''56 इस प्रकार सभी महारथियों ने उस पर तीव्र प्रहार किए, किन्तु दुःशासन पुत्र गदा लेकर अभिमन्यु पर झपटा और सिर पर प्रहार किया–

''गदावेगेन महता व्यायामेन च मोहितः।
विचेता न्यपतद्भूमौ सौभद्र परवीरहा।।
एवं विनिहतों राजन्नेकोबहुभिराहवे।
क्षोभयित्वा चमूं सर्वा नलिनीमित कुंजरः।।''[57]

चौदहवें दिन के युद्ध की शुरुआत द्रोण और जयद्रथ वध की प्रतीक्षारत अर्जुन के बीच होता है। अर्जुन श्री कृष्ण

की सलाह मानकर द्रोण को छोड़कर आगे बढ़ जाते हैं तथा तमाम कौरव योद्धाओं का संहार करते हैं। दुर्योधन अभिमंत्रित दुर्भेद कवच बांधकर अर्जुन के साथ घोर युद्ध करता है और घायल दुर्योधन को रण क्षेत्र से पलायन करना पड़ता है। अवसर प्राप्त कर अर्जुन जयद्रथ के पास पहुंचता है। घमासान युद्ध के बीच श्री कृष्ण के योग बल एवं सलाह से अर्जुन जयद्रथ का सिर काटकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करता है–

''स तु गाण्डीव निर्मुक्तः शरःश्येन इवाशुगः।
छित्वा शिरः सिन्धुपतेरुत्पागत विहायसम।।''[58]

चौदहवें दिन सूर्य के डूबने के बाद भी युद्ध जारी रखने के लिए मशाल जलाए गए। इस तरह युद्ध जारी रहा। कौरव पक्ष की इस दुःखद घटना के बाद आचार्य द्रोणाचार्य ने पांचाल सेना का भीषण संहार किया तथा घटोत्कच और कर्ण का भयानक युद्ध हुआ जिसमें कर्ण ने दिव्य शक्ति का प्रयोग घटोत्कच के ऊपर किया और उसके प्राण पखेरू उड़ गए। द्रोणाचार्य के नेतृत्व में पाण्डव सेना डगमगाने लगी थी जिसे किसी भी तरह रोकना पाण्डवों के लिए आवश्यक हो गया था। युद्ध में द्रोण वध हेतु श्री कृष्ण की मंत्रणा सफल हो जाती है। श्री कृष्ण की योजनानुसार युधिष्ठिर अर्द्धसत्य बोलने को तैयार हो जाते हैं। भीम ने मालव सेना में घुसकर अश्वत्थामा नामक हाथी को मारा और चिल्लाने लगे कि अश्वत्थामा मारा गया। अश्वत्थामा काफी दूर था जो इस षड्यन्त्र से अनभिज्ञ था। इधर धर्मराज युधिष्ठिर द्वारा कहे वचन–

''तदातथ्यभये मग्नोजये सक्तो युधिष्ठिरः।
अश्वत्थामा हत इति शब्दमुच्चैश्रृकार ह।
अव्यक्तमब्रवीद्राजन् हतः कुंजर इत्युत।।''[59]

जिसे श्रीकृष्ण ने शंख ध्वनि में डुबो दिया। द्रोणाचार्य युधिष्ठिर की कही बात पर हथियार छोड़ देते हैं इधर राज्य द्रुपद का पुत्र धृष्टद्युम्न निहत्थे गुरु द्रोणाचार्य पर खड्ग से वार करके उनकी गर्दन काट दी–

''तस्य मूर्द्धानमालम्वय गत सत्वस्य देहिनः।
किंचिदबुवतः कायाद्विचकर्तासिनाशिरः।।''[60]

<u>(स)– महारथी कर्ण के नेतृत्व में युद्ध–</u>

द्रोण वध के बाद सर्व सहमति से कर्ण को कौरव पक्ष का सेनापति नियुक्त किया जाता है। कर्ण के नेतृतव में दो दिन तक युद्ध चलता है। जबकि पाण्डवों का सेनापति धृष्टद्युम्न शुरुआत से अन्त तक (18 दिन) सेनापतित्व का कार्य सम्भालता है। उपयुक्त सारथी का चुनाव दुर्योधन अपनी सूझ–बूझ से कर लेते हैं। सारथी के रूप में महाराज शल्य को पाकर कौरव पक्ष बहुत प्रसन्न हुआ, किन्तु युधिष्ठिर द्वारा शल्य को कर्ण का मनोबल गिराने के लिए प्रेरित किया गया जिसे शल्य सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। सारथि शल्य ने रथी कर्ण का नेतृत्व स्वीकार नहीं किया। एक प्रकार से वह पाण्डवों की ओर से कर्ण के साथ मनोवैज्ञानिक युद्ध लड़ता रहा जिसके चलते भी अद्भुत पराक्रमी योद्धा कर्ण अर्जुन के साथ भयंकर युद्ध करता है। इधर भीम से दुर्योधन को बचाने के लिए कर्ण जाता है तथा घायल युधिष्ठिर को शिविर में ले जाते हैं। श्री कृष्ण अर्जुन को धिक्कारते हैं जिससे वह कर्ण वध की प्रतिज्ञा लेता है। कर्ण द्वारा सोमको का भारी संहार होता है। तो भी और दुःशासन के बीच भयंकर

गदा युद्ध होता है। अपनी–अपनी अद्‌भुत शक्तियों का दोनों एक–दूसरे पर प्रहार करते हैं, किन्तु भीम अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण कर "भीमसेन ने एक ही हाथ से दुःशासन की बांह उखाड़ लिया और वज्र के समान उसी कठोर भुजा से वह वीरों के मध्य ही दुःशासन को पीटने लगा। भूमि पर गिरे हुए दुःशासन की छाती फाड़कर उसका कुछ–कुछ गरम खून पीने लगा।"61 तथा रक्त को अपनी अंजुलि में भरकर रक्त लेप किया। अर्जुन के द्वारा कर्ण पुत्र वृषसेन का वध होता है तत्पश्चात अर्जुन और कर्ण में घोर युद्ध प्रारम्भ होता है। "सर्वप्रथम कर्ण ने दस शक्तिशाली बाणों द्वारा अर्जुन को बींध डालाऔर हंसकर अर्जुन ने भी जवाब में दस पैने बाण उसकी कांख में चलाए। तत्पश्चात कठोर धनुष वाले अर्जुन ने अपनी दोनों भुजाओं और गाण्डीव धनुष को पोछकर नाराच, नालीक, वराहकर्ण, क्षुर,, अम्जलिक और अर्द्धचन्द्र आदि बाणों का प्रहार आरम्भ किया।"[62] धीरे–धीरे युद्ध की भयंकरता बढ़ती गई और अर्जुन ने शक्तिशाली बाण का प्रयोग कर कर्ण का जीवन समाप्त कर दिया–

"इत्युचिवांस्तं प्रमुमोच बाणं

धनंजयः कर्णवधाय धोरम्।

ततोऽर्जुनस्तस्य शिरो जहार

वृत्रस्य वज्रेण यथा महेन्द्रः।।"[63]

कर्ण वध से दुःखी कौरव सेना शिविर में लौट जाती है।

(द)– महाराज शल्य के नेतृत्व में युद्ध–

कर्ण के पश्चात भाग्य और नियति को सर्वोपरि मानकर संग्राम जारी रखने का निश्चय कर राज क्षत्रिय विधिपूर्वक शल्य को सेनापति बनाया गया। जिसका नेतृत्व सम्भाल कौरव पक्ष युद्ध भूमि में पहुंचा। कौरवसेना से कर्ण के तीन पुत्र सुबाहु, चित्रसेन, सुषेण ने पाण्डव सेना के साथ घमासान युद्ध किया, किन्तु अर्जुन और नकुल ने इन्हें काम–कवलित करदिया। राजा शल्य नकुल के साथ भिड़े इस बीच भीमसेन के आ जाने से भयंकर युद्ध होने लगा। युधिष्ठिर को शल्य के साथ युद्ध करने में संकोच था किन्तु विजय प्राप्त करने एवं सेना में अदम्य उत्साह भरने का आग्रह कर श्री कृष्ण सफलता प्राप्त कर लेते हैं। इस प्रकार शल्य दोपहर में युधिष्ठिर के हाथों वीर गति को प्राप्त होते हैं–

"ततः शल्यो महाराजः कृत्वा कदनमाहवे।

ससैन्योऽथ स मध्याहे धर्मराजेन घातितः।।64

(य)– भीम का दुर्योधन के साथ गदा युद्ध–

शल्य के वध के बाद भी रहे सहे धृतराष्ट्र के पुत्रों ने हिम्मत न हारी। उन्होंने चारों तरफ से भीम को घेर लिया और उस पर बाणों की झड़ी लगा दी, किन्तु शीघ्र ही भीम ने उनका जीवन समाप्त कर दिया। दूसरी ओर शकुनि और सहदेव का युद्ध हो रहा था जिसमें सहदेव ने तलवार की पैनी धार के समान नोक वाला एक बाण शकुनि पर चलाया जिससे उसकासिर कटकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। इस प्रकार कौरव सेना के सारे वीर कुरुक्षेत्र की भूमि पर सदा के लिए सो गए।

अब अकेला दुर्योधन बचा था उसके पास न तो सेना थी न रथ है। ऐसी स्थिति में दुर्योधन अकेला ही हाथ में

गदा ले चुपके से जलाशय की ओर गया। युधिष्ठिर और उसके भाई उसे खोजते हुए उसको जलाशय में पहुंचे जहां वह छिपा बैठा था। युधिष्ठिर दुर्योधन को युद्ध के लिए ललकारते हैं तथा जलाशय से बाहर आ द्वन्द्व युद्ध के लिए तैयार होते हैं। भीम एवं दुर्योधन में गदा युद्ध प्रारम्भ होता है। दोनों की गदायें एक–दूसरे से टकरातीं तो उनमें से चिनगारियां निकल पड़तीं। इस तरह बड़ी देर तक युद्ध जारी रहा और परिणाम अनिर्णीत देख कृष्ण ने अर्जुन की ओर जांघ प्रहार का संकेत दिया तथा अर्जुन के द्वारा किए गए संकेत को जान लिया और पैतरा बदलते हुए पाण्डु पुत्र भीम ने बड़े वेग से उनकी जांघों पर गदा से प्रहार किया–

''सा वज्रनिस्पेषसमा प्रहिता भीम कर्मणा।

ऊरू दुर्योधनस्याथ बभंज प्रियदर्शनौ।।''[65]

इस प्रकार कौरव वंश का अन्तिम दीपक भी बुझ गया।

पौराणिक युद्ध काव्यों की प्रेरक स्थितियाँ–

आधुनिक युद्ध परक कविताओं के विशय में सामान्य निरूपण किया है जिसमें महाभारत एवं रामायण के युद्ध प्रसंग एवं द्वितीय विश्व युद्ध की परिस्थितियाँ इसके मूल उद्‌गम हैं। आलोच्य शोध–प्रबन्ध में आधुनिक युद्ध परक कविता के सन्दर्भ में पृथक–पृथक निरूपण किया है। आधुनिक कविता के पात्रों का पौराणिक ग्रन्थों में अस्तित्व है। कथा प्रसंग प्राचीन होते हुए भी नए रूप में नए भावों के साथ प्रस्तुत किए गए हैं। महाभारत की कथावस्तु कौरव पाण्डवों के युद्ध पर केन्द्रित है आज के सन्दर्भ में कौरव–पाण्डवों के समान भ्राताओं में अनन्यद्वेष को चित्रित करने का श्रेय महाभारत, रामायण एवं आधुनिक युद्धों को है। पौराणिक युद्ध काव्यों की प्रेरक स्थितियाँ सामान्यतः राज्य लिप्सा, स्त्री अपमान एवं न्यायोचित अधिकार ही हैं, किन्तु डा. लल्लन जी सिंह ने प्राचीन भारत के युद्ध के प्रमुख आठ कारणों को रेखांकित किया है–

1. अपहृत नारी को मुक्त कराना
2. मित्रों की सहायता
3. प्रतिशोध हेतु
4. सार्वभौम सत्ता के लिए
5. कुशासक पड़ोसी को दण्ड देने के लिए
6. सम्पत्ति के लिए
7. नारी के लिए
8. राज्य विस्तार के लिए

उपर्युक्त स्थितियों को आधार भूमि बनाते हुए मैं आधुनिक युद्ध परक कविताओं की प्रेरक स्थितियों का विवेचन प्रस्तुत कर रही हूँ–

'राम की शक्तिपूजा' एवं 'संशय की एक रात' रामायण के प्रसंग पर आधारित है और रामायण की प्रमुख समस्या अपहृत नारी को स्वतन्त्र कराने की है। दोनों कृतियों में राम–रावण के युद्ध की प्रेरक स्थिति अपहृत नारी है। कवि के शब्दों में–

"जानकी! हाय, उद्धार प्रिया का न हो सका।"66

नरेश मेहता ने राम के चरित्र को लोक मर्यादा से जोड़ते हुए सीता के प्रति उनके उत्तरदायित्व को रेखांकित किया है–

"क्या सोचते होंगे जनक जी?
बन्धु–बान्धव और
पुरवासी सभी क्या कह रहे होंगे?
स्वयं सीता
सोचती होगी
क्या?"67

'अन्धा युग' में दुर्योधन से मित्रता को निभाने के लिए युद्ध के बाद भी अश्वत्थामा पाण्डवों के वंश नाम का संकल्प पूरा करता है। कवि के शब्दों में–

"यह अचूक अस्त्र अश्वत्थामा का
निश्चित गिरे जाकर
उत्तरा के गर्भ पर।
वापस नहीं होगा।"68

अश्वत्थामा अपने पिता की मौत से आहत होकर प्रतिशोध से अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित करता है और यह लक्ष्य पाण्डवों का विनाश है। कवि के शब्दों में–

"कल तक मैं लूंगा प्रतिशोध
सेना यदि छोड़ जाय
तब भी अकेला मैं........."69

'एक कंठ विषपायी' में महाभारत दक्ष अपने अपमान का बदला यज्ञ आयोजन से अपमानित होकर आत्मदाह कर लेती है। जैसे भगवती सीता अग्नि परीक्षा देने में भूमि में ही समा गई थी उसी प्रकार सती अपमान बोध से पीड़ित होकर आत्मदाह कर लेती है। कवि के शब्दों में–

"भगवती सती का अधझुलसा शव
सामने पड़ा था........."70

उपर्युक्त स्थिति के कारण शंकर को युद्ध का मार्ग चुनना पड़ा।

'अन्धेरे में' मुक्तिबोध पूंजीवादी व्यवस्था से युद्ध करते दिखाई देते हैं, क्योंकि समान्य जन ऐसी व्यवस्था से खिन्न रहते हैं। निम्न पंक्तियों में कवि आततायी शासन से मुक्त मनःस्थिति का वर्णन करता है। कवि के शब्दों में–

"रिहा!
छोड़ दिया गया मैं
कई छाया मुख अब करते हैं पीछा,

छाया कृतियां न छोड़ती हैं मुझको,
जहां–जहां गया वहां
भौहों के नीचे के रहस्यमय छेद
मारते हैं संगीन–''[71]

उपर्युक्त पंक्तियां न्यायोचित अधिकार से प्रेरित हैं क्योंकि शोषण, अनाचार एवं परतन्त्रता से मुक्ति पाना प्रत्येक प्राणी का अधिकार है रामायण में वीणा को लेकर में राम की सेना के प्रस्तुत हो जाने पर भी रावण अपनी विजय के प्रति आश्वस्त एवं तनाव रहित दिखाई देता है। 'असाध्यवीणा' में वीणा को लेकर क्रियागत, मनोगत, परिस्थितिगत तनाव से उत्पन्न भाव बोध दिखाई नहीं देते। कवि के शब्दों में–

''आ गए प्रियंवद!
साध आज मेरे जीवन की पूरी होगी।''[72]

'रामायण' में विश्वामित्र एवं वशिष्ट के बीच जैसा संघर्ष हुआ उसे आज के आधुनिक कवि 'धूमिल' 'पटकथा' में व्यक्त करत हैं। वह देश की भयावह स्थिति के प्रति विद्रोह व्यक्त करता है क्योंकि उसके सामने झूठ, फरेब, धोखा, स्वार्थ तथा आत्महित प्रधान है जिसमें फंसा कवि अन्तर्द्वन्द्व में जीता है। कवि के शब्दों में–

''जनतन्त्र, त्याग, स्वतन्त्रता.......
संस्कृति, शान्ति, मनुष्यता.........
ये सारे शब्द थे
सुनहरे वादे थे.........
सुन्दर थे मौलिक थे......... ।''[73]

'मुक्ति प्रसंग' का मुख्य आधार जीने की इच्छा और मोक्ष है। समाज में व्याप्त निद्रूपताओं, विसंगतियों, विकृतियों के बीच मुक्त और स्वाधीन रहने का निरन्तर संघर्ष चलता रहता है ऐसी मनःस्थिति को कवि निम्न पंक्तियों में व्यक्त करता है–

''कुछ नहीं होगा तुम्हें
वैसा जो नहीं हुआ अब तक मर्मान्तक किन्तु
मेरा चेहरा मेरी गरदन मेरे कन्धे काले पत्थर की
अपनी बाहों में
समेटकर वह मुस्कुराती है।
वही होगा वही होगा
रोक लिया गया था
अब तक जिसे विपरीत ऋतुओं और मांगलिक नक्षत्रों के कारण........''[74]

'नाटक जारी है' कविता अन्तर्द्वन्द्व, संघर्ष एवं व्यवस्था की समस्या पर केन्द्रित है जो मानव के षड्यन्त्रों व्यवस्था की समस्या पर केन्द्रित है जो मानव के षड्यन्त्रों का विरोध करते हुए आगे बढ़ती है। यह रामायण, महाभारत

एवं गत युद्धों की पृष्ठभूमि बखूबी देखा गया है। इस स्थिति से कवि प्रभावित हुआ है और उसे अपनी कविता में व्यक्त करता है। कवि के शब्दों में–

''यद्यपि मौजूदा दृश्य के पीछे
हा–हाकार कोरस की तरह बज रहा है
और भी गौर से सुनें
उसमें बहुत अप्रिय स्वर वाला एक पुराना बाजा है
जो हमारे अज्ञान और हमारी गरीबी को
संस्कृति की तरह अलापता है
और खारिज अपीलों वाले समूचे संसार को
एक सजायाफ्ता राग में बदल देता है''[75]

रामायण, महाभारत, द्वितीय विश्व युद्ध, भारत–पाक, भारत–चीन, बांग्लादेश, कारगिल सभी राज्य विस्तार एवं राज्य लिप्सा की भावना से जुड़े हैं। 'ले बांध कफन सर मेरे मां' शीर्षक कविता में कवि जय भारद्वाज अनाधिकार दूसरों की सीमा पर विस्तार करने से रोकते हैं–

''पाक–पवित्र सीमाओं का
अतिक्रमण न हो पाएगा,
तेरी मिट्टी के कण बदले,
लहू मेरा काम आ जाएगा,
चरण धूल को छू लेने दे
मुझकों सुबह सवेरे मां,
ले बांध कफन सर मेरे मां।''[76]

कवि एस. सारंगपाणि ने युद्ध का कारण लोभ को माना है कि यही हृदय के उच्च सिंहासन पर बैठकरमनुष्यों के द्वारा खेलता है। कवि सन्तोष को धर्म का पुण्य द्वार मानता है सन्देह, चिन्ता, अर्थ और आशंका सुख के सिंहासन तक नहीं पहुंचा सकते। रामायण एवं महाभारत के युद्ध काकारण लोभ ही है। कवि के शब्दों में–

''कैकेयी के हृदय में पैठ राम को तुमने
दिलवाया वनवास चौदह वर्षो का,
अधिकार चित्त पर करके दुर्योधन के
नाश करडालाअंत में उसका,
रावण का था संसार सुखमय कैसा लंका में
मिल गया मिट्टी में वह सहसा
प्रधान कारण हो तुम अलक्षित इन सबका।''[77]

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि आधुनिक युद्ध परक काव्य रामायण, महाभारत एवं गत युद्धों से प्रभावित है।

युद्ध की समस्या का सम्बन्ध आज मनुष्य की जिन्दगी से जुड़ गया है क्योंकि मनुष्य अपनी जरूरतों के लिए अन्तर्जगत एवं बाह्य जगत से युद्ध करता दिखाई देता है। कभी व्यवस्था की बुराई से युद्ध चलता है तो कभी झूठे आश्वासनों के खिलाफ युद्ध करके उसे बदलने की कोशिश जारी रहती है। यह युद्ध व्यक्ति, परिवार, समाज, देश और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुंच जाता है। युद्ध के कारण वही आज भी है जो पौराणिक काल से रहे हैं चाहे दयनीयता की विवशता हो या धनवानों की विलासित या राज्य विस्तार की भावना अपने अस्तित्व को सर्वोपरि रखने के पीछे ही आज तक हम युद्ध से मुख नहीं मोड़ पाए क्योंकि कहीं न कहीं कोई ताकतवर अपने से कमजोर को दबाकर उसकी जगह पर काबिज हो जाता है।

य)— द्वितीय विश्व युद्ध की परिस्थितियाँ और उनका प्रभाव—

प्रत्येक वीभत्सकारी युद्ध के उपरान्त शान्ति के महत्वपूर्ण प्रयत्न किए जाते हैं। इसी प्रकार अत्यन्त विनाशकारी प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात भी वार्साय की महत्वपूर्ण सन्धि हुई तब सभी ने सोचा था कि मानवता को अब सदैव के लिए युद्ध से छुटकारा मिल गया, परन्तु यह व्यवस्था भी अस्थायी सिद्ध हुई। बीस वर्ष के पश्चात भय, घृणा, गुटबन्दी आदि के कारण संघर्ष का वातावरण पुनः छा गया। ऐसी परिस्थितियों में विश्व को पुनः अत्यन्त भयानक युद्ध का सामना करना पड़ा। वर्तमान में द्वितीय विश्व युद्ध मानव जाति के इतिहास की एक अत्यन्त कलंकित घटना है। वास्तव में यह युद्ध बदले की भावना से प्रेरित था, उस समय की राजनैतिक स्थिति ही इस प्रकार की हो गई थी कि युद्ध अवश्यम्भावी सा हो गया था।

राजनीति विशेषज्ञों का विचार है कि प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात संसार में शान्ति स्थापित नहीं हुई क्योंकि किसी न किसी क्षेत्र में संघर्ष चलता रहा। अतएव द्वितीय विश्व युद्ध के कारण उन समस्त घटनाओं, क्रियाओं तथा प्रतिक्रियाओं में निहित है जो पेरिस की सन्धि से लेकर पोलैण्ड के आक्रमण तक घटी। द्वितीय विश्व युद्ध के प्रमुख कारण और परिस्थितियाँ इस प्रकार है—

1)— पेरिस की सन्धि— द्वितीय विश्व युद्ध के कारणों के बीच पेरिस में हुई सन्धि में से उपजा पेरिस सम्मेलन में प्रथम विश्व युद्ध की विभीषिका से आतंकित देशों ने विश्व शान्ति की स्थापना हेतु कार्यवाही की परन्तु उनके कार्यों में ईमानदारी नहीं थी। फ्रांस में जर्मनी से 1877 की पराजय का प्रतिशोध लिया और उसे राजनैतिक, आर्थिक तथा सैनिक रूप से पंगु बना दिया। उसके व्यापार तथा वाणिज्य को बड़ी क्षति पहुंचाई। ब्रिटेन की नौ सैनिक शक्ति से प्रतिस्पर्धा करने वाली नौ सैनिक शक्ति को नष्ट कर दिया। वार्साय की सन्धि ने जर्मन जनता में मित्र राष्ट्रों के विरोध में उग्र प्रतिरोध की भावना व्यक्त की फ्रांस 1871 की पराजय और अपमान को नहीं भूल सका था। इसी प्रकार जर्मनी वार्साय की सन्धि को नहीं भूल पाया था। कुछ समय तक जर्मनी सन्धि से उत्पन्न कठिनाइयों को सहता रहा परन्तु निराशा, कष्ट एवं घोर अपमान से उत्पन्न प्रतिक्रिया के कारण नाजियों का अभ्युदय हुआ उन्होंने जर्मनों को याद दिलाया कि उन्हें वार्साय की अपमानजनक सन्धियों को तोड़ना है तथा अन्याय पूर्ण सन्धि का प्रतिशोध लेना है। इसी प्रतिशोध की भावना ने जर्मनी को युद्ध के लिए तैयार कर लिया।

2)— चिर शान्ति के लिए सामूहिक सुरक्षा— प्रथम विश्व युद्ध के बाद यूरोप के राजनैतिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि चिरस्थायी शान्ति के लिए सामूहिक सुरक्षा करना आवश्यक है। राष्ट्र संघ की स्थापना से

यूरोप वासियों को विश्वास हो गया था कि सामूहिक सुरक्षा प्रणाली द्वारा यूरोप में शान्ति स्थापित होगी एवं भविष्य में युद्ध नहीं होगा, परन्तु 1931 के बाद उनका सामूहिक सुरक्षा में विश्वास घटने लगा। 1931 से 39 के मध्य होने वाली घटनाओं से स्पष्ट हो गया था कि यूरोप में पुनः युद्ध छिड़ेगा। 1931 में जापान में मन्चूरिया पर आक्रमण किया और चीन ने जापान के आक्रमण के विरुद्ध राष्ट्र संघ से शिकायत की, किन्तु राष्ट्र संघ मन्चूरिया से जापान को नहीं निकाल सके। 1935 में इटली ने इथोपिया पर आक्रमण करने की पूरी तैयारी की। इथियोपिया के सम्राट ने भी राष्ट्र संघ से अपील की कि उसकी आक्रमण से रक्षा की जाए, परन्तु राष्ट्र संघ ने उस पर ध्यान नहीं दिया। राष्ट्र संघ की उदासीनता से बल पाकर इटली ने इथियोपिया पर आक्रमण कर दिया और अधिकार स्थापित कर लिया। राष्ट्र संघ के सदस्यों ने अपनी असफलता की झेंप मिटाने के लिए इटली के विरुद्ध आर्थिक एवं वित्तीय प्रतिबन्ध लागू किए जिनका किसी भी देश ने पूरी निष्ठा के साथ पालन नहीं किया। राष्ट्र संघ की विफलता के कारण वे और छोटे राज्यों को इस पर कोई भरोसा नहीं रहा। राष्ट्र संघ में संवैधानिक निर्बलता की अनेक अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियां मौजूद थी। उसके पास आर्थिक एवं सैनिक शक्तियों का अभाव था, महाशक्तियों का असहयोग था राष्ट्र संघ के सिद्धान्तों के प्रति निष्ठा में कमी थी अधिनायक वाद पर विश्वास करनेवाले हिटलर और मुसोलिन ने शान्ति के सभी प्रयासों को विफल कर दिया।

<u>(3)– तुष्टिकरण नीति की असफलता–</u> पश्चिमी राष्ट्रों में स्वयं एकता न रह सकी। ब्रिटेन और फ्रांस ने तुष्टिकरण की नीति अपनाई प्रथम विश्व युद्ध के उपरान्त इन देशों की विदेश नीतियां बदल चुकी थीं। ब्रिटेन शक्ति सन्तुलन के सिद्धान्त को आत्मसात करने लगा। वह यह भी नहीं चाहता था कि फ्रांस एक शक्तिशाली देश बन जाए क्योंकि यूरोप का शक्ति सन्तुलन बिगड़ने का भय बना हुआ था। साम्यवाद के बढ़ते हुए प्रभात को रोकने के लिए ब्रिटेन ने जर्मनी के प्रति तुष्टिकरण की नीति अपनाई जिनसे आवश्यकतानुसार शक्तिशाली जर्मनी साम्यवादी रूस का मुकाबला कर सके।

ब्रिटेन चाहता था कि जर्मनी को कुछ मूलभूत सुविधाएं प्रदान करके अपने व्यापारिक एवं धार्मिक हितों को सुरक्षित करें। इसके ठीक विपरीत फ्रांस चाहता था कि पेरिस सन्धि का दृढ़ता के साथ पालन करने के लिए जर्मनी को बाध्य किया जाए। हिटलर ने राष्ट्र संघ को ठुकराकर पेरिस सन्धि में हुए उपबन्धों की अवहेलना की तब फ्रांस ने इसका विरोध किया, परन्तु ब्रिटेन ने किसी प्रकार का सहयोग नहीं दिया। हिटलर की महत्वाकांक्षा बढ़ती रही उसे विश्वास था कि यूरोप की शक्तियों में उसके विरुद्ध खड़े होने की क्षमता नहीं है। सन्तुष्टिकरण की नीति से युद्ध कुछ समय के लिर टल तो गया, परन्तु उसे पूरी तरह से रोका नहीं जा सका।

<u>(4) सर्वसत्तावादी शक्तियों का उत्कर्ष एवं उनकी महत्वाकांक्षाएं–</u> वार्साय सम्मेलन के पश्चात यूरोप की शान्ति के लिए लोकतांत्रिक संस्थाओं का विकास आवश्यक हो गया। यूरोप के अनेक देशों में वैधानिक शासन की स्थापना हुई, किन्तु लोकतंत्र की नींव मजबूत नहीं हुई। 1917 की क्रान्ति के पश्चात सोवियत संघ में मजदूरों एवं कृषकों का शासन स्थापित हुआ, परन्तु यह यूरोपीय लोकतांत्रिक सिद्धान्तों पर आधारित नहीं था। इस व्यवस्था को 'जनवादी लोकतंत्र' कहा गया जो वास्तव में सर्वहारा के लिए अधिनायकवाद था। पेरिस की सन्धि से इटली को बड़ी निराशा ही हाथ लगी। इटली ने मित्र राष्ट्रों की ओर से प्रतिनिधित्व किया था, परन्तु

उसे सन्धियों से कोई लाभ नहीं हुआ। आन्तरिक समस्याओं एवं राजनीतिक निराशा के कारण इटली वासियों में असन्तोष बढ़ा। लोकतांत्रिक शासन की प्रणाली जनता का जनता के लिए शासन खो बैठी। ऐसी परिस्थितियों से मुसोलिन ने फांसी दल की सहायता से सर्वसत्तावादी शासन की स्थापना की। पेरिस की सन्धि के बाद जर्मनी में गणतन्त्र की स्थापना हुई परन्तु पराजय से उत्पन्न आर्थिक एवं राजनीतिक समस्याओं को सुलझाने में जनतन्त्रीय शासन असफल रहा। अतः जर्मन जनता का जनतांत्रिक संस्थाओं एवं प्रणाली में विश्वास नहीं रहा। 1933 में हिटलर चांसलर बना एवं उसने जर्मनी में सर्वसत्तावादी राज्य स्थापित किया। यूरोप के अनेक देशों में वैधानिक एवं जनतन्त्रीय शासन के स्थान पर सर्वसत्तावादी शासन स्थापित हो गया। वास्तव में 1919–31 तक यूरोप में जनतंत्र तथा अधिनायकवाद के बीज संघर्ष चला; इसी संघर्ष में अधिनायकवाद की विजय हुई एवं जनतंत्र हार गया।

सर्व सत्तावादी राज्य अत्यन्त महत्वाकांक्षी थे। रूस में अधिनायकवाद की स्थापना के बादसाम्यवादी दल, विश्व शान्ति की योजना बनाने लगे। इटली, अफ्रीका एवं भूमध्यसागर का सम्राट बनना चाहता था। मुसोलिनी प्राचीन रोमन साम्राज्य की पुनः स्थापना के स्वप्न देख रहा था। उपर्युक्त महत्वाकांक्षाओं से स्पष्ट था कि पुनः युद्ध की अग्नि भड़क उठेगी। संक्षेप में जनतन्त्र का पतन, सर्वसत्तावादियों का उत्कर्ष एवं उनकी असीमित महात्कांक्षाओं ने विश्व को पुनः युद्धाग्नि में ढकेल दिया।

<u>(5)– निःशस्त्रीकरण की स्थापना–</u> पेरिस सम्मेलन में सभी देशों के प्रतिनिधियों ने निश्चय किया था कि भविष्य में युद्ध की आशंका को दूर करने का सबसे अच्छा उपाय निःशस्त्रीकरण है। इस प्रस्ताव को पराजित देशों पर कठोर रूप से लागू किया गया, परन्तु विजयी राष्ट्रों में निःशस्त्रीकरण की ओर ध्यान नहीं दिया। 1932 में राष्ट्र संघ के तत्वावधान में जिनेवा में निःशस्त्रीकरण सम्मेलन आरम्भ हुआ अन्य देशों के अतिरिक्त संयुक्त–राज्य अमरीका तथा रूस ने भी भाग लिया, किन्तु पारस्परिक, अविश्वास, घृणा एवं स्वार्थ के कारण निःशस्त्रीकरण के प्रति किसी पहलू में कोई सन्धि न हो सकी। निःशस्त्रीकरण सम्मेलन असफलता के परिणाम स्वरूप पुनर्शस्त्रीकरण आरम्भ हुआ। मार्च 1935 में हिटलर ने खुले तौर पर पुनर्शस्त्रीकरण आरम्भ हुआ। मार्च 1935 में हिटलर ने खुले तौर पर पुनर्शस्त्रीकरण की घोषणा की। उसने वार्साय सन्धि की शर्तों का खण्डन करते हुए अनिवार्य सैनिक सेवा एवं सैन्य वृद्धि की घोषणा की। हिटलर की घोषणा ने यूरोप में घबड़ाहट उत्पन्न की। घोषणा के लगभग तीन महीने बाद समझौते की कड़ी आलोचना हुई। जिसकी अन्तिम परिणति द्वितीय विश्व युद्ध में हुई

<u>(6)– दो प्रतिद्वन्द्वी सैनिक गुटों का उदय–</u> प्रथम विश्व युद्ध के पहले समूचा विश्व दो विरोधी सैनिक गुटों में विभाजित हो गया था इसी प्रकार द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व भी सम्पूर्ण विश्व दो परस्पर शत्रु सैनिक खेमों में बंट गया था। एक तरफ जर्मनी, इटली और जापान जैसे कभी सन्तुष्ट न होने वाले राष्ट्रों की रोम, बर्लिन, टोकियो धुरी थी तो दूसरी तरफ ब्रिटेन, फ्रांस, सोवियत संघ और अमरीका जैसे मित्र राष्ट्रों ने मिलकर एक सुदृढ़ सन्धि संगठन स्थापित किया जब हिटलर ने नेतृत्व में जर्मनी सेना ने हिटलर के नेतृत्व में पोलैण्ड पर आक्रमण किया तो ब्रिटेन और फ्रांस ने पोलैण्ड को समर्थन दिया और द्वितीय महायुद्ध भड़क उठा।

(7)– अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठन– सन् 1930 में विश्व के समक्ष एक महान आर्थिक संगठन आया, जिसका प्रत्येक देश की आर्थिक व्यवस्था पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से बुरा प्रभाव पड़ा। इस आर्थिक व्यवस्था पर प्रत्यक्ष रूप से संकट के परिणाम स्वरूप राष्ट्रों में निःशस्त्रीकरण की भावना समाप्त हो गई और शस्त्रीकरण की होड़ शुरू हो गई। जर्मनी में घोर आर्थिक संकट छा गया, जिसके कारण लगभग 7 लाख व्यक्ति बेकार हो गए। इस आर्थिक संकट ने जर्मनी में नाजीवाद के उत्कर्ष में सहायता की। इस आर्थिक संकट का लाभ उठाकर ही जापान ने सन् 1931 में मंचूरिया पर चढ़ाई कर दी और सन् 1935 में अबीसीनिया पर हमला भी इसी आर्थिक संकट का अप्रत्यक्ष परिणाम था।

(8)– साम्राज्यवादी भावना– एशिया में जापान अपने साम्राज्य का विस्तार करना चाहता था। 1930 तक जापान की शक्ति में बहुत वृद्धि हुई और 1931 में उसने मंचूरिया पर चढ़ाई कर दी। 1937 में उसने युद्ध की घोषा किए बिना चीन के साथ युद्ध शुरू कर दिया। फ्रांस और इंग्लैण्ड हिटलर के साथ युद्ध में व्यस्त हो गया और जापान ने दक्षिणी–पूर्वी एशिया में इनके विशाल साम्राज्यों को जीतने की योजना बनाई। इसमें अमेरिका उसके मार्ग में बड़ा बाधक था, अतः 1941 में उसने प्रशान्त महासागर में अमरीका के सबसे बड़े नौ सैनिक अड्डे पर्लहार्बर पर हमला किया और अमरीकी बेड़े को गहरी क्षति पहुंचाई;

यूरोप में हिटलर जर्मनी से प्रथम विश्व युद्ध के बाद छीने गए उपनिवेशों को न केवल वापस लेना चाहता था, अपितु अपने देश में ऐसे अनेक प्रदेश सम्मिलित करना चाहता था जिससे जर्मनी का साम्राज्य ग्रेट ब्रिटेन और फ्रांस जैसा हो जाए। हिटलर भी चाहता था कि ग्रेट ब्रिटेन के साम्राज्य को समाप्त करने के लिए यदि लड़ाई भी मोल लेना पड़े तो वह स्वीकार है वह जर्मनी को भी शक्तिशाली बनाना चाहता था।

(9)– विभिन्न अल्पसंख्यक जातियों का असन्तोष– वार्साय की सन्धि और उसके साथ ही बाद में होने वाली अन्य सन्धियों के द्वारा विभिन्न अल्पसंख्यक जातियां, अस्तित्व में आईं। राष्ट्रपति विल्सन के शान्ति सन्धियों का आधार 'राष्ट्रीय आत्मनिर्णय' के सिद्धानत का कठोरता पूर्वक क्रियान्वयन सम्भव नहीं हो पाया। अतः कई अल्पसंख्यक जातियां विदेशी शासन के अन्तर्गत रह गई, जिसके कारण उनमें, असन्तोष व भय की भावना उत्पन्न हो गई। इस अल्पसंख्यक जातियों ने यह मांग रखी कि या तो उन्हें अपने देश के साथ मिला दिया जाए अथवा स्वशासन प्रदान किया जाए। हिटलर ने इस असन्तोष का लाभ उठाया। उसने पश्चिमी शक्तियों से सौदेबाजी की और अल्पसंख्यकों पर कुशासन के बहाने से आस्ट्रिया तथा सुडेटन प्रदेश पर कब्जा कर लिया और पोलैण्ड पर भी आक्रमण कर दिया जिससे द्वितीय विश्व युद्ध की शुरुआत हो गई।

(10)– पोलैण्ड पर जर्मनी का आक्रमण– हिटलर जर्मनी के निकटवर्ती क्षेत्रों पर अधिकार कर एक साम्राज्य का निर्माण करना चाहता है। उसकी नीति से स्पष्ट था कि वह यूरोप पर सहसा ही प्रभुता स्थापित करना चाहता था एवं मित्र राष्ट्रों की तुष्टिकरण नीति से उसे प्रचुर प्रोत्साहन मिल चुका था।

इंग्लैण्ड एवं फ्रांस ने हिटलर की बढ़ती हुई मांगों एवं विस्तार नीति का विरोध करने का निश्चय किया। 31 मार्च, 1939 को इंग्लैण्ड तथा फ्रांस ने घोषणा की कि यदि जर्मनी ने आक्रमण द्वारा पोलैण्ड की स्वतन्त्रता नष्ट करने की चेष्टा की तो वे उसकी रक्षा करेंगे। इस घोषणा के पांच दिन बाद पोलैण्ड, फ्रांस तथा इंग्लैण्ड के बीच एक

सन्धि हुई। इस सन्धि के पश्चात इंग्लैण्ड ने अन्य देशों से परस्पर सुरक्षा सन्धियां कीं, परन्तु कुछ दिनों बाद इन सभी सन्धियों की शर्तों का हनन कर इंग्लैण्ड तथा फ्रांस ने हिटलर को अन्तिम चेतावनी दी और जर्मनी से कोई उत्तर न मिलने पर दो दिन बाद 3 दिसम्बर 1939 को दोनों देशों ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। इस घोषणा के साथ द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ हुआ।

द्वितीय विश्व युद्ध के प्रभाव–

द्वितीय विश्व युद्ध ने उन परिस्थितियों को समाप्त कर दिया जिन पर 19वीं शताब्दी की अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था आध ाारित थी। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर प्रभाव डालने वाले द्वितीय महायुद्धोत्तर तत्वों और आधुनिक उभरती हुई प्रवृत्तियों को यहां विवेचित किया जारहा है, जो निम्नलिखित है–

1. यूरोपियन प्रभुत्व का अन्त– द्वितीय विश्व युद्ध तक के काल को विश्व में अनेक प्रकार की तकनीकी व वैज्ञानिक आविष्कार हुए हैं। यूरोपियन राष्ट्रों ने बड़े–बड़े साम्राज्यों की स्थापना की है। जर्मनी, इटली, फ्रांस, ब्रिटेन की गणना महान शक्तियों में की जाती थी, परन्तु द्वितीय विश्व युद्ध ने समस्त महा प्रबल राष्ट्रों की शक्तियों को कमजोर कर दिया। द्वितीय विश्व युद्ध के समय समस्त महाशक्तिशाली राष्ट्र द्वितीय श्रेणी में आ गए थे। विश्व का नेतृत्व द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अमेरिका और सोवियत संघ के हाथों में आ गया।

2. परमाणु युग का सूत्रपात– संयुक्त राज्य अमरीका के एक वायुयान बी–29 ने 6 अगस्त,1945 को हिरोशिमा पर अणु बम डाला। अणु बम के विस्फोट से हिरोशिमा की 90 प्रतिशत इमारतें नष्ट हो गईं एवं लगभग 7,50,000 मनुष्य मर गए। इस महा नरसंहार के साथ परमाणु युग की नींव पड़ी। आजकल एक महाद्वीप से इसके महाद्वीप तक पहुँचने वाले और शब्द की रफ्तार से भी तेज रफ्तार से उड़ने वाले जैट विमान, नाभिकीय बम फेंकने वाले प्रक्षेपास्त्र और परमाणु ऊर्जा से चलने वाले विमान तथा पनडुब्बियाँ बन चुके हैं। भू–उपगृह तथा अन्तरिक्ष स्टेशन भी नवीन उपकरणों की सूची में जोड़े जा सकते हैं। इस प्रकार परमाणु युग का धीरे–धीरे सूत्रपात होना प्रारम्भ हो गया।

3. एशिया एवं अफ्रीका का जागरण तथा सम्प्रभु राज्यों की संख्या में वृद्धि– अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक के स्वरूप में परिवर्तन लाने वाला एक महत्वपूर्ण तत्व यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय जगत में राज्यों की संख्या पहले से अब बहुत बढ़ गई है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद नए राज्यों के उदय की प्रतिक्रिया तीव्र गति से चली। सन् 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्यों की संख्या 51 से सन् 1989 में 159 हो गई। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के बाद एशिया, अफ्रीका और अमरीकी राष्ट्रों में स्वतन्त्रता के सूर्य का उदय हुआ। तीसरी दुनिया के इन राष्ट्रों के स्वतन्त्र विदेश नीतियां अपनाई इनका मूल उद्देश्य विश्व शान्ति को बढ़ाना और अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाए रखना है। इसकेलिए वे स्वयं जागरूक बनें। गुट–निरपेक्षता नीति पर चलना प्रायः सभी नवोदित राष्ट्रों का लक्ष्य बन गया। अतः यह कहना समीचीन है कि दूसरे महायुद्ध के बाद मुख्य अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं के केन्द्र यूरोप में ही नही रहे, बल्कि एशिया, अफ्रीका और पश्चिमी एशिया के नए राष्ट्रों में उत्पन्न हो गए हैं।

4. साम्यवाद का विस्तार– इटली तथा जर्मनी साम्यवाद के कट्टर शत्रु थे, परन्तु उनकी पराजय के पश्चात मित्र–राष्ट्रों में इतनी क्षमता नहीं रही कि वे साम्यवाद को पूर्वी यूरोप अथवा एशिया में रोक सकें।

जैसे–जैसे जर्मनी पूर्वी मोर्चे पर हारता गया वैसे–वैसे पूर्वी यूरोप में साम्यवाद घुसता गया। बर्लिन के पतन तक सोवियत संघ की सेना ने पूर्वी यूरोप के समस्त देशों पर अधिकार कर लिया एवं वहां साम्यवादी सरकारों की स्थापना की। पूंजीवादी देशों ने साम्यवाद विस्तार को रोकने की चेष्टाएं कीं, परन्तु वे केवल कुछ क्षेत्रों में सफल हुए। साम्यवाद के बढ़ते हुए प्रभाव के कारण अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एक नई विचारधारा का विकास हुआ।

5. सैनिक गुटबन्दी– साम्यवादियों का बढ़ता हुआ प्रभाव एवं रूस की बढ़ती हुई शक्ति ने पश्चिमी राष्ट्रों को गहरी चिन्ता में डाल दिया था। वे रूस तथा अन्य साम्यवादी देशों के विरुद्ध सैनिक गुटों का निम्रण करने लगे, जिससे संकट के समय सैनिक गुट के सदस्य संयुक्त रूप से साम्यवाद के विरुद्ध संघर्ष कर सकें तथा साम्यवादियों के प्रभाव का विस्तार रोक सकें।

कोरिया युद्ध के समय संयुक्त राज्य अमरीका के राजनीतिज्ञों ने अनुभव किया कि साम्यवाद के विरुद्ध सामूहिक सुरखा के लिए सैनिक संगठनों का निर्माण परम आवश्यक हो गया था। सैनिक संगठनों के निर्माण से स्पष्ट था कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सैनिक तन्त्र का पतन नहीं हुआ इनमें युद्ध की उत्तेजना छिपी थी।

6. शीत युद्ध– जर्मनी और जापान की पराजय के पश्चात गोलियों और बमों का युद्ध समाप्त हुआ, परन्तु साम्यवादी एवं पूंजीवादी देशों में एक नए ढंग का शीत युद्ध प्रारम्भ हो गया था। जो राष्ट्रों के बीच मैत्री पूर्ण सम्बनध थे वह अस्थायी थे। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात सम्पूर्ण विश्व दो राष्ट्रों में विभाजित हो गया था। पूंजीवादी गुट का नेता संयुक्त राज्य अमेरिका और साम्यावादी गुट का नेता सोवियत संघ बना। दोनों राष्ट्रों के बीच विरोध बढ़ता गया और अन्तर्राष्ट्रीय संगठन दोनों के संघर्ष का अखाड़ा बन गया। आज विश्व दो सशस्त्र शिविरों में विभाजित है। इन दोनों शिविरों के मध्य नवीन प्रकार के सम्बन्धों का विकास हुआ जो 'शीतयुद्ध' के नाम से प्रख्यात है। यह ऐसी स्थिति है जिसमें दोनों पक्ष परस्पर शान्तिकालीन कूटनीतिक सम्बन्ध बनाए हुए भी परस्पर शत्रुभाव रखते हैं। और यह एक कूटनीतिक युद्ध के रूप में उभरकर सामने आया।

7. गुट निरपेक्षता– द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त जब नए सम्प्रभु राष्ट्रों का जन्म हुआ तो उनमें से अधिकांश ने अपने आपको शीत युद्ध की खींचतान से निरपेक्ष रखने का निर्णय लिया। इस क्षेत्र में भारत ने मार्ग दर्शन लिया और गुट निरपेक्षता की आवाज बुलन्द की। गुट निरपेक्षता के इस चौखट में धीरे–धीरे नव स्वाधीन देश शामिल होने लगे। आज लगभग 101 देश गुटनिरपेक्ष आन्दोलन से जुड़े हुए हैं। गुटों से अलग रहने वाले उपनिवेशवाद के खिलाफ लड़ने वाले राष्ट्रों को एक मंच पर लाने में गुट निरपेक्ष शिखर सम्मेलन सफल हुए हैं। बेलग्रेड में एक तीसरी शक्ति का उदय हुआ था जिसके नेता अपनी असंलग्नता और नैतिक बल के आधार पर युद्ध की तरफ से हटाकर शान्ति की तरफ ले जाना चाहते थे।

8. साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद का अन्त– साम्राज्यवादी और उपनिवेशवादी शक्तियां इस युद्ध में स्वयं संकट में पड़ गई। कुछ यूरोपीय साम्राज्यवादी शक्तियाँ तो हार गईं और उनके हारते ही उपनिवेशों में राष्ट्रीय सरकारें स्थापित हो गई। युंद्ध की समाप्ति स्वयं सैनिक और आर्थिक दृष्टि से इतने कमजोर थे कि वे साम्राज्य को सम्भालने में अपने आपको असमर्थ समझने लगे। रूसी साम्यवादी विचारधारा से भी साम्राज्यवाद और उपनिवेशवादी की क्षति हुई। अब धीरे–धीरे उपनिवेशों में राष्ट्रीय राजनीतिक चेतना बहुत जाग्रत हो चुकी

थी जिसे बनाना उनके लिए असम्भव था।

9. वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति– आधुनिक युग वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति का युग कहलाता है। इसका प्रभाव युद्ध के स्वरूप पर तो पड़ा ही है, युद्ध एक सम्पूर्ण युद्ध बन गया है पर इसके साथ–साथ युद्ध की परिभाषा, स्वरूप तथा निर्माणक तत्व भी प्रभावित हुए है। यह तीन श्रेणियों में बंटा था। सन् 1945 के बाद एक श्रेणी और बन गई जिसे 'सुपर पावर' कहा जाने लगा। विज्ञान और तकनीकी प्रगति के कारण सारा विश्व एक इकाई बन गया और अन्तर्राष्ट्रीय संगठन को जन्म मिला। सोवियत संघ, चीन, भारत, संयुक्त राज्य अमरीका महाद्वीपीय राज्य माने जाने लगे। पश्चिमी यूरोप जो राष्ट्रीयता का जनक माना जाता है, 1945 के बाद महाद्वीपीय स्तर पर एक यूरोपीय संघ राज्य की कल्पना को साकार करने के प्रयत्न में लगा है पर इसका बहुत कुछ क्षेत्र विज्ञान तकनीकी प्रगति को मिलता है।

10. महाशक्तियों की संख्या मे कमी– 17वें और 18वीं शताब्दी में यूरोप में अनेक छोटे–बड़े राज्य थे। इटली के एकीकरण ने अनेक छोटे–छोटे राज्यों का अन्त कर दिया राष्ट्रवाद के इस बढ़ते हुए दौर के साथ यूरोप के राजनीतिक नक्शे का जो नमूना 1815 में सामने आया उसमें आठ राज्यों को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के दृष्टिकोण से महाशक्तियों की संज्ञा प्राप्त थी। ये आठ राज्य थे– आस्ट्रिया, फ्रांस, ब्रिटेन, पुर्तगाल, रूस, एशिया, स्पेन और स्वीडम। दो महाशक्तियाँ जापान और अमरीका यूरोप के बाहर थी। पुर्तगाल भी साधारण शक्ति की सीमा में प्रवेश कर रहा था। इटली ने पेरिस शान्ति सम्मेलन के दौरान कटु अनुभव किया कि उसे ब्रिटेन और फ्रांस महाशक्ति स्वीकार करने के लिए उद्यत नहीं है। विश्व की राजनीति द्वि–ध्रुवीय होगई। उसका एक ध्रुव पश्चिमी गुट का नेता संयुक्त राज्य अमरीका था और दूसरा ध्रुव साम्यवादी गुट का नेता सोवियत संघ था। अमरीका ने लोकतन्त्र का रक्षक और रूस पे साम्यवाद का अग्रदूत मानना शुरू कर दिया।

11. नवशीत युद्ध– अगस्त 1975 के हेलसिंकी सम्मेलन के द्वारा शीत युद्ध को सभारत मान लिया गया था, किन्तु वह पुनः प्रारम्भ हो गया था। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विभिन्न क्षेत्र और मंच एक बार फिर रूस–अमरीका की प्रतिद्वन्द्विता के अखाड़े सिद्ध होने लगे और यह कहा जाने लगा कि एक नवशीत युद्ध प्रारम्भ हो गया। अफगानिस्तान में सोवियत सैनिक हस्तक्षेप ने अमरीकी रूसी तनाव–शैथिल्य को गहरा धक्का पहुंचाया है।

12. तीसरे विश्व का बढ़ता महत्व– एक समय ऐसाथा कि एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के विकासशील देशों को उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता था, किन्तु आज तीसरे विश्व के नवोदित राष्ट्र अविकसित और छोटे होने के बावजूद अपनी संख्यात्मक शक्ति के कारण संयुक्त राष्ट्र संघ में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। महासभा में अपने संख्या बल के कारण विकासशील देश निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने की स्थिति में है।

13. नव उपनिवेशवाद– आज अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में नव–उपनिवेशवाद की जोरों से चर्चा चल पड़ी है। विकसित और समृद्ध देश ऐसी आर्थिक नीतियों का अनुसारण करने लगे हैं कि विकासशील देशों का अनवरत आर्थिक शोषण करते रहे। पश्चिमी देशों का साम्राज्य आज मरणोन्मुख हो गया है, परन्तु शोषण का एक नया रूप नव उपनिवेशवाद के रूप में विकसित हो गया है।

14. उत्तर बनाम दक्षिण संघर्ष– आज विश्व में उत्तर बनाम दक्षिण का संघर्ष शुरू हो चुका है। यदि उत्तरी ध्रुव को केन्द्र मान लें तो केन्द्र के निकटतम प्रदेश समृद्ध और औद्योगिक राष्ट्र है और परिधिस्थ प्रदेश औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े राष्ट्र है। केन्द्रीय अथवा पृथ्वी के उत्तरी अर्द्धभाग के देशों का दक्षिणी अर्द्धभाग के देशों पर आर्थिक प्रभाव है। आर्थिक शोषण का यह नया संघर्ष उत्तर–दक्षिण संघर्ष है।

द्वितीय विश्व युद्ध ने यह सिद्ध कर दिया था कि यदि हथियारों की होड़ में अंकुश नहीं लगाया जाएगा तो सम्पूर्ण मानवता के विनाश के उत्तरदायी हम स्वयं होंगे। इस महायुद्ध ने प्रत्येक देश को अपनी सुरक्षा के लिए परमाणु शक्ति की ओर आकर्षित किया जो आज सर्वत्र दिखाई दे रही है। विश्व युद्ध यह भी सिद्ध करता है कि विजय प्राप्त करने के लिए राष्ट्र की शक्ति सामर्थ्य के साथ अन्य राष्ट्रों का सहयोग आवश्यक हो जाता है।

आधुनिक हिन्दी युद्ध काव्यों का विकास–

मैंने आलोच्य विषय में युद्ध काव्यों के विकास को चार भागों में विभाजित किया है– स्वतन्त्रता संग्राम, भारत–पाक, भारत–चीन, बांग्लादेश, कारगिल जो निम्नलिखित हैं–

(1)– स्वतन्त्रता संग्राम–

1857 में भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम मंगल पाण्डेय, झाँसी की रानी, नाना साहब, तात्या टोपे आदि के नेतृत्व में लड़ा गया जिसके फलस्वरूप अंग्रेजों के प्रति भारतीयों का दृष्टिकोण बदल गया था। भारत माता सदियों से परतन्त्रता के अभिशाप से मुक्त न हो सकी। उस युग के कवियों ने इसे पहचाना और सामान्य जन–समुदाय को देश वासियों की दीन–हीन दशा से परिचित कराने लगे थे। सन् 1874 में रचा गया गीत 'सुजलां सुफलाम मलयज शीतलाम्' स्वतन्त्रता के सपूतों के लिए बड़े गर्व के साथ निर्भय होकर गुनगुनाने का गीत बन गया। युग प्रवर्तक कवि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र अंग्रेजों की हुकूमत से पनपे तत्कालीन दुःख दारिद्रय पर 'भारत दुर्दशा', 'भारत जननी' और 'नील देवी' नाटकों पर राष्ट्रों के लिए प्रेरणादायी गीत समर्पित किए थे। कवि के शब्दों में–

"अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।।
ताहू पर महंगी काल रोग विस्तारी।
दिन–दिन दूने दुःख ईस देह हा हा री।।
सबके ऊपर टिक्कस की आफत आई।
हा हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।"[78]

अंग्रेजों के अत्याचार के विरोध में विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर अत्याचार के खिलाफ खड़े होने की प्रेरणा निम्न पंक्तियों के माध्यम से देते हैं–

"दुर्गम पथ करते रहे पार,
जो पड़े कष्ट झेले अपार।
प्राणों के रहते वीरों ने
मानी न अपनी कभी हार।"[79]

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने 1906 के कलकत्ता कांग्रेस में नारा दिया कि 'स्वतन्त्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।' इसको आधार बनाकर भारत के कवियों और गीतकारों ने स्वतन्त्रता आन्दोलन की सुलगती हुई आग में हवा देना शुरू करदिया। इनमें श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, मैथिलीशरण गुप्त, माखन लाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सूर्य कान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पन्त, महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, सियाराम शरण गुप्त, मोहन लाल द्विवेदी, श्याम नारायण पाण्डेय, हरिवंश राय बच्चन, शिवमंगल सिंह 'सुमन' आदि अनेक कवियों ने स्वतन्त्रता संग्राम के संघर्ष में अपनी अलग भूमिका प्रस्तुत की। सन् 1919 में जलियावाला बाग हत्याकाण्ड से पूरे देश में विद्रोह के स्वर सुनाई दे रहे थे। देश भक्त क्रान्तिकारी भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु, चन्द्रशेखर आजाद, राम प्रसाद बिस्मिल सरीखे दृढ़ क्रान्तिकारियों के साथ पूरा देश की जनता एक ही स्वर में सुनाई दे रही थी जिसे हम राम प्रसाद बिस्मिल की निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं–

"सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।
देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है।।
रहबरे–राहे–मुहब्बत रह न जाना राह में,
लज्जते–सहरा–नवर्दी दूरे–ए–मंजिल में है।।"[80]

सन् 1928 में साइमन कमीशन का विरोध किया गया जिसमें लाला लाजपत राय शहीद हो गए, इसके विरोध में भगत सिंह ने साण्डर्स को गोलियों से मार कर बदला ले लिया तथा केन्द्रीय असम्बली में बम फोड़ने की घटना हुई जिसके परिणाम स्वरूप 1931 में भगत सिंह, सुखदेव व राजगुरु को फांसी की सजा दी गई। क्रान्तिकारी एक ओर स्वातन्त्र्य युद्ध देश प्रेम के लिए बलिदान हो रहे थे तो दूसरी ओर महात्मा गांधी के संरक्षण में सत्य और अहिंसा के सिद्धान्त का स्वतन्त्रता आन्दोलन अपनी गति पकड़ता जा रहा था। मैथिलीशरण गुप्त ने "भारत–भारती" में गाकर जनमानस को उद्वेलित किया–

"हम कौन थे क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी
आओ विचारें आज मिलकर यह समस्याएं सभी।।"

महात्मा गांधी की ऐतिहासिक दाण्डी यात्रा की और नमक कानून को तोड़ा इस आन्दोलन के परिणाम स्वरूप महात्मा गांधी एवं अन्य प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार किया गया। इससे विद्रोह एवं असन्तोष फैल गया जिसे कवियों ने पूर्ण सच्चाई और सरलता के साथ अभिव्यक्ति दी है! पुरुषोत्तम दास टण्डन ने स्वतन्त्रता संग्राम में पूरी सहभागिता निभाई हैं क्योंकि स्वतन्त्रता के अभाव में ज्ञान, विज्ञान, विद्या, बुद्धि, शिल्प कथा सबके सब उस स्थान से दूर होते जाते हैं–

"विद्या बुद्धि शिल्प अरु उन्नति न कदापि नाहिं रहे वहां।
सबहि गुण इक–इक कर भागें स्वतन्त्रता ही नहीं जहां।।"
प्रकृति ने यह रचा है जीव सभी हों स्वाधीन
उसकी देन सबहीं को सम सां क्या धनवान अरु क्या धन हीन।।"[81]

स्वतन्त्रता संग्राम के निमित्त निरन्तर समझौतों का सिलसिला चलता रहा। गांधी इरविन समझौता हुआ जिसमें

गांधी जी के पक्ष पर कोई फैसला नहीं हुआ इससे जन मानस में आक्रोश फूट पड़ा और स्वतन्त्र प्रेम की अशस्त्र धारा कितनी ही पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रही थी। कितनी ही स्वातन्त्र युद्ध से सम्बन्धित रचनाओं को ब्रिटिश सरकार द्वारा जब्त कर लिया गया था। प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में मैमे उन रचनाओं को स्थान दिया जो ब्रिटिश हुकूमत से बचते हुए आज तक हमारी आजादी की लड़ाई में महत्वपूर्ण रहीं और इस स्वतन्त्रता के युद्ध को उसी रूप में प्रस्तुत करने में सहायक भी हैं।

सन् 1930 के बादसे तो स्वतन्त्रता का युद्ध अपने चरम की ओर पहुंचने को बेताब था इसी अनुपात में अंग्रेजों का दमन चक्र जारी रहा। इनके दुष्प्रयास साम्प्रदायिकता के रूप में सामने आए जो हमारी राष्ट्रीय एकता को खण्डित करने का सोचा–समझा प्रयास था। द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ते ही अंग्रेजों ने प्रथम विश्व युद्ध की भांति सहयोग प्रापत करना चाहा, किन्तु हमारे देश के नेताओं ने इसे बड़ी गम्भीरता से लिया। 1946 में स्वतन्त्र संघर्ष का जो स्वर सुनाई दिया उसे हम पं. जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में देख सकते हैं– ''इस घटना ने दिखा दिया कि हिन्दुस्तानी फौज का दिमाग किस तरह काम कर रहा था। हिन्दुस्तानी फौज का दिमाग किस तरह काम कर रहा था। उसने यह भी दिखा दिया कि अंग्रेजों ने हिन्दुस्तानी फौज और भारतीय जनता के बीच जो लोहे की दीवार खड़ी थी वह ढह गई है।'' इस तरह 15 अगस्त 1947 को हमारा देश स्वतन्त्र हो गया, स्वतन्त्रता के लिए बलिदान हो जाने वाले वीर शहीदों की याद में कवियों ने अपनी लेखनी उठा ली–

''भारत के ध्रुव से अटल दृढ़ निश्चय की
राती तट पर जो मिली थाती तुम्हें याद है?
जिसकी सुरक्षा में अनेक नवयुवकों की
गोलियों से छेदी गई छाती तुम्हें याद है?''[84]

(ii) भारत पाक युद्ध– स्वतन्त्रता के पश्चात जम्मू एवं कश्मीर पर पाकिस्तान द्वारा की गई सशस्त्र कार्यवाही ने भारतीयों को गहरा आघात पहुंचाया था।21 अक्टूबर 1947 को कबाइली सेना ने विद्रोही सेना के साथ मिलकर मुजफ्फराबाद में अभियान शुरू किया। 26 अक्टूबर को महाराज हरी सिंह ने कश्मीर को भारत में विधिवत विलय करने की घोषणा की। दिसम्बर 1947 में मौसम की अनुकूलता पाते ही गिलगिल तथा बागाह क्षेत्र में अपना अधि

ाकार स्थापित किया। इस पृष्ठभूमि के चलते कश्मीर युद्ध हमारे सामने उपस्थित हुआ। जिस समय भारत, चीन के आक्रमण से घायल था, उस समय पाकिस्तान ने अपना आक्रमण करके अवसर का लाभ उठाना चाहा था क्योंकि 1947–48 के संग्राम में अपनी अपमानजनक हार कर बदला लेने के लिए वह समय की ताक में बैठा था। कश्मीर का मामला संयुक्त राष्ट्र संघ के अधीन होने के बावजूद शान्ति युद्ध जारी रखते हुए पाकिस्तान ने अपनी सैनिक शक्ति को लगातार बढ़ाए रखा था। इसके लिए उसे यही सही समय लगा। आक्रमणकारी देश को यह अंदेशा था कि भारत–चीन से युद्ध (1965) के बाद पूरी तरह टूट चुका है। अतः 9 अप्रैल 1965 में पाकिस्तान ने कच्छ सीमा पर आक्रमण किया जिसका करारा जवाब भारत ने अपनी सेना लगाकर दिया। भारत द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में 12 अप्रैल 1965 को पाकिस्तान की आक्रामक कार्यवाही का प्रसताव रखा गया तथा 15 अप्रैल 1965 कोपाक का युद्ध विराम प्रस्ताव भारत ने स्वीकार कर लिया। पाकिस्तान ने 20 अप्रैल 1965 को भारत–पाक युद्ध

विराम समझौता ब्रिटिश सरकार की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। 3 दिसम्बर 1971 को पुनः भारत–पाक युद्ध छिड़ गया। पाकिस्तान द्वारा लगातार भारत के साथ युद्ध से प्रभावित होकर आधुनिक कवियों ने पाकिस्तान की धृष्टता को उजागर करते हुए भारतीय जनमानस को युद्ध जैसी घटना से जोड़े रखा है। कवि श्री श्याम लाल शुक्ल के शब्दों में–

"ईमान कुरान धर्यों कोने, तुम युद्ध करैं हमते आयो,
बिन सोचे समझे नाहक मां, तुम रारि करैं हमते आयो।
हम स्वाचा बनौ पड़ोसी औ, फिरि रही प्रेमते आपस मां,
मुलु निकरेव अस नालायक तुम, यह कलह मचायो घर ही मां।
खटमल असि घर मां घुस आये व, मचवन मां चूरन–चूरन
स्वावबु बैठव मुश्किल कीन्ह्यो, उठि खड़े भये न मजबूरन मा।
सोचते अल्ला हो अकबर कहि, भारत मां फूट बढ़ा देबे।
फिरि काश्मीर मां धीरेते, हम फौजें लाय चढ़ा देबे।
पर कपास के धोखे मां, अयूब मियां सनई खागे,
भुट्टो भुट्टा असि भूजेंगे, सब पुरखा तक पानी पागे।
सत्ता के पीछे आंधरि होई, यदि ताजि महल का बिसरायो,
यह कुतुब खड़ा धिक्कार रहा, आपस मां लड़ै मरैं आयो।"

कवि बृजेश मिश्र 'सौरभ' ने भारत–पाक युद्ध में भारत देश की कुर्बानी का चित्रण निम्न पंक्तियों में किया है–

"एक विभाजन हमने देखा, जब जन्म हुआ था पाकिस्तान का।
गुलामी से मुक्त हुए थे हम, करके छोटा नक्शा हिन्दुस्तान का।।
बंटवारे की पीड़ा भी सहकर चुप थे, हम भाग्य समझकर हिन्दुस्तान का।
कभी न समझा हमने नापाक इरादे, पापी पाकिस्तान का।।"[86]

कवि मदन लाल वर्मा 'क्रान्त' ने पाकिस्तान द्वारा किए गए समझौतों पर कायम न रहने के सन्दर्भ को कर विश्व मंच पर इसकी नापाक हरकतों को उजागर करते हुए पहले के युद्ध में दान स्वरूप दी गई भूमि को छीनने का ऐलान करता है–

"तीन समझौते किए पर एक भी माना नहीं।
पाक की नापाक हरकत विश्व को बतलाइए।।
वह जमी अपनी है जिसको दान कर बैठा है वह।
छीनकर वापस इसे इस मुल्क को दिलवाइए।।
देख ली दुनिया ने अपनी, फौज की मर्दानगी।
'क्रान्त' अब इस दौर को अंजाम तक पहुंचाइए।।"[87]

कवि डा. राजवीर सिंह क्रान्तिकारी ने शुरुआती तौर तरीकों का चित्रण निम्न पंक्तियों में किया है–

''हाथ जोड़कर 'जिन्ना' का यदि वह सम्मान नहीं होता।
देश नहीं बंटता और भारत लहूलुहान नहीं होता।।
यदि 47 में अंग्रेजों का षड्यन्त्र नही होता।
तो सुभाष के ऊपर कोई भी प्रतिबन्ध नहीं होता।।
हाथ जोड़कर 'पंचशील' का गौरव गान नहीं होता।
तो तिब्बत के सीने पर कोई शैतान नहीं होता।।
'ताशकन्द' 'शिमला' में यदि शोणित नीलाम नहीं होता।
उग्रवाद का जन्म न होता पाकिस्तान नही होता।।''[88]

कवि मनोहर लाल 'रत्नम्' ने पाकिस्तान को युद्ध अपराधी घोषित करने के लिए राष्ट्र संघ की यात्रा करने का आवाहन करते हैं–

''राष्ट्र संघ में मांग उठाने, भारत को चलना होगा।
पाकिस्तान को युद्ध अपराधी अब घोषित करना होगा।
ताशकन्द में हमने पाक को, पहले भी समझाया था।
शिमला समझौताकर , सीमा को तय करवाया था।''[89]

(iii)– भारत–चीन युद्ध– चीन युद्ध का प्रमुख कारण सीमा विवाद था इसे हल करने के लिए दिसम्बर 1953 में अपना एक शिष्ट मण्डल चीन की राजधानी पेइचिंग (वर्तमान में परिवर्तित राजधानी बीजिंग है) भेजा। जिसके परिणाम स्वरूप 29 अप्रैल 1954 को दोनों राष्ट्रों के मध्य पंचशील समझौता हुआ, जिसमें एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र पर आक्रमण नहीं करेगा का वचन दिया गया, किन्तु चीन इस सिद्धान्त पर कायम नही रह सका। इसका पता जुलाई 1958 में चीन द्वारा प्रकाशित मानचित्र द्वारा पता चला कि नेफा से असम, उत्तर प्रदेश के बाराहाटी तथा निति दर्रा, लद्दाख की ओर से चुशूल तथा अक्साईचिन तक का क्षेत्र अपनी राष्ट्रीय सीमा पर दिखा रहा था साथ ही सैनिक कार्यवाही भी काफी तेज कर रखी थी। इस कार्यवाही की शिकायत भारत ने प्रधानमंत्री चाउ–एन–लाई से की जिसे उन्होंने पुराने मानचित्र की दुहाई देकर एवं समयाभाव को आधार बनाकर टाल दिया। इधर चीन अपनी कूटनीतिक गतिविधियां बढ़ाता रहा जब भारत द्वारा दिसम्बर 1958 मे पुनः विरोध किया गया तो चीन की प्रतिक्रिया न्यायपूर्ण नहीं थी। चीन द्वारा ऐसे व्यवहार की भारत को आशा न थी ऐसे में हिन्दीचीनी भाई–भाई का नारा बेमानी हो गया इतना ही नहीं अपने मानचित्र में दिखाए गए क्षेत्र में चीन नेअपना अधिकार जमाना शुरू कर दिया; चीन द्वारा तिब्बत में भी दमन की नीति अपनाई गई जिसके चलते 31 मार्च 1959 में तिब्बती नेता दलाईलामा तथा बहुसंख्यक में तिब्बती जन–समुदाय ने भागकर भारत में शलण ली। जिससे चीन भारत के खिलाफ खुलकर सामने खड़ा हुआ और भारत पर आरोप लगाया कि भारत सरकार तिब्बत के विद्रोहियों को संरक्षण प्रदान कररहा है। इस आक्षेप व सहारा लेते हुए चीन ने भारत की सीमा में 10 से 15 मील तक प्रवेश कर आक्रमण आरम्भ कर दिया। इसको दरकिनार करते हुए भारत सरकार ने शान्ति प्रयास जारी रखे।
इस प्रकार चीन लगातार भारत पर अपनी कूटनीतिक चालों पर सफल होता रहा और भारत शान्ति–शान्ति के

कारण चीन के चक्रव्यूह में फंसता चला गया। जून 1962 में पंचशील समझौते की अवधि पूर्ण होने का चीन ने पूरा फायदा उठाया इस युद्ध ने भारत की प्रतिष्ठा को भी प्रभावित किया था। अतः आधुनिक कवियों ने इससेप्रभावित होकर जो काव्य रचना की इन्होंने अपने कर्तव्य को पहचाना है और अपनी कविताओं के माध्यम से व्यक्त किया है।

रामधारी सिंह दिनकर ने 'परशुराम की प्रतीक्षा' काव्य संग्रह में भारत पर चीन के आक्रमण से उत्पन्न प्रतिक्रिया को ही अभिव्यक्त किया है समस्त भारतवसी वीर सन्तान के रूप में परशुराम के प्रतिनिधि हैं। चीन द्वारा अचानक आक्रमण से जन–जन में प्रतिहिंसा की आग भड़की ऐसे में पुनः शान्ति समझौते की बात करना दिनकर जैसे कवि के लिए लज्जा अपमानजनक और घृणित कार्य था इसलिए चीन को युद्ध के द्वारा ही सबक सिखाना उचित समझते हैं। कवि के शब्दों में–

मूंद–मूंद वे पृष्ठ, शील का गुण जो सिखलाते हैं,
शस्त्रायुध को पाप, लोह को दुर्गुण बतलाते हैं।
मन की व्यथा समेट न तो अपनेपन से हारेगा।
मर जाएगा स्वयं, सर्प को अगर नहीं मारेगा।"[90]

कवि श्री श्याम लाल शुक्ल जी ने निम्न पंक्तियों के माध्यम से चीन को भारत–भूमि की महत्ता से परिचित कराया है–

"हम जीवन भर देइत तुमका महिंया हम बलि के बकरा,
हो जइहौ छलो श्रृंगी जो ऋषि का क्रोध कऊं उमड़ा।
यह भारत भूमि है हिम कहां न भूमि निकाइ उठाय लिहेव,
बिन सोचे समझ कदम आजु तुम आपनि मौत बुलाय लिहेव।
महतरी का हमरा भूमि रहेव, जेहि का तुम आज डिगायो है,
शिव तीसर नेत्र खुला समहूं तो समझौ प्रलय बुलायो है।"[91]

अन्त, चीन को युद्ध करने से रोक जाने का मौका देना चाहता है। कवि के शब्दों में–

तुम लौटि जाव अब घर जाव ई सोच लेव अबहूं मौका,
नाहीं फिरि हाथ मलत रहिहौ, न मिली दुइस तुमका मौका।
हमनो आहिउ नेहरून का बच्चौ, ऊपर ते विघल चली,
न जाब घोखि जो तुमरे हम, जेउ कल्ह यह जो मचल चली।
बहुते तुमका समझाय चुकेन, का करौ ठनने अक्किल तुम
नाहीं अस धक्का लागी फेरि, त भागत रहो दबाए दुम।।[92]

कवयित्री कमला चौधरी ने 'जागरण गीत' शीर्षक कविता में भारत–चीन युद्ध में जन–जन को युद्ध के लिए प्रेरित करते हुए कहती हैं–

लक्ष्मण राम जहां सोए हैं, जन–जन में उन्हें जगाओ,

टेर कहो हनुमान वीर से आ चीनी लंका ढाओ।
कहो कृष्ण से चक्र सुदर्शन ले समर क्षेत्र में आओ,
एक नहीं लाखों अर्जुन को, फिर धर्म युद्ध सिखलाओ।''[93]

आगे भारत के पौराणिक युद्धों की ओर भी संकेत किया है तथा पौराणिक प्रतीकों के माध्यम से भारत–चीन युद्ध को रेखांकित किया है–

''अर्जुन, कर्ण, भीम, दुर्योधन, अब लड़े न भाई–भाई,
कौरव पाण्डव मिलकर जूझें, यह घर की नहीं लड़ाई।
देवासुर संग्राम, चीन ने भारत पर करी चढ़ाई,
भीष्म पितामह का प्रण जागे बल पौरुष की प्रभुताई।
आज महाभारत जागा, और समर राजपूताने का,
गान जागरण के मां गाओ, आया समय जगाने का।।''[94]

कवि अशोक जी ने रणभेरी शीर्षक कविता में चीन आक्रमण का वर्णन करते हुए उसकी धृष्टता को भी प्रतिपादित करते हैं–

''रणभैरी बज रही, वीर वर पहनो केसरिया बाना।
आज हिमालय के मस्तक पर बर्बर शत्रु सवार हुआ

आज हमारी मातृभूमि पर दस्यु चीन का वार हुआ,

धोखे से कर घात हमारे ऊपर दुश्मन गाज रहा,

हमें पद–दलित करनेको वह अपना दलबल साज रहा,

उठो, संभालों शस्त्र, हमें युद्धभूमि में डट जाना

रणभेरी बज रही, वीर वर पहनो केसरिया बाना।''[95]

कवि बृजेन्द्र गौड़ ने भारत के शान्ति सन्देश एवं अत्याचारी द्वारा युद्ध की ओर उन्मुख होने की विवशता को चित्रित किया है–

''भारत ने तो दिया विश्व को शान्ति का सन्देश,

किन्तु विवश हो, आज सजाना पड़ा युद्ध का वेश,

महायज्ञ है, दे डालो, तन मन धन का उपहार

जवानों हो जाओ तैयार!''[96]

(iv)– बांग्लादेश का उदय–

भारत पाकिस्तान के तीसरे युद्ध के फलस्वरूप एक नए देश का अभ्युदय हुआ जिसका नाम बांग्लादेश रखा गया। भारत दूसरे राष्ट्र के स्वातन्त्र संग्राम में खुले तौर पर उतरा है और बिना नागरिक विरोध की परवाह किएउसे स्वतन्त्रता दिला देता है। यह घटना दुनिया के इतिहास में एक अनोखी घटना थी। 3 दिसम्बर से 16 दिसम्बर 1971 तक चलने वाले इस 14 दिवसीय युद्ध ने भारतीय सेना और इन्दिरा गांधी के कर्तव्य का इतिहास सुनहरे अक्षरों से लिख है। यदि भारत चाहता तो उसे अपने में मिला लेता, किन्तु उसने बांग्लादेश को उसके ही निवासियों को सौंप दिया। इस प्रकार पाकिस्तन की करारी हार हुई। इस चौदह दिवसीय युद्ध के कुछदूरगामी परिणाम हुए जिसमें बांग्लादेश का स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में एशियाई राष्ट्रों में उदय हुआ।

आधुनिक कवि इस घटना से प्रभावित होकर अपने भावों को रचनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त करते रहे हैं। कवि बृजराज सिंह तोमर ने निम्न पंक्तियों में पाक सेना द्वारा बंग देश में किए गए अत्याचार को रेखाकिंत किया है–

''पाक फौज ने अकस्मात ही

टैंकों और मशीनगनों से

ढाका पर कर दिया आक्रमण

चारों ओर नगर को घेर

बंग बन्धु को गिरफ्तार कर

सड़क गली में जहां मिला जो

अधाधुंध फायरिंग करके

लगा दिए लाशों के ढेर।''[97]

पाक की सामरिक तैयारी, भारत की शक्ति, मुक्ति वाहिनी के कृत्य, भारत की योजना, पूर्व में पाक सेना का उपद्रव फलस्वरूव बोयरा की घटना सामने आती है जिसमें मुक्ति सेना जसोर को अपना लक्ष्य बनाकर उपक्रम कर रही

थी, पाकिस्तान सेना इसकी शिविर स्थिति मिटाने के लिए बड़ी संख्या में गोलाबारी करती है जिससे अनेक भारतीय सैनिक हताहत होते हैं। इसी के प्रत्युत्तर में भारतीय सैनिक पाक को करारा जवाब देते हैं–

"शत्रु को मुंह की खिलाने हेतु
भारत की अनी ने भी
प्रबल प्रत्याक्रमण कर
ध्वस्त तेरह टैंक करके
पाक को पीछे ढकेला"[98]

ढाका की घेराबन्दी से शत्रु भयभीत होकर युद्ध बन्द करने का प्रस्ताव स्वीकार करता है उसकी भी कुछ शर्तें स्वीकार कर ली जाए–

हिन्द अनी ने ढाका नगरी
घेरी सभी दिशाओं से
समझा अरि अब बचना मुश्किल
भारत की सेनाओं से"[99]

अंततः पाकिस्तान का पराजय होती है और बांग्लादेश का स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में उदय कवि के शब्दों में–

"नब्बे हजार से अधिक
पाक के सैनिक एवं अधिकारी
कर आत्म–समर्पण यहां
अन्ततः पूर्ण पराजय स्वीकारी।"[100]

पाक द्वारा पूर्वी पाकिस्तान पर की गई आक्रामक कार्यवाही को कवि हरिजोशी ने निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया है–

"मुसीबत के मारो, हिम्मत न हारो
और अब किसी को भी पुकारो।
यह सच है कि पाक से,
संगीन चुभाने आए हैं तुम्हें लोग
एक धर्म एक ही देश के वे भी निवासी हैं।"[101]

आगे युद्ध के दुष्परिणामों को इस प्रकार व्यक्त किया है–

"जशीमुद्दीन का घर जलकर इन्हें क्या मिला होगा।
शुरुआत भाई का घर जलाने से हुई,
हम जान सकते, इस सभी का क्या सिला होगा
पूर्वी पाक में मर्सिया होता, अजानों की जगह,
बन गए सब ओर शमशान कई,

देशवासी आज तक राष्ट्रगान गा रहे जो

वह हमारा सिन्ध और पंजाब हमें चाहिए।''[106]

पाकिस्तान के मंसूबे को सही राह दिखाने के लिए कवि वाहिद अली वाहिद पाकिस्तान को नाग की उपमा देते हुए तथा भारत को छल–बल का सहारा लेने को उत्साहित करते हैं। कवि के शब्दों में–

''कब तक बोझ सम्भाला जाए।

युद्ध कहां तक टाला जाए।

दूध छीन बच्चों के मुख से,

क्यों नागों का पाला जाए।

दोनों ओर लिखा हो भारत।

सिक्का वही उछाला जाए।

तू राणा का वंशज है तो,

फेंक जहां तक भाला जाए।

इस बिगड़ैल पड़ोसी को भी।

फिर शीशे में ढाला जाए।''[107]

विमल प्रभाकर पाकिस्तान से कहते हैं कि तूने कारगिल पर हमला तो किया लेकि अब पाकिस्तान को बचाना मुश्किल कर देंगे–

''आज कारगिल पर ललकारा तूने हिन्दुस्तान को।

अबकी बार बचा न पाएगा तू पाकिस्तान को।''[108]

कारगिल युद्ध पर अपने उद्‌गार कवि शान्ति स्वरूप 'कुसुम' निम्न पंक्तियों में व्यक्त करते हैं–

''रुको नहीं पथ में अलबेलों

तोपों तलवारों से खेलो

तुम हिन्दी हो हिन्द तुम्हारा

अगला पिछला बदला ले लो

श्वेत हिमाद्रि करो लोहितमय

रवि बन अविलच उजलो

चलो कारगिल चलो''[109]

कवि बृजेश मिश्र सौरभ के शब्दों में–

::भाई चारे मैत्रीभाव का पाठ न सीखा

सबक सिखाया उसने हमको कड़वे अपमान का।

धूल चटाई शिमला समझौतों को

बस का रुख मोड़ दिया याद न 'अटल' सम्मान का।।''[110]

कवि रामदास गुप्त पाकिस्तान द्वारा बार–बार होने वाले आक्रमणों का वर्णन करते हुए कहते हैं–

"सैंतालीस, पैंसठ, इकहत्तर मत दुहराओ!
निन्यानबे के फेर में पड़े! शत्रु ढहाओ!"[111]

कवि राजेश जैन चेतन के शब्दों में–

"पैंसठ और इकहत्त्तर को तो लगता बिल्कुल भूल गए,
भीख मिले हथियारों के दम ज्यादा ही कुछ फूल गए,
कारगिल में गद्दारी का ब्याज सहित होगा भुगतान
नई सदी में नई सोच ले नव इतिहास बनाया था
इन्द्रप्रस्थ लाहौर जोड़कर मैत्री हाथ बढ़ाया था,
न्योछावर है जान मीत पर, शत्रु के हम लेते प्रान"[112]

कवि डॉ. वीरेन्द्र तरुण पाकिस्तान की पूर्व घटनाओं को आज तक जोड़ते हुए कहते हैं–

"जब–जब हम पर चढ़ कर आया तूने मुंह की खाई है
एक लाख ने किया समर्पण बांग्लादेश गवाही है।
लाल बहादुर–इन्दिरा जी से तू ही जंग में हारा था,
अपने लाल बहादुर को तूने धोखे से मारा था।
इन्दिरा ने तेरा किया सफाया एक टांग तब तोड़ी थी–
दरियादिली हमारी थी जो जीती भूमि भी छोड़ी थी।
तू हम पर गुर्राया नाहक तुझको सबक सिखाएंगे
'अटल' करो ऐलान तिरंगा पिण्डी पर लहराएंगे।"[113]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1— विनय—पत्रिका—गोस्वामी तुलसीदास—पृष्ठ 88—संस्करण 52वां टीकाकार—हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रेस गोरखपुर

2— रामचरित मानस—तुलसीदास—पृष्ठ 834, संस्करण 31वां टीकाकार हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रेस, गोरखपुर—लंकाकाण्ड

3— रामायण—बाल्मीकि प्रथम भाग— पृष्ठ 697—श्लोक 27—28—गीता प्रेस गोरखपुर—तृतीय संस्करण—किष्किन्धाकाण्ड

4— पूर्वोक्त—पृष्ठ 698—श्लोक 34

5— पूर्वोक्त—पृष्ठ 203—श्लोक 27—अयोध्याकाण्ड

6— पूर्वोक्त—पृष्ठ 213—श्लोक 26—27

7— पूर्वोक्त—पृष्ठ 584—श्लोक 20—अरण्यकाण्ड

8— श्रीसंक्षिप्त महाभारत 'लगना'—हिन्दीटीकोपेतम—द्वितीय खण्ड—संपा. डॉ. प्रभुनाथ द्विवेदी—पृष्ठ 38—उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी लखनऊ—संस्करण 1994

9— रामायण—बाल्मीकि प्रथम भाग— पृष्ठ 83—श्लोक 19—सर्ग 25—बालकाण्ड—गीता प्रेस गोरखपुर—तृतीय संस्करण

10— पूर्वोक्त (1.26.16)—पृष्ठ 84

11— पूर्वोक्त (1.26.18)—पृष्ठ 84

12— पूर्वोक्त (1.26.20—22)—पृष्ठ 84

13— पूर्वोक्त (1.26.36.)—पृष्ठ 85

14— पूर्वोक्त (1.27.24—25)

15— पूर्वोक्त (1.30.18.)—पृष्ठ 92

16— पूर्वोक्त (1.54.16.)—पृष्ठ 136

17— पूर्वोक्त (1.54.21.) (1.55.2—3)

18— पूर्वोक्त (1.56.6—12)—पृष्ठ 140

19— पूर्वोक्त (1.56.23—24)—पृष्ठ 141

20— पूर्वोक्त (3.4.16.)—पृष्ठ 499

21— पूर्वोक्त (3.3.10.)—पृष्ठ 497

22— पूर्वोक्त (3.26.26—28)—पृष्ठ 551

23— पूर्वोक्त (3.27.11.)—पृष्ठ 553

24— पूर्वोक्त (3.28.15—18)—पृष्ठ 554—55

25— पूर्वोक्त (3.50.28.)—पृष्ठ 608

26— पूर्वोक्त (3.51.24.)—पृष्ठ 609

27— पूर्वोक्त (3.72.7—8)—पृष्ठ 659

28— पूर्वोक्त (4.16.22.)—पृष्ठ 715

29— पूर्वोक्त (4.16.39.)—पृष्ठ 717

30— पूर्वोक्त (5.44.7.)—पृष्ठ 979—80

31— पूर्वोक्त (5.45.12.)—पृष्ठ 981

32— पूर्वोक्त (5.47.36.)—पृष्ठ 988

33— पूर्वोक्त (5.53.5.)—पृष्ठ 1002

34— पूर्वोक्त (6.44.35.)—पृष्ठ 1167

35— पूर्वोक्त (6.55.25.1 / 2.)—पृष्ठ 1195

36— पूर्वोक्त (6.57.30.)—पृष्ठ 1200

37— पूर्वोक्त (6.58.20—23)—पृष्ठ 1203

38— पूर्वोक्त (6.67.18.)—पृष्ठ 1243

39— पूर्वोक्त (6.73.62—65)—पृष्ठ 1283

40— पूर्वोक्त (6.90.71.)—पृष्ठ 1340

41— पूर्वोक्त (6.100.48.)—पृष्ठ 1369

42— पूर्वोक्त (6.108.17—18.)—पृष्ठ 1393

43— श्रीमद्भगवद्गीता—गीताप्रेस गोरखपुर

44— श्रीसंक्षिप्त महाभारत—द्वितीय खण्ड—संपा. डॉ. प्रभुनाथ द्विवेदी—संस्कृत अकादमी लखनऊ—संस्करण 1994—विराट पर्व प्रथम अध्याय—पृष्ठ 19

45— पूर्वोक्त—(3.2)—पृष्ठ 21

46— पूर्वोक्त—(3.2)—पृष्ठ 22

47— पूर्वोक्त—(3.17—20)—पृष्ठ 35

48— पूर्वोक्त—(3.4.10)—पृष्ठ 43

49— पूर्वोक्त—(3.5.42)—पृष्ठ 57

50— पूर्वोक्त—(द्रोणपर्व 2.31)—पृष्ठ 410

51— पूर्वोक्त—(2.33)—पृष्ठ 410

52— पूर्वोक्त—(2.35.)—पृष्ठ 410

53— पूर्वोक्त—(3.32)—पृष्ठ 421

54— पूर्वोक्त—(3.45—46)—पृष्ठ 423

55— पूर्वोक्त—(4.136)—पृष्ठ 446

56— पूर्वोक्त—(6.41)—पृष्ठ 467

57— पूर्वोक्त—(6.63)—पृष्ठ 470

58— पूर्वोक्त—(कर्णपर्व 3.148—49)—पृष्ठ 536

59— पूर्वोक्त—(3.190—91)—पृष्ठ 544

60— पूर्वोक्त—(3.228)—पृष्ठ 551

61— पूर्वोक्त—(शल्यपर्व 1.4)—पृष्ठ 558

62— पूर्वोक्त—(गदापर्व 1.132)—पृष्ठ 598

63— अनामिका से उदधृत—राम की शक्ति पूजा—निराला—पृष्ठ 117—संस्करण 1992—राजकमल प्रकाशन दिल्ली

64— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृष्ठ 7—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

65— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 74—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

66— पूर्वोक्त—पृष्ठ 53

67— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 39—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

68— अंधेरे में—मुक्तिबोध—पृष्ठ 136—अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में से उदधृत—संस्करण 1994—राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली

69— असाध्यवीणा और अज्ञेय—संपा. रमेशचन्द्र शाह—पृष्ठ 33—संस्करण 2001—नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली

70— संसद से सड़क तक से उद्धृत—पटकथा—धूमिल—पृष्ठ 110—संस्करण 1990—राजकमल प्रकाशन दिल्ली

71— मुक्तिप्रसंग—राजकमल चौधरी—पृष्ठ 11—संस्करण 1988—वाणी प्रकाशन दिल्ली

72— नाटक जारी है—लीलाधर जगूड़ी—पृष्ठ—83—संस्करण 1994—किताब घर दिल्ली

73— नीति—संपा. सुरेन्द बधवा—पृष्ठ 3—अक्टूबर 1999—भारत विकास परिषद

74— नई काव्य प्रतिभाएं—संपा. ऊषा गुप्ता—पृष्ठ 128—संस्करण 1986—ग्रन्थ अकादमी दिल्ली

75— राष्ट्रीय चेतना के प्रेरक स्वर—संपा. प्रेमलता मोदी—पृष्ठ 37—(भारत दुर्दशा—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र)—संस्करण 1997

76— पूर्वोक्त—पृष्ठ 506 (शीर्षक स्वाधीनता की चाह—रवीन्द्रनाथ टैगोर)

77— पूर्वोक्त—पृष्ठ 478—79 (शीर्षक सरफरोशी की तमन्ना—राम प्रसाद बिस्मिल)

78– पूर्वोक्त–पृष्ठ 9

79– चर्चित राष्ट्रीय गीत–संपा. नरेश चन्द्र चतुर्वेदी (शीर्षक स्वतन्त्रता–पुरुषोत्तम दास टण्डन)–संस्करण 1999–भाग एक

80– पूर्वोक्त–पृष्ठ 26

81– पूर्वोक्त–पृष्ठ 156

82– श्री श्याम लाल शुक्ल–साक्षात्कार द्वारा प्राप्त रचना–सम्पर्क 70डी श्याम नगर कानपुर

83– कारगिल की हुंकार–डॉ. सुनील जोगी–राजेश जैन 'चेतन'–पृष्ठ 89–संस्करण 1999–सत्साहित्य भण्डार दिल्ली

84– पूर्वोक्त–पृष्ठ 93

85– पूर्वोक्त–पृष्ठ 126

86– पूर्वोक्त–पृष्ठ 96

87– परशुराम की प्रतीक्षा–रामधारी सिंह 'दिनकर'–पृष्ठ 42–संस्करण 1999–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

88– दैनिक प्रताप (शीर्षक–चीन से श्री श्याम लाल शुक्ल)–दिनांक 25 नवम्बर 1962

89– पूर्वोक्त

90– देशभक्ति की कविताएं–संपा. नरेन्द्र सिन्हा–पृष्ठ 81 (शीर्षक–जागरण गीत–कमला चौधरी)–संस्करण 1985

91– पूर्वोक्त

92– पूर्वोक्त–(शीर्षक– रणभेरी कवि अशोक जी)–पृष्ठ 121

93– पूर्वोक्त– (शीर्षक जवानों हो जाओ तैयार–बृजेन्द्र गौड़)–पृष्ठ–187

94– बांग्ला विजय–वृजराज सिंह गौतम–पृष्ठ 45–संस्करण 1992–गोपाल प्रकाशन टिकार हरदोई

95– पूर्वोक्त–पृष्ठ 66

96– पूर्वोक्त–पृष्ठ 261

97– पूर्वोक्त–पृष्ठ 274

98– यन्त्र युग–हरि जोशी–पृष्ठ 74–(शीर्षक सोनार बांग्ला वालों के नाम)–संस्करण 1975–राष्ट्रीय प्रकाशन मन्दिर भोपाल

99– पूर्वोक्त–पृष्ठ 74

100– 'राष्ट्रीय सहारा' समाचार पत्र–पृष्ठ 5–दिनांक 6 सितम्बर 2002 लखनऊ

101– 'आज' समाचार पत्र–2 जुलाई कानपुर

102– पूर्वोक्त–10 जून कानपुर

103– कारगिल की हुंकार–डॉ. सुनील जोगी, राजेश जैन 'चेतन'–पृष्ठ 90 (शीर्षक 'पाक से जमीन का हिसाब हमें चाहिए')–संस्करण 1999–सत्साहित्य भण्डार दिल्ली

104– पूर्वोक्त–पृष्ठ 141–(शीर्षक–फेंक जहां तक भाला जाए)

105– पूर्वोक्त–पृष्ठ 144–(शीर्षक–कारगिल पर हमला विश्वासघात)

106– मेरा देश बुलाता होगा–शान्ति स्वरूप 'कुसुम'–पृष्ठ 42 (शीर्षक–चलो कारगिल चलो)

107– कारगिल की हुंकार–डॉ. सुनील जोशी राजेश जैन 'चेतन'–पृष्ठ89–सत्साहित्य भण्डार दिल्ली–संस्करण 1999

108– पूर्वोक्त–पृष्ठ 122

109– पूर्वोक्त–पृष्ठ 129

110– पूर्वोक्त–पृष्ठ 155–(शीर्षक–तिरंगा पिण्डी पर फहराएंगे–डॉ. वीरेन्द्र तरुण)

द्वितीय परिवर्त्त

आधुनिक युद्ध काव्यों में चित्रित युगबोध एवं मूल्य चेतना

युग बोध

अ—सामाजिक चेतना एवं सामाजिक बोध

ब—राष्ट्रीयता की भावना का विकास

स—संघर्षशील चेतना

द—राजनीतिक चेतना एवं युग बोध

य—राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध

र—साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद का अन्त

ल—शीतयुद्ध

व—आणुविक युद्ध की आशंका

क—गुट निरपेक्षता की नीति

ख—सैनिक गुटबन्दी का बाहुल्य (नाटो, सीटो, सेंटो, वारसा सैनिक गठबन्धनों का प्रभाव)

ग—शस्त्रीकरण की अनवरत प्रतिस्पर्धा

घ—अस्तित्व एवं सुरक्षा

मूल्य चेतना

अ—आर्थिक चेतना एवं आर्थिक युग बोध

i—आर्थिक बोझ, दबाव एवं कर्ज

ii—शस्त्र एवं सैनिकों पर

ब— सांस्कृतिक चेतना

i— संस्कृति की संरचना हेतु युद्ध

ii— सांस्कृतिक मूल्यों की संरक्षा

iii— धर्म, कला, साहित्य की संरक्षा

स— मनोवैज्ञानिक मूल्य चेतना—

i— सुरक्षा की भावना

ii— अस्तित्व की रक्षा

iii— स्वतन्त्रता की महत्वाकांक्षा

iv— नेतृत्व की आकांक्षा

द्वितीय परिवर्त्त

आधुनिक युद्ध काव्यों में चित्रित युग बोध एवं मूल्य चेतना–

युग बोध

आधुनिक कवियों ने जहाँ लोक जीवन को अपनी रचनाओं में स्थान दिया है, वहीं वे सामयिक और युगबोध की भी उपेक्षा नहीं कर सके क्योंकि आधुनिक युग की प्रधान समस्या 'युद्ध' है। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' के शब्दों में– "युद्ध की समस्या मनुष्य की सारी समस्याओं की जड़ है।"[1] इसी प्रकार चिन्तनशील कवि श्री नरेश मेहता का कथन है– "युद्ध आज की प्रमुख समस्या है।"[2] डा0 धर्मवीर भारती ने अंधायुग की भूमिका में लिखा है–"अंधायुग कदापि न लिखा जाता यदि उसका लिखना मेरे लिए बस की बात रह गई होती।"[3]

धर्म तथा स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए युद्ध की अनिवार्यता को हर काल के लिए स्वीकार किया गया है। आधुनिक युग की तरह पहले युद्ध इतने सर्वव्यापक नहीं थे और न ही इतने सर्व संहारक। भारत में कुरुक्षेत्र और कलिंग , युद्ध के लिए प्रसिद्ध थे, कुरुक्षेत्र में, अर्जुन युद्ध की विभीषिका का अनुभव करके युद्धारम्भ में ही, युद्ध से विरक्त हुए थे। भगवान श्रीकृष्ण ने कर्मयोग का सन्देश दिया तथा अर्जुन को शस्त्र ग्रहण करने की प्रेरणा दी। इसी प्रकार 'गीता' युद्ध दर्शन को लेकर चलता है। दूसरी ओर कलिंग युद्ध में सम्राट अशोक युद्ध के विनाशकारी परिणाम को देखकर हिंसा छोड़कर बौद्ध धर्म को अंगीकार कर लेते हैं और सम्पूर्ण मध्ययुग तथा सम्पूर्ण राष्ट्र में एक धारणा यह भी बदल जाती है कि युद्ध नहीं शान्ति ही जीत का लक्ष्य है और सम्राट अशोक की लाट को आर्दश मानकर अहिंसा को परम पुरुषार्थ मान लेते है। प्रथम विश्व युद्ध से युद्ध के सन्दर्भ बदल जाते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध में तो युद्ध की सर्वव्यापकता एवं सर्व संघारात्मकता को सूचित कर दिया और आज तृतीय विश्वयुद्ध की संभावना समस्त मानव जाति के विनाश का संकेत दे रही हैं। अतः आज प्रत्येक प्रबुद्ध वर्ग के लिए युद्ध गहरी संवेदना का विषय बन गया है। इसी मौलिक विषय पर चिन्तन करने हेतु मैने अपने शोध कार्य को इसी विषय में केन्द्रिय किया है।

धर्मवीर भारती दृष्टिबोधक कवि हैं युगबोध इन्हें अपनी ओर खीचता है। 'अंधायुग' में इसका स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर है। भारती जी ने 'अंधायुग' की प्रस्तुति में लिखा है– कि इस कृति का पूरा जटिल वितान जब मेरे अन्तर में उभरा तो मैं असमंजस में पड़ गया । पर एक नशा होता है– अंधकार के गरजते महासागर की चुनौती स्वीकार करने का पर्वताकार लहरों से खाली हाथ जूझने का, अनमापी गहराइयों में उतरते जाने का और फिर अपने को सारे खतरों में डालकर आस्था के, प्रकाश के, सत्य के, मर्यादा के कुछ क्षणों को बटोरकर बचा कर धरातल तक ले आने का– इस नशे में इतनी गहरी वेदना और इतना तीखा सुख घुला मिला रहता है कि उसके आस्वादन के लिए मन बेबस हो जाता है। उसी की उपलब्धि के लिए यह कृति लिखी गई।[4]

नरेश मेहता ने 'संशय की एक रात' में पौराणिक प्रसंग के द्वारा नये युग बोध को जोड़ने का प्रयास किया हैं। कवि ने "आस्था के साथ अनास्था को,आशा के साथ निराशा को, संशय के साथ विश्वास को ध्वंस के साथ निर्माण को और व्यष्टि के साथ समष्टि को भी वाणी दी है।[5] कवि ने राम के व्यक्तित्व द्वारा समाज कल्याण के लिए बलिदान एवं आत्म समर्पण की भावना को चिन्नित किया है, राम संशय ग्रस्त है, युद्ध के प्रति, लेकिन लोक

कल्याण हेतु युद्ध को स्वीकार करते हैं। राम के इसी संशय एवं अर्न्तद्वन्द्व द्वारा युद्ध की अनिवार्यता को सामाजिक स्वत्व की रक्षा हेतु आवश्यक माना है। युद्ध की तैयारी पूर्ण हो जाने पर राम के मन में संकल्प–विकल्प उठते हैं कि क्या यह करना उचित है या नहीं, एक व्यक्ति के लिए इतना बड़ा नर संहार करना उचित है? दशरथ की आत्मा का सन्देश और जटायु, हनुमान, लक्ष्मण आदि युद्ध के लिए प्रेरित करते हैं। युद्ध की अनिवार्यता के समक्ष शान्ति की भावना समाप्त हो जाती है–

" अब मैं निर्णय हूँ
सबका
अपना नहीं
मुझमें
कल का युद्ध
आज ही सम्भावित हो चुका
मध्य रात्रि के इस निर्णय
जाने कितने सूर्य
आज ही
कल के लिए मर चुके
एकत्रित इस जन समूह के सीने में
इतिहास
खड्ग सा घोप दिया मैंने
मध्यरात्रि के इस निर्णय ने"[6]

आधुनिक कवि राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय समस्याओं के प्रति सचेष्ट रहे हैं। अपनी कविता में बंगाल के अकाल को अपने चिन्तन का विषय बनाया है वहीं साम्प्रदायिक दगों, बेरोजगारी, देश विभाजन तथा गांधी की हत्या आदि का भी उल्लेख किया हैं। इस ओर आधुनिक हिन्दी कवियों की दृष्टि सचेत रही है–

" ओ धनी कलम के आँख खोल
अब वर्तमान बन सत्य बोल

"कह कर कवियों ने वर्तमान के सत्य को अर्थात सामयिकता और युगबोध को रेखांकित किया है। इन कवियों का सरोकार युद्ध, हिंसा, आतंक, सभी से रहता है। अफ्रीका के लुलुम्बा हो या भारत के गाँधी दोनों की निर्मम हत्या पर कवियों ने कलम उठाई है। पूर्व पश्चिम का कोई भेद कविता के आड़े नहीं आता। गाँधी की मृत्यु पर कवि का स्वर क्रन्दन करता है–"बापू मेरे अनाथ हो गई, भारत माता अब क्या होगा " कहकर कवि ने गाँधी के प्रति शोकांजलि अर्पित की है वहीं नागार्जुन अफ्रीका के लुलुम्बा की हत्या पर शोक व्यक्त करते हैं–

" मैं सुनता हूं अफ्रीका की आत्मा का आक्रोश
मैं सुनता है धरती के कण–कण का रोष।"

हिरोशिमा के पतन पर प्रगतिशील कवि डा0 रणजीत ने इस प्रकार संवेदना व्यक्त की है कि है– '' ि ''हिरोशिमा में मनुजमर गया
दौड़ रही हैं गन्धक और फास्फोरस की पीली लपटें
जिसमें उस जापान देश का सदियों का संगीत मर गया ''
'करगिल के आर–पार' नामक कि ता में कवि डा. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित 'ललित' ने भी अपने समकालीन रचना धर्म को पहुंचाना है, और उन्होंने पा केस्तान द्वारा कारगिल पर किये गये अवैधानिक कब्जे और उनकी आतंकवादी गतिविधियों को लक्षित करते हुये एक ओर युगबोध और दूसरी ओर युद्ध चिन्ता को रेखांकिंत किया है–
'' एशिया महाद्वीप में भी मँडराते हैं युद्ध के बादल
गड़ गड़ाती हैं तोपें और उगलती हैं धुआँ
बारूदी आकाश उत्तर पूर्व में है
चीन और पश्चिम में पाकिस्तान पूर्व में है
बाँग्ला देश वर्मा और मलेशिया
दक्षिण में श्रीलंका और मालद्वीव
उत्तर में है नेपाल और भूटान
अखण्ड और अविभाज्य था अपना भारत महान
पर स्वाधीनता का कैसा है अवदान
विभाजनोपरात हिन्दुस्तान और पाकिस्तान
भारत अब तक न हो सका हिन्दुस्तान
और पाकिस्तान जन्म से है इस्लामाबाद
ऐसे में कैसे रूकेगी जंग और कब तक रूकेगी जंग ''
इस प्रकार उपर्युक्त कविता में कवि ने भारत और पाकिस्तान के सीमा विवाद को लेकर कारगिल के प्रसंग से अपने समकालीन युग को ही अभिव्यक्त देने का प्रयत्न किया हैं। विनय मोहन की कविताओं में समकालीन मुद्राएँ दिखाई देती हैं। आस्था का ये कवि मूल्यनिष्ठा एवं माननीय चिन्ता का बोध कराता है। विनय की कविताओं में विद्रोह की अभिव्यक्ति का स्वरूप चिन्तन प्रधान है, कवि के शब्दों में–
'' हर विद्रोंह दब जाता है
आत्म रक्षा में–
या सुविधाओं के संधान में
किससे लडे? किसके लिए लड़े?
वे जो विस्फोट के साथ मजबूत कर रहे हैं कुर्सियाँ '' [7]

प्रस्तुत कविता में विद्रोह के भाव का अनुचिन्तन है और यह व्यवस्था तन्त्र को सम्बोधित है। इसी प्रकार 'दस्तक' या 'चोर' कविता की ये पंक्तियां दृष्टव्य हैं–

" जब कि सच ये है कि
आ समुद्र मेरी दृष्टि के रास्ते
सीमित करता हुआ एक अजनबी अंधेरा
मेरे सिर पर बैठकर
मेरा पीछा कर रहा है
मैं अपना सर नहीं काट पाता हूँ " [8]

कवि सामाजिक संघर्षों में अपनी भागीदारी का अनुभव करता है और आत्मसत्ता के प्रति जागरूपता का बोध भी। संघर्ष धर्मिता का स्वर विनय की 'हर आदमी का आकाश' नामक कविता में देखने को मिलता है–"
अब चेत जाओं
साफो की नींद में बेहोश लोगो
मैं हर एक अधनंगे आदमी को
शंकर बना दूंगा
हर उँगली को त्रिशूल"[9]

उपर्युक्त उदाहरणो से स्पष्ट है कि इन कविताओं में जिस युद्ध या संघर्ष की अभिव्यक्ति है वह आत्म संघर्ष के समानान्तर है। इस आत्म संघर्ष को जब कविता के धरातल पर अभिव्यक्ति दी जाती है तो वह, व्यापक संघर्ष का, रूप ले लेता है। ऐसी कविताओं में एक वैषम्य होता है, जो रचनात्मक प्रतिबद्वता का रूप ले लेता है। एक भयावह मानव स्थिति का चित्रण प्रणव कुमार बन्धोंपाध्याय की कविता में देखने को मिलता है–
"मुझे स्मरण है, तुम्हारी डायरी के वे अंश
जहाँ
जहाँ कबूतरों के रक्त का प्रसंग है, जहाँ
सार्वजनिक चिन्ता में जलता एक लावारिश शव
इसलिए अग्नि तर्पण में समाप्त हो गया की
वो इतिहास का विरुद्व बना था"[10]

उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि आधुनिक कवियों ने सामाजिक चेतना और सामाजिक युग बोध को समकालीन सन्दर्भो के माध्यम से एक सजग रचनाकार के रूप में प्रस्तुत किया है।

(अ) – सामाजिक चेतना एवं सामाजिक बोध–

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, समाज से अलग व्यक्ति का कोई अस्तित्व नहीं होता। हम इसी समाज में अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हैं, तथा दूसरों के विचारों को ग्रहण करते हैं। समाज का साहित्य के साथ अटूट रिश्ता है। इस संसार में हुये दो विनाशकारी महायुद्ध एवं भारत पर, चीन पाकिस्तान के आक्रमण के फलस्वरूप इस विध्वसंक स्थिति के परिणामों की आधुनिक काव्य कृतियों में अभिव्यक्ति मिलती है। बीती शताब्दी

ने हमें यान्त्रिक युग से भली भाँति परिचित कराया है किन्तु उसका प्रभाव मानवता के लिये विनाशक ही रहा है। युद्ध की भयाकुलता को सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', रामधारी सिंह 'दिनकर', धर्मवीर 'भारती', नरेश मेहता, दुष्यन्त कुमार, मुक्तिबोध, अज्ञेय, लीलाधर जगूड़ी, राजकमल चौधरी सौमित्र मोहन, तथा अन्य आधुनिक कवियों ने भी व्यक्त किया है। इन कवियों पर द्वितीय विश्व युद्ध का पूर्णरूपेण प्रभाव पड़ा। धर्मवीर भारती अपनी मानवता वादी दृष्टि प्रस्तुत करते हुये कहते हैं–" मानवीय गौरव की प्रतिष्ठा इसी में है कि मनुष्य को हम विवेक और संकल्प शक्ति से, युक्त, इतिहास का निर्णायक और नियत का अधिनायक माने। स्वच्छन्दतावाद में पहली बार भावना के सामने विवेक का पूर्ण तिरस्कार कर गेटे तक ने कहा था–" भावना से सब कुछ है अविवेक के लिए जो द्वार खोल दिया उस चिन्तन धारा ने ऐसे तत्व जो प्रविष्ट करा दिये, जो बार–बार मनुष्य के विवेक और उसकी कल्पना शक्ति को निरर्थक मूल्यहीन सिद्ध करते गये और मानवीय गौरव के मूल पर भी कुठारघात करें। "[11]

मनुष्य सामाजिक प्राणी है अतः सामूहिक जीवन से प्रभावित होता है। जब तक साहित्यकार के पास रचना सम्बन्धी स्वतन्त्रता होती है, सामाजिक चेतना विकसित होती है। साहित्य को समाज का प्रतिबिम्ब कहा गया है, वह साहित्य जो चेतना शून्य हो वह सामाजिक चेतना जाग्रत नहीं कर सकता, यही सामाजिक चेतना मानव के विचारों एवं चिन्तन में परिपक्व होती है। " चिन्तन इन्सान का चारित्रिक गुण है जो उसे सामाजिक मनुष्य बनाता है। यह उसकी 'आत्मा' को सर्व में रूपान्तरित करता हैं। सामाजिक मनुष्य का इतिहास और संस्कृति, समाज और मनुष्य के बारे में किया हुआ चिन्तन उसकी समाजिक चेतना की आधारशिला है। "[12] एक महान साहित्यकार अपने युग का व्यापक और गहरे यथार्थ का चित्रण करता है । यह चेतना साहित्यकार में स्वाभाविक रूप से विद्यमान होती हैं।

"युगीन चेतना फैशनवश ओढ़ी हुई कोई चीज नहीं है, वह ऐतिहासिक सन्दर्भ में पूरे समाज में जीवन के मूल्य और प्रणाली को प्रभावित करने वाली नवीन शक्ति है। अतः युग चेतना को छोड़कर हम किसी जीवन्त सामाज को सही रूप में अंकित नहीं कर सकते। "[13]

आधुनिक कवि सामाजिक चेतना के प्रति सक्रिय रहा है चाहे वह युद्ध काव्य हो, उसमें भी चेतना शील भाव प्रवणता मिलती है। कवि सामाजिक विषमताओं से संघर्ष करता है–

" कि जब तूफान आया है, हिलोरों ने बुलाया है,
तुम्हारी नाव क्या तट से बंधी रह जायेगी "[14]

युद्ध परककाव्य में सामाजिक चेतना प्रबुद्ध दिखती है अन्याय का विरोध करना मानव धर्म है, जिसे बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने 'उर्मिल' के माध्यम से दिखाने का प्रयास कियाहै–

"कुछ दो आज पिता दशरथ से
कि यह अधर्म नहीं होगा
राज नहीं कैकेयी का यह
दशरथ का न स्वराज यहाँ
जन–गण–मन रंजना कर्ता ही

होता है अधिराज यहाँ " [15]

अज्ञेय के काव्य में सामाजिक चेतना इतनी गहरी है कि वह अपने अकेले पन को समूह से जोडते है, फलस्वरूप वह कर्त्तव्य बोध से भर जाते है–

" मैं सेतु है, वह सेतु

जो मानव से मानव का हाथ मिलने से बनता है

जो हृदय से श्रम की शिखा से श्रम की शिखा को

अनुभव के स्तम्भ से अनुभव के स्तम्भ को मिलता है

जो मानव को एक करता है। "[16]

कवि केवल अपनी ही जिन्दगी नहीं जीता बल्कि सबकी जिन्दगी जीता है 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता में कवि स्पष्ट कहता है–

" मैं उन सब की जिन्दगी जीता हूँ

जिन्होंने दुश्मन के टैंक तोड़े

जिन्होंने बम मार विमान गिराये

जिन्होंने राहों में विछाई गई विस्फोटक सुरंगे समेटी " [17]

गिरजा कुमार माथुर के काव्य में सामाजिक चेतना एवं सामाजिक बोध के भाव दृष्टिगोचर होते है– "

अंगार बन गया आदि पूर्व सदियों का धुँधला जम्बुद्वीप

श्यामल कृतान्तजा धरा उठी लेकर जीवन का अग्नि द्वीप

जन अम्बुधि की यह एक लहर आसन्न क्रान्ति की दूत हुई

लो महाशक्ति युग जीवन की जन–जीवन में सम्भूत हुई

नयनों में अग्नि शिखाएँ हैं मुख पर मानवता का चंदन

जनता जनार्दन आज बढ़ी करने आजादी का वन्दना " [18]

उपर्युक्त पंक्तियों में एशिया की जाग्रत आत्मा का स्तर मुखरित हुआ है। समाज की मूल्य हीनता में कवि अपने आपको कई बार व्यवस्थित करने में असमर्थ पाता है उसे लगता है कि सारा समाज एक ऐसे मूल्य हीन मार्ग की ओर आ रहा है जहाँ वह अपने को अकेला पाता है किन्तु जीवन के दो छोटे–छोटे स्वार्थ उसे भटका नहीं पाते, कवि के शब्दों में–

" कविता में कहने की आदत नहीं पर कह दूँ

वर्तमान समाज में चल नहीं सकता

पूँजी से जुड़ा हृदय बदल नहीं सकता

स्वातन्त्रय व्यक्ति का वादी

छल नहीं सकता मुक्ति के मान को " [19]

मुक्तिबोध की कविताओं में समाज में नारी के स्थान को लेकर भी कविताएं लिखी गई हैं। कवि को ऐसा

लगता है कि समाज में नारी जिसे ममता, आदर्श, त्याग, एवं पूजा के योग्य समझा जाता रहा है अब वह सामाजिक दृष्टि से नगण्य मानी जाती है। मुक्तिबोध ने कविता में नारी को– 'प्राण के कोमल अंगारों की लतिका' कहकर संबोधित किया है और नारी के प्रति सम्मान का भाव व्यक्त किया है। मूल्यों की दृष्टि से मुक्तिबोध क्रान्ति और संघर्ष के कवि माने जाते हैं।

(ब) – राष्ट्रीयता की भावना का विकास–

राष्ट्र ही वह अवलंबन है जिसमें राष्ट्रीयता की भावना का विकास होता है। यदि राष्ट्रीयता की भावना के विकास को देखा जाये तो यह सम्भवतः भारत में अंग्रेजों के आगमन से प्रारम्भ होती है। विदेशी शासकों द्वारा शोषित जनता को, जब अपनी परतन्त्रता का ज्ञान होने लगा, उस समय राष्ट्रीयता की भावना विकसित हुई, जो उसे अपने अधिकारों का एहसास कराने लगी। ऐसे अवसर पर कवियों ने साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद के विरोध में अपनी कलम उठाई। असफल होने पर भी जन–सामान्य में राष्ट्रीयता का विकास ही हुआ। वस्तुतः हिन्दी की राष्ट्रीय कविता भारतेन्दु युग से एक परम्परा के रूप में आगे बढ़ी फिर भी यह राष्ट्रीय भावना अपने व्यापक धरातल को प्राप्त नहीं कर सकी थी। राष्ट्रीय कॉंग्रेस की स्थापना के परिणाम स्वरूप राष्ट्रीय कविता अधिक फली–फूली और समृद्व हुई।

उस समय राष्ट्रीयता की भावना को बढ़ाने वाले कारक– अतीत की गौरव गाथा, पीड़ितों के प्रति सहानुभूति, तत्वकालीन परिस्थितियाँ विदेशी हुकूमत आदि थे। इसका प्रभाव समाज के प्रबुद्ध वर्ग पर पड़ा जिसे उन्होंने हिन्दी के युद्ध परक साहित्य में कविताएं लिखकर अभिव्यक्त किया। राष्ट्रीयता का स्वर देने वाले कवि माखन लाल चतुर्वेदी 'एक भारतीय आत्मा' में, राष्ट्रीयता के तीन स्वरों का अनुभव करते हैं– " घटनाओं में व्यक्त होने वाली तेजस्विता जो राष्ट्र को बल पहुँचाती है घटनाओं की परवाह न कर व्यक्त की जाने वाली तेजस्विता जो राष्ट्र की धमनियों में बल पहुँचाती है, वह मस्ती और प्रखरता जबकि समस्त विश्व की सूझें एकत्र की जायें तो भी भारतीय सूझे (या किसी भी राष्ट्र की सूझें) अपना विशेष स्थान प्राप्त कर सके और अपना व्यक्तित्व अंकित कर सके।" [20]

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय धरातल को काव्य विषय बनाकर कवियों ने अपनी भावनाओं को अभिव्यक्ति किया है। इस क्रम में सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रा नन्दन पंत, शिवमंगल सिंह 'सुमन', जय शंकर 'प्रसाद', रामधारी सिंह 'दिनकर', रागेय राघव, भवानीप्रसाद मिश्र, सुभद्राकुमारी चौहान, शमशेर बहादुर सिंह, रामविलास शर्मा, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, आदि प्रमुख कवि है। यह कवि स्वाधीनता पर आघात करने वालो के विरूद्व तीक्ष्ण प्रहार करते है–

" सर्वोपरि मातृ–भूमि का विराट प्यारा।
याचना प्रहरी, संभाल आज वार।" [21]

इसी राष्ट्रीय भावना से युक्त शिवमंगल सिंह 'सुमन' की रचना 'आज देश की मिट्टी बोल रही है' में इसी भावना के दर्शन होते हैं–

"देखें कल दुनिया में तेरी होगी कहां निशानी

जा तुझको न डूब मरने को भी चुल्लू भी पानी

''शाप न देगें हम बदला लेने की आन हमारी

बहुत सुनाई तूने अपनी आज हमारी बारी

आज खून के लिए गोली का उत्तर गोली

हस्ती चाहे मिटे न बदलेगी बेवस की बोली। ''[22]

आधुनिक कवियों ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के वीभत्स चित्रों को भी उकेरा है। 'आजादी का त्यौहार' कविता में महेन्द्र भटनागर ने भारतीय जन–जीवन की आर्थिक स्थिति का चित्रण किया है। रामधारी सिंह दिनकर की 'भारत का यह रेशमी नगर' में एवं केदारनाथ अग्रवाल की 'कामधेनु सी 'काँग्रेस' में यथार्थ चित्रण मिलता है। चीन के आक्रमण एवं कश्मीर समस्या पर अनेकानेक कवियों ने रोषमयी वाणी में चित्रण किया है। राष्ट्रीयता की भावना से ओत–प्रोत जयशंकर 'प्रसाद' की निम्न पंक्तियाँ–

''अरुण यह मधुमय देश हमारा

जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा''राष्ट्रीयता का श्रेष्ट उदाहरण है। आधुनिक काव्य में बहुतायत में ऐसे राष्ट्रीय गीत हैं जो स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग लेने वाली जनता उत्साहपूर्वक ग्रहण करती रही है। माखन लाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन आदि राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रत्यक्षदर्शी कवि हैं। कवि शील की निम्न पंक्तियां राष्ट्रीयता की भावना से अनुप्राणित है–

'' उठा एशिया योरप जागा सजग हुआ हर हिन्दुस्तानी,

देश–देश में जन्म ले चुकी, नई जिन्दगी नई जवानी। '' [23]

राष्ट्रीयता की बलवती भावना ही युद्ध को जन्म देती है–

'' मेरा संकल्प महावसुधा को एक नहीं होने दूँगा

मैं विश्वदेवता का भू पर अभिषेक नहीं होने दूंगा। '' [24]

कारगिल युद्ध के दौरान डॉ0 कमलेश रानी अग्रवाल की कविता 'नमन शहीदों को नमन' में राष्ट्रीय भावना का उत्कृष्ट विकास देखा जा सकता है–

'' देश से है बड़ा कोई विषय संसार में,

सोंचकर यह हिम को बदला आग में अंगार में। '' [25]

मुक्ति बोध की कविताओं में देश–प्रेम और राष्ट्रीयता को व्यक्ति की अपेक्षा अधिक महत्व दिया गया है। राष्ट्रीय दायित्व बोध से मुक्त मुक्तिबोध ने जहां एक ओर व्यक्ति, परिवार, जाति और कबीलों के सम्बन्धों को लेकर कवि का दायित्व दिखाई पड़ता है वहीं राष्ट्र और अन्तर्राष्ट्रीय सभी धरातलों में दायित्वों का बोझ विद्यमान है। स्वकेन्द्रित होने के कारण व्यक्ति,समाज, राष्ट्र और विश्व के दायित्वों से विमुख हो जाता हैं। मुक्ति बोध ने इस राष्ट्रीय चेतना में मूल्य बोध को अपनी एक कविता 'अंधेरे में ' अभ्यिक्ति दी है जहाँ कवि ने एक प्रश्न उठाया है कि जिसमें देश मर जाये और उस मृत देश में, जीवित रहे ऐसे जीवन की, क्या सार्थकता आत्म रक्षा को न्यौछावर किया जाना देश रक्षा का सर्वोच्च मूल्य, कवि के लिए स्वीकार्य है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर डॉ0 रामविलास शर्मा की 'जल्लाद की मौत', नरेन्द्र शर्मा की 'रूस के मैदान', डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' की सोवियत रूस के प्रति 'मास्को अब भी दूर है', गिरजा कुमार माथुर की 'एशिया का जागरण', प्रभाकर माचवे की 'सोवियत सैनिकों का यशोगान' कविताऐं साम्राज्यवादी शक्तियों के खिलाफ लड़ने की प्रतीक है। शिवमंगल सिंह 'सुमन' की 'नई आग है नई आग' में एशिया की क्रान्ति –ज्वाला का स्वरूप दिखाई पड़ता है।

(स) संघर्ष शील चेतना–

युद्ध की मूल्य चेतना संघर्षशील है और यदि इस तथ्य को ध्यान में रखें तो संघर्ष मुक्तिबोध के मूल्य बोध का आधार सिद्ध होता है। उनके काव्य में संघर्ष का जो आन्तरिक और बहिरंग रूप मिलता है उसे आत्म–संघर्ष और युग–संघर्ष कि संज्ञा दी जा सकती है, कवि ने इस संघर्ष को चन्द्र अंगार और अंगार कमल के प्रतीकों से अभिव्यक्त किया है। मुक्तिबोध रचनावली की अधिकांश रचनाएँ छायावादी रोमानी सैन्दर्यपरक दृष्टि का भ्रम उत्पन्न करती हैं किन्तु प्रतीक और संकेत के माध्यम से सौन्दर्य के भीतर से सामाजिक यथार्थ और मूल्य बोध लेकर चलती है। 'अंधायुग' का पट परिवेश मूलतः मूल्य हीनता के द्वन्द्व एवं संघर्ष चित्रों से निर्मित हुआ है। इस संक्रमण शीलता ने ही स्वतन्त्रयोन्तर हिन्दी काव्य के इतिहास में 'अंधायुग' में चित्रित संघर्षशील मूल्यों को प्रतिष्ठित किया है। 'महाप्रस्थान' में युधिष्ठिर अर्जुन से कहते हैं कि तुम्हें न्याय प्राप्त करने के लिए संघर्ष का सहारा लेना पड़ा, लेकिन उनके बारे में सोंचो जिनका अधिकार नित्य ही छिनता है और उसी के परिणाम स्वरूप अनेक राज्यों का उदय होता है–

'' कभी उन
विचारहारा
साधारण जनों के बारे में सोंचो–
जो सदा अपमानित होते रहते हैं
जिनके स्वत्व का अपहरण ही
हमारे ये दीप्तित साम्राज्य है। ''[26]

कवि शील ने देश में पूँजीवाद के प्रति अपनी संघर्ष शील चेतना को विकसित किया है, शोषितों को सन्देश देते हुये कहते हैं–

'' हनुमान फिर ध्वज उठाओ
कोरी,काछी, करमी, पासी, कोल, किरात, अहीर, मुराई
ठाकुर, ब्राम्हण, नाई, धोबी, तेली, गूजर, कंजर, बारी,
तुम सब की है जाति एक ही, जात एक ही पात ही,
तुम गरीब हो तुम शोषित हो,
अरे तुम्हारा स्वर्ग एक है, और तुम्हारा स्वर्ण एक है,
अपना स्वर्ग बनाओं अपने हाथ। ''[27]

(द) राजनीतिक चेतना एवं युगबोध–

आधुनिक कवि जिस राजनैतिक परिस्थितियों से गुजर रहे थे उसकी छाप उनकी कृतियो में दिखई पडना स्वभाविक ही है।अतः कविताओं में राजभक्ति की भावना का प्रकट होना आवश्यक हो गया, यह शासकों की चाटुकारिता से नहीं जुडे अपितु देश भक्ति की भावना से प्रेरित रहे हैं।

राजनीतिक चेतना एवं युग बोध को यदि दिनकर के काव्य में देखा जाय तो एक तरफ उनकी राष्ट्रीयता से ओत–प्रोत कविताएं है और दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीयता को सन्दार्भित करने वाली कविताएँ हैं।राष्ट्रीय पक्ष को देखा जाय तो उसके अन्तर्गत विद्रोह एवं क्रान्ति का स्वर, आर्थिक विषमता, देश प्रेम, राजनीतिक भ्रष्टाचार, ओज एवं आक्रोश, युद्ध दर्शन आदि को प्रमुखता दी है। वहीं अन्तर्राष्ट्रीय पक्ष में, मानवता वाद, पंचशील, शान्ति व्यवसथा, एवं जीवन दर्शन को प्रतिपादित करते हैं।दिनकर के काव्य में जो युगीन परिस्थितियाँ थी उनकी स्पष्ट छाप राष्ट्रीय एवं देश प्रेम से युक्त कविताओं में मिलती है– " दिनकर का युवाकाल भारतीय इतिहास का वह युग था जब भारत की राष्ट्रीयता और देशभक्ति ब्रिटिश साम्राज्यवाद से लोहा ले रही थी। मध्यवर्ग में शासन सत्ता के प्रति घोर अविश्वास था और वह विदेशी राज के शिकंजे से मुक्ति पाने के लिए हर प्रकार का बलिदान करने के लिए सन्नद्व था। दिनकर किसी मध्यवर्ग के एक संवेदन शील युवक थे जो जवाहर, सुभाष, जयप्रकाश और नरेन्द्र देव के साथ था, जो विना स्वराज्य प्राप्ति के एक क्षण भी चुप नहीं बैठना चहता था परन्तु गांधी के व्यक्तित्व की आध्यात्मिक प्रेरणा के सामने–जनता की आग धीमी पड़ गई। परन्तु यह तथ्य भी ध्यान में रखने योग्य है कि काँग्रेस द्वारा शासन में भाग लेने के निर्णय की बड़ी विरोध पूर्ण प्रतिक्रिया हुई और इससे सम्प्रदाय वादी व्यक्तियों और संस्थओं को समर्थन मिला। इसी युग में लिए गये गलत निर्णयों के कारण आगे चलकर भारत विभाजन की नौबत आयी।" [28]

पटकथा के रचनाकार धूमिल राजनीतिक चेतना एवं युगीन बोध को निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत करते हैं।

"उसको समझा दिया गया है कि यहां
ऐसा जनतन्त्र है जिसमें
जिन्दा रहने के लिए
घोड़े और घास को
एक जैसी छूट है
कैसी विडम्बना है
कैसा झूठ है
दरअसल, अपने यहां जनतन्त्र
एक ऐसा तमाशा है
जिसकी जान
मदारी की भाषा है।"[29]

इस लोकतन्त्र में कवि स्पष्टतः देखता है कि जिसके पास अधिकार है, वह उसका प्रयोग सामान्य जन

के लिए न करके अपने हितो, मित्रों एवं परिजनों को ध्यान में रखकर करता है। इस राजनीतिक चेजना को सौमित्र मोहन निम्नलिखित पंक्तियों में प्रस्तुत करते हैं–

" उगंलियां ठकठकाता हुआ अधिकारी आदेश दे रहा है
अपनी बगल में बैठे हुये आदमी के लिए
वह अपनी चुस्ती से खुश है
कि दफ्तर से पहले उसका घर पेंट हो चुका है
और वह निडर है
अपनी कुर्सी पर और विस्तर पर। " [30]

डॉ0 चद्रिका प्रसाद दीक्षित 'ललित' ने राजनीतिक चेतना एवं युग बोध को 'कारगिल के आर–पार' कविता में चित्रित किया है। प्रस्तुत कविता में इतना ही नहीं आधुनिक युग में शान्ति हेतु जिन परिषदों की स्थापना की जाती है या जो सम्मेलन किये जाते हैं अथवा कुछ राष्ट्राध्यक्षो की यात्रायें होती है वो सब युद्ध को विराम देने के लिए ही आधुनिक युग के उपक्रम प्रतीत होते हैं। कवि ने अपने युग की इस राजनीतिक चेतना को इस प्रकार अभिव्यक्ति दी है– "

"स्थायी शान्ति स्थापना हेतु गठित की जाती हैं परिषदें
आयोजित किये जाते हैं सम्मेलन
संसदें करती है कुछ बहसे
राष्ट्रध्यक्षों की शुरू होती हैं यात्राएं
सुरक्षा की गारंटी
आणविक युद्ध न करने की घोषणाएं
किन्तु टूट जाते है क्षण भर में युद्ध विराम के सपने
संयुक्त राष्ट्र संघ के समझौते
अशान्त हो उठती हैं चोटियां
देखते ही देखते
देशों की सेनाएं होती हैं आमने–सामने
समस्याओं की भांति न युद्ध का आदि है, न कोई अन्त। " [31]

उपर्युक्त उदाहरणों द्वारा कवि तत्वकालीन वातावरण की यथार्थ झाँकी युद्ध परक कविताओं में व्यक्त करने में सफल हुआ हैं। यह कवि जनता तक एक संदेश पहुंचाना चाहता है, समाज की विसंगतियों का एवं यंद्ध मय वातावरण के दुष्प्रभावों एवं अव्यवस्था का।

(य) राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध–

युद्ध प्रधान काव्यों में कवि ने राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संवेदना एवं सहानुभूति को चित्रित किया है।यह युग ज्ञान एवं विज्ञान के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जुड़ा है। आधुनिक कवियों ने अपनी लेखनी द्वारा

राष्ट्रोत्थान की बात कही है, विश्व बन्धुत्व एवं वसुधैव कुटुम्बकम् जैसे भावों को अभिव्यक्त किया है। नरेश मेहता कृत 'समय देवता' काव्य ग्रन्थविश्व भूमिका पर आधारित है। राष्ट्रीयता एवं अर्न्तराष्ट्रीयता के सम्बन्ध में निम्न वक तव्य अति महत्वपूर्ण है– " वैज्ञानिक अविष्कारों की अंधी दौड और अणु–परमाणु ऊर्जा की विनाशक लीला ने राष्ट्रों को मानवता के अस्तित्व की रक्षा के लिए नये सिरे से सोचने को बाध्यकर दिया है। भारतीय संस्कृति की विराट सत्ता ने वसुधैव कुटुम्बकम की जिस निर्मल विचार गंगा को जन्म दिया है, आज उसको महती भावना के आधार पर ही अन्तर्राष्ट्रीयता का भव्य और आह्लालाद कारी स्वर विश्व क्षितिज पर गूंज रहा है। फलतः विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के मध्य परस्पर निर्भरता और भाई चारों का वातावरण विकसित किये जाने के प्रभावी प्रयास किये जा रहे हैं। इन प्रयासों के मूल में राष्ट्रों के पारस्परिक द्वोष, मनोमालिन्स, ईर्ष्या और आरोपित प्रतिबन्धों तथा कृ त्रिम व्यवधानों को जड़ मूल से नष्ट करके परस्पर राष्ट्रों के बीच मित्रता, भ्रातत्व, सदाशयता, सद्भावना, प्रेमशान्ति, सध्असतित्व की मंकलकारी भावना को विकसित करना मुख्य उद्देश्य है। " [32]

सुरेन्द्र यादव का अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में निम्न कथन दृष्टिव्य है– " यह एक सरस, सुखद एवं सुनियोजित, सम्बन्ध है, जिसका पोषण वैज्ञानिक उपकरणों एवं हृदय की विशालता के मध्य सम्भाव्य है।" [33]

मुक्तिबोध अन्तर्राष्ट्रीयता को महत्व देते है किन्तु उनका राष्ट्र प्रेम अन्तर्राष्ट्रीय प्रेम में कम महत्व का नहीं हैं। कवि एक ऐसे पक्षी की भांति अपनी कल्पना शक्ति से खोज करता है, जिसमें उसे भारतीय तथा स्वदेश के गौरव चित अधिक दिखाई पड़ते हैं, अरुण और अग्निम सरसिज की पंखुडियों से उसका मन विधता है, घर की तुलसी स्वदेश भावना की परिचायक बन जाती है। कहीं–कहीं विदेशी प्रभावों से आक्रांत होने के कारण, भारतीय ने, अपने स्वदेशी मूल्यों का, तिरस्कार कर दिया है, जो कवि की चिन्ता का विषय भी बना है। इसलिए कवि संकेत करते हुये लिखा है–

"मैं निज से कहने लगा रहस्यात्मक न बन
न बन प्रतीकात्मक उपमात्मक जहां विमान
अनबन अपने से बाहर से
रे यह स्वदेश की खोज वस्तुतः अन्तर के आकर्षण की संगति सांमजस्याकुल
यह आत्मधर्म यह आत्म कार्य
तू इसकी अपनी आज्ञाएं कर शिरोधार्य
न बन प्रतीकात्मक रहस्य भावानुभूति
वन चल मानव पथ विषयों की
चित्रात्मक गहन समीक्षा सी
हो जा समीक्षिता मानव–बीथी का अनुभव
तू आज धर्म से विश्व धर्म के सब सम्भव
मार्गो व पुलों पर जा रूक जा
उस पुल से सब विश्व दृश्य विस्तार निरख

उनके रंग रूप में अपना रूप परख"[34]

'हुंकार' के कवि ने अर्न्तराष्ट्रीय से प्रेरित होकर विराट एशिया को निम्न पंक्तियों में चित्रित किया है–"
अखण्ड पाद चाप ने सचेत शैल को किया
चिंघार सिंहना जगी, जगा विराट एशिया" [35]

इसी प्रकार 'हिमालय' शीर्षक कविता में दिनकर ने निम्न पंक्तियों में यह प्रस्तुत किया है कि भातीय संस्कृति चीन, ईरान और तिब्बत तक फैली थी–

" री कविलवस्तु ! कह बुद्वदेव
के वे मंगल उपदेश कहां?
तिब्बत ,ईरान, जापान, चीन,
तक गये हुये संदेश कहां?" [36]

भवना के निराला की निम्न पंक्तियों में राष्ट्रीयता की भावना के दर्शन होते है–

" सारी सम्पति देश की हो,
सारी आपत्ति देश की बनी
जनता जातीय देश की हो " [37]

देश में उत्पन्न अनेकानेक समस्याओं जैसे– भाषावाद प्रादेशिकता, सम्प्रदायवाद आदि पर आधुनिक कवियों ने अपने विचार व्यक्त किये है। मदन वात्स्यायन द्वारा रचित निम्न पंक्तियां प्रादेशिकता की भावना पर चोट करने वाली हैं–

" ओ मेरे अफसर
मैने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था
क्या यह इतना बड़ा अपराध हे कि मैं भारतीय तो हूं पर तुम्हारे प्रान्त का नहीं हूं" [38]

'सुमित्रानन्दन पन्त' पंत ने अपने काव्य ' लोकयतन' की कथा एक गांव से प्रारम्भ की हैं जो अविकसित है। देश अपनी परतन्त्रता से क्षुब्ध अंग्रेजों से संघर्ष करता है और स्वतन्त्रता भी हासिल करता है, परन्तु कवि का मन यहीं नहीं रूक जाता वह संसार के कल्याण की बात सोचता है। उसका विचार है, कि राष्ट्री हित एवं अर्न्तराष्ट्रीयता एक–दूसरे के विरोधी नही हैं, बल्कि अन्योन्याश्रित हैं। अपनी उन्नति के साथ ही भारत का लक्ष्य विश्व एकता के साथ ही भारत का लक्ष्य विश्व एकता में एकता को स्थापित करना है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर आधुनिक हिन्दी कवियों का राष्ट्रीयता एवं अल्तर्राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में अनोखी प्रतिभा का परिचय मिलता है, इस व्यापक क्षेत्र को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करके आधुनिक युद्ध प्रधान कविताओं को समृद्ध किया है।

साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद का अन्त–

राष्ट्रीय हितों के साधन के रूप में साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद का प्रयोग होता रहा/आर्थिक लूट व शोषण को साम्राज्यवाद के रूप में आधुनिक कवियों ने लिया/एक राष्ट्र का शासक वर्ग अन्य राष्ट्रों की स्वतन्त्रता

को भंग करके उन पर राजनीतिक अधिकार बना लेता है और उसकी सम्मति भूमि उद्योगों व्यापार आदि का प्रयोग अपने हित में करने लगता है, ऐसी स्थिति में इस नीति को साम्राज्यवाद का नाम दिया जाता है। आर्थिक शोषण ही साम्राज्यवाद का मूल तथ्य है। किन्तु अविकस्ति राष्ट्रों के मध्य सांस्कृतिक शोषण भी इसका एक पहलू साम्राज्यवाद को परिभाषित करते हुये सी0 डी0 बर्न्स ने लिखा है– " अनेक भिन्न प्रकार के देशों और नस्लों पर एक ही विधि और शासन व्यवस्था का नाम ही साम्राज्यवाद है। " [39]

चार्ल्स हाजेस के अनुसार साम्राज्यवाद – " एक राष्ट्र की राजनीतिक आर्थिक, अथवा सांस्कृतिक शक्ति का किसी दूसरे राष्ट्र के आन्तरिक जीवन में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से बाहर की ओर विस्तार को साम्राज्यवाद का नाम दिया जा सकता है। " [40]

यद्यपि साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद का प्रयोग एक ही अर्थ में होता रहा है किन्तु सूक्ष्म विभेद के आधार पर जे0 ए0 हाब्सन के उपनिवेशवाद के सम्बन्ध में विचार निम्नलिखित हैं– " अपने सर्वश्रेष्ठ अर्थ में, उपनिवेशवाद राष्ट्रीयता का स्वभाविक रूप से छलकाव है, उसकी कसौटी इस बात में हैं कि अपने नूतन प्राकृतिक एवं सामाजिक वातावरण में उपनिवेशवादी अपनी सभ्यता का पुनरावरोपण करने में सफल होते हैं अथवा नहीं " [41]

उपनिवेशवाद को विन्सलो ने इस दृष्टि से देखा है– " अनाधिकृत भूमि पर अधिपत्य है, जिसमें संघर्ष अकस्मिक रहा हो अथवा अनावश्यक हो तथा जो यूरोप वासियों की अपने रहने के लिए नई भूमि की खोज की आकांक्षा से अनुप्राणित हो" [42]

इस प्रकार आधुनिक काव्य में कवियों में पूंजी के प्रति घृणा का प्रचार किया, शोषित वर्ग की दीनता के करुण चित्र खींचे। कार्लमार्क्स की मान्यता थी कि समाज में सदैव शोषक एवं शोषित वर्ग रहे हैं, पूंजीपति शोषण किया करते हैं। वह साम्यवादी व्यवस्था लागू करने का पक्षधर है जिससे शोषित व्यक्ति को उसके श्रम का उचित लाभ मिल सके। पूंजी पति वर्ग सदैव गरीबों का शोषण करता रहा हैं यह सत्य निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य हैं–" हम पूंजीपति महा सेंठ है, पड़े हुए निश्चल पहाड़ सें सबका खून चूसते देखों, आयु चबाते हैं हम। 43

आधुनिक कवि आज की जीवन्त समस्याओं पर विचार करते हैं। सुविधाभोगी उच्चवर्गी व्यवस्था का विरोध करते है, जिसमें समाज का निम्न वर्ग कष्ट पाता रहता है। इस व्यवस्था के परिवर्तन में आधुनिक कवियों का बहुत बड़ा योगदान है। इनके काव्यों में महाजनी सभ्यता का विरोध किया गया है, इसी उच्च वर्ग पर प्रहार करते हुये रवीन्द्र त्यागी लिखते हैं– "और जो बडे हैं। जिनकी चोंचे लम्बी हैंजिनके पंख बडे है जिनकी आवाजे ऊँची हैंवे अपने बडप्पन के लिए जीते हैं हर पेड़ पर उनका कब्जा है "[44]

साम्राज्यवाद के अत्याचार एवं साम्राज्यवादी रक्त पिपासुओं के विरूद्व इन कवियों ने अपने रोष को व्यक्त किया हे–" इहर जा जालिम महाजनतनिक तो तू खोल वह मदिराविधूर्णित आंख अपनीदेख, कहां से लाया, बता सम्पत्ति, बता साम्राज्य ? "[45]

इन कवियों ने साम्प्रदायिकता के विरोध में राष्ट्र की वास्तविक आकांक्षा को स्वर दिया है, वहीं उसने साम्राज्यवादियों की कूटनीतिक चालों का पर्दाफाश किया है। विश्वास यह है कि साम्प्रदायिकता का अन्त अवश्य होगा, और हम सब मिलकर मानवता का निर्माण करेगें– " ये छल छन्द शोषको के है, कुत्सित ओछे गंदे तेरा

खून चूसने को ही ये दंगों के फंदे'' [46]

'पूंजीवादी समाज के प्रति' कविता में पूंजीवादी संस्कृति के प्रति क्रोध प्रकट करते हुये आवेश पूर्ण शैली में लिखा है– '' मेरी ज्वाला, जन की ज्वाला होकर एक अपनी उष्णता से धो चले अविवेकतू है मरण,तू है रिक्त, तू है व्यर्थ तेरा ध्वंस केवल तेरा अर्थ'' [47]

मुक्तिबोध की 'लकड़ी का बना रावण' एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्म कथन, 'एक अरुण शून्य के प्रति' 'चांद का मुंह टेढ़ा है' 'डूबता चांद कब डूबेगा' मेरे लोग, 'मैं तुम लोगों से दूर' शून्य व रंगों में सुलगी हुई एक शनाख्त 'आदि कविताओं में द्वन्दात्मक भौतिकवादी चिन्तन परम्परा की काव्यत्मक परिणति है इन रचनाओं श्रमिकों व पीडितों के प्रति सहानुभूति, वर्ग रहित समाज की कल्पना, वर्ग संघर्ष की भावना का विकास वर्ग वैषम्य के कारण , वैज्ञानिक दृष्टि को काव्य में स्थान मिला है। अज्ञेय ने पूंजीवादियों की मनोवृति को स्पष्ट भाषा में व्यक्त किया है– '' छोड़ो हाय, केवल घ्रणा और दुर्गन्ध तेरी रेशमी वह संस्कृति अंध/देती क्रोध मुझकों, खूब जलता क्रोध तेरे रक्त में भी सत्य का अवरोध/तेरे रक्त से भी घ्रणा आती तीव्र तुझको देख मिलती उमड़ आती शीघ्र [48]

वर्ग संघर्ष के स्वरूप को मुक्तिबोध की कविता में चित्रित किया गया है जो इस प्रकार है '' अपने ही दर्दो के लुटेरे इलाकों में जोरदार आज जो गिरोह हैं पीड़ित जनों को जन–साधारण को उनकी ही टोह है पूर्ण विनाश अनस्तित्व का चरम विकास है इसलिए ओ दूषद आत्मन कट जाओं टूट जाओं टूटने से जो विस्फोट शब्द होगा गूंजेगा जग भर किन्तु अकेले की तुम्हारी ही वह नहीं सिर्फ नहीं होगी कहानी। '' [49]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद के आघातों से आधुनिक कवियों ने जन–सामान्य को चित्रित कर अपनी ओजमयी वाणी से उन्हें मुक्त कराया इतना ही नहीं शोषकों के खिलाफ आन्दोलन भी चलाया अतः इन कवियों का सक्रिय सहयोग सराहनीय है। आर्थिक विषमता को दूर करने का विचार कवि ने राम के द्वारा विभीषण को दिये गये सन्देश में दिया है–

'' और अर्थ यह? जो अनर्थ के पथ से संचित हुआ महान
कर दो जन कल्याण हेतु ही शुद्ध हृदय से उसका दान
दीन और भी दीन बन चले, धनी बन चले, धनी और भी हो धनवान
देना अपने राजतन्त्र में कभी न उस पद्दति को मान '' [50]

सुभाष चन्द्र बोष ने नवयुवकों में नया अभियान छेड़ने को कहा जिससे मानवता का उत्थान को सके एवं समाज में व्याप्त विषमता को दूर किया जा सके–

''प्रत्येक विषमता दूर करो, सबमें समता का भाव भरो
रह जाय न कोई दीन –हीन, हो नहीं किसी का मन मलीन। '' [51]

आधुनिक कवियों में 'अभिशप्त शिला' के कवि डा0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित 'ललित' ने विशेष सर्ग में पूंजीवादी शक्तियों के एकाधिकार और शोषण के विरुद्व जनवरी चेतना का प्रतिनिधित्व करते हुये तथा खोखले जनवाद की भी भर्त्सना करते हुये कहा है कि एक ओर पूंजीवादी शक्तियां अपनी राजनीतिक वक्रताओं तथा शोषण की दुधारी तलवार से बोटी–बोटी काट रहा है, और दूसरी ओर आम आदमी पूंजीवादी शक्तियों से संघर्ष

करते हुये दांत कटाकर करते हुये काम की चटनी, चने का साग और रोटी के लिए संघर्षरत दिखाई पड़ता है। कवि डा0 ललित के शब्दों में–

" दांत कटाकट
कठिन चने का साग
आम की चटनी रोटी
तिरछा दांत, तेज दुधारी
कटती जनता बोटी–बोटी"[52]

जन संघर्ष के ये स्वर थोडे और गहरे उतर कर और अधिक संवेदन शील हो उठते हैं जहां कवि संघर्ष शील जीवन के बिम्बों को अपनी कविता के द्वारा मूर्तमान करता है जुलाहे और कोयले के ठेकेदार के प्रतीक के द्वारा डा0 ललित ने सामान्य जन अथवा सर्वधय तथा ठेकेदार अथवा सामन्तवादी शक्तियों के बीच द्वन्द्व का सटीक पैने बिम्ब चित्रों के साथ उदघाटन किया है। कवि के शब्दों में– " ये पटसन बुन रहे जुलाहे,
बिना सांस के सन्–साधन के
ठेकेदार, लुटेरे
सपने जनवादी हैं केवल
इनके
हांथ कोयला सारा
दहकी नहीं अंगीठी जन की
ये अपने अधिकार नियन्त्रण में
बांधे हैं
पूंजी जन की"[53]

शीतयुद्ध आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक का एक महत्वपूर्ण अंग है। शीत युद्ध का अर्थ एक प्रकार का वैचारिक संघर्ष है, जिसमें दो विरोधी जीवन पद्वतियां वैचारिक संघर्ष करती है। प्रथम उदारतावादी लोकतन्त्र तथा दूसरा सर्वधिकार सम्पन्न साम्यवाद दोनों अपने को सर्वोच्च सत्ता में लाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। इस प्रकार ये दो वैचारिक प्रणालियों का सैद्वान्तिक संघर्ष है। शीतयुद्ध, पुरानी शक्ति सन्तुलन, राजनीतिक का नवीनीकरण है, जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक पर्यावरण में उदित हुयी दो महाशक्तिां अमरीका और सोवियत संघ विश्व के अधिकांश राष्ट्रों को अपने प्रभाव क्षेत्र में लाने के लिए निरन्तर संघर्ष कर रहे है। इस प्रकार शीतयुद्ध शब्द से सोवियत और अमरीकी शत्रुतापुर्ण एवं तनावपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की अभिव्यक्ति होती हैं। इन शत्रुतापूर्ण सम्बन्धों को गर्म युद्ध में भले ही परिवर्तन नहीं किया गया किन्तु शीत युद्ध में, एक दूसरी महाशक्तियां वैचारिक घ्रणा, राजनीतिक अविश्वास, कूटनीतिक जोडतोड, सैनिक प्रतिस्पर्धा, जासूसी, मनोवैज्ञानिक युद्ध और कटुता पूर्ण सम्बन्ध बनाते रहते हैं। इनका प्रभाव अन्य राष्ट्रों पर भी पड़ता है, जिससे एक प्रकार का वाकयुद्ध, जिसमें पत्र–पत्रिकाए, रेडियो, तथा अन्य प्रचार साधन होते हैं जिनके माध्यम से लड़ा जाता है। इसमें प्रचार द्वारा विदेशी

वाक्य ?

गुट के देशों की जनता के विचारों को प्रभावित करके, उनके मनोबल को कमजोर बनाया जाता है तथा अपनी श्रेष्ठता, शक्ति तथा न्याय प्रियता का दावा करतें है इस प्रकार शीत युद्ध एक प्रकार का कूटनीतिक युद्ध है। डा0 एम0 एस0 राजन के अनुसार– " शीतयुद्ध शक्ति संघर्ष की राजनीतिक मिला जुला परिणाम है। दो विरोध ी विचार धाराओं के संघर्ष का परिणाम है, दो प्रकार की परस्पर विरोधी पद्धतियों का परिणाम है। विरोधी चिन्तन पद्धतियों और संघर्ष पूर्ण राष्ट्रीय हितो की अभिव्यक्ति है जिसका अनुपात समय और परिस्थितियों के अनुसार एक दूसरे के पूरक के रूप में बदला रहा " [54]

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के महान चिन्तक पण्डित जवाहर लाल नेहरू के शबदों में– " शीतयुद्ध पुरातन शक्ति सन्तुलन की आवश्यकता का नया रूप दो विचार धराओं का संघर्ष न हेकर दो भीमाकार शक्तियों का आपसी संघर्ष है " [54]

इसी प्रकार के0 पी0 एस0 मेनन के अनुसार– " शीत युद्ध जैसा कि विश्व में अनुभव किया दो विचार ध ाराओं, में दो पद्धतियों में, दो गुटों,दो राज्यों के मध्य दो विचारधाराओं संसदीय लाकतन्त्र और सर्वधय वर्ग की तानाशाही के रूप में उभर कर आई" [55]

इस प्रकार उपर्युक्त परिभाषा से स्पष्ट हैं कि शीत युद्ध वास्तविक युद्ध नहीं है अपितु युद्ध का का वातारण है। शीत युद्ध का क्षेत्र विश्वव्यापी है। शीतयुद्ध का क्षेत्र विशव व्यापी है, और विश्व के सभी क्षेत्र यूरोप, अफ्रीका, एशिया, अमेरिका किसी न किसी रूप में इससे प्रभावित रहें है। संयुक्त राष्ट्रसंघ दोनों देशों के शीत युद्ध का अखाड़ा बन गया आधुनिक हिन्दी काव्य में शीतयुद्ध अर्थात युद्ध की कूटनीतिक का उल्लेख होना स्वाभाविक ही है। शान्ति काल में भी ये, राष्ट्र, कूटनीति सम्बन्ध तो बनाये रखते है, पर शत्रु, भाव रखते है। सशस्त्र युद्ध तो नहीं करते किन्तु वे सभी उपाय करते हैं जो एक दूसरे को कमजोर बनाने के लिए किये जा सकते हैं। दूसरे देशों को प्रभाव क्षेत्र में लेने के आर्थिक सहायता देना, प्रचार अस्त्र को काम में लेने, जासूसी, सैनिक हस्तक्षेप, शस्त्र आपूर्ति,शस्त्रीकरण सैनिक गुट बन्दी और प्रादेशिक संगठनों का निर्माण आदि शीत युद्ध के अंग है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में शीत के सम्भावित परिणाम इस प्रकार पाये जाते हैं–

(1) महाशक्तियों के मध्य शान्तिपूर्ण प्रतिद्वन्द्विता का स्थान उग्र और आक्रमण राजनीति सैनिक प्रतिद्वन्दित, ने लिया है।

(2) महाशक्तियों के मध्य शस्त्रों की होड पुनः प्रारम्भ हुई।

(3) महाशक्तियों के बीच तनाव के नये केन्द्र उत्पन्न हो गये।

(4) युद्ध मनोदशा और युद्ध उन्माद का युग पुनः प्रारम्भ हो रहा है।

उदाहरण के लिए पुराने सैनिक अड्डो का नवीनीकरण, नये शस्त्रों की खोज, द्रुतगामी परिनियोजित सेना दूसरे शीत युद्ध का प्रभाव समूचे विश्व में महसूस किया गया औद्योगिक विश्व में इसका प्रभाव मूलतः आर्थिक होगा जबकि विकासशील देशों की दुनिया में केवल इसका प्रभाव आर्थिक होगा अपितु हस्तक्षेप वादी नीतियों के कारण राजनीति और सैनिक हो गया रूसी नेता गोरवाच्योव की उदार शान्तिवादी नीतियां, रूस, अमरीका में हुआ निःश्स्त्र ीकरण समझौता, (1987) अफगानिस्तान संकट के समाधान के लिए जेनेवा समझौता (अप्रैल 1988), शायद संकेत

प्रदान कर रहे है, कि महाशक्तियां टकराव से पुनः संवाद की ओर, उन्मुख होने में ही अपना लाभ समझती हैं। युद्ध प्रधान आधुनिक काव्य कृतियां में भी युद्ध के प्रति उदासिनता और मोहभंग के साथ एक नई शुरूआत हुई वह शीतयुद्ध की है। कैलाश बाजपेयी शीतयुद्ध को 'शीतयुद्ध' शीर्षक कविता में इस में इस प्रकार व्यक्त करते हैं–" सबके पास डंक हैं सबको, यह ज्ञात है, डसने के बाद,मधुमक्खी मर जाती है। " [56]

आज का युग वैज्ञानिक युग है सर्वत्र परिवर्तन ही परिवर्तन है, यह परिवर्तन युद्ध काव्यों में दिखाई पड़ता है कि अस्त्र–शस्त्र वाले युद्ध के स्थान पर, शीतयुद्ध चला, और यह भी राष्ट्रवादी युद्ध के रूप में सामने आया आधुनिक कवि इस परिवर्तित स्थिति को सजगता से देखता रहा और उसे अपनी कृति में अभिव्यक्त करता है–

" और जिस प्रकार हम आज बेल
बूटों के बीच खचित करके
देते हैं रण में रम्य रूप
विप्लबी उमंगों में भर के
कहते अनीतियों के विरूद्व
ओ युद्ध जगत में होता है
वह नहीं जहर का कोश
अमृत का बड़ा सलोना सोता है।
सत्य ही समुन्नति के पथ पर
चल रहा चतुर मानव प्रबुद्ध
कहता है क्रान्ति इसे, जिसको
पहले कहता था धर्मयुद्ध। "[57]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आधुनिक कवि समय की परिस्थितियों के अनुसार अपने चिन्तन को किसी न किसी प्रवाहित करते रहे है यह शीतयुद्ध पर आधारित कविताओं में स्पष्ट रूप से अंकित है।

आणुविक युद्ध की आशंका–

" आज का युग वैज्ञानिक युग है। विज्ञान के मानव ने आज के मानव को जो सुख सुविधा, शक्ति ओर संहार के साधन दिये है उन्हीं के चकाचौंध में वह दिग् भ्रमित हैं। विज्ञान बुद्धि का चमत्यकार है। यह बुद्धि मनुष्य के लिए कितनी उपयोगी है? उसका स्वरूप कैसा होना चाहिये ? किन स्थितियों के आगे बुद्धि पर प्रतिबन्ध होना चाहिये ? बीसवी शताब्दी के भारतीय विचारकों के लिए ये प्रश्न सबसे अधिक चिन्ता के विषय रहे हैं। आधुनिक बुद्धि वाद का पहला दौर यूरोप में आया जिसका एक परिणाम औद्योगिक प्रगति पर विजय प्राप्त कर अधिकधिक भौतिक सुख के उपकरण उपलब्ध करना रहा और दूसरा परिणाम दो भयंकर विश्व –युद्धों में उसका असंख्य मनुष्यों का विनाश तथा दया, उदारता, त्याग, और अन्य दिव्य मानव मूल्यों का मिट जाना रहा हैं। भारतीय विचारकों ने बुद्धि का व्यापक विवेचन किया है और उपयेगिता की दृष्टि से उसका स्थान निर्धारित किया है। सांख्य दर्शन क अनुसार बुद्धि जड़ प्रकृति का विकार है। प्रकृति त्रिगुणात्मिक है। सत्य, रज, तम, प्रकृति के गुण

है, प्रकृति का विकार होने के कारण बुद्धि भी सातिवक, राजसी, और तामसिक होती है। प्रकृति स्वयं निष्क्रम है उसके पीछे पुरुष की शक्ति है। प्रकृति के अर्न्तगत होने के कारण बुद्धि भी निष्क्रिय है बुद्धि के दर्पण पर चैतन्य प्रतिबिम्बित होता है, तभी हम किसी वस्तु का वास्तविक अनुभव प्राप्त कर सकते हैं। " [57]

दिनकर हृदयगत भावों को बुद्धि की अपेक्षा अधिक महत्व देते है, क्योंकि हृदय के अनुशासन में रहकर, बुद्धि मानव जाति के लिए, उपयोगी हो सकती है अन्यथा उसके दुष्परिणाम महाभारत जैसे विनाशकारी युद्ध की ओर बढ़ते है, इस भाव को कवि दिनकर के शब्दों में निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं–

" कर पाता यदि मुक्त हृदय को, मस्तक के शासन से,
उतर पकडता बांह दलित की मन्त्री के आसन से
राज–द्रोह की ध्वजा उठा कर कहीं प्रचारा होता
न्याय पक्ष लेकर दुर्योधन को ललकारा होता
स्यात, सुयोधन भीत उठाता पग कुछ अधिक संभव के
भरत–भूमि पड़ती न स्यात,संगर के आगे चल के " [58]

कवि श्री गुरू चरण लाल विज्ञान की तरक्की को विश्व की प्रगति नहीं मानते उनका मानना है कि आज मानव ने विनाश को बेशर्मी के साथ पकड़ रखा है जिसे निम्न पंक्तियों में उद्धृत किया गया है–

" जग, जग–जग है। बांहें विनाश की, बेशर्मी से पकड़ी है
लोचन जल, जल–जल कर सुखा तन, तन–तन लकड़ी है
"कंगाली की कंचन– काया
कनक कुण्ड में कूद गई
बुद्धि विकास बांध ली बधनख,
विश्व बना बांरूद मयी
रखे है पग प्रलय मार्ग पर
वर्तमान युग का योगी
डूबेगा भविष्य भी भव में
है भयभीत भुक्त भोगी" [59]

विज्ञान का जो विकास हुआ है उससे विनाश लीला का दृश्य कुछ ही मिनटों में सम्भव है क्या मनुष्य ने इसे रोकने का कोई उपाय सोचा है नहीं क्योंकि मानव ने जो प्रगति की है इससे वह अपने को संसार का कर्त्ता मान बैठा हैं। कवि श्री राजाराम शुक्ल के शब्दों में हम विज्ञान की प्रगति को इस प्रकार देख सकते हैं–

" मानव ही विधि आज बना है
आशा में विश्वास घना है
राकेट, सैटेलाइट चालित कर
शून्य जगत का घाघ बना है

दीपित तो नभ सदा रहेगा

जग में काल करेगा नर्तन" [60]

आधुनिक युद्ध आणुविक युद्ध है, मानव ने विज्ञान की जो प्रगति की है उससे स्वयं मानव जीवन संकट में आ गया है। मनुष्य ने स्वयं मनुज के संहार का गीत लिखा है जिससे पृथ्वीतल पर हाहाकार मची हुई। संसार में सभी ओर चीख ओर पुकार का वातावरण जन्मा जिसके परिणाम स्वरूप मानव की क्रूरता पनपी जिसमें दया और करुणा के लिये कोई स्थान नहीं है। द्वितीय विश्वयुद्ध में हुये विनाश की ओर कवि विनोद चन्द्र पाण्डेय संकेत करते हैं–

"कालक्रम से विश्वयुद्ध में, प्रहर भयंकर आया था

हिरोशिमा नागासाकी पर

अणु बम गया गिराया था" [61]

दृश्य प्रलय का अणु वर्षा से जग में हुआ उपस्थित था।

ऐसा नरसंहार देखकर, कौन नहीं जो विस्मित था"[62]

द्वितीय विश्व युद्ध सुविकसित नगरों का सर्वनाश हो गया, महामृत्यु की लीला हुई, जिसके दृश्य बडे ही भीषण थे, जहां कभी मकान थे वहां आज राख का ढेर दिख रहा था, जैसे मरघट में चिरशान्ति होती है, वहां ऐसी ही शान्ति थी, नवजात शिशु काल के मुख में समा गये एवं कोटि लोग विकलांग हो दारुणदुख भोग रहे थे। जीव–जन्तु, खग–मृग, तरु, पल्लव, फल–फूल, वन, उपवन, वाटिका खेत सब कुछ जलकर विनाश हो गया था/

क्या आणुविक शस्त्र हमें राष्ट्रों के मध्य शक्ति शाली बना सकते है,? नहीं यदि ऐसा होता तो सोवियत संघ के पास उन्नत परमाणु अस्त्र मौजूद थे, परन्तु क्या हुआ, सोवियत यूनियन का विघटन हुआ जहां एक महाशक्ति नष्ट हो गयी वही एक नई महाशक्ति के रूप में अमेरिका सामने आया परन्तु कौन कह सकता है, इस प्रतिस्पर्घा में कब यह महाशक्ति समाप्त हो जाये। " चाहे कंश हो या रावण हर आसुरी शक्ति को मिटना ही होता है । " [63]

विज्ञान की प्रगति ने विश्व को समस्याग्रस्त बना दिया है, प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध में आणुविक बमों का प्रयोग करके उससे उत्पन्न विभीषिका को चित्रित किया है, इसकी आशंका मात्र इतनी भयावह प्रतीत होती है, कि कवियों ने अपनी दृष्टि व्यापक करते हुये उन्मुक्त जीवन को स्वीकारा है–

" दूर सात सिन्धु पर

अणु का विस्फोट हुआ

उड़ गई उद्‌जन की धज्जियां

जिस धडके की धमके से

क्षीणकाय स्वरधारी नारों का दम टूटा

एक लघु हिचकी ले त्यागे उन्होंने प्राण"[64]

धर्मवीर भारती ने अंधायुग में एटम बम की समसया की ओर संकेत किया है– " ज्ञात क्या तुम्हे है परिणाम इस ब्रम्हास्त्र का

यदि यह लक्ष्य सिद्ध हुआ तो नरपशु!

तो आगे आने वाली सदियों तक

पृथ्वी पर रस मय वनसपति नहीं होगी

शिशु होगे पैदा विकलांग और कुण्ठाग्रस्त

सारी मनुष्य जाति बौनी हो जायेगी...........आदि" [65]

आणुविक शस्त्रों का प्रयोग करने वाले नर पशुओं को कवि ने चुनौती दी है क्योकि इसका प्रयोग महाविनाशक है जिसे हम पूर्व दो महायुद्धों में देख चुके है–

" नराधम

ये दोनों ब्रम्हस्त्र सभी नभ से टकरायेंगे

सूरज बुझ जायेगा

धरा बंजर हो जायेगी"[66]

पाकिस्तान द्वारा किये गये, परमाणु विस्फोट की, दूसरी वर्ष गांठ पर, पाकिस्तान में परमाणुअस्त्री करण का हमारे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा इस सम्बन्ध में भी बी0 एस0 कुट्टी ,द्वारा जारी किये गये वकतव्य में इनके द्वारा होसकने वाली विनाश लीला को उजागर किया है–" यह भूलना नहीं चाहिये कि वरमाणु अस्त्र तो आक्रमण के अस्त्र हें। वे अस्त्र सेनिकों और जनता में कोई फार्क नहीं करते उन अस्त्रों से अपनी रक्षा कैसे की जाये इसका भी कोई उपाय अभी तक नजर नहीं आ रहा है। मई 1998 के बाद का घटना चक्र बता रहा है कि परमाणु अस्त्र एक ऐसा भयंकर पाप है जिससे केवल अस्थिरता ही पैदा होती है। वे अस्त्र व सिर्फ दो विरोधियों के बीच के सम्बन्ध को बिगड़ते है बल्कि सरकारों को चलाने वालों का भी संतुलन बिगाड़ देते हैं, जिसका असर नीतियों पर पड़ता हे/दोनों देशों में इन अस्त्रों के कारण पैदा हुये उन्माद का प्रभाव हमने देखा ही है"[67]

आज आणुविक युद्ध का जवाब कवि अणु अस्त्रों से देने का संकल्प करता दिख रहा है, 'देश न टूटेगा' शीर्षक कविता में रामचरन सिंह 'आनन्द' की निम्न पंक्तियां इस सम्बन्ध में द्रष्टण्य है– " नापाक इरादे हारेगें हम वैरी को संहारेगें अणु–अस्त्र दिखाने वाले पर अणु–अस्त्र हमारा टूटेगा" [68]

डा0 रामकुमार वर्मा की कविता में भी आणुविक शक्ति का प्रभव दिखाई पड़ता है वह अपनी रक्षा हेतु इन वौज्ञानिक उपकरणों के महत्व को स्वीकारते है– पैटंन, टैक, मिसाइल, तोंपे, हुंकार भरती है, संगीने तब रुधिर–पान की तैयारी करती है क्रुद्ध सिंहनी सी अपनी सेना जब दहकती है, दुश्मन की सेना तब आत्म–समपर्ण कर जाती है।/"[69]

अणुबम की विनाश लीला के सम्बन्ध में कवि कहता है, कि इसको प्रयोग करने वाला ही इसका निशाना बन जायेगा– " तुम्हारे लिए जो बला ला रहे हैं/वो उनके लिए कर्बला बन रहेगी/वे ऐटम की आंधी उठाकर तो देखे,/कयामत की बिजली उन्हीं पर गिरेगीं/"[70]

आधुनिक कवियों ने युद्ध परक प्रधान काव्यों में युद्ध की विभीषिका को चित्रित किया है/आणुविक युद्ध की आशंका शीर्षक के अर्न्तगत विभिन्न कवियों ने अणु–अस्त्र के प्रयोग के दुष्परिणामों को अनेकानेक कविताओं के माध्यम से व्यक्त किया है। इससे पूर्व में द्वितीय महायुद्ध में दो बार किये गये अणु बम का प्रयोग जिसके दुष्परिणाम आज तक निरीह जनता भुगत रही है। ऐसी स्थिति उत्पन्न न हो कि पुनः अणु शस्त्रों का प्रयोग हो, क्योंकि यदि अब ऐसा हुआ, तो समपूर्ण मानव जाति ही समाप्त हो जायेगी। अभी भी मानव में, सुकोमल भावनाओं के लिये स्थान है, अतः आणुविक युद्ध की आशंका मात्र जन–जन का हृदय दहला जाती है।

गुटनिरपेक्षता की नीति–

गुट निरपेक्षता का द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अन्तर्राट्रीय राजनीति के परिप्रेक्ष्य में विशेष महत्व है। इस नीति का उद्‌देश्य नये राष्ट्रों की स्वधीनता को बनाये रखना एवं हर तरह से युद्ध की संभावना को रोकन था/गुट निरपेक्षता नीति के पीछे मूल धारणा यह थी कि साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद के पतन हो जाने के फलस्वरूप इससे मुक्त राष्ट्रों को शक्ति शाली देशों से अलग करके उनके अधिकारों की सुरक्षा की जायें।

1946 में भारत के राष्ट्रवादी नेताओं ने, अन्तरिम सरकार में सत्तारूढ़ होने के बाद, गुट–निरपेक्षता की नीति को उद्‌घोषित किया/पडिण्त जवाहर लाल नेहरू ने गुट–निरपेक्षता के महत्व के सम्बन्ध में उद्‌घोषणा की " कि भारत शक्ति-राजनीति की ऐसी गुटबन्दियों से दूर रहेगा जिन्होने भूतकाल में, युद्धों को जन्म दिया है और जो पहले की अपेक्षा और भी बड़े पैमाने पर तबाही लाने की क्षमता रखती हैं। "71

1961 में सर्वप्रथम गुट–निरपेक्षराष्ट्रों का सम्मेलन बेलग्रेड़ में आयोजित किया गया। यह आन्दोलन गुट निरपेक्षता के इतिहास की शुरूआत थी। सन् 1961 की काहिरा की बैठक में, इस बात को स्पष्ट शब्दों में कहा गया कि तटस्थता एक निषेधात्मक विचार है, बल्कि गुट निरपेक्षता एक स्वीकारात्मक विचार है।

गुट–निरपेक्षता का सम्बन्ध सही और गलत के अन्तर को स्पष्ट करना एवं सत्य को समर्थन देना भी है। गुट निरपेक्ष राष्ट्रों की अपनी विचार धारा होती है, गुटवाजी से अलग रहकर उसको हर पहलू से देखा जा सकता है। किसी एक गुट में सम्मिलित होकर विना विचार किये उसका अनुकरण करना गुट–निरपेक्षता नहीं हैं। गुट निरपेक्षता से अभिप्राय यह है कि पश्चिमी एवं पूर्वी गुटों में से किसी देश विशेष से सैनिक दृष्टि से न बंधना, शीत युद्ध से पृथक रहना, सैनिक गुटबन्दी में सम्मिलित न होना, आक्रामक सन्धियों से दूर रहना, राष्ट्रीय हित को सर्वोच्च मानते हुये विदेश नीति का न्यायोचित दंग से संचालन करना प्रमुख है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात गुट–निरपेक्षता की नीति ने, विश्व की राजनीति में संघर्षो को टालने का प्रयास किया है। गुट निरपेक्ष राष्ट्रों ने शीत युद्ध को शस्त्र युद्ध में परिणत होने से रोका है। अन्तर्राष्ट्रीय स्वर पर तनाव का समाधान गुट–निरपेक्ष नीति के द्वारा ही सम्भव हो सका है। निःशस्त्री करण और अस्त्र–नियन्त्राण की दिशा में भी विश्व–समाज को उपयुक्त वातावरण देना, आदि गुट–निरपेक्ष आन्दोलन की महतवपूर्ण उपलब्धियां हैं।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात गुट निरपेक्ष नीति की आवश्यकता शीत युद्ध के वातावरण में तो थी किन्तु इधर कुछ वर्षो में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत से परिवर्तन हुये हैं। एक आरे गुट–निरपेक्षता राष्ट्रों की संख्या बराबर बढ़ती जा रही है तो दूसरी तरफ इसी समुदाय के भीतर संघर्ष तनाव एवं फूट का वातावरण उत्पन्न हो रहा है।

सदस्य देश स्वयं ही गुट निरपेक्षता के आदर्शों पर अडिग नहीं हैं, ऐसी स्थिति में आन्दोलन की एकता अवश्य ही भंग हुई है। गुट निरपेक्षता की नीति को धारण किये हुये कई वर्ष बीत चुके हैं, एवं सदस्य देश की संख्या बढ़त पर है। इससे इस नीति का बल और प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

<u>सैनिक गुटबन्दी का बाहुल्य (नाटों, सीटों, सेंटो, वारसा सैनिक गठबन्धनों का प्रभाव)–</u>

द्वितीय विश्व युद्ध के परिणाम स्वरूप विभिन्न प्रादेशिक एवं सैनिक संगठनों का बाहुल्य रहा है। बहुत से राष्ट्र आपस में मिलकर विभिन्न प्रकार के क्षेत्रीय संगठन बनाते हैं। जिससे वे अन्य शक्तियों के समक्ष अपने अधिकारों की रक्षा कर सकें, समझौते की शर्त निश्चित की जाती है कि किसी विशेष आक्रमणात्मक कार्यवाही के समय, एक दूसरे की, सहायता करना था पतन्तु विश्व शान्ति की समस्या उसी रूप में है और सिथतियां अधिक विषम होती चली गई। सैनिक संगठनों के बारे में श्लीचर का विचार है– " इस प्रतिज्ञा में सैनिक कार्यवाही सदैव निहित होती है। यद्यपि आर्थिक, सामाजिक, और असैनिक प्रादेशिक संगठन भी हो सकते हैं, तथापि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के परिप्रेक्ष्य में जिस प्रदेशवाद या प्रादेशिक संगठन की चर्चा की जाती है वह प्रायः सैनिक संगठन होता है। "[72]

सैनिक संगठनों के परिप्रेक्ष्य में पण्डित जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में–" सैनिक सन्धियों की पद्धति एक गलत पद्धति एक भयानक पद्धति और एक हानिकारक पद्धति है। वह सभी अनुचित प्रवृत्तियां को गति देती है और उचित प्रवृतियों के विकास को रोकती है। हमारा विचार है कि सैनिक सन्धियां विश्व को एक गलत दिशा की आरे ढकेलती हैं "[73]

सैनिक संगठनों का उदय संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ के मध्य उत्पन्न शीत युद्ध के परिणाम स्वरूप हुआ/ ब्रिटेन के प्रधानमंत्री चर्चिल को सैनिक संगठनों के प्रारम्भ करने का श्रेय है। विभिन्न सैनिक संगठन निर्मित हुये, जो अन्तर्राष्ट्रीय समबन्धों पर प्रभाव डालने वाले समझौते एवं संगठन रहे, जैसे–" अमेरिकी राज्यों का संगठनों (UAS) डंकर्क सन्धि, बूसेल्स की सन्धि, नारों (NATO), वारस पैक्ट (WARSAW TREATY), यूरोपियन एकीकरण के विभिन्न संगठन, दक्षिणी पूर्वी एशिया संगठन (SEATO), बगदाद पैक्ट तथा केन्द्रीय शक्ति संगठन (CENTO)।

सभी सैनिक संगठन इस मान्यता पर आधारित है, कि विश्व की संस्था सामूहिक रूप से सुरक्षा की प्रभाव शाली व्यवस्था करने में असफल सिद्ध हुये हैं। फलस्वरूप विश्व के राष्ट्र, अपनी सुरक्षा हेतु उन पर निर्भर न रह सके, इस बात का उठना ही विश्व–शान्ति के लिए एक प्रश्न चिह्न है। वास्तव में जिस किसी सैनिक संगठनों का गठन सामूहिक सुरक्षा को घ्यान में रखकर किया गया वह उतना ही अधिक विश्व शान्ति के लिए घातक परिणाम देने वाला रहा पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने ठीक ही कहा है।–" यह हमारा दृढ़ विश्वास है कि सैनिक की पद्धति शान्ति के मार्ग में बाधा बनकर आती है, भय और शंकाये बढ़ाती, सुरक्षा के नजदीक नहीं ले जाती, जिस उद्देश्य के लिए उनकी रचना हुई और वास्तव में शस्त्री करण की दौड़ को प्रोत्साहित करती हैं। "[74]

इन संगठनों के फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अशान्ति का वातावरण ही बना" आज के आणुविक युग में संगठनों द्वारा जरा सी विस्फोटक कार्यवाही महाविनाशक युद्ध में बदल सकती है। सैन्य संगठनों ने

निःशस्त्रीकरण में बाधा उत्पान्न की है। क्षेत्रिय सैन्य संगठनों को अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति स्थापित करने के लिए समाप्त किया जाना चाहिए, परन्तु यदि महाशक्तिों को इनका समाप्त करना रूचिकर न लगे तो इनका व्यवस्थित रूप से विकास होना चाहिए और संयुक्त राष्ट्र संघ के उददेश्य के साथ इन संगठनों में तालमेल बैठाया जाना चाहिए''75

इन सैनिक संगठनों के कारण विश्व दो सशस्त्र भागों में विभाजित हो गया, अतः राष्ट्रों के मध्य सहयोग भावना का स्थान फूट एवं घृणा ने ले लिया ऐसे वातावरण में विश्व शान्ति की सम्भावना नहीं की जा सकती थी। अमेरिका और रूस में शीत–युद्ध का विकास उत्तरी अटलांटिक सन्धि संगठनों नाटों के कारण हुआ दक्षिणी पूर्वी एशिया सन्धि संगठन सीटों द्वारा भारत और पाकिस्तान के बीच और दूरियां बढ़ गई केन्द्रिय सन्धि संगठनों अथवा बगदाद पैक्ट ने अरब राष्ट्रों के बीच फूट डालने का कार्य किया सैनिक संगठनों के बारे में हम यही कह सकते है कि यह सैनिक सन्धियां सुरक्षा के साधन नहीं बल्कि विश्व शान्ति के लिए अवरोधक रहे हैं।

आधुनिक हिन्दी कवियों ने भी युद्ध प्रधान कविताओं में इन सैनिक संगठनों एवं वार्ताओं की ओर भी किया है। फौजी संधियों और साम्राज्यवादी देशों की कूट मन्त्रणाएं आज विश्व भर में चिन्ता का कारण बनी हुई हैं 'बारह बजे रात के' शीर्षक कविता में कवि ने नाटों और सीटों जैसी फौजी संधि वाले देशों की युद्ध वार्ताओं का मनुष्यता पर पड़ने वाले प्रभाव की ओर संकेत करते हुये लिखा है– ''लंदन में वाशिगंटन वाशिगंटन में पेरिस की पूंजी की चिंता में युद्ध की वार्ताएं सोने न देती हैं किरएं की आजादी चांटे सी पड़ी है, पर रोने न देती है ''[76]

मैथलीशरण गुप्त सैन्य शक्ति को शाक्ति शाली बनाने पर बल देते है, कि चाहे युद्ध वास्तव में न छेड़ा जाये लेकिन धनुष की टंकार की प्रतिध्वनि अवश्य सुनाई देनी चाहिये।

ऐसे वातावरण में, सैन्य गठबन्धनों का लक्ष्य निराधार साबित होता है इसका प्रभाव आधुनिक कवियों को अपनी ओर खींचता रहा है फलस्वरूप इनकी लेखनी भी सक्रिय रही है।

आधुनिक कवि श्री श्यामलाल शुक्ल जी ने संगठनों की पूरी तस्वीर खींच ली हैं– '' सकल विश्व के राष्ट्र ने मिल अपने गुट निर्माण किये कोई नाटों कोई सिद्धि की आड़ लिए इन दोनों से बचे राष्ट्रों ने यह आपस में सोंचा, हम न सताये जायं कहीं इसलिए संगठन की सोंच निर्गुट गुट अपना गठित किया यहां नीति परस्पर अपनाई सहयोग और सद्भाव रहे सब छोड़ शत्रुता और बुराई, सौ से अधिक राष्ट्रों ने इस निर्गुट गुट को अपनाया भारत के प्रथम अध्यक्षता कर अपना बढ़ वर्चष्व दिखाया''77

कारगिल युद्ध में 'जी–8' देशों के समूह भी पाकिस्तान को दोषी माना है कवि के शब्दों में–''जी'आठ के महासंघ ने, पाक को है दोषी माना भारत में उत्पात मचाना, सकल विश्व न है जाना ''[78]

कवि अन्तर्राष्टीय संगठनों की विफलता का चित्रण इस प्रकार करते है– '' झाड़ और फानूस बने थे जो थे स्तम्भ महोत्सव के

नई सुबह की नई किरण के स्तवक बन गये थे स्तव के
गर्म हवा का एक थपेड़ा बड़े–बडे प्रसाद डिगे
टूट गई माला सपनों की छूटे साथी अनुभव के

सुनते हैं यह ज्ञान नहीं था होगी यों हेरा–फेरी
चौगा बदल बदल कर बैठे सब ज्ञानी ध्यानी यारों!" [79]

शस्त्रीकरण की अनवरत प्रतिस्पर्धा–

शस्त्रीकरण की प्रतिस्पर्धा निनाशकारीयुद्धों का कारण रही है। जब एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से अलग होकर अपने को अधिक शक्ति शाली बनाने के उद्देश्य से आयुध बनाने या संग्रह करने लगते है,तो अन्य राष्ट्रों के मध्य होड शुरू हो जाती है। यदि एक राष्ट्र कोई नई हथियार प्रणाली बना रहा है। दूसरों को उसकी भनक पडी तो वह उससे बेहतर प्रणाली विकसित करने का प्रयास करता है,इस प्रकार आक्रमणातमक एवं रक्षात्मक दोनों प्रकार के हथियार में भारी वृद्धि होती है। राष्ट्र रक्षा अनिवार्य है, परन्तु शस्त्री करण की प्रति स्पर्धा किसी भी राष्ट्र की रक्षा में बाधक ही रही, बीसवी सदी के दो भयंकर महायुद्धों के पीछे यही शस्त्री करण की प्रतिस्पर्धा रही हैं/"

20 वीं शताब्दी के शुरू होते होते यूरोप के सारे राष्ट्र हथियार सम्पन्न थे, जिसका परिणाम यह हुआ कि विश्व युद्ध इस शताब्दी के पहले अर्धभाग में हुये जिनमें विनाश चरम् सीमा तक पहुंच गया और लाभ किसी को नहीं हुआ /वर्तमान युग में परमाणु शक्ति के संग्रह की होड अमरीका तथा रूस में चल रही है जिसकी क्रिया अभिक्रिया का परिणाम यह हो गया है कि परमाणु शक्ति प्रत्येक गुट के साथ इतनी पूंजित है कि वह सारी जीवित सृष्टि को कई बार नष्ट कर सकते हैं/"[77]

इस प्रकार मनुष्य ने अपने विनाश के साधन एकत्र कर लिए हैं तथा और भी करता जा रहा है। शस्त्रीकरण की प्रतिस्पर्धा अनेक समस्याओं की जननी है। यदि हम शस्त्री करण को युद्ध का प्रधान कारण मान कर चले तो अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि शस्त्रीकरण की होड एक ऐसे वातावरण विकसित करती है जिससे भविष्य में होने वाले युद्ध की संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता/प्रथम विश्व युद्ध का प्रमुख कारण शस्त्रीय प्रतिस्पर्धा ही रही है। राजनीतिक शस्त्रीकरण के मामलों को राष्ट्रीय सुरक्षा का विषय बना कर, सामान्य जनता को आर्थिक बोझ से प्रभावित करते है, द्वितीय विश्व युद्ध में किये गये बम में अमेरिका ने अरबों डालर दिए, क्या यह धन का अपव्य नहीं, इसी आर्थिक मद को हम अपने–अपने राष्ट्र की समाजिक दशा सुधारने पर प्रयोग करें तो यह निश्चिय और स्पष्ट है कि ऐसी विनाश लीलाओं की संभावना कुछ हद तक हमसे दूर होगी /

आधुनिक हिन्दी युद्ध परक काव्यों में शस्त्रीकरण से समबन्ध रखने वाली अनेक रचनाएं है कुछ सहित्यकार इस प्रक्रिया को लोक–कल्याण कारी नहीं मानते इसे अशान्त वातावरण को उत्पन्न करने वाली और मानवता के लिए विनाशक मानते हैं और कुछ कवि इसका समर्थन करते भी दिखाई पडते हैं।किन्तु मैं शस्त्रीकरण की प्रतिस्पर्धा को सम्पूर्ण सृष्टि के लिए घातक परिणामों वाली मानती हूं और इस प्रतिस्पर्धा को आधुनिक कवियों द्वारा दी गई कुछ पंक्तियों के माध्यम से स्पष्ट करती हूं।

आणुविक अस्त्रों के विकास पर विरोधी चेतना व्यक्त करते हुये, सियाराम शरण गुप्त ने एक प्रतीक कथा के माध्यम से, उसके दुष्प्रभावों से परिचित कराया है कि उसके प्रयोग से उसका जनक ही मरणासन्न अवस्था में पहुंच जाता है, कवि इस कथा के माध्यम से शस्त्री करण की प्रतिस्पर्धा को रोकना चहता है–" भस्मक किरण खोज के निकाली थी /++++ और तो क्या वज्रजल गये क्षण मात्र में/अंत में हुआ क्या ?/उस ज्वाला का

जनक ही/दग्ध कर बैठा हाथ–पैर आप अपने/और अब जीवित भी मृत–सा पड़ा कहीं /"78

इसी प्रकार कैलाश बाजपेई ने जलगत एवं भूमिगत अणु–परिक्षणों का विरोध कियाहै–" कि यदि वैज्ञानिक जल थल और आकाश में विष घोल रहे हैं चिन्ता की क्या बात है? कारण यह कि इस धरातल के नाबदान के कीडों और कुकुरमुत्तों जैसे लोग वैसे भी अंततः मरेगें ही, अतः यदि वह बम वर्षा से मरते हैं तो क्या अन्तर पडता है? इसी प्रकार यह दुनिया समझदार तो बहुत दिन रह ली है, अतः क्या बुरा है यदि अब इसपार नायक आदि बमों की वर्षा द्वारा पागल पन के कीटाणुओं की वर्षा कर दी जाती है/"79

आधुनिक मानव हथियारों के प्रयोग से, अपने अहं की संतुष्टि करता है, एवं किसी भी समय इसका प्रयोग कर सकता है, यह शस्त्रीकरण की प्रतिस्पर्धा, हमेशा मानव हत्या के लिए प्रस्तुत है, आज मानव, हथियारों का सेवक मात्र बन कर रह गया है–" वह हथियारों का सेवक था/हथियारों के मुंह, हत्या के लिए/झुके रहते पृथ्वी पर/"80

शस्त्रीकरण के प्रतिस्पर्धा की होड हमे खुद निगल जायेगी, यह अस्त्र शस्त्र भले ही हमारे अधीन है, किन्तु एक दिन यही प्रगति मानव विनाश का कारण बनेगी/गिरिजा कुमार माथुर ने 'कल्पान्तर' 'काव्य में 'यत्र दैत्य' से इसकी अभिव्यकित निम्न पंक्तियों में कराई है– " मैं जडवादी विक्रति से उपजें

अपने यन्त्रों यन्त्रों में

दुनिया भरको उलझा दूंगा

दिखलाकर उसको

यन्त्र सभ्यताओं का वैभव स्वर्ण जल

अपनी व्यावसायिक रस पोषक

केबिल तारों की सूडों से

मैं पी जाऊंगा रस धीरे–धीरे

प्रदेश मज्जाओं से"81

शस्त्रीकरण द्वारा मानवता का विनाश होता है, जगदीश गुप्त ने इस विनाश को रोकने के लिए अणुबम के प्रयोग का बडा बिरोध किया है– " बडा अहंकार हुआ/बज्रोतम–तीव्र किरण शल्य को प्रविष्टि किया। अणु के उपलक्ष्य और मण्डल के सीमित अवकाश में/पाया गया/धरती के तीथडे सा फाडकर/"82

शस्त्रीकरण का प्रभाव सामन्य नागरिकों पर ही नहीं पडता बल्कि सार्वजनिक स्थलो पर की जाने वाली बम वर्षा का दीर्घ काल तक प्रभाव व्याप्त रहता है/

द्वितीय विश्व युद्ध में जापान के 'हिरोशिमा' एवं 'नागासाकी' पर गिराये गये बमो का प्रभाव उस देश पर ही नहीं बल्कि दूरवर्ती प्रदेशों पर भी पड़ा अमेरिका और रूस दो ऐसी महा शक्तियां है, जिनके बीच युद्ध छिड़ा, तो धरातल की समस्त मूर्ति अमूर्त वस्तुओं का असतित्व मिट जायेगा/समाज का सर्वाधिक संवेदन शीत वर्ग साहित्य कारों का होता है, अतः कवियों ने युद्धों की भयंकरता एवं शस्त्रास्त्रों के निर्माण को रोकने की चेष्टा की है तथा विश्व को भावी को भावी विश्व युद्ध से बचाने का प्रयास किया है, दिनकर के कुरुक्षेत्र में, युद्ध विरोधी

चेतना के परिप्रेक्ष्य में यह विचार व्यक्त होता है कि युद्ध के मूल में धूर्त कूटनीतिज्ञों की कुटिल नीतियां क्रियाशील रहती है/"[83]

क्योंकि विभिन्न समुदाय और राष्ट्र एक दूसरे पर आक्रमण किये जाने के समर्थक नहीं होते/" [84] युद्ध छेडने वालों की छटपटाती हुई आत्मा को दिनकर ने कुरुक्षेत्र में इस प्रकार व्यक्त किया है–" होता समर आरुढ़ फिर/फिर मारता–मारता तथा विजय पाकर बहाता अश्रु है/"[85]

यदि रूस और अमेरिका के समतुल्य कोई तीसरा राष्ट्र होता तो तृतीय विश्व युद्ध सच्चाई के रूप में हमारे सामे होता/किसी भी राष्ट्र का जीवन मूल्य उस राष्ट्र की शक्ति और वीरता होती है, शक्ति के सहारे ही हम अपने जीवन मूल्यों का विकास करते हैं/आज क युग आणुविक युग है जिसमें शक्ति के अभव में जीवन मूल्य समस्त होने लगते है, अतः दिनकर की सखी और धर्मपालक के रूप में चित्रित किया गया है– " तलवार पुण्य की सखी, धर्मपालक है।/असिछोड़ भीरु बन जाय जो धर्मसोता है,/पातक प्रचण्डतम् वहीं प्रकट होता है/तलवारे सोती जहां बन्द म्यानों में/किस्मते वहां सड़ती हैं तहखानों में/बलिवेदी पर बलियों नथें चढती है,/सोने की ईंटों, मगर, नहीं कढ़ती हैं/ " [86]

शस्त्रीकरण की प्रतिस्पर्धा का प्रभाव कवि राजाराम शुक्ल की निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है– " याद अभी है हिरोशिया की/और न भूला नागासाकी,/फिर भी लगी होड़ शस्त्रों की,/दौड़ा–धूपी आपा–धापी/सुख कैसे पायेगा मानव/सिर पर कालमेघ का गर्जन/ "87

सुरक्षा व्यवस्था हेतु प्रत्येक राष्ट्र सैन्य वयवस्था उत्तम किस्म की रखना चाहता है, किन्तु आज राष्ट्र रक्षा के नाम पर शस्त्रीकरण की जो प्रतिस्पर्धा राष्ट्रों के मध्य पनपी है वह विनाशक स्थितियों को जन्म देने वाली है/'प्रतिज्ञा पुरुष' में भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर को राष्ट्र रक्षा हेतु अस्त्र शस्त्र एवं सैन्य दल की व्यवस्था का उपदेश दिया है किन्तु निम्न पंक्तियों में शस्त्रीकरण की अनिवार्यता ही ध्वनित होती है– " शक्ति परीक्षण सेनाओं का,/करते रहना चाहिये/देश धर्म रक्षार्थ सैन्य दल/सक्षम रखना चाहिये/ "[88]

इसी स्वर को मिलाते हुये बलवीर सिंह 'करुण' ने कोई गीत नहीं गाऊंगा। शीर्षक कविता में आंगन में टैक उगाने एवं खेतों में एटम बम बोने का आहान किया है–" धरती से आकाश तलक/रण घोषों का गूंजे सरगम/जबतक चलन पडौसी बदले/वर्तमान ईमान का/कोई गीत नहीं गाऊंगा/तब तक मीठी तान का/"[89]

कवि शान्ति समझौते और सिद्धान्तों के विपरीत आने देश की सुरक्षा के लिए शस्त्रीकरण की अनिर्वाता की ओर अग्रसर होते है।–" मौसम ने तेवर बदले, तो हमने बादल लिया सरगम/पंचशील की क्यारी में हम, अबकी बोयेगें एटम/हंटर, नैट, जैट, बोयेगें, तोपे, टैंक उगायेगें/आने वाली फसलों में गोलों के पौध लगायेगें/"[90]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि युद्ध प्रथम काव्यों में शस्त्रीकरण की प्रतिस्पर्धा को कविता ने व्यक्त किया है किन्तु अधिकांश साहित्यकार इसको विनाशक मानते हुये इस प्रक्रिया से दूर रहने की प्रेरणा देते है। वह इस प्रतिस्पर्धा को समस्त राष्ट्रों के मध्य समाप्त करने की चेतावनी देते है, वहीं कुछ कवियों ने जोंरदार शब्दों में शस्त्रीकरण की अनिवार्यता को सिद्ध करने का प्रयास किया है।इससे स्पष्ट है कि युद्ध परक काव्यों में युद्ध से सम्बन्धित तथ्यों पर साहित्यकार की सजग दृष्टि रही है

अस्तित्व एवं सुरक्षा–

अस्तित्व के लिए संघर्ष प्रकृति का नियम है। मनुष्य अपनी उत्पत्ति से ही संघर्ष करता चला आ रहा है और आज भी इस ओर अग्रसर है। हम यह भी कह सकते है कि यह संघर्ष मानव जितना ही पुराना है। प्राचीनकाल से ही एक जाति दूसरी जाति से, एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से एवं एक समाज दूरे समाज से संघर्ष करता है, इस संघर्ष से प्रकृति एवं क्षेत्र में परिवर्तन हुये किन्तु अन्तिम रूप में कभी भी समाप्त नहीं हुआ/ डार्विन ने अपनी पुस्तक 'Decnt of man' में जाति के विकास को चित्रित किया है, जिसके अनुसार–" प्रत्येक जाति अपने आस्तित्व के लिए संघर्षरत रहती है और जब वह अपने प्रतिद्वन्दी पर हावी हो जाती है, तभी उसका स्वयं का अस्तित्व बचता है। यह अस्तित्व का संघर्ष आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक परिवर्तनों के साथ–साथ युद्ध का स्वरूप प्राप्त कर लेता है। सम्पूर्ण युद्ध के इतिहास को पाशविक युद्ध कर्म, प्राम्भिक युद्ध कर्म, ऐतिहासिक युद्ध कर्म तथा आधुनिक युद्ध कर्म में (चार भागों में)विभाजित किया गया है। " [91]

युद्ध का समाज से अटूट सम्बन्ध है, क्योंकि जब कभी राष्ट्र अथवा समाज पर संकट आता है वह अपने अस्तित्व को बचाने के लिए संघर्ष करता है।अस्तित्व की रक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र के लिए, उसकी व्यक्तिगत सन्तुष्टि है इस प्रकार की असतुति का भाव युद्ध को जन्म देता है इस प्रो0– ईगलटन के अनुसार –" अपने अधिकारों को जबरदस्ती प्राप्त करनें विषय परिस्थितियों को अनुकूल बनाने तथा विवादों का समाधान करने का माध्यम ही युद्ध कहा जाता हैं।" [92]

मोल्टन के अनुसार–" राज्य के प्रयोजन को बनाए रखने अथवा प्राप्त करने के लिए उस राज्य की जनता की बलपूर्वक कार्यवाही ही युद्ध कहलाती है। "[93]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि जब कोई भी पक्ष अपने उद्‌देश्य को शान्तिपूर्ण ढंग से प्रात्त करने में असफल रहता है, तो वह अपने अस्तित्व की रचना हेतु आक्रमणरत्मक कार्यवाही का ही सहारा लेता है।

राष्ट्रीय अखण्डता को बनाए रखने के लिए प्रत्येक देश अपनी आन्तरिक एवं वाह्रम सुरक्षा को मजबूत बनाता है क्योंकि सुरक्षा के अभाव में कोई भी राष्ट्र अपनी अखण्डता एवं चतुर्मुखी विकास की कल्यपना भी नहीं कर सकता। अपने राष्ट्र पर आने वाले संभाक्ति खतरों का जवाब देने तक कोई राष्ट्र सुराक्षित नहीं रह सकता, जब तक वह उनके साधनों को निष्क्रिय न बना दे, यह, सुरक्षा की आधुनिक विधि के अर्न्तगत आता है। सुरक्षा का विषय इतना व्यापक है कि इसके अर्न्तगत आर्थिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक, औद्योगिक, भौगोलिक एवं सबसे महत्वपूर्ण सामरिक क्षमता आदि भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आज सुरक्षा का प्रश्न अत्याधिक व्यापक हो चुका है। इयलिए प्रतिरक्षा इसका अंग मात्र है। सुरक्षा के अर्न्तगत ऐसी प्रणालियाँ स्थापित की जाती हैं जिससे किसी राष्ट्र को खतरों का सामना ही न करना पड़े। द्वितीय महायुद्धों के दौरान सुरक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुये वाल्टर लिप्पमैन ने कहा था कि– " एक राष्ट्र की सुरक्षा तभी समझी जाती है जब उसे उचित हितों को युद्ध निवारण के लिए बलिदान नहीं करना पड़ता और यदि उसे चुनौती दी गई तो वह युद्ध के द्वारा उन्हें बनाये रखने के योग्य होता है।" [94] प्रतिरक्षा के सम्बन्ध में इसी प्रकार फ्रैक टार्जन एवं फ्रैक एल0 सिमोनिक ने अपने विचार व्यक्त किये हैं कि–" राष्ट्रीय सुरक्षा सरकार की नीतियों का एक अंग हैं जिसका उद्‌देश्य राष्ट्रीय

हितों की सुरक्षा व पूर्ति हेतु राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से अनुकूल परिस्थितियों को उत्पन्न करना होता है। ''[95]

आज के आणुविक युग में सुरक्षा और भी महत्वपूर्ण हो गई है, जिसके परिणाम स्वरूप प्रत्येक राष्ट्र, वाहे छोटा हो अळावा बड़ा अपनी रक्षा हेतु तत्पर दिखाई देता है एवं अपनी सेनाओं के आधुनिकीकरण पर भारी व्यय कर रहा है। सुरक्षा के उत्तर दायित्व को आधुनिक हिन्दी कवियों ने अपने युद्ध परक काव्यों में व्यक्त अपने कर्त्तव्य का पालन किया है रामधरी सिंह दिनकर के शब्दों में–

'' दासत्व जहाँ है वहीं स्तब्ध जीवन है,/स्वतन्त्रय निरन्तर समर, सनातन रण है।/स्वतन्त्रय समस्या नहीं आज या कल की,/जागर्ति तीव्र घड़ी–घड़ी, पल पल की,/पहरे पर चारों ओर सतर्क लगोरे!/घर धनुष–बाण उधत दिन–रात जगोरे!।'' [96]

पहरुए सावधान रहना, कविता में गिरिजाकुमार माथुर जी ने राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए सजग रहने की निम्न पंक्तियों में दी है, कवि के शब्दों में– '' आज जीत की रात,/पहरुए सावधान रहना।/खुले देश के द्वार,/अचल दीपक समान रहना।/''[97] (नीहारिका)

देश के कर्णधारों पहरे दारो, तुमहें देश के गौरव की रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहना पड़ेगा/तुम्हे दीपक के समान स्वयं कष्ट सहकर भी देश वासियों को प्रकाश देना होगा/तुम देश की रक्षा के लिए सदैव कटिबद्व रहो, एवं अपने कर्त्तव्य का पालन कारो।

'संशय की एक रात' में अस्तित्व बोध को कवि ने चित्रित किया है, लक्ष्मण टूटी कड़ियो के संकेत से अस्तित्व के महत्व का प्रतिपादन करते हैं कि कोई चाहे कोई कितना ही छोटा क्यो न हो उसकी अपनी अर्थवता होती है। कर्म उनका अधिकार है और कर्म का महत्व ही उनके अस्तित्व को बनाए रखता है। लक्ष्मण राम को स्मरण कराते हैं कि सीता के अपहरण के अपयश का प्रतिकार करने के लिए उनकी क्रोध से जलती हुई आंखों में, उनकी साहस से भरी मुटिठयों में, उनके रोष से दांतों तले हुये ओठों में तथा उनके यात्रा करने वाले पैरों में दृढ़ चेतना है जो अपने निश्चय पर आरुढ़ है। उनके इस कार्य में शक्ति शाली आस्था कार्यरत है और वह इच्छा प्रति केन्द्रित है जो अपने उद्देश्य के प्रति समर्पित हो चुकी है कवि के शब्दों में– '' कितने ही लघु हरे/इससे क्या?/सार्थक हैं/स्वत्व है हमारा/कर्म–/हमारी जलती हुई आंखों में/बंधी हुई मट्ठी में/मिचे हुये ओठों/इन यत्रित पैरों में/संकल्पित प्रज्ञा हैं।/वर्चस्वी निष्ठा है।/''[98]

निम्न पंक्तियों में हनुमान राम के तर्कों का खण्डन करते हुये कहते है कि सीता का हरण उनकी निजी समस्या नहीं है, यदि बात वैसी होती, वह संपूर्ण वानर सेना रामेश्वर तट पर एकत्र नहीं होती और सेतु बांधने का यह कठिन कार्य सम्भव नहीं हुआ होता कवि के शब्दों में– '' सम्भव था/सब कुछ सम्भव था/महाराज जो कुछ कहते हैं/सब सम्भव था/यह सेतु बन्धि का बनना/रहता मात्र कल्पना।/रामेश्वर तट/एकत्र न होते ये नग्न देह के/कोटि–कोटि/साधारण जन।''[99]

उपर्युक्त पंक्तियों में हम अस्तित्व सुरक्षा में परस्पर सम्बन्ध देखते हैं क्योंकि अस्तित्व रक्षा का सुरक्षा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यह अस्तित्व का ही भाव है जो हमें अपने राष्ट्र की सुरक्षा की ओर उन्मुख करता है।

अस्तित्व की रक्षा में सुरक्षा की भावना एक निर्णायक कारक है इसमें सन्देह नहीं कि राष्ट्र के विकास के लिए अस्तित्व एवं उसकी सुरक्षा हेतु अस्तित्व का भाव एक वरदान है।

मूल्य चेतना–

मूल्य चेतना से सम्बन्धित है और चेतना का सम्बन्ध व्यक्ति है, क्योंकि आदमी का मन ही चेतना का मौलिक रूप से उत्स या प्रेरणा स्थल कहा जा सकता है। व्यक्ति चेतना से सामाजिक और राजनीतिक चेतना का विकास सम्भव होता है।वस्तुतः चेतना में बोध भाव और कर्म समन्विति रहती है, चेतना का निर्धारण एक ओर बौद्विक सक्रियता अर्थात चिन्तन से होता है तो दूसरी ओर भावात्मक सक्रियता अर्थत अनुभूति से होता है और इसमें दैनिक सक्रियता अर्थात कर्म का भी मिश्रण होता है।

मूल्य चेतना होते वह देश, काल, व्यक्ति एवं परिस्थिति के अनुसार बदलते रहते हैं। प्राचीनकाल में मानव जाति में न कतने मूल्य स्थापित किये और आगे चलकर उनको अस्वीकार कर दिया।'आंधायुग' संशय की एक रात' 'राम की शक्ति पूजा' 'एक कण्ठ विषपायी' आदि अनेक युद्ध प्रधान काव्यों में इस मूल्य –चेतना को खोजने का प्रयास किया गया है।आधुनिक युद्ध काव्यों में जीवन और सांस्कृतिक मूल्यों की अभिव्यक्ति हुई, युद्ध की विभीषिका, विश्व का जीवन दर्शन, जीवन,मूल्यों, आस्था एवं विश्वास तथा अनेक सांस्कृतिक मान्यताएं युद्ध से छूकर या उससे प्रभावित होकर निकलती हैं। दो विश्वयुद्धों का प्रभाव विश्वव्यापी पड़ा। फलतः संसार का कोई भी राष्ट्र अथवा उसका जीवन दर्शन युद्ध के विश्वव्यापी प्रभाव से अछूता नहीं रहा। महायुद्धों का बहुत गहरा प्रभाव हमारे सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन पर पड़ता है, एवं तीव्र गति से जीवन मूल्यों में क्रान्तिकारी परिवर्तन होता है जिससे युद्धोंत्तर परिस्थितियां एवं सास्कृमिक विघटन की समस्या भी प्रत्येक राष्ट्र के सम्मुख बनी रहती है। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि प्रत्येक भयंकर युद्ध के पश्चात राष्ट्र अथवा व्यक्ति आर्थिक रूप से जर्जर हो जाता है, इस प्रकार सांस्कृतिक विघटन और पुर्ननिर्माण युद्ध से सम्बधिन्ति होते हैं।

आधुनिक हिन्दी कविता में मुक्तिबोध को संकल्पधर्मी मूल्य देता कवि रूप में मान्यता प्राप्त है। मुक्तिबोध ।बोध जीवन के प्रति एक सतर्क दृष्टि और संकल्प दृष्टि लेकर चलते हैं, उनका दृष्टिकोण सौन्दर्य के प्रति आग्रहशील है,। 'कॉप उठता दिल' कविता में कवि ने अपने ईमानदार संघर्ष धर्मी होने का भी परिचय दिया है। जीवन के सत्य के सम्मुख वह सुविधाओं और असफलताओं को भी तुच्छ समझता है,अतः मानवता का सच्चे अर्थों में पक्षधर कवि सिद्ध होता है। जो लोग मानवतावादी हैं और आदर्शवादी मूल्यों की घोषणा करते है, पर भीतर आर्थिक दृष्टि से स्वयं को सुरक्षित बनाते हैं, ऐसे लोगों के प्रति कवि व्यंग्य भी करता है ' एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्म कथन' नामक कविता में– आत्म विस्तार को मूल्य के रूप में अभिव्यक्ति देता है कवि के शब्दों में–" आत्म विस्तार यह/बेकार नहीं जायेगा/जमीन में गड़ी हुई देहों की खाक से/शरीर की मिट्टी से, धूल से/खिलेंगे गुलाबी फूल/सही है कि हम पहचानते नहीं जायेंगे /दुनिया में नाम कमाने के लिए/कभी कोई फूल नहीं खिलता है/हृदयानुभव राग–अरुण/गुलाबी फूल प्रकृति के गंध–कोश, काश हम बन सकें।" (91)

मुक्तिबोध का रचना संसार मूल्य चेतना के प्रस्थानपन का रचना संसार है। उसमें अर्न्तमन, अर्न्तप्रेरणाओं तथा संवेदनात्मक अनुभावों से मूल्य विवेक का विकास होता है। मुकितबोध में विश्व दृष्टि है उनके लीवन मूल्य

भी विश्व दृष्टि से सम्बन्धित हैं। वर्ग अथवा समाज की विश्व दृष्टि व्यक्तिगत धरातल पर निजी दृष्टि बन जाती है। मुक्तिबोध की मूल्य चेतना का आधार सामाजिकता है, विशेष रूप में सामाजिगता मध्यवर्गीय है, उनकी कहानियों, कविताओं, वक्तव्यों और निबन्धों में इस प्रकार के स्पष्ट संकेत मिलते हैं। मेरा आलोच्य विषय कविता से सन्दर्भित है अतः मैं मुक्तिबोध की कविता में प्रतिपादित मूल्यों के विभिन्न पक्षों के अनुशीलन तक अपने को केन्द्रित रखना चाहूंगी। मुक्तिबोध कविताओं के क्षेत्र में प्रायः जनवादी विचारधाराओं को लेकर चले हैं। स्वतन्त्रयोत्तर कविता के विकास में मुक्तिबोध ही एक ऐसे कवि हैं जिसमें मूल्यों के प्रति एक सही दृष्टि है जो व्यक्ति और समाज के प्रति पूर्णतः सजग है। मुक्तिबोध को मूल्य सृष्टा कवि कहा जाता है यही कारण है कि उनके समस्त काव्य में मूल्यों का आधार विवेक को स्वीकार किया गया है, उनकी दृष्टि में सबसे बड़ी बात यह है कि सही अर्थों में आदमी, आदमी बना रहे।ऐसी कवितएं जनवादी विचारधाराओं, मानर्सवादी चिन्तन तथा प्रत्यक्ष परिवेशगत, समझदारी और सामाजिक दायितब का बोध कराती है, कहीं–कहीं काव्य में व्यकित खीझ और आक्रोश भी है, किन्तु मुख्यरूप से कवि की मूल्य चेतना संघर्ष पर आधारित है।

नरेश मेहता ने 'संशय की एक रात' में जीवन मूल्यों एवं आदर्शों का सफल अन्वेशण किया है, क्योंकि कवि आधनिक युग का साहित्य कार है अतः वर्तमान युग के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व संशय, अनिश्चय, एवं विरोधी विचार धराओं और धारणओं के मध्य संघर्ष भाव से आहत है, क्योंकि कवि राम के चरित्र में यह समस्त वर्तमान विसंगतियों को उभारता है, जिससे विपरीत मूल्य संघर्ष करते हुये दिखई देते हैं। 'संशय की एक रात' में युद्ध और शान्ति तथा व्यक्ति और समाज के बीच मान्यताओं और आदर्शों की टकराहट सुनाई दी है। निम्नलिखित पंक्तियों में राम 'सत्य की खोज में उद्विग्न है, मनुष्य के बीच मनुष्य का कैसा समबन्ध हो इसे वे जानना चाहते हैं, कवि के शब्दों में–" ओ भाद्रपदी वृष्टि !/ओ विशाल रत्नाकर!/यदि मानवीय प्रश्नों का उत्तर मात्र/युद्ध है/खड्ग है/ तो–/लो/ समर्पित हैं तुम्हें तुम्हें/तुम्हारे अज्ञात को,/इस क्षण के द्वारा/वृष्टि भीगे उस महाकाल को/समर्पित है यह/धनुष, बाण, खड्ग और शिरस्त्राण।/मुझे ऐसी जय नहीं चाहिये,/बाणबिद्ध पाखी सा विवश/साम्राज्य नहीं चाहिये,/मानव के रक्त पर पग धरती आती/सोता भी नहीं चाहिये/सीता भी नहीं चाहिये।"[92]

उपर्युक्त पंक्तियों में राम ने विशाल समुद्र को सम्बोधित करते हुये अपने हृदय की उद्विग्नता को किया है। वह अपने पुराने संस्कारों से ऊब कर नये मूल्यों नये क्षितिजो की खोज में प्रवृत्त हो रहे हैं।उन्हें बाण से छिदे पक्षी के समान विवश होकर साम्राज्य नहीं चाहिये और न ही मनुष्य के खून से आर्द्र धरती पर पैर रख कर सीता चाहिये, उनकी मूल्य भावना इनका तिरस्कार करती है।

इसी प्रकार 'राम की शक्ति पूजा' में निराला' ने शक्ति की साधना और उपासना का सन्देश दिया है, क्योंकि वर्तमान में अंग्रेजों का दमनकारी चक्र सफल हो रहा था और न्यायपूर्ण पक्ष अन्याय से परास्त हो रहा था, अहिंसा और न्याय की भावना समाप्त हो चुकी थी। इस स्थिति/को कवि ने राम के प्रखर बाणों द्वारा किये गये सनधान की विफन्यता के माध्यम से कावत किया हैं वही बाण जो लोक–संस्कृति को प्रगति शील बनते हैं विफल हो रहे है कवि के शब्दों में शत–शुद्धि बोध–सुक्ष्माति सूक्ष्म मन का विवेक,/जिसमें है क्षात्र–धर्म का घ्रत

पूर्ण भिषेक,/जो हुये प्रजातियों से संयम से रक्षित/वे शर हो गये आज रण में श्रीहत, खण्डित/''[93]

ये वही बाण है जिनमें शत–शत पवित्रता का ज्ञान हे। इनमें अभूर्त से अभूर्त मन का ज्ञान हैं अर्थात मन का सूक्ष्म से सूक्ष्म ज्ञान बाणों में है जो बाण क्षत्रिय धर्म का अभिषिक्त रूप धारण किये हुये थे जिनके साजाओं ने संशय से संरक्षित रखा खा, किन्तु आज वही बाण युद्ध भूमि में शोभाहीन लगे, क्याकि वह विफल रहे अर्थात खण्ड–खण्ड हो गये। मैने देखा कि युद्ध में महाशक्ति रावण को गोद में लेकर इस प्रकार रक्षा कर रही थी जैसे आकाश में चनद्रमा शंकाहीन हो कलंक कर अपने अंक में पोषण करता है।

'एक कंठ विषपायी' में दुष्यन्त कुमार ने महाराज दक्ष के माध्यम से निम्न पंक्तियों में बदलते परिवेश एवं परिस्थितियों में उनकी मूलय चेतना बदली हुई दिखाई दी है–

''सच है देवि !/मेरी मर्यादाओं को अपनानित करके/मेरे घर की/लोक–प्रतिष्ठा की हत्या कर/मेरे ही रक्त ने सृजन का सुख पाया है।/–यह अपवाद विरल है/लेकिन/शंकर के मोह में सती ने/अपने/अथवा अपने पति के/दुर्भाग्य को उकसाया है।/तुमको बतलाये देता है–/सारे भद्र–लोक से उसे/बहिस्कृत करके छोड़ूंगा में।''[94]

'अंधायुग' के सम्बन्ध में युद्धोंपरान्त की स्थिमियों का मूलय और सिद्धान्त के संक्रमण कालीन स्थिति का संकेत इस प्रकार किया है–'' युद्धोपरान्त/वह अंधायुग अवतरित हुआ/जिसमें स्थितियों, मनोवृत्तयां,आत्माएं, /सब विकृत है/''[95]

युद्ध की मर्यादा को सद् और असद् दो पक्ष बांधे रहते हैं। विजयी और विजित दोनों ही युद्धों के महानाश के उत्तरदायी होते है, जब कभी दोनों पक्ष विवेक शून्य हो जाते हैं और इस विवेक शून्यता के परिणामस्वरूप ही युद्ध प्रारम्भ होता है। इसी प्रकार 'मुकितबोध प्रसंग' में मूल्यहीनता की स्थिति को व्यंग्य परक भाषा में चित्रित किया है, क्योंकि आधुनिक कवि भयाकुल जिन्दगी जीते हुये अपने उसी परिवेश एवं वातावरण से मूल्यों को ढूंढ निकालने का प्रयास करते है, करते है, इस प्रसंग पर लीलाधर जगूडी की निम्न पंक्तियां द्रष्टव्य हैं– '' एक ओर सूर्योदय से पहले का अंधेरा/मुझमें टहल रहा है/क्यांकि वह जानता है–/आदमी से आदमी के पास जाने के सबके भीतर वह सारा अंधेरा है/जिसका होना/उजाला जानने के लिए जरूरी है/''[96]

उपर्युक्त पंक्ति में जो विघटन है वह मूल्य चेतना को संभावनाओं को बढ़ाने का ही करता है।

आर्थिक चेतना एवं आर्थिक युगबोध–

युगबोध के अर्न्तगत समकालीन परिस्थितियां और प्रभाव आते है, मल्यचेतना को प्रभावित करने में आर्थिक चेतना विशेष रूप से कार्य करती है। युद्धों का राष्ट्र के आर्थिक क्षेत्र में गहरा प्रभाव है युद्ध काल में देश की आर्थिक व्यवस्था में असतंलन की स्थिति उत्पन्न होने लगती है, फलस्वरूप अनेक आर्थिक समस्याएं सामने आती हैं जिन्हें टूर करना बहुत कठिन होता है। युद्ध की आवश्यकता को पूरा करने के लिए किसी भी राष्ट्र को अपने आर्थिक ढांचे में परिर्वतन करना आवश्यक हो जाता है, ऐसे अकस्मिक परिवर्तन से देश में असंतुलन की स्थिति बनती है। आधुनिक युद्धों के वृहदरूप को देखते हुये आर्थिक व्यय का अनुमान लगाना भी कठिन हो गया है।

युद्ध के परिणाम स्वरूप आर्थिक व्यवसथा का फिर से निर्माण करना और भी कठिन होता है। युद्ध काल की स्थिति में जन सामान्य को अपने उपयोग की वस्तुओं में कभी करनी पड़ती है, मूल्य वृद्धि के कारण गरीब तबके के लोग खाने पीने की आवश्यक वस्तुएं भी ले पाते, वहीं धनाढ़य वर्ग अधिक मूल्य में वस्तु खरीद कर दनका संचय कर लेते है जिसका परिणाम धम असमान वितरण सामने आता है। अनेकानेक सामाजिक बुराइयां पेदा हो जाती हैं जिन्हें रोकने के लिए सरकार को अतिरिक्त व्यय करना पड़ता है और उसका भार जनता सहन करती हैं।

युद्ध के आर्थिक प्रभाव इतने भयानक होते है कि उनसे समस्त राष्ट्र अन्दर ही अन्दर खोखला हो जाता है, उसे फिर से अपनी अर्थव्यवस्था को युद्ध से पूर्व के स्तर पर लाने का प्रयत्न करना पड़ता है। यह युद्ध का प्रभाव वर्तमान एवं भविष्य दोनों के लिए बुरा होता है। इससे भावी पीढी के उन्नति का आधार ही चरमरा जाता है, और आर्थक प्रभाव के कारण राष्ट्रीय आय कम हो जाती है ओर वासियों का जीवन स्तर हो जाता है। पिछले दो विश्वयुद्ध इस सत्य के प्रतीक हैं कि युद्ध से पूर्व के जीवन स्तर को प्राप्त करना युद्ध के पश्चात कितना कठिन हो जाता है।

कोई भी रचना अथवा काव्य कृति युग सापेक्ष होती है और उसमें अपने समय और समाज का प्रतिबिम्ब परिलक्षित हेता रहता है। युद्ध काव्यों में युद्ध की जिन दशाओं का वर्णन किया जाता है उनमें आर्थिक दवाव, दूसरे देशों से लिए गये कर्ज, सुविधाओं में कभी, करों में वृद्धि, सम्पात का विनाश, आदि भी युद्ध के निर्णायक मूल्यों को प्रभावित करती हैं। इसी प्रकार युद्ध में होने वाले अस्त्र शस्त्र पर तथा सैनिकों पर जो भारी व्यय अथवा बजट होते हैं वह भी देश के आर्थिक ढांचे को प्रभावित करते हैं। करों आदि के निर्धारण तथावस्तुओं की वृद्धि का भी सम्बन्ध आर्थिक आधारों पर रहता है, इतना ही नहीं अर्थ के अभाव में राष्ट्रीय संगठन हो अथवा स्वैचिछक संगठन सभी प्रभावвित होते हैं। ये बात और है कि क्रान्तिकारियों की भावनाएं कभी–कभी अर्थ के अभाव में भी कार्य करती हैं और उनकी भूमिका राष्ट्र निर्माण में बड़ी अहम् होती है। इसी प्रकार की भावना का परिचय क्रान्तिरथी काव्य ने क्रान्तिकारियों के संगठन के प्रसंग में वर्णित किया है, जो इस प्रकार हैं–

" शस्त्रबल के बगैर क्रान्तिकारियों का दल/था समान तेज से विहीन दिनकर के।/विविध क्रिया कलाप हेतु चाहिये था धन/दल के सदस्य थे सभी गरीब घर के/अर्थ के अभाव में अनर्थ, दिखता में कोई/समाधान संकटों का क्रान्ति की डकरके।/चंदा मांगने में गोपनीयता की बाधा आया। दल के समक्ष अर्थ संकट उभर के।/"[97]

समाज को व्यक्ति से प्रथक समझना उचित नहीं होगा अतः मुक्तिबोध के काव्य में व्यकित की अपेक्षा समाजवादी भी बड़ी सजगता के साथ व्यक्त हुये है। अर्थ प्रधान समाज में मानव की सार्थकता और उसके मूल्याकंन का आधार अर्थ है, इसलिए–" सारा स्नेह, शक्ति, गुण, प्रतिभा/रहती धन सीमा से सेवित/यह है अन्तिम सत्य अनाहत/इस समाज के वक्त सारे/सत्य और आदर्शवाद ही/नित बर्राते उसको खाते, उनको पीते/और चाट जाते हैं रूचि से/" (मुक्तिबोध रचनावली मुक्तिबोध पृ0139) कविता के अन्तराव से कवि आर्थिक मूल्यों को समाज में सर्वोपरि मानने वालों की धारणा को करता हैं। प्रलोभी तथा स्वर्थी लोग पर तीक्षण व्यंग्यबाण

छोड़ता है। कवि का यह भी विश्वास है कि समाज में मूल्यहीनता का मुख्यकारण स्वार्थपरता है, कवि के शब्दो में–"सुनो सुनने वालो/पशओं के राज्य में जो बियाबान जंगल है। उसमें खडा है घोर स्वार्थ का प्रभीमकाय/बरगद एक विशाल/सामाजिक महत्व की/गिलौरियों खाते हुये/अन्याय की कुर्सी पर/अराम से बैठे हुये /मनष्य की त्वचाओं का पहने हुये ओवर कोट/बन्दरों व रीछों से/के सामने/नई–नई अदाओं से नाचकर/झुठाई की तालियां देने से लेने से/ सफलता के ताले खुलते हैं। " चांद का मुंह टेढ़ा है मुक्तिबोध पृ0 सं0 137–39 युद्ध प्रारम्भ होने से पूर्व ही युद्ध–संचालन की क्षमता प्राप्त करने में किसी भी राष्ट्र को पर्याप्त मात्रा में धन–शशि व्यय करनी पड़ती है, युद्धकाल में जय पराजय धन की पर्याप्त पर आधारित है।आर्थिक साधनों में जन शक्ति, सामग्री, वित–व्यवसाय आदि इनके अभाव में युद्ध का संचालन कठिन ही नहीं अपितु असम्भव भी है।

आर्थिक बोझ, दबाव एवं कर्ज–

आज प्रत्येक राष्ट्र अपने सैन्य साधनों को बढ़ाने में लगा है, जिसका परिणाम यह है कि राष्ट्रों का विविध ा क्षेत्रों में उतना विकास नहीं हो पा रहा हैं जितना होना चहिये था, रक्षा साधनों में अधिक व्यय बढ़ जाने से आर्थिक बोझ एवं दबाव बढ़ जाता है। युद्ध जैसे विशाल कार्य की परिणति हेतु प्रत्येक यौदिक सामग्री एवं विस्तृत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऋण प्राप्त करता है, फलस्वरूप राष्ट्रीय ऋण में वृद्धि होती है जिससे सरकार पर भार बढ़ जाता है इस ऋण का व्याज सहित भुगतान भावी पीढ़ी ही सहन करती है। पहले सरकार वित की पूर्ति के लिए अनेक कर लगाती है तथा पुराने करों की मात्रा में वृद्धि कर देती है, दूसरे राष्ट्रीय ऋण के भुगतान करने के लिए युद्ध समाप्त होने पर भी सरकार को करारोपण का सहारा लेना पड़ता है।

निम्नलिखित आंकडों की भाषा में यदि हम देखें तो स्वतः ही युद्ध के उपरान्त होने वाले आर्थिक बोझ दबाव एवं कर्ज की स्थिति साफ दिखाई देगी–" सारे विश्व का रक्षा व्यय तकरीवन प्रतिवर्ष चालीस हजार अरब रूपये है। इसमें से मध्य और दक्षिण एशिया का व्यय आठ सौ तीस अरब रूपये प्रतिवर्ष है, जो कि लगभग 2प्रतिशत के बराबर होता है। जहां अमेरिका प्रति व्यक्ति 1018 मिलियन डालर खर्च करता है, चीन लगभग तीस मिलियन डालर, इजराइल 1917, फ्रांस 708, ब्रिटेन 611, संयुक्त अरब अमीरात 978, सउदी अरब 1071, रूस 435, पाकिसतान 26 एवं भारत 13 मिलियन डालर प्रति व्यक्ति खर्च करते हैं। इससे पता कि हर देश की प्राथमिकताएं क्या हैं। दोनों विश्वयुद्धों के बाद सशस्त्र संघर्षों में 1945 से 1995 के बीच प्रायः दो करोड़ लोग मारे जा चुके हैं। यह संख्या प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध में मारी गई विगत चार वर्षों में सर्बिया हर्जगोविना कोसोवो गृह युद्ध में सारे विस्थापित व्यकितयों के अतिरिकत हैं। महाशक्तियों की अर्थ वयवस्था हथियारों की विक्री पर प्रायः अस्सी प्रतिशत टिकी हुई है। इतनी भयावह जानकारी के बाद क्या यह माना जाये कि अब तीसरे विश्वयुद्ध की भूमिका बन रही है।"[98]

"प्रथम विश्व युद्ध (1914–18) से लेकर खाड़ी युद्ध (1990–91) तक के ग्यारह युद्धों में करीब तीन लाख अरब रूपये स्वाहा हो चुके हैं। इसमें दो विश्व युद्धों में खर्च राशि प्रायः दो लाख अरब रूपये है। इस बीच विश्व भर में हुये आंतरिक छिटपुट स्तर के झगडो आदि में करीब सात हजार अरब रूपयों की होली जल चुकी है। इस विशाल हानि को देखते हुये सोंचना चाहिये कि क्या वासतव में युद्ध जरूरी है? "[99]

कवि राजाराम शुक्ल ने निम्न पंकितयों में युद्ध में धन का प्रयोग होना और सामान्य जन की प्रमुख आवश्यकताओं को महत्व न देना चित्रित है– " नभ में उडे छुयेगें चन्दा,/धरती पर तो दुख का फन्दा।/एक–दूसरे को ग्रसने का,/फैला इन्द्रजाल सा धन्धा /निगल रहा सारा धन रॉकेट,/रुका हुआ पोषणा –संवर्धन/"[100]

शस्त्रीकरण की अनवरत प्रतिस्पर्धा आर्थिक बोझ को जन्म देती है। आज विश्व की महान शक्तियां मानव घाती अस्त्रों शस्त्रों के निर्माण में अरबों करोडो खर्च कर रही है, दूसरी तरफ भूख, बाढ़, गरीबी, अकान, सूखा, आदि से ग्रस्त आम आदमी की उपेक्षा कर रही हैं और अपने ही देश को कर्ज की राह में उन्मुख करने को विवश है। शत्रु विभिन्न साधनों द्वारा हमारे आर्थिक साधनों को नष्ट करता है, एवं सैनिक साज समान भी युद्ध में नष्ट होता है, शत्रु वायुयानों द्वारा हमारे आर्थिक उत्पादन के केन्द्रों पर बम्बारी करता है, रासायनिक द्रव छिड़ककर खड़ी फसलों को नष्ट कर देता है, इस तरह युद्ध में देश की अतुल समपत्ति का विनाश होता है।

शस्त्र एवं सैनिकों पर भारी व्यय–

युद्ध के प्रारम्भ होते ही सेनाओं की विशाल आवश्यकताएं आरम्भ हो जाती है क्योंकि युद्ध में भी हमारा साज–समान एवं शस्त्रास्त्र नष्ट होते है, इसके साथ ही सामान की पुनः देखरेख की आवश्यकता होती है।

युद्ध की सफलता मुख्यतः शस्त्रों के पर्याप्त होने एवं श्रेष्ठता पर निर्भर है, शस्त्ररस्त्रों के महत्व को प्रतिपादित करते हुये 'जनरल फुलर' ने कहा है– " यदि अच्छे प्रकार के शस्त्रों अथवा यन्त्रों की खोज की जाये तो इससे 99 प्रतिशत विजय प्राप्त हो सकती है–कूट योजना, आदेश, नेतृत्व, साहस, अनुशासन, पूर्ति संगठन तथा युद्ध के समस्त नैतिक तथा शारीरिक साधनों का श्रेष्ठ शस्त्रों की तुलना में कोई महत्व नहीं क्योंकि युद्ध की सफलता में 99 प्रतिशत शस्त्रों तथा 1 प्रतिशत इन सब साधनों का महत्व होता है। "[101]

राष्ट्र रक्षा हेतु जो शस्त्र एवं सेनिको पर भारी व्यय होता है, उससे आर्थिक स्थिति प्रभावित होती है जो राष्ट्र की उन्नति में बाधक है। कवि डा0 बलदेव प्रसाद मिश्र ऐसे रामराज्य की स्थापना पर बल देते है जिससे अर्थ नीति की जटिलता सामने न आये एवं स्थाई शान्ति भी प्राप्त हो सके–" नव यान्त्रिक आविस्कारों से नीति जटिला बल जाती/उसमें फंसकर बुद्धि, अथक श्रम करके भी है शान्ति न पाती।/जो अभ्युदय युद्ध बुलवावे जो वैभव उठ हमें गिरावे/रातराज्य में पनप न पावें ऐसे असत्–समृद्धि भुलावे/"[102]

विज्ञान की ऐसी प्रगति जो युद्ध का आमन्त्रण दे, वैभव की ऐसी ओर लेजाकर विनाशक स्थिति पैदा करें , उसे त्याग कर रामराज्य की स्थपना करें जो जन्–कल्याण के लिए असीम लाभ प्रद हो सकती है। श्री सोंमदत्त 'बन्दूक मनो विज्ञान' कविता में बन्दूक निर्माण प्रक्रिया एवं उसमें प्रयुक्त होने वाले अपकरणों की बात कहतेहैं क्या यह शस्त्र निर्माण एवं इनका उपयोग व्यय के कारक नहीं हैं– " धातु को/पकना चाहिये/धातुओं को घुलना चाहिये/धातुओं के मेल में/धधकतें रंगों की निर्मलता से/धातु को/धातुओं का मेल बनना चाहिये/मेटल/शून्य से कठा सो तक/तापमान अपनी मज्जा में/मंजोकर रहना चाहिये/दो/गोलों को बैरल से/हर ऋतु/हर आल्टी ट्यूटी में/दागने के लिए/जो रोइगं होनी चाहिये चुभाचुभ/बैरल की मक्खी/बैरल की फोर साइट/बेवसाइट की यू में। "[103]

2/ब

सांस्कृतिक चेतना–

संस्कृति का अर्थ है चिन्तन एवं कलात्मक सर्जन की वे क्रियायें जो मानव के व्यक्ति तथा जीवन हेतु साक्षत् उपयोगी हेते हुये भी समृद्व बनाने वाली है। सांस्कृतिक चतना पर दृष्टि पाव करते हुये डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल लिखते हैं–" संस्कृति मनुष्य के भूत वर्तमान और भावी जीवन का र्स्वागपूर्ण प्रकार है। हमारे जीवन का हमारी का ढंग हमारी संसकृति है। संस्कृति हवा में नहीं रहती उसका मूर्तिमान रूप होता है। जीवन में नाना विधि का रूपों का समुदाय संस्कृति हैं। "[104]

संस्कृति के सम्बन्ध में कवि रामधारी सिंह दिनकर लिखते हैं–" संस्कृति जिन्दगी का एक तरीका है और वह सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता हैं, जिसमें हम जन्म लेते हैं। इसलिए जिस समाज में हम पैदा हुये हैं अथवा जिस समाज में मिलकर हम जी रहे हैं उसकी संस्कृति हमारी है यद्यपि जीवन में हम जो संस्कार जमा करते हैं वह भी हमारी संस्कृति की विरासत भी अपनी संतानों के लिए छोड़ जाते हैं। इसलिए संस्कृति वह चीज मानी जाती है जो हमारे जीवन को व्यापे हुये है तथा जिसकी रचना और विकास में अनेक सदियों के अनुभवों का हाथ है। यही नहीं बल्कि संस्कृति हमारा पीछा जन्मान्तर तक करती है।"[105]

सांस्कृतिक मूल्यों से हमारा आशय उन मूल्यों से है जो संसकृति का निर्माण करते हैं। भारतीय संस्कृति त्याग, सेवा, प्रेम, करुणा, सहयेग एवं सत्यनिष्ठा पर आधारित हैं, नव युवकों का कोई भी संगठन इन मूलयों के अभाव में गतिशील नहीं हो सकता, आजादी के दिनों में क्रान्तिकारियों के लिए भी, चन्दा और आर्थिक सहयोग लिया जाना स्वाभाविक था। आजाद के जीवन में भी एक ऐसी घटना घटी थी कि वे सहयोग और चन्दे की राशि में मात्र दो सौ रूपया भी आर्थिक सहयता अपने परिवार को नहीं दे पाये जबकि परिवार की स्थिति अत्यन्त विपन्त थी तथा उनके भाई का निधन भी हो चुका था ऐसी परिस्थितियों में एकाकी माँ को कुछ आर्थिक सहाय़ता देने का मन हो उठना मनोवैज्ञानिक सत्य है किन्तु भावुकता के क्षणों में भी चन्द्रशेखर का चन्दे की राशि का राष्ट्रीय हितों के लिए लगाया जाना तथा उन्हें व्यक्तियत कार्यों में न लगाया उनकी सत्य निष्ठा और उच्च कोटि की ईमानदारी का परिचायक है। इसी घटना की ओर कविवर धर्मपाल अवस्थी ने क्रान्ति महामहारथी में इस प्रकार अभिव्यकित दी है–

" साथियों का था विचार दो सौ रूपये तुरन्त/भेजदिये जाएं उन्हें मद में मदद की/भाई बोले कद्र करता हूं मैं सहानुभूति/और प्रेम पूर्ण इस भावना विशद की/किन्तु पड़ जायेगी परम्परा गलत एक/नींवहिल जायेगी हमारे मकसद की/होगा बदनाम दल, नष्टहोगी छवि त्याग–/तप भी, सभी के देश प्रेम के विरद की/"[106]

भारतीय संस्कृति व्यष्टिवादी नहीं समष्टिवादी है, वह व्यक्ति पर नहीं समाज और राष्ट्र के निर्माण पर है, यहां तक कि यदि प्राणों के उत्सर्ग की भी आवश्यकता हो तो सैनिक मातृ भूमि की बलिबेदी पर अपने को न्यौछावर कर देना अधिक श्रेयकार समझते है, यहां तक कि मां की ममता को लांघर कर मातृभूमि के लिए समर्पण की भावना इसी उत्सर्ग वृत्ति का परिणाम है। यह उत्सर्ग वृत्तिही भारतीय संस्कृति का मूल्य बिन्दु रहा है, क्रान्तिमहारथी के रचनाकार ने इस ओर लक्ष्य करते हुये लिखा है– " एक गरिमा के नाम से है जगरानी। दोनों

जग रानियों का नेह टकराता है। एक ओर जन्म भू है एक ओर मां प्रसू है। श्रेय प्रेम का मिथोनिवेशीर माता है। किन्तु अपने पराये की परिधियों से मुक्त/प्रेम ही सुकवि गेम श्रेय बन जाता है/अस्तु व्यष्टि हित निरपेक्ष हो विवेक शील/व्यक्ति खुद को समष्टि हित में लगाता है।''[107]

दिनकर के काव्य में सांस्कृतिक व्यंजना मुखरित हुई है, इन्होंने पौराणिक आख्यानों और मिथकीय के माध्यम से अपनी जातीय विशेषताओं को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, इस दृष्टि से कुरूक्षेत्र एवं रश्मिरथी विशेष महत्व है, इन दोनों ही कृतियों के माध्यम से पुराने के द्वारा नई की व्याख्या की गई है। अतः पौराणिक आख्यानों के महापुरुष वर्तमान स्थिति के लिए प्रतीक एवं प्रेरणादायक बन गये हैं, राष्ट्रीयता की दृष्टि ये कृतियों शाश्वत है। युद्व प्रधान काव्यों में भारतीय संस्कृति और सभ्यता को विश्व में सर्वाश्रेष्ट बताया है और इन काव्यों के माध्यम से प्राचीन गौरव गाथा को पिंजित किया है, एवं सांस्कृतिक मूल्यों को स्वीकार किया गया है। निरालाकृत 'राम की शक्ति पूजा में' सत्य असत्य के बीच के संघर्ष को चित्रित किया गया है जिसमें भारतीय संस्कृतिमें सत्य मार्ग के अनुयायियों का ही विजित दिखाया गया है, कठिनाइयां चाहे कितनी भी ही हो, प्रस्तुत कविता में इस बात की पुष्टि की गई है कि राम–रावण का युद्ध दो व्यक्तियों का युद्ध नहीं बल्कि उन शक्तियों का संघर्ष है, जो विश्व जगत में क्रियाशील रहती हैं। राम शासत्रों में प्रतिष्ठित मां दुर्गा की आराधना रावण के विनाश हेतु करते है जिसके फलस्वरूप दुर्गा अवतरित होकर राम को विजय का वरदान देती हैं। निराला ने मां भगवती के द्वारा प्राप्त विजय का आशीर्वाद निमन पंक्तियों के माध्यम से चित्रित किया है– " देखाराम ने सामने श्री दुर्गा, भास्वर/वाम पद असुर स्कन्द पर रहा दक्षिण हरि पर/है दक्षिण में लक्ष्मी, सरसवती वाम भाग/दक्षिण गणेश , कार्तिक बायें रण–रंग राग/मस्तक पर शंकर''[108]

इसी प्रकार नरेश मेहता ने विश्व संस्कृति को प्रस्तुत किया है, क्योंकि भारतीय दर्शन में काल के महत्व को श्री स्वीकारा गया है वह सनातन है कवि समय देवता' में समय देवता को साक्ष्य बनाकर पृथ्वी पर होने वाली घटनाओं का चित्रण करता हैं वैदिक युग में मनुष्य पृथ्वी के किसी भी भाग पर विचरण करता जहां सुख और शान्ति सर्वत्र व्याप्त होती थी, आज इस यान्तिक युग से उब कर पुनः उसी प्राकृतिक युग में लौट जाना चाहता है कवि प्राचीन का गौरव मान करता है और पृथ्वी की इस विपरीत दशा को देखता है– " समय देवता/वही अजन्ता जिसकी पत्थर में अभी तलक भी,/एक आंख से भोग, एक से मुक्ति योग के सपने हंसतें/+ + + + किन्तु आज तो शस्त्र श्यामला इस धरती पर/फसल जब रही मनुष्य मर रहा।/''[109]

राजकमल चौधरी की मुक्ति प्रसंग और सौमित्र मोहन की लुकमान अनी सांस्कृतिक विघटन को स्तर देती हैं। लुकमान अली में सामंती व्यवस्था तथा बुर्जुवा समाज की शिष्टता, मर्यादा शीलता, गरिमा आदि को तोडने का प्रयास किया है, कवि ने शोषकों के विरूद, आम लोगों के बीच पैदाकिया है अर्थात लुकमान अली सभी प्राचीन मर्यादाओं को तोडने के लिए संकलित है। सौमित्र मोहन अपनी कविता में असंस्कृतिक चेतना दिखाई पड़ता है जबकि उसकी कथा आधार विदेशी है निम्न पंक्तियां इसी सांस्कृतिक चेतना को साकार करती है–" सहसा वीणा झनझना उठी। संगीतकार की आंखों में ठण्डी पिघलती ज्वाला सी झलक/गयी–/रोमांच एक बिजली सा सबके तन में दौड गया।/अवतरित हुआ संगीत/स्वयंभू/जिसके सोता है अखण्ड/का मौन/अशेष प्रभामय।/''[110]

उपर्युक्त पंक्तियों में ब्रम्हा को अशेष प्रभामय मौन गया है अतः संगीत को लक्ष्य रखकर अज्ञेय ने इसकी रचना की है। संस्कृतिक चेतना पर आधारित उपरोक्त विवेचन में युद्ध से समबन्धित काव्यों में सांस्कृतिक चेतना का मूल्यांकन करना सरल हो जाता है क्योंकि सेस्कृति का सम्बन्ध मानव के भौतिक आध्यात्मिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, साहित्यिक, कलात्मक एवं दार्शनिक आदि जीवन के विविध पहलुओं से है। इस प्रकार सेसकृति का संस्कारों से घनिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है। किसी भी संस्कृति से उस देश के रहन सहन, आचार विचार, रीति रिवाज, ज्ञान विज्ञान, परम्परागत अनुभव आदि का बोध होता है जो उपर्युक्त पंकितयों को माध्यम से स्पष्ट है।

मुक्तिबोध के काव्य में सांस्कृतिक मूल्य चेतना को स्वतन्त्रता के रूप में करके राजनीतिक चेजना का एक अंग माना गया है। कवि की ये मान्यता है कि सांस्कृतिक मूल्यों की रक्षा में राजनीतिक मूल्य सहायक सिद्ध होते हैं। मुक्तिबोध साहित्य और संस्कृति को राजनीति का क्षेत्र मानते हैं। यद्यपि राजनीतिक व्यवस्था पर व्युग्य करने से मुक्तिबोध नहीं चूकतें तब भी के अपने विचारों को व्यक्त करते हुये कहते हैं–" राजनीति साहित्य क्षेत्र भी/महाअसत्य सूकरों का है एक तमाशा/यद्यपि बोली जाती मुंह से/भारतीय संसकृति की भाषा है।" 111

संस्कृति की संरचना हेतु युद्ध–

संस्कृति की संरचना हेतु युद्ध, जहां कहीं भी होगा उसके साथ एवं सुरक्षा आवश्यक हो जाते है। यदि हमारे सम्मुख देश की रक्षा का प्रश्न आता है तो सबसे पहले वह आगे आते है जिनमें पौरुष एवं पराक्रम है ज्ञान विज्ञान की प्रगति के लिए वे लोग आगे आते हैं जो साधनों के क्षेत्र में निपुण रहे है कला कोशल के जानकार युद्ध संचालन के लिए आगे बढ़ते है अर्थव्यवस्था में वृद्धि करने वाले समाज को सम्पन्न बनाकर उसका भरण पोषण करने के दायित्व संभालते है। आधुनिक कवियों ने युद्ध काव्यों में इन तत्वों को आवश्यक और आदरणीय माना है क्योंकि कोई भी अंग अपने भरोसे पर पूर्ण नहीं हो सकता। विभिन्न देशों ने अपने वैज्ञानिक शास्त्र को तो समुन्नत किया किन्तु किन्तु संस्कृति जो किसी भी राष्ट्र एवं मनुष्य के उत्थान तथा पतन का कारण है उस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया संस्कृति के निर्माण में आधुनिक युद्ध परक काव्यों का विशेष का स्थान है।

'राम की शक्ति पूजा' में निराला ने राम को विश्व की भावना अर्थात पराक्रम से भरा दिखा भारतीय संस्कृति में नारी के प्रेरणादायक स्वरूप को अंकित किया है। पुरुष जब कभी निराला के वशीभूत हुआ है नारी ने उसे संकट से निकलने में अपनी भूमिका का सफल निर्वाह किया है। इस प्रकार राम के हृदय में सीता का स्मरण होते ही राम में अदम्य शक्ति का संचार हुआ, विश्व विजय की भावना एवं लंका युद्ध में विजय प्राप्ति का विश्वास जाग उठा– " सिहरा तन, क्षण भर भूखा मन, लहरा समस्त,/हर धनुभंग को पुनर्वार ज्यो उठा हस्त,/फूटी स्मिट सीता ध्यान लीन राम के अधर/फिर विश्व विजय भावना हृदय में आई भर/ " [137] राम के मन में बार बार रावण विजय का भय जागना और उन्हें प्रकाशित करना कि यदि रावण जैसे अत्याचारी की विजय हुई, तो इस संसार की कया दशा होगी, यहां पर राम समष्टि चिन्तन से ओत–पोत है राम को अपनी व्यक्तिगत पराजय की चिन्ता नहीं है, चिन्ता का कारण मात्र रावण जैसे अत्याचारी की विजय से लोक मंगल की भावना का आहत होना है, राम की इस की चिन्ता में समष्टि का हित सर्वोपरि हैं–" स्थिर राघवेंन्द्र को हिला रहा फिर फिर संशय/रह–रह उठता जग–जीवन में रावण जय–भय/जो नहीं हुआ आज तक हृदय रिषुदम्य–श्रन्त–/एक

भी आयुत लक्ष में रहा जो दुराचार/कल लड़ने को ही रहा विकल वह बार–बार,/असमर्थ मानता मन उघत हो हार–हार/"[138]

'संशय की एक रात' में स्वत्व एवं अधिकार की प्राप्ति के लिए युद्ध को अन्तिम उपाय के रूप में विभिषण ने अपने कथन द्वारा सिद्ध किया है, एवं युद्ध को ऐसी स्थिति में कर्त्तव्य माना है–" स्वत्व और व्यक्तित्व के ये प्रश्न/शंका और संशय/थोथे/या कि हास्यास्पद नहीं हैं?/स्वयं को छलना नहीं है राम ?/तभी तो मैने कहा था/युद्ध भी दर्शन है/अन्तिम मार्ग है/स्वत्व और अधिकार अर्जन का।/+ + + + अच्छा हो/इतने संशय परान्त/कोई भी काम किया जाये/चाहे/सम्प्रति वह युद्ध ही हो।/ वह काम ही होगा/संशय या तर्क नहीं /"[139]

सांस्कृतिक मूल्यों की संरक्षा–

सांस्कृतिक मूल्यों की संरक्षा अत्यन्त महत्व की है क्योंकि यही सांस्कृतिक मूल्य किसी भी राष्ट्र में प्राणों का संचार करते है। प्राकृतिक तत्वों पर विजय पाने की अभिलाषा तथा मानव अनुभूति जिस प्रकार की जीवन दृष्टि निर्मित करते है वह उसकी संस्कृति बन जाती है। सांस्कृतिक मूल्य निरन्तर गतिशील होते है फिर भी अपने असतित्व को प्रतीत सर्वत्र कराते रहते हैं। यह सांस्कृतिक मूल्यों की भावना राष्ट्र के साहित्य, दर्शन, कला, स्मृति , समाज–रचना, इतिहास एवं सभ्यता के माध्यम से व्यक्त होती रहती हे। युद्धमय वातावरण का इन नृत्वों पर प्रभाव पड़ता है तथा इनका स्वथाविक प्रवाह अवरूद होने लगता है,इन मूल्यों की संरक्षा के लिए प्रवाह की सम्पूर्ण बाधाएं दूर हो तथा अपने सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर सम्पूर्ण क्षेत्र विकास कर/राष्ट्र भक्ति की भावना के फलस्वरूप ही युद्ध का वातावरण उपस्थित हो जाता है जिसमें हमें संस्कृति के साकार के स्वरूप को देखते है, सांसकृतिक मूल्यों की संरक्षा यदि न हो किसी राष्ट्र की स्वतन्त्रता निरर्थक और भविष्य असुरक्षित हो जाता है। सत्य के सिद्धान्त को लेकर जब हम आगे बढ़ते हैं तो प्रत्येक राष्ट्र अपनी अपनी विशिष्ट पद्धतितयों को सत्य के रूप में स्थापित करने के लिए, दूसरे राष्ट्रों पर, अपनी पद्धतियां लादने का प्रयत्न करता है, यदि प्रक्रिया शान्तिपूर्ण ढंग से पूर्ण हो जाती है तो कोई बात नहीं,[3] यदि हम जोर जबरदस्ती करके अपने सिद्धान्तों का हमारे सामने होना आश्चर्य की बात नहीं है। दूसरे राष्ट्र की सुख और शान्ति को नष्ट करना उसके विकास में बाध ा उत्पन्न करना आदि करना, उसके विकास में बाधा उत्पन्न करना आदि ऐसे कार्य है जिसमें फलस्वरूप अगला राष्ट्र आक्रमणात्म कार्यवाही करके उसे परन्त्रता की जंजीरों में बांध देता है।

सृष्टि की सर्वोत्तम कृति मनुष्य ही है, इसलिए संसार में जो कुछ भी सुन्दर है उसी के विकास और आनन्द के लिए है, इस प्रकार मनुष्य ,द्वारा सम्पादित शुभ कार्य संस्कृति के अर्न्तगत आता है। आधुनिक साहित्यकार युद्ध को भी शुभ कर्म मानते है क्योंकि इसमें किसी एक राष्ट्र की स्वतन्त्रता, आत्म सम्मान पर कुठारघात, स्त्री अपमान एवं न्यायोचित अधिकार के लिए रहता है, इस पक्ष को ध्यान रखते हुये आधुनिक कवियों ने अनेकानेक युद्ध परक कृतियों में स्पष्ट उल्लेख किया है–" सांस्कृतिक मूल्य जो हमारी धरोहर है उनकी सुरक्षा पर ही हमारा असवित्त कायम रह सकता है।कामता प्रसाद गुरू की 'सहगमन' कविता में इसका मूल्यांकन किया जा सकता है–" छुटने पाया न कंकण व्याह का।/आ गया आदेश विक्रम शाह का।/शीघ्र ही जयसिंह जाओं युद्ध पर/देश हित के

लिए सर्वस त्याग कर/"[129]

भारतीय संस्कृति की उज्जतलम झलक निराला की 'राम की शक्ति पूजा' में देखने को मिलती है। यह संस्कृति आर्यों की इसकी स्थापना करने पर अनार्य संस्कृति से संघर्ष होना स्वभाविक है–" जीवन के दो पक्ष है सत् और असत्/इनमें से आर्य संस्कृति सत् पक्ष पर जोर देती है, राम और उनके पक्ष के पात्र जहां करुण, अहिंसा शान्ति, प्रेम, विपम्रता, और मर्यादा को जीवन के मूल्य समझते है, वहां रावण और उसके पक्ष के लोग क्रूरता, हिंसा, अशान्ति, वैर, अहं और स्वेचछाचारिता में विश्वास रखते हैं। मनुष्य का ही होता है। आर्योंसे इसी सेवा, संयम, सहिष्णुता और शिष्टता के गुण पाये जाते है।" [130]

कवि यह जानता है कि शक्ति ही विजय प्राप्त करती है चाहे वह न्याय पक्ष के पास हो या अन्यायियों के पास–" आया न समझ में यह दैवी विधान/रावण अधर्मतत भी अपना में हुआ अमर/यह रहा शक्ति का खेल समर शङ्कर–शंकर !।"[131]

अतः सांस्कृतिक मूल्य की संरक्षा हेतु आसुरी भावों का दमन आवश्यक हो गया जिसे हम निम्न पंक्तियों में देखते हैं–" लख महाभाव व मंगल पद तल धँस रहा गर्व/मानव के मन का असुर मन्द हो रहा खर्व/"[132]

'संशय की एक रात' में नरेश मेहता ने निम्न पंक्तियों के माध्यम से राम की सामाजिक दायित्व की भावना का संकेत दिया है– " क्या को/क्या न हो के प्रश्न ने/थका डाली मुटिठयां/किन्तु प्रतिबार/संशय/अनिश्य ही/हमें भटकता रहा।/"133

सीता उद्वार के तर्क–वितर्क में संशय ग्रस्त राम ने अपनी मुटिठयां थका दी है, वह अपने उपाय में सार्थक ता व्यर्थता तथा नैतिक अनैतिकता से ग्रसित दिखाई देते हैं/'माननीय सत्य' की खोज करने वाले राम युद्ध के प्रति गहरी विटृष्णा से भर जाते हैं अपने वीरोंचित उपादान महाकाल को सौंप देते हैं– " लो/समर्पित हैं तुम्हे/तुम्हारे अज्ञात जलों को/इस क्षण के द्वारा/वृष्टि भीगे उस महाकाल को/समर्पित है यह/धनुष,बाण, खड्ग और शिरस्त्रणं/"[134]

मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में' मनष्य के भीतरी मन की कविता है जो जीवन की सार्थकता से जुडी है यही कवि के काव्य का आधार है, निम्न पंक्तियों के माध्यम से कवि स्वर्थान्ध व्यक्तियों पर कटु व्यंग्य करता है–"लो हित पिता को घर से निकाल दिया/जनमन करुण सी मां को हॅकल दिया/स्वर्थों के टेरियार कुत्तों को पाल लिया, भावना के कर्त्तव्य त्याग दिये/हृदय के मन्तव्य मार डाले !/बुद्धि का भाल ही तोड़ दिया/तर्कों के हाथ उखाड़ दिये।"[135]

लोकहित से आपूर्त तुमने अपने पिता को घर से निकाल दिया और लोगों के प्रति करूणा भाव रूपी माता को बाहर निकालकर स्वार्थ के टेरियार कुत्तों को पाल लिया जिसमें मानव हृदय के भावों का पलायन हुआ और कर्त्तव्य भावना से विमुख हो गये।

कवि जमुना बख्श सिंह 'निर्भय' अपने सांस्कृतिक मूल्यों की महता को रखने के लिए युद्ध का आह्वान करते है–" सावधान हो जाओ सीमाओं पर वीर जवानों तुम,/बैरी को ओकात बताओ, भारत की सन्तानों तुम/तम्हीं शिव जी, राणा, बन्दा, बिस्मिल और भगत सिंह हो,/बोटी–बोटी घुसपैठी की काटोवीर जवानों तुम/यही तिरंगा

जग में फहरायें सर्वस्त लुटाना है।/''[136]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है राष्ट्र रक्षा के सन्दर्भ में सांस्कृतिक मूल्यों का जागरण आवश्यक है, इन मूल्यों के अभाव में न हम अतीत में उन्नति कर सकते थे और न ही भविष्य में कर सकते हैं। इन युद्ध प्रधान काव्यों में कवियों ने सांस्कृतिक मूल्यों की संरक्षा जैसे प्रश्न पर विचार किया है उसका निष्कर्ष यही है कि हम संस्कृति के व्यापक स्वरूप को लेकर अपने देश एवं जीवन को सुदृढ़ बना सकते है हम यदि हम ऐसा नहीं करते तो हमारी उन्नति का पथ अवरूद्व हो जायेगा इसी की अभिव्यक्ति युद्ध परक काव्यों में दिखाई पड़ती हैं।

ब/3

धर्म, कला, साहित्य की संरक्ष–

युद्ध परक, काव्यों में धर्म, कला एवं साहित्य की उपयोंगिता के सम्बन्ध में कवियों ने अपने उद्‌गार व्यक्त किये है– '' रश्मिरथी' में दिनकर ने धरती के समक्ष स्वर्ग तथा कर्ण के समक्ष सत्य को स्थापित किया है–'' आज तुला पर भी नीचे ही नहीं स्वर्ग है ऊपर। तथा हुई परीक्षा पूर्ण, सत्य ही, नर जीता सुरहारा।''121 बलदेव प्रसाद मिश्र ने धर्म की स्थापना करते हुये सन्यास के सम्बन्ध के में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं– '' आजन्म लोक सेवा करें अवैतनिक रूप से/जो व्रती हो सदाचारी वही सन्यास येग्य हैं। ''[122] ' अंधायुग' में संजय सर्जनात्मक प्रतिभा से युक्त दिखाया गया है अतः उसके ऊपर बहुत बड़ा दायित्य हैं सत्य के प्रति, वह अपने सत्य धर्म का पालन करने के लिए छटपटाता हुआ दिखता है कि अंधों के मध्य में कैसे अपने दायित्व को पूरा कर सत्य धर्म का बोझा करा सकूगां। निम्न पंक्तियों से शब्द भाव को कवि ने अपने शब्दों में व्यक्त किया है– '' संजय अवध्य है। कैसी यह शाप मुझे व्यास ने दिया है। अनजाने में/हर संकट, युद्ध, महानाश, पलय, विप्लव के बावजूद/शेष बचोगे तुम संजय/सत्य कहने को।/किन्तु कैसे कहूंगा हाय/सात्यकि के उठे हुये शस्त्र के/चमकदार ठंडे लोहे के स्पर्श में/मृत्यु को इतने निकट नाना/मेरें लिए यह/बिल्कुल ही नया अनुभव था/जैसे तेज वाण किसी/कोमल मृणाल को/ऊपर से नीचे तक चीर जाय।'' [123]

धृतराष्ट्र ने विदुर से निम्न पंक्तियों में अपने द्वारा अनुभव अर्थात व्यक्ति सत्य से बाहर के सत्य को पहचाना है, व्यापक सत्य ही स्वार्थ के सिवा कुछ और नहीं हो सकता। आज अपने संकीर्ण दृष्टि सम्पूर्ण जगत में फैल गई है, मेरा निजत्व समाप्त होकर व्यापकता में मिल रहा है, व्यष्टि वादी चिन्तन समष्टिवाद में मिलगया है इस परम सत्य की अभ्यिक्ति हम निम्न पंक्तियों में देखते है–'' आज मुझे भान हुआ/मेरी वैयक्तिक सीमाओं के बाहर भी/सत्य हुआ करता है/आज मुझे भाम हुआ/सहसा यह उगा कोई बांध टूटा गया है/कोटि–कोटि योजना तक दहाड़ता हुआ समुद्र/मेरे वैयक्ति अनुमानित सीमित जग को/लहरों की विषय जिहवाओं से निगलाता हुआ/मेरे अर्न्तमन् में पैठ गया। सब कुछ बह गया। मेरें अपने वैयक्तिक मूल्या/मेरी निश्चिन्त किन्तु ज्ञानहीन आस्थाएं।''[124]

अज्ञेय में असाध्य वीणा' में संगीत को ब्रम्हा का अशेष प्रभागम मौन माना है इस कला के माध्यम से संगीतकार में अभूत पूर्व रोमांच स्थिति दिखाई देती है जिसे निम्न पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त करता है–'' सहसा वीणा झनझना उठी/संगीतकार की आंखों में ठण्डी पिघलती ज्वाला सी झलक गयी–/रोमांच एक बिजली सा

सबके तन में दौड़ गया/अवतरित हुआ संगीत/स्वयंभू/जिसमें सोता हैअखण्ड/ब्रम्हा का मौन/अशेष प्रभामय।/''[125]

'अंधेरे में कविता में मुक्तिबोध साहित्यक गतिविधियों पर नजर रखते है उन्होंने जन –आनदोलन की उपेक्षा करने वाले समाचार पत्रों जो अंन्धेरें के द्वीपक होते के रूप में विख्यात किन्तु पूंजीपतियों के गुलाम हो कर रहे गये उन पत्रों की निन्दा करते है जिसे निम्न पंकितयों में उद्‌घाअित किया '' भव्यकार है– भवनों के विवरों में छिप गये/समाचार मत्रों के पतियों के मुख स्थल/गढ़ जाते संवाद/गढ़ी जाती समीक्षा। गढ़ी जाती टिप्पाणी जन–मन–उर–शूर/''[126]

गोलिया चलने पर समाचार पत्रों के मालिक अपने भव्य मकानों में घुस जाते हैं ये केवल ऐसे समाचार प्रकाशित करते है जिससे साधारण जन पीडित हो क्योंकि यह पूंजी पतियों के पक्षधर हो जाते है अपने कर्मसे विमुख रहते है । पोददार राम अवधार 'अरुण'ये 'महाभारती' महाकाव्य में शास्त्रों से अधिक विपतिकाल में शस्त्रों की बताई है है।अनर्यो के आक्रमण की बात सुनकर वशिष्ठि जैसे तपस्वी भी युद्ध का समर्थन करते है कि विपद काल में शस्त्र को शास्त्र से ऊपर प्रतिष्ठा प्रदान की है।'संशय की एक रात में' कवि नरेश मेहता द्वारा राम की युद्ध में अनासक्ति का कारण पूंछते हुये धर्म, कला और साहित्य की संरक्षा हेतु युद्ध को एक माध्यम माना है– कीर्ति, प्रतिष्ठा, स्त्री, धरती विजय तथा सम्पति में सभी दूसरों की कृपा से कभी प्राप्त नहीं हो सकते, न ही ये भीख मांगने से प्राप्त हो सकते इन्हें अपने पौरुष के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। छाया राम को प्रेरित एवं उत्साहित करते हुये कहती है कि संशय से ग्रस्त मेरे पुत्र परिस्थितियां गाये हैं जिनको कठोर अंगुलियों से दुहना चाहिए, तभी अभीष्ट की सिद्धि हो सकती है, परिस्थितियों से मुंह फेर लेना कायरता है परिस्थितियों से पराजित होकर नहीं, बल्कि दृढ़तापूर्वक साहस के साथ उन पर विजय प्राप्त कर अपने उद्‌देश्य को सिद्ध करें तभी यश एवं प्रतिष्ठा सच्चे अर्थों में प्राप्त होगी, कवि के शब्दों में ''क्यों? किसलिए यह आ सकती है। कर्म के प्रति का पुरुषता नहीं है यह? कीर्ति, यश, नारी धरा जय, लक्ष्मी ये नहीं है कृपा या अनुदान मेरे पुत्र भिक्षा से नहीं वर्चस्त से अर्जित हुए ये आज तक ओ विकल्पित पुत्र मेरे परिस्थितियां धेनु हैं, दुहो इनको निष्ठुर अंगुलियों से दुहो इनको।''[127]

निम्नलिखित पंक्तियों में मेहता जी ने यह स्पष्ट किया है कि धर्म, कला और साहित्य की संरक्षा युद्ध के बिना सम्भव नहीं है। यदि युद्ध का सहारा लिए बिना यज्ञों का सफल संपादन हो जाता, आश्रम धर्म का पालन, देवताओं की उपासना एवं मनुष्यों के बीच पनपे विद्वेष को एकता से जोड़ दिया जाता तो यह युद्ध की अनिवार्यता ध्वनित न होती राम के भीतर उत्पन्न संकट को निम्न पंक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है कवि के शब्दों में– ''ये यज्ञ, ये आश्रम देवोपासना मानव एकता यदि बिना युद्धों के नहीं है सत्य लक्ष्मण तब एक गहरा प्रश्न संकट प्रत्येक प्रज्ञित के लिए।''[128]

स मनोवैज्ञानिक मूल्य चेतना

यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि प्रत्येक मनुष्य में एक दूसरे पर शासन करने की इच्छा प्रबल होती है जिसके परिणाम स्वरूप युद्ध भय वातावरण जन्म लेता है, किन्तु यह शासन की प्रवृत्ति आवश्यकता पड़ने पर आत्मसमर्पण

करने की इच्छा में भी परिवर्तित होती दिखाई पड़ती है। बदला लेने की भावना अर्थात प्रतिशोध भी युद्ध का कारण बनते हैं इसका उदाहरण हम द्वितीय विश्व युद्ध में अमेरिका के सन्दर्भ में देख सकते हैं वह इसलिए युद्ध में शामिल हुआ था क्योंकि वह पर्लहार्बर पर जापान द्वारा किए गए आक्रमण का बदला लेना चाहता था उसने इसे द्वितीय विश्व युद्ध में जापान पर दो बार अणु बम प्रयोग करके पूरा किया। भूमि, धन आदि के संग्रह की प्रवृत्ति मनोवैज्ञानिक सत्य है क्योंकि इन्हें जुटाकर प्रत्येक राष्ट्र एवं व्यक्ति अपने आपको अधिक समृद्धवान एवं सुरक्षित महसूस करता है, द्वितीय विश्व युद्ध में इटली और जर्मनी की भूमि लिप्सा ने युद्ध को जन्म दे उस पर सक्रिय भूमिका निभाई थी। प्रत्येक मनुष्य में साहसपूर्ण एवं उत्तेनात्मक कार्यों को सम्पादित करने की रुचि होना स्वाभाविक ही है, अपनी इस इच्छा की पूर्ति के लिए मनुष्य को युद्ध मय वातावरण सर्वाधिक प्रभावित करता है। अतः इस रुचि को पूर्ण करने का अवसर मिलता है, अनेकानेक मनोवैज्ञानिकों ने इस मत को प्रस्तुत किया है कि युद्ध के कारण मनुष्य के स्वभाव में सन्निहित होते हैं। अन्य विद्वान भी इस मत से सहमत हैं कि मनुष्य के स्वभाव में युद्ध की प्रवृत्तियां सन्निहित रहती हैं, यह मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति के साथ घृणा के फलस्वरूप भी उपजता है जिसे राजनीतिज्ञ मनोवैज्ञानिक चेतना को आधार बनाकर अपने उद्देश्य में सफल हो जाता है।

युद्ध प्रधान काव्यों में मनोवैज्ञानिक तथ्यों के उद्घाटन की दृष्टि प्रमुख होने के कारण कहीं–कहीं कुछ मानसिक वृत्तियों को मानवीकृत करने की भी आवश्यकता पड़ती है। डॉ. गुलाब चन्द्र राय ने मनोविज्ञान और काव्य के सम्बन्ध की विवेचना प्रस्तुत करते हुए लिखा है– ''जीवन की मूल प्रेरणाएं ही साहित्य की मूल प्रेरक शक्तियां हैं जो वृत्तियां जीवन की ओर सब क्रियाओं की मूलस्रोत हैं, वे ही साहित्य को भी जन्म देती है। जीवन की मूलय प्रेरणाओं के सम्बन्ध में विचार उपनिषद काल से चला आरहा है। वृंददाख्य उपनिषद में पुत्रेषणा वितैषणा और ताकैषणा अर्थात पुत्रों की चाह, धन की चाह और लोक (यश) की चाह मानी गई है। यूरोप का मनोविश्लेषण शास्त्र (साई कोलाजी) का भी उदय इन्हीं प्रेरणाओं के अध्ययन के लिए हुआ है।''[112]

युद्ध प्रधान काव्य कृतियों में मानव मनोभावों और मनोवेगों की समष्टि अभिव्यक्ति मिलती है। युद्ध प्रसंगों की दृष्टि से भी कविता की स्थिति भावात्मक होती है, सुख और दुःख, जय–पराजय, शोक–उत्साह आदि परिस्थितियां आती जाती रहती हैं इनमें से कुछ सुखात्मक होती हैं तो कुछ दुखात्मक। निराला कृत 'राम की शक्ति पूजा' में निम्न पंक्तियों में राम के हताश हृदय में शक्ति संचार हो उठता है इस मनोदशा का मनोवैज्ञानिक वर्णन दृष्टव्य है–

''सिहरा तन, क्षण भर भूला मन, लहरा समस्त, हर धनुर्भंग को पुनर्वार ज्यों उठा हस्त, फूटी स्मित–सीता–ध्यान–लीन राम के अधर, फिर विश्व विजय भावना हृदय में आई।''[113]

सीता का मधुर स्मरण होते ही राम के निस्पन्द शरीर में स्पन्दन होने लगता है और क्षण भर के लिए वे आत्म विभोर हो विषाद मय वातावरण से मुक्त हो जाते हैं, मन में एक ही लहर उठी जिससे उनका मन अनन्य उत्साह से भर गया, ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो पुनः शिव का धनुर्भंग करने के लिए राम का सहसा हाथ उठ गया हो। सीता के ध्यान में लीन राम के ओष्ठों पर मुस्कान दिखाई दी और उनका हृदय विश्व विजय की भावना से भर गया।

निम्न पंक्तियों में कवि निराला ने 'राम की शक्ति' पूजा कविता में ध्यानमग्न बैठे राम के दर्शनों से उत्पन्न महावीर हनुमान की मनोदशा का चित्रण इस प्रकार किया है– ''युग चरणों पर आ पड़े अस्तु वे अश्रु युगल, देखा कपि ने, चमके नभ में ज्यों तारा–दल। ये नहीं चरण राम के, बने श्यामा के शुभ। सोहते मध्य में हीरक–युग या दी कौस्तुभ, टूटा यह तार ध्यान का, स्थिर मन हुआ विकल। संदिग्ध भाव की उठी दृष्टि, देखा अविकल बैठे वे वहीं कमल–लोचन पर सजल नयन।''[114]

राम के दिव्य चरणों पर हनुमान ने गिरते हुये दो अश्रु–बिन्दु ओं को इस प्रकार देखा जैसे दो तारे हैं, ये दोनों चरण राम के नहीं हैं स्वयं महाशक्ति कालिका के ही मंगलमय चरण हैं। ऐसे में हनुमान की ध्यानमग्न दशा भंग हो जाती है और उनका शान्त चित्त अशन्त हो जाता है और उनका हृदय शंकाकुल हो उठता है।

राम शक्ति को अन्याय का पक्ष गृहण करते हुये जबकि उसे राम के पक्ष में अर्थात् सत्य और न्याय पक्ष की ओर होना चाहिये 'राम की शक्ति पूजा' की निम्न पंक्तियों में अनेकानेक पात्रों की सजीव, मनोस्थिति का चित्रण कवि करता है7– जिसे निम्न पंक्तियों के माध्यम से उद्घाटित किया गया, एक गायक कण्ठ, चमका है– लख्मण तेज, प्रचण्ड/धंस गया धरा में कपि गह–युग पद मसक दड/सिथर जाम्बवान–हुआ उर में ज्यों विषम घाव/निश्चित–सा करते हुये विभिषण कार्यक्रम/मौन में रहा यों स्पन्दित वातावरण विषम / ''[115]

नरेश मेहता ने 'संशय की एक राम में, यह मनोवैज्ञानिक चिन्तन राम के चरित्र के माध्यम से उद्घाटित किया है कि राम अपनी व्यक्तिगत मान प्रतिष्ठ की चिन्ता से भी आतुर दिखे है, कि सीता हरण के सम्बन्ध में क्या प्रतिक्रियायें उनके सगे सम्बन्धियों के भीतर जागी होगी, यह सोच कर वह अवसन्न से दिखाई देते हैं– '' क्या सोचते होगें जनक जी?/बन्धु–बान्धुव और/पुरवासी सभी क्या कह रहें होगें?/इतना ही नहीं,/स्वयं सीता/सोचती होगी/क्या??/ ''

'संशय की एक रात में कवि राम को सर्ग को अन्तिम सर्ग में दुबिधा ग्रसत चेतना से युक्त दिखाया है, यह दुबिधा ग्रस्त मानव मनोदशा है, इसका चित्रण सहानुभूति पूर्ण एवं विश्वासनीय भावना का घोतक है युद्ध का संकल्प लेते हुये भी वह उसे अपना निर्णय नहीं बना सके कवि के शब्दों में – '' प्रतिश्रुत यह हे,। निर्माण हूं सबके लिए/केवल अपने ही लिए/संभवतः नहीं/''[116]

राम के निराश ग्रस्त मनोभावो को देखकर लक्ष्मण का राम की ऐसी मन स्थिति निकालने का प्रयत्न निम्न पंक्तियों में प्रष्टव्य है जो मनोवैज्ञानिक चेतना का साकार रूप प्रस्तुत करता है जिसे कवि ने निम्न पंक्तियों में अभिव्यक्त किया है– '' क्षमाकर मेरे इस भाव करें/बन्धु अग्रज हैं/परिजन और पुरजन प्रियजन है/साथ ही प्रजा के/मनोनीत राजन है/ऋषियों के प्रिय और/हम सब के/नैनों के उत्सव हैं/''[117]

सत्य का अनुकरण 'किन्तु अपने परिजनों को छोड़कर न्याय पक्ष का साथ देना ऐसा निर्णय था जिसमें विभीषण को प्रतिष्ठा के बारे में सोचना मनोंविज्ञान के अर्न्तगत आता है जो विभीषण के निम्न कथन से स्पष्ट होता है, कवि के शब्दों में '' जब हमारे तर्क तक मर जाएगें/तब/हमें क्या कहकर पुकारा जाएगा ? कि/राष्ट्र संकट के समय/मैं आक्रमण के साथ था/राज्य पाने के लिये ?/''[118]

'अंधेरे में, कविता में गजानन माधव मुक्ति बोध कवि अपनी विचित्र मनोदशा का वर्णन निम्न पंक्तियों के

माध्यम से करता है– " समझ न पाया कि चल रहा स्वप्न या जाग्रति शुरू है/दिया जल रहा है,/पीतावोत प्रसार में काल चल रहा है/आस–पास फैली हुई जग आकृतियां/लगती हैं छपी हुई जड़ चित्रकृतियों सी/अलग व दूर –दूर/निर्जीव !!/यह सिविल लाइन्स है। मैं अपने कमरें में /यहां पड़ा हुआ हूं।/आंखे खुली हुई है,/मैं अपने कमरे में/यहां पडा हुआ हूं/आंखे खुली हुई है,/पीटे गये बालक सा मार खाया चेहरे/उदास इकहरा,/स्लेट –पट्टी पर खीची गयी तस्वीर/भूत जैसी आकृति–/क्या वट मैं हूं ?/" [119]

कवि यह नहीं समझ पाता कि वह जाग्रत अवस्था में हैं अथवा स्वप्न देख रहा है, रहा दीपक जल रहा है और पीले प्रकाश के साथ समय चलता अर्थात व्यतीत होता सा लग रहा है, वह अपनी आकृति को लेकर दुधि ा ग्रस्त है।

' पटकथा' के कवि धूमल अपनी मध्यवर्गीय मनोगति पर विचार करते हुये निम्न पंक्तियों में लिखते है– " मुझमें भी आग है/मगर वह भभककर बाहर नहीं आती/क्योंकि उसके चारों तरफ चक्कर/काटता हुआ/एक 'पूंजीपति' दिमाग है/ जो परिवर्तन वो चाहता है/ मगर आहिस्ता/कुछ इस तरह की चीजों की शालीनता/बनी रहे/कुछ इस तरह कि कांरव भी ढकी रहे/और विरोध में उठे हुये हाथ की/मुट्ठी भी तनी रहे–––––––/ " [120]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने परिवर्तन एवं क्रान्ति सम्बन्धी दुहरी और अर्त विरोध पूर्ण मध्यवर्गीय मानसिकता पर प्रहार किया है। वह सर्वत्र परिवर्तन की चाह रखता है किन्तु अपनी सुविधाओं और सुरक्षा को दर–किनार करके नहीं/छोटी–छोटी सुविधाओं का लालच उसे कभी भी अन्यायी एवं आततायी शक्तियों के विरुद्ध कोई निध ार्यक फैसला नहीं करने देता, इस तरह स्थितियां जैसे थी वैसी ही जाती हैं।

सुरक्षा की भावना–

युद्ध अपने आप में निंदनीय है परन्तु जब सुरक्षा की भावना इसमें निहित हो उस समय इसकी चुनौती को स्वीकार करना चाहिये/अपनी सुरक्षा हेतु भी शक्ति की हम अपेक्षा करते हैं क्योंकि बिना शक्ति के सिद्धान्तों का कोई असतित्व नहीं होता/यदि युद्ध प्रेम से नहीं टल सकता तो हमें अपनी सुरक्षा हेतु शक्ति का सहारा लेना पड़ता है। कवि दिनकर कहते है कि–शक्ति प्रिय देशों का आग्रह आक्रमणकारी देशों को रोकने में अयफल है, इसलिये अन्य देशों से अपनी सुरक्षा को अनाये रखने के लिए हिंसा का मार्ग अपनाना पड़ता हैं– " कवि के शब्दों में हैं दुखी मेंष, क्यों लडू शेर चखते हैं/नाहक इतने क्यों दांत तेज रखते हैं/दशन तोड़ क्यों लेगें ?/मेषों के हित व्याघ्रता छोड़ क्यों देगें ?/एक ही पन्थ, तुम भी आघात हनोरे !/मेषत्व छोड़ मेषों ! तुम व्याघ्र बनों रे! /" [140]

अपने देश की सुरक्षा हेतु कवि दामोंदर स्वरूप 'विद्रोही' 'गोली के बदले गोली की' अब भाषा समझानी होगी' पाकिस्तान के सम्बन्ध में कहता है कि घ्रणा और द्वेष के व्यापारी है ऐसे में अपने देश की अस्मिता कहां सुरक्षित रह सकती है जिसके पड़ोसी व्यभिचारी हो इस भावना को कवि निम्न पंक्तियों में अभिव्यक्त करता है– " सब मिलकर अब हल्ला बोलों, ऊँचे स्वर में ललकार भरों / कोहाट, कराची, चकलाला, रावलापिण्डी पर वारकारों ।/तब भागेगे कश्मीर छोड़, अपना घर द्वार बचाने को / ये भाडे के कुत्ते नोचेगें, मास उन्हीं का खाने

को।।/ ऐसी भगदड मच जायेगी फिर जिसका अन्त नहीं होगा/अफगान इरानी–सडानी का अपना पंथ नहीं होगा।/ डर–डर सियार से भागेंगें, छिपने को झाड़ खादानों में/जिन्दा न मिललेगें दीख गये, यदि धोखे से मैदान में।। / " [141]

निम्नलिखित पंक्तियों में कवि डा0 रामकुमार शर्मा की सुरक्षा की भावना पर केन्द्रित, पंक्तियां दृष्टव्य हैं– " पूरा देश शपथ लेता है गंगाजली उठाकर,/जीती जो भी भुमि युद्ध में तुमने खून बहाकर,/समझौते की भूतों को इस बार न दोहरायेंगें/हो कुछ भी पर, एक इंच भी भूमि न लौटाएगें/" [142]

अस्तित्व की रक्षा–

संसार में प्रत्येक प्राणी इस बात का सतत प्रयास करता है कि उसका आस्तित्व बना रहा, और वह जीवित रहे /अपने आस्तित्व को बनाये रखने के लिए एक राष्ट्र दूसरे को अस्तित्व हीन करने वाली प्रक्रिया चलाता है तथा स्वयं को अस्तित्व हीन शक्तियों से, निरन्तर अपनी रक्षा करता है। प्राचीनकाल से आज तक का इतिहास अस्तित्व का ही परिणाम है/आधुनिक कवियों ने अपनी सचनाओं में अस्तित्व बोध को अभिव्यक्त किया है। रामधारी सिंह दिनकर की ' जौहर' कविता में जीवन के अस्तित्व को देश से जोड़कर दखते हैं युद्ध में सब कुछ समाप्त हो जाता है मानव मूल्य विद्याप्ति हो जाते हैं लेकिन ऐसा सोचने वाले कभी युद्ध नहीं कट सकते, युद्ध सिर्फ अस्त्र –शसत्रों से ही नहीं होते उसके लिए वीरता आवश्यक गुण है। महायुद्धों की पृष्ठभूमि देखे तो यही पता चलेगा कि युद्धों में तलवारों का सहयोग कम साहस एवं युद्ध के प्रति दृढ निश्चय ही कार्य करता है, सुद्ध भावना से युक्त योद्धा सभी दृष्टियों से अपने देश के अस्तित्व को बनाने को बनायें रखना ही आवश्यक समझता है– " विजयी अगर स्वदेश, /प्रिय –प्रियतम का फिर नाता है/विजयी अगर स्वदेश/पुरुष फिर पुत्र, त्रिया माता है/ किन्तु पता का झुकी अगर बलिदान की,/गरदान ऊँची रही न हिन्दुसतान की,/पुरुष पीठ पर लिए घाव रोते रहे,/आंसू से अपना कलंक धोते रहें। " 143

किसी भी देश के अस्तित्व की रक्षा उसके उदान्त आदर्शों और उस पर न्याछावर हो जाने वाले पुरुषों द्वारा होती है कवि के शब्दों में– " भारत एक स्वप्न भू को ऊपर ले जाने वाला/भारत एक विचार स्वर्ग को भू पर लाने वाला/भारत एक भाव जिसको पाकर मनुष्य जगाता है/भारत जलज जिस पर जल का न दागा लगता है/भारत है संज्ञा विराग की उज्जवल आत्मा उदय की/भारत है आत्मा मनुष्य की सबसे बड़ी विजय की /" 144

स्वतन्त्रता की महत्वाकांक्षा–

यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति एवं राष्ट्र अपनी की रक्षा हेतु युद्ध को अपनाये हैं। भारत के स्वतन्त्रता संग्राम को हम इस दृष्टि से देख सकते है– " दूसरे महायुद्ध के बाद हमारे लिए यह स्वाधीनता आकस्मिक रही है, देश की जनता को इस बात का विश्वास नहीं था, इसके अतिरिक्त देश विभाजन की स्थिति से सम्बद्व रक्तपात, उत्पीड़न, अत्याचार अमानुषिक व्यवहार में हमारी सारी संवेदनाओं को कुंठित और जड़ित कर दिया था। ऐसी स्थिति में हम अपनी स्वाधीनता का स्वागत मुक्त मन से नहीं कर सके, और न हम उस सहज उल्लास का ही अनुभव कर सके जो सम्भव था/ " [145]

भयंकर विनाशलीला एवं रक्तपात के बाद भारत को स्वतन्त्रता मिली यह स्वतन्त्रता हमारे देश के लिए बड़ी ही गौरव पूर्ण उपलब्धि थी जिसके गौरव की अनुभूति एवं आनन्द, काव्य जगत में दिखाई पड़ता है– " आज से आजाद रहने का तुझे है मिल अधिकार,/किन्तु उसके साथ जिम्मेदारीयों का शीश पर है भार/ " 146

नेमिचन्द्र जैन की 'उन्मुक्त ' कविता में स्वतन्त्रता की अनुपम महिमा को चित्रित किया है– "भर गयी मुक्ति मन में कुछ वह मस्ती अमोल/उद्दम वेग से उड़ा चला मानों अशान्त/हो नभ की सीमा ही छू लेने को नितान्त /उड़ जाएगा मानों अग–जग के आर–पार/उसके अन्तर में आया है वह रक्त–ज्वार।/है आज न उसके प्राणों को कोई विराम /"[147]

स्वतन्त्रता की महत्व कांक्षा इतनी उत्साह कारी होती है कि नये युग को लाने के के लिये संकल्पों के प्रति आकांक्षा दृढ़ हो जाती है। किसी भी राष्ट्र के लिए पराधीनता अभिशाप है, धर्मवीर भारती की पराधीनता से स्वतन्त्रता की रक्षा हेतु निम्न पंक्तियां उनकी स्वतन्त्रता महत्वकांक्षा को व्यक्त करती है– " कवि के शब्दों में लौट बन्धन तोड़कर/बेड़ियां झंझोड़कर/नवीन राष्ट्र की नवीन कल्पना सवांरता/स्वतन्त्रता/स्वतन्त्र क्रान्ति ज्वाल में निड़र बनों सुकेशिनी/विनाश की नगन्ता ठंको सुतेशिनी/विनाश से डरो नहीं/विकास से डरो नहीं/सृष्टि के लिए बनो प्रथम विनाश स्वामिनी/ " [148]

भारतवर्ष का स्वाधीनता संग्राम स्वतन्त्रता की महत्वकांक्षा पर आधारित है यदि देशवासियों के अन्दर स्वतन्त्रता प्राप्त करने की ललक न होती तो हम आज भी परतन्त्र होते, स्वातन्त्रता प्राप्ति का निश्चय अब अपनी हार मानने को तैयार नहीं था, कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने केन्द्रीयकारागार बरेली में सन् 1943 में निम्न पंक्तियों की रचना की जो विदेशी शासको को ललकार दे रही थी– " शतियों से नदियां इस भू की गरज रही हैं क्रोध भरी/शतियों से सागर की लहरें, गरज रहीं प्रतिशोध भरी/यह वृद्धा पृथ्वी माता भी गरज रही हैं गोद भरीं/बस तुम ही भूल हो अपनी विकट गर्जना प्रलयकार/छोडों निद्रा लो अंगड़ाई आज श्रंखलाएं तोड़ो/मुक्ति की दौड़ होड़ में तो दौड़/समता के नारे की गति से अपनी रथ–गति तुम जोड़ो!/ तोडो इस शोषण की दाढे अब सम्मुख है विकट समर/सुनों–सुनाओं सोने वालो जाग्रति के ये भीषण स्वर !/ " [149]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1— कुरूक्षेत्र—रामधारी सिंह दिनकर—निवेदन से—चतुर्थ संस्करण—राजपाल एण्ड संस दिल्ली
2— संशय की एक रात—नरेश मेहता—शीर्षबन्ध से—प्रथम संस्करण 1999—लोक भारतीय प्रकाशन इलाहाबाद
3— अंधायुग—डा0 धर्मवीर भारती—निवेदन से—द्वितीय संस्करण—किताब महल इलाहाबाद
4— पूर्वोक्त—प्रस्तुति से
5— काव्य परम्परा और नई कविता की भूमिका—डॉ. श्रीमती कमलकुमार पृ. 105—संस्करण 1988
6— संशय की एक रात—श्री नरेश मेहता—पृष्ठ 86—87—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
7— समकालीन कविता के बारे में—संपा. नरेन्द्र मोहन, पृ. 82
8— पूर्वोक्त—पृ. 83
9— पूर्वोक्त—पृ. 83
10— पूर्वोक्त—पृ. 87
11— मानव मूल्य और साहित्य—धर्मवीर भारती पृ. 24
12— तुलसी की सामाजिक चेतना—रमेश कुन्तल मेघ—आलोचना—पृष्ठ 21—जनवरी—मार्च 1976
13— आज का हिन्दी साहित्य संवेदना और दृष्टि—डॉ. रामदरश मिश्र—पृष्ठ 11—संस्करण 1975
14— गीतम—वीरेन्द्र मिश्र—पृ. 84
15— उर्मिला—बाल कृष्ण शर्मा 'नवीन'—पृ. 149
16— नये प्रतिनिधि कवि—हरिचरण शर्मा—पृ. 132 संस्करण 1984—पंचशील प्रकाशन जयपुर
17— कितनी नावों में कितनी बार—अज्ञेय पृष्ठ 41
18— धूप के धान—गिरजा कुमार माथुर—पृष्ठ 35
19— चाँद का मुंह टेढ़ा है—मुक्तिबोध—पृ. 284
20— साप्ताहिक हिन्दुस्तान— (क्या राष्ट्रीय कविता का युग समाप्त हो चुका है—माखन लाल चतुर्वेदी)—पृ. ।।—13 अगस्त 1961
21— हंस—रागेय राघव—पृष्ठ 411— संस्करण मार्च 1947
22— विश्वास बढ़ता ही गया—शिवमंगल सिंह सुमन पृ0 43—संस्करण 1994—आत्माराम एण्ड संस दिल्ली
23— उदय पथ—श्रीशील—पृ0 8
24— नील कुसुम—रामधारी सिंह दिनकर—पृ0 99
25— नीति—सम्पादक—सुरेन्द्र बधवा—पृ0 32—अक्टूबर 1999
26— महाप्रस्थान—नरेश मेहता—पृ0 107
27— उदयपथ—श्रीशील—पृ0 34
28— युगचारण दिनकर—सावित्री सिन्हा—संस्करण 1963—पृ. 46—47—संस्करण 1963
29— संसद से सड़क तक से उद्धृत—'पटकथा'—धूमिल—पृ. 105—संस्करण 1990—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
30— लुकमान अली तथा अन्य कविताएं —सौमित्र मोहन—पृ. 16
31— विकल्प से उद्धृत—कारगिल के आरपार—डॉ. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित ललित—पृ. 77
32— नयी कविता में राष्ट्रीय चेतना—डॉ. देवराज पथिक—पृ. 33
33— माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में राष्ट्रीयता—सुरेन्द्र यादव—पृ. 5
34— मुक्तिबोधरचनावली—मुक्तिबोध—पृ. 60
35— हुंकार—रामधारी सिंह दिनकर—पृ. 22
36— चक्रवाल—रामधारी सिंह 'दिनकर'—पृ. 8
37— बेला—सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'—पृ. 78
38— आधुनिक हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियां—डॉ. ओमप्रकाश शर्मा—पृ0 134—संस्करण 1989—वोहरा प्रकाशन जयपुर
39— सी.डी. बर्नस—पालीटिकल आडियाज—पृष्ठ 198
40— चार्ल्स होज एस.—द बैक ग्राउण्ड आफ इण्टर्नल रिलेशन्स—पृष्ठ 422
41— जे.ए. हॉबसन—इम्पेरिलिज्म ए स्टडी (लन्दन 1948)—पृष्ठ 7
42— अन्तर्राष्टीय राजनीति—डॉ. डी.सी. चतुर्वेदी—पृ. 212
43— आधुनिक हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियां—डॉ. ओमप्रकाश शर्मा—पृष्ठ 133—प्रथम संस्करण 1989
44— पूर्वोक्त—पृष्ठ 149
45— पिघलते पत्थर—रागेय राघव—पृ. 113—114
46— विश्वास बढ़ता ही गया—शिवमंगल सिंह 'सुमन'—पृ. 52
47— तार सप्तक—'पूंजीवादी समाज के प्रति'—पृष्ठ 61—संपा. अज्ञेय
48— पूर्वोक्त पृष्ठ 61
49— चांद का मुंह टेढा है—मुक्तिबोध पृष्ठ 27
50— रामराज्य—डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र—पृ. 90—संस्करण 1985—गीता प्रकाशन हैदराबाद
51— क्रान्तिकारी सुभाष—विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद'—पृ. 61—संस्करण 1995—साहित्य प्रकाशन दिल्ली
52— अभिशप्त शिला—डॉ. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित 'ललित'—पृष्ठ 49—विश्लेष सर्ग
53— पूर्वोक्त—पृष्ठ 49
54— रोड टू डीटेन्टी सायनॉप्टिक व्यूव—एम.एस. राजन, एम.एस. आगवानी—संस्करण 1975
55— पूर्वोक्त
56— इण्डिया एण्ड द कोल्ड वार—के.पी.एस. मेनन—पृष्ठ 2
57— देहान्त से हटकर—शीतयुद्ध—कैलाश बाजपेयी—पृष्ठ 15
58— रश्मिरथी—रामधारी सिंह दिनकर—पृ. 112

59– दिनकर का रचना संसार–डॉ. छोटे लाल दीक्षित–पृ. 43–प्रथम संस्करण 1976
60– कुरुक्षेत्र–रामधारी सिंह 'दिनकर–पृष्ठ 55–56–बीसवां संस्करण 1971–राजपाल एण्ड संस दिल्ली
61– नयीकाव्य प्रतिभाएं–संपा. ऊषा गुप्ता–पृ. 74 (विश्व प्रगति शीर्षक कविता–गुदड़ी के लाल)
62– पूर्वोक्त–पृष्ठ 145 (जंग क्यों आज करें परिवर्तन–राजाराम शुक्ल)
63– क्रान्तिदूत सुभाष–विनोद चन्द्र पाण्डेय–पृ. 105–प्रकाशन 1995–साहित्य प्रकाशन दिल्ली
64– पूर्वोक्त–पृ. 106
65– नित्य नूतन–संपा. निर्मला देश पाण्डेय–पृ. 20–(हमारा दायित्व–निर्मला देश पाण्डेय)–15 अगस्त 2000
66– ओ अप्रस्तुत मन–भारत भूषण अग्रवाल–पृ. 95
67– अंधा युग–धर्मवीर भारती–पृ. 45–संस्करण 1992 किताब महल इलाहाबाद
68– पूर्वोक्त–पृष्ठ 27
69– नित्य नूतन–संपा. निर्मला देश पाण्डेय–पृष्ठ 2–15 जून 2000
70– राष्ट्र धर्म–संपा. आनन्द मिश्र 'अभय'–पृ. 53–जनवरी 2000
71– पूर्वोक्त–74
72– पूर्वोक्त–पृष्ठ 13–मार्च 2000
73– अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति–डॉ. डी.सी. चतुर्वेदी–पृ. 458 (द्वितीय संस्करण 1976–77)
74– इण्टर नेशनल रिलेसन्स–श्वीचर–पृ. 304–305–संस्करण 1962
75– अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति–बी.एल. फड़िया–पृ. 193–संस्करण 1991
76– अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध–सुरेशचन्द्र पन्त–पृ. 255–संस्करण 1983
77– पूर्वोक्त–पृ. 255
78– गजानन माधव मुक्तिबोध सृजन मुक्तिबोध सृजन और शिल्प–डॉ. रणजीत सिंह–पृ. 58
79– श्री श्याम लाल शुक्ल–(शीर्षक–क्षेत्रीय संगठन)–साक्षात्कार द्वारा प्राप्त–सम्पर्क–70डी श्यामनगर कानपुर
80– कारगिल की हुंकार–डॉ. सुनील जोगी, राजेश जैन 'चेतन' (शीर्षक–पाक को युद्ध अपराधी घोषित करना होगा कवि–मोहन लाल रत्नम)–पृष्ठ 96–संस्करण 1999–सत्साहित्य भण्डार नई दिल्ली
81– मेरा देश बुलाता होगा–शान्ति स्वरूप 'कुसुम'–(शीर्षक–अंगारों को लगा उगलने)–पृष्ठ 28–संस्करण 2001
82– मुक्तिप्रसंग–राजकमल चौधरी–पृष्ठ 23–संस्करण 1988
83– पूर्वोक्त–पृष्ठ 16
84– शस्त्र परिचय– मेजर श्याम लाल–पृष्ठ 33–तृतीय संस्करण
81– उन्मुक्त–सियाराम शरण लाल गुप्त–पृ. 26
82– देहान्त से हटकर–कैलाश बाजपेयी–पृ. 13
83– तालाब में डूबी छः लड़किया–हथियार चुप थे–विष्णु नागर–पृ. 34–संस्करण 1980
84– कल्पान्तर–यन्त्र दैत्य–गिरिजाकुमार माथुर–पृ. 71–संस्करण 1983
85– काव्य परम्परा और नई कविता की भूमिका–कमल कुमार–पृ. 113–संस्करण 1988
86– कुरुक्षेत्र–रामधारी सिंह 'दिनकर'–पृ. 1
87– पूर्वोक्त– पृष्ठ 2
88– पूर्वोक्त–पृ. 3
89– परशुराम की प्रतीक्षा–रामधारी सिंह दिनकर–पृ0.12 (जुलाई 1999) (द्वितीय खण्ड) पुनर्मुद्रण– लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
90– नयी काव्य प्रतिभाएं–संपा. ऊषा गुप्ता–पृ. 145 (जग क्यों आज करें परिवर्तन–राजाराम शुक्ल)–ग्रन्थ अकादमी दिल्ली
91– प्रतिज्ञा पुरुष–रामदास गुप्ता 'विकल'–पृ. 117–सप्तम सर्ग 'विवेक' ?
92– बोले रक्त शहीद का–बलबीर सिंह करुण–पृ. 49 संस्करण 1985
93– पूर्वोक्त–पृ. 72–(क्या जीतेगा कोई बाजी)–संस्करण 1985
94– आर्म्स अप्रेजल–प्रो. पाल्स–पृष्ठ 60
95– क्लाइड एग्लेशन, एनालिसिस ऑफ द प्रॉब्लम ऑफ वार–पृष्ठ 5
96– राष्ट्रीय सुरक्षा एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध–डॉ. रामबाबू पाण्डेय, डॉ. रामसूरत पाण्डेय–पृष्ठ 92–द्वितीय संस्करण 1988
97– वाल्टर लिपमैन, यूएसफॉरेन पॉलिसी सील्ड ऑफ रिपब्लिक–पृष्ठ 51 ?
98– फ्रैंक टार्जन एण्ड फ्रैंक एल. सीमोनी, नेशनल सिक्योरिटी एण्ड अमेरिकन सोसाइटी थ्योरी, प्रोसेस एण्ड पॉलिसी–पृष्ठ 36
99– परशुराम की प्रतीक्षा–रामधारी सिंह 'दिनकर'–पृष्ठ 25–संस्करण 1999–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
100– पहरुए सावधान रहना–गिरजा कुमार माथुर (निहारिका से उद्धृत)
101– मुक्ति बोध रचनावली–मुक्तिबोध–पृष्ठ 153
102– संशय की एक रात–श्री नरेश मेहता–पृ. 31–32–संस्करण 1999
103– कवि श्री राम की शक्ति पूजा–सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला–पृ. 28
104– एक कंठ विषपायी–दुष्यन्त कुमार पृ. 14–15, संस्करण 1997
105– अंधायुग–धर्मवीर भारती पृ. 10 (स्थापना) संस्करण 1992
106– काव्य परम्परा और नई कविता की भूमिका–डॉ. श्रीमती कमलकुमार पृ. 59 संस्करण 1988
107– क्रान्तिमहारथी–धर्मपाल अवस्थी पृ. सं0 55 सर्ग 'महन्त'
108– संशय की एक रात–नरेश मेहता–पृष्ठ 14–संस्करण 1999
109– पूर्वोक्त–पृष्ठ 60
110– अखण्ड ज्योति मासिक–संपा. डॉ. प्रणव पाण्डया पृ. 52 अगस्त 1999 (विशिष्ट सामयिक लेख–यह समय सारे राष्ट्र की अग्नि परीक्षा का है)
111– पूर्वोक्त–पृष्ठ 51
112– नयी काव्य प्रतिभाएं–संपा. ऊषा गुप्ता (राजाराम शुक्ला–जग क्यों आज करे परिवर्तन)–पृ. 145

113— युद्ध कौशलात्मक भूगोल, यौद्दिक अर्थशास्त्र, सैन्य मनोविज्ञान, नागरिक सुरक्षा और भारतीय सैन्य कानून का सरल अध्ययन—डॉ. बी.के. टण्डन एवं चौ0 नरेन्द्र सिंह पृ. 142 (तृतीय संस्करण—1971—72)
114— रामराज्य—डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र (द्वादश सर्ग) पृ. 119
115— किस्से अरबों हैं—बन्दूक मनोविज्ञान—श्री सोमदत्त पृ. 90 द्वितीय संस्करण 1980
116— कला और संस्कृति—डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल—पृ. 1
117— संस्कृति के चार अध्याय—रामधारी सिंह दिनकर पृ. 653
118— क्रान्ति महारथी डा0 धर्मपाल अवस्थी पृ. 97 सर्ग (मातृ मिलन)
119— पूर्वोक्त—पृष्ठ 113
120— राम की शक्ति पूजा—सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—पृ. 55 (अपरा)
121— समय देवता—दूसरा सप्तक—नरेश मेहता पृ. 125
122— असाध्यवीणा—अज्ञेय—पृ. 53
123— मुक्तिबोध रचनावली—मुक्तिबोध—पृ. 195
124— सिद्धान्त और अध्ययन—डॉ. गुलाब राय—पृ. 174
125— राम की शक्ति पूजा—निराला—कविश्री से उद्धृत—पृ. 24
126— पूर्वोक्त—पृष्ठ 24
127— पूर्वोक्त—पृष्ठ 24
128— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृ. 93—संस्करण 1999
129— पूर्वोक्त—पृ. 11
130— पूर्वोक्त—पृष्ठ 75—76
131— अंधेरे में—गजानन माधव मुक्तिबोध—पृ. 53
132— संसद से सड़क तक—पटकथा—धूमिल—पृ. 115—116—संस्करण 1999
133— रश्मिरथी—रामधारी दिनकर—पृ. 61—62—चतुर्थ सर्ग
134— रामराज्य—बलदेव प्रसाद मिश्र—पृ. 131
135— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृ. 26—संस्करण 1992
136— पूर्वोक्त—पृष्ठ 17—18
137— असाध्यवीणा—अज्ञेय—पृ. 74—75
138— अंधेरे में—चांद का मुंह टेढ़ा है—मुक्ति बोध—पृ. 42
139— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृ. 46—संस्करण 1999
140— पूर्वोक्त—पृष्ठ 23—24
141— आधुनिक हिन्दी काव्य—डॉ. भागीरण मिश्र, डॉ. बलभद्र तिवारी पृ. 154—संस्करण 1973
142— आधुनिक महाकाव्य—विश्वम्भर 'मानव'—पृष्ठ 50—संस्करण 1975
143— राम की शक्ति पूजा—अपरा—निराला—(कवि श्री पृ0 27—28)
144— पूर्वोक्त—पृष्ठ 29
145— संशय की एक रात—नरेश मेहता पृ. 4 प्रथम संस्करण 1999
146— पूर्वोक्त—पृष्ठ 32
147— चांद का मुंह टेढ़ा है—अंधेरे में—मुक्तिबोध—पृ. 48
148— राष्ट्रधर्म—संपा. आनन्द मिश्र 'अभय'—पृ. 29— संस्करण मार्च 2000
149— राम की शक्ति पूजा—अपरा—पृ. 13—निराला
150— पूर्वोक्त—पृष्ठ 27
151— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृ. 78—79—संस्करण 1999
152— परशुराम की प्रतीक्षा—रामधारी सिंह दिनकर—पृ. 29—संस्करण 1999 जुलाई
153— राष्ट्रधर्म—संपा. आनन्द मिश्र 'अभय'—पृ. 40—संस्करण मार्च 2000
154— पूर्वोक्त—पृष्ठ 74—संस्करण जनवरी 2000
155— परशुराम की प्रतीक्षा—'जौहर' दिनकर—पृ. 48—संस्करण 1999
156— नीलकुसुम—रामधारी सिंह दिनकर—पृ. 120
157— साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य—डॉ. रघुवंश—पृ. 134
158— धार के इधर—उधर—हरिवंश राय बच्चन—पृ. 40
159— तार सप्ताह—संपा. अज्ञेय वक्तव्य बेमिचन्द जैन—पृ. 71
160— दूसरा सप्ताह—सम्पादक अज्ञेय—पृ. 171
161— राष्ट्रीय कविताएं—सम्पादक नरेश चन्द्र चतुर्वेदी, डॉ. उपेन्द्र (भूमिका से)

तृतीय परिवर्त्त

आधुनिक युग में युद्ध प्रधान काव्यों का समालोचनात्मक परिचय

तृतीय–परिवर्त्त

आधुनिक युग में युद्ध प्रधान काव्यों का संक्षिप्त समालोचनातम परिचय–

(अ) आधुनिक युग में युद्ध की समस्या– ''युद्ध, हिंसा क्रूरता का विरोध शान्ति की पक्षधरता आशावादी कल्पना या उदारवारी कल्पना नहीं हैं बल्कि आज की एक ठोस वास्तविकता एवं अनिवार्यता है– आज स्थिति वहाँ पहुंच गयी है, जहाँ आदमी का ही नहीं जीवन धारी ग्रह लोक के रूप में पृथ्वी का भी अस्तित्व खतरे में है, बीसवी सदी का अन्त हो रहा है। आदमी अन्तरिक्ष युग में पहुंच चुका है। अनन्त शून्य की अयाध कालिभा में घूमते ग्रह–नक्षत्रों के बीच वह अपनी पृथ्वी के सुन्दर नीलों के गोलक को पूरा देख चुका है। अन्तरिक्ष की परिधि में भारतीय तैरते हुये जो ममता और आत्मीयता पृथ्वी के लिये उसके मन में जमती है, वैसी ललक पृथ्वी पर रहते हुये उसे क्यों नहीं होती ? यह जानते हुये भी कि सौरभ मण्डल में ही नहीं अपितु अनेक मण्डलों के बीच सिर्फ पृथ्वी ही एक मात्र जीवन धारी ग्रहलोक है, आदमी भी विशेष रूप से वे जिनके हाथ में सत्ता साधन और शक्ति सत्ता है।आपसी घ्रणा और लिप्सा के द्वारा अन्धे होकर पृथ्वी से जीवन क्रम को ही समाप्त करने में क्यों लगे हुये है।''

'' क्या परिस्थिति है आज, क्या जागतिक समस्या हैं जिसमें हम मिल रहे है? भय के बादल मानव–क्षितिज पर मंडरा रहे है। संहार किसी क्षण हो सकता है। ऐसा एक अनिश्चितता का वातावरण है विश्व भर में।''राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह युद्ध की समास्या पर जो वक्तव्य दिये है निम्न लिखित है–'' युद्ध की, विशेष कर आणुविक युद्ध की, अब कल्पना भी नहीं की जा सकती। उससे मानवता का सर्वनाश हो जायेगा। इससे जो नसीहत हम ले सकते हैं, वह साफ है। ईसान को युद्ध और शान्ति को देखने के नजारिये में पूरी तरह तवदीली करनी चाहिये और ऐसे रास्ते निकालने चाहिये जिससे राष्ट्रों के हित में संगठित हिंसा को समाप्त किया जा सके।''

युद्ध के मूल कारण बदल गये हैं यह कारण आर्थिक राजनीतिक, एवं मनोवैज्ञानिक है किन्तु आधुनिक युद्ध को अनिवार्य मानने वाले लोग, राष्ट्रीय सम्भान देश भक्ति की प्रतिष्ठा लोकतन्त्र की रक्षा, न्याय की स्थापना, के साथ ही सुरक्षा को अपना विषय बनाते हैं।युद्ध की वास्तविक्ता जो पुराण काल में थी नहीं आज भी है बल्कि भन्त्युग के आणु इसकी विभिन्नता और बढ़ गई है। भय का वातावरण,स्वार्थन्धता, तथा अविश्वास, जब अपनी चरम सीमा पर पहुंच जाता है तब दो विरोधी शक्तियों के बीच युद्ध की शुरूआत होती है। युद्ध मानव विकास के साथ ही शरू हुआ, उससे सत्रस्त्र मानव उसे घ्रणित कार्य भी मानता है, किन्तु आज तक को युद्ध से छुटकारा नहीं मिल सका, प्रत्येक युद्ध, कोई न कोई भयानक स्थिति तक पहुंचा कर रहता है, 'सत्य' और अहिंसा तो दूर–दूर तक दिखाई नहीं देते इसके पश्चात शान्ति की स्थापना एक बड़ी समस्या के रूप में हमारे सामने आती है। आज हम युद्ध की समस्या से ग्रस्त है अनेक हमलों के बाद जैसे संसद पर हमला और भारत सरकार का वनतब्य कि आर–पार की लड़ाई होगी, धैर्य का बांध टूट चुका है यह प्रधानमंत्री जी का वन्तब्य है इसके फलस्वरूप सीमायीं पर सेना तैनात करना किन्तु युद्ध का न होना इसके पीछे कौन से कारण है क्या पाकिस्तान द्वारा परमाणु युद्ध की धमकी या अमेरिका और पश्चिमी राष्ट्रों द्वारा भारत की युद्ध न करने की सलाह देना भारत पाकिस्तान के बीच युद्धमय वातावरण होने के बाद भी युद्ध की अशंका को टाला जा रहा है इसके पीछे प्रमुख

कारण है—

(1) परमाणु युद्ध हुआ तो दोनों ही देश बहुत बर्बाद हो सकते हैं।

(2) अमेरिका और पश्चिमी राष्ट्र जो पाकिस्तान को प्रश्रय दे रहे हैं जिनका संयुक्त राष्ट्रसंघ में पर्चश्व है अपनी शान्ति सेनायें भेजकर भारत के ऊपर दबाव डाल सकती है।

(3) मुस्लिम राष्ट्र अरब, ईराक, आदि परोक्ष रूप से पाकिस्तान को समर्थन देने की नियत से भारत को गैस व प्रट्रोल आदि की आपूर्ति बन्द कर सकते हैं जिनका बहुत बड़ा असर पड़ेगा। आज वैज्ञानिक युग में विनाश के इतने साधन उपलब्ध करा दिये है कि यदि युद्ध छिडता है तो द्वितीय विश्वयुद्ध का रूप इसके सामने कुछ भी नहीं होगा।

आधुनिक में चौहरफा युद्ध का संकट बरकरार है यह विध्वंसकारी घटना इतिहास बने यह मानव जाति का सौभाग्य है किन्तु इस अशंका को नकारा नहीं जा सकता क्योकि किसी भी पल यह युद्ध रूपी चिंगारी एक हवा के झोंके से सम्पूर्ण विश्व को समाप्त करने की क्षमता से युक्त है। अमानुषिक, शक्तिशाली एवं स्वाधीन विज्ञान ने स्वाधीनता की पराकाष्ठा में जी रहीं मानव जाति के हाथ में अनेक अस्त्र और बम थमा दिये गये हैं, जो मानव जाति के लिए एक विषम समस्या है।आधुनिक युद्ध असीमित, नैतिकता विहीन, घोषणाहीन, अर्थ प्रधान होते है, आज युद्धों का एक वैभित्यकारी पहलू यह भी है कि युद्ध के समाप्त हो जाने पर थी बम बरषायें जाते है, सन्धि ा और समझौते भी विफल हो जाते हैं, अधर्म के द्वारा आक्रमण कार्यवाही करके विजय प्राप्त की योजना फलीभूत होती हैं, और बम वर्षा करके किसी नगर पर वृशस्ता का परिचय दिया जाता है तो कभी अस्पतालों में बम गिराकर रोगियों के कराहते दम तोडते दृश्य समान्य है, यहीं कि कोई भी पक्ष अपने अविवेक को लगाना नहीं चाहिये अतः युद्ध की बिड़म्बना पूर्ण स्थिति से आज तक छुटकारा नहीं मिल सका।

आज परमाणु शस्त्रओं का अधिक विकास हो चुका है।हिरोशिया एवं नागासाकी के समय से कई हजार गुना भयंकर सर्वनाशक हाइड्रोजन बम तैनात है। असावधानी से युद्धोंग्न हो जायेगें तो राष्ट्र की सुरक्षा की नात का विनाश तथा मानव जाति के विनाश करने वाली वन जायेगी देश बरबाद हो भी जाये, होने दीजिये, पर मानव जाति का सर्वनाश असहाय है। इस विघटन पर खड़ा होकर मानव जाति के मस्तित्व को ध्यान में रखकर अयुध ा निमंत्रण, इससे भी बढ़कर सैनिक शक्ति से भी परकिसी तत्व की खोज करनी हेगी। सैनिक व्यवस्था से श्रेयकार एक मात्र मन ही भरोसा रखना है।नर—हत्या नहीं होनी चाहिये इस दृढ़—निष्ठा से सच्ची अस्था से, मनुष्य अपनायेगें तो युद्ध क्यों होगा। आधुनिक युद्ध में बृध्द, स्त्री, पुरुष, बच्चे सभी की विना किसी भेद—भाव के हत्या होती है। यह घटना हिंसक पशुओं के मध्य तो हो सकती है पर मानव लोक में तो सम्भव नहीं होनी चाहिये। मानव समाज में बलवान का जीवन पार निर्बल, यह सर्वथा धर्म विरूद्ध है। अहिंसा परमों धर्म—प्राण हत्या सर्वथा निबन्ध है। कारण कुछ भी हो, मानव को मार डालना कदापि उचित तर्क संगत नहीं हो सकता। कारण पंछने पर बाद में कुछ भी लगा सकते है। अहिंसा धर्मअर्थात जीव हत्या नहीं करना चाहिये, यह धर्म आदि मानव के हृदय में स्थान बना लें, तो शान्ति युक्त संसार की स्थापना सम्भव हो सकती है।इस धर्म का पालन करते जायें तो युद्ध कभी सम्पन्न नहीं हो सकता। मानव जीवन के लिये अनुकूल यही मार्ग है किन्तु अस्त्रशस्त्रों के उपयोग

के लिये युद्ध एक शुभ लक्षण माना जा रहा है ऐसे चिंतन को लेकर यदि हम चलेगें तो युद्ध का समाप्त होना सम्भव ही नहीं है।

आधुनिक युग में व्याप्त युद्ध की समस्या को कवि धर्मवीर भारतीय ने अंधायुग के माध्यम से व्यक्त किया हैं कवि के शब्दों में– " यह रक्त पात कब समाप्त होना है
यह आज युद्ध है नहीं किसी को भी जय।"

(4) कवि ने आगे वर्तमान युग में आर्युद्धों की समस्या को चित्रित किया है कि यह रक्षा के काम आये या न आये किन्तु हत्या के काम अवश्य आयेगें। यदि शत्रुओं के लिए नहीं तो अपने ऊपर ही सही भयंकर समस्या दो प्रहारियों के वार्तालाप के साध्यम के माध्यम से प्रस्तुत की गई है।

कवि के शब्दों में–

"युद्ध हो या शान्ति हो,
रक्तपात होता है।
अस्त्र रहेगें तो,
उपयोग में आयेगें ही।
दूसरों के लिये उठते थे,
अब वे अपने ही विरूद काम आयेंगे,
यह जो हमारे अस्त्र अब तक निरर्थक थे,
'कम से कम उनका,
आज कुछ तो उपयोग हुआ।''५

आधुनिक युग में युद्ध की अप्रिवार्यता को सिद्ध किया जा रहा है अतः इसका समाधान कैसे हो! संवाय की एक रात में लक्ष्मण एवं हनुमान युद्ध शंख से युद्ध का समर्थन करते दिखाई दिये हैं तथा सुग्रीव भी इनके विचारों से सहमत हैं तथा अन्यपात्र भी युद्ध के प्रति सहमत है, संशय राम में हैं वह शान्ति स्थापित करना चाहते हैं, युद्ध और शान्ति दोनों अलग-अलग बातें हैं। हनुमान को सम्बोधित करते हुये राम कहते हैं कि युद्ध की अनिवार्यता के मैं जानता हूं। यह एक युद्ध आगे चलके कर्ण युद्ध में परिवर्तिम हो जाये यह मैं नहीं चहता कवि के शब्दों में-तब

अनेकों लंका
अनेकों रावणों जन्म हो
सम्भव है
हमारे लौटने के बाद ही
आक्रमण कारी
नयी सैनिक,उपनिवेशी योजनाएं लें
इसी सेतु बन्धु से लौटें!

फिर संघर्ष

फिर संहार

इसऐतिहासिक विषमता का

-कौन सा प्रतिकार?

इस चक्र का कोई नहीं अन्त

हनुमत वीर!

फिर कोई नहीं है अन्त।''६

अधिकार प्राप्ति हेतु विभीषण ने युद्ध को अन्तिम मार्ग माना है, 'क्योंकि रावण के अपमान के सामने उसे झुकना पड़ा और आपसे ही राष्ट्र के विरूद युद्ध अभियान छेड़ता है कवि के शब्दों-

''युद्ध

मन्त्रण नहीं

एक दर्शन है राम!

अनितम मार्ग हैं

स्वत्व और और अधिकार अर्जन।''७

'एक कंठ विषपायी, में दुष्यंत कुमार ने इन्द्र के कथन द्वारा युद्ध की अनिवार्य को प्रस्तुत किया है, निम्न पंक्तियों में भगवान शिवशंकर द्वारा देव लोक में की गई आक्रमणात्मक कार्यवाही से निपटने के लिये सेना पति इन्द भगवान ब्रम्हा से युद्ध के लिये अनुमति लेने जाते हैं कवि के शब्दों में-

''हां।युद्ध के सिवा

अब कोई भी विकल्प अवशेष नहीं हैं।

महादेव शिवशंकर अपनी पूर्व नियोजित,

डाकनियों, शाब्रिनियों, प्रेतों और गणों की

सेना लेकर,

देवलोक की सीमाओं पर चढ़ आये हैं।

प्रभु !

महादेव शंकर का पूजन अब यह स्थल में ही हेगा। ''८

यदि हम भगवान ब्रम्हा की तरह अपने चिन्तन को विकसित करें तो आधुनिक युग में युद्ध की समस्या से छुटकारा मिल सकता है, किन्तु आज मानव इन्द्र, वरूण, कुवेर, जैसे पात्रों से युद्ध की आवश्यकता को सिंह कटतें है, अतः समस्या अपने उसी रूप में हैं ब्रम्हा का हम युद्ध विरोधी स्वर निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं कवि के शब्दों में-

''देवराज!

युद्ध-----
अधिक से अधिक विशिष्टि परिस्थियों में समाधान का सम्पन्न कारण बन सकता है,
यही नियम है,
-लेकिन कोई शासक मन में,
स्वयं युद्ध को,
किसी समस्या का किंचित थी
समाधान समझे तो श्रम है।''६

सेनापति इन्द्र कहते है जहां न्याय की हत्या हो और अन्याय सफल हो, शक्ति अंहकार में और हो और सत्य विकल रहे, शौर्य विवश होकर शीष झुकाले, असुर प्रबल रहे, और भरण पोषण करने वाले निर्बल, ऐसी स्थिति में धैर्य का दुर्ग स्वतः ही रहने लगता है, और एक मात्र उपाय युद्ध ही रह जाता है। इन्द्र के आवेश का प्रति क्रिया में वरुण कुवेर तथा शेष भी युद्ध की अनिवार्यता को एक मत होकर ध्वनित करते हैं, तथा बाहर खड़ी भीड़ भी स्वर से निकलती है। कवि के शब्दों में-

'' युद्ध करेगें,
अब एक मात्र उपाय युद्ध है,
नहीं डरेगें,
अब एक मात्र उपाय युद्ध है। ''१०

''अंधेरे में कविता बोध' युग परिवर्तन को आता हुआ दिखते है अर्थात शोषित वर्ग के दिलों में अपने अधिकार प्राप्ति हेतु, दृढ़ ईच्छा उठी है, अधिकारों का दमन एवं उसकी प्राप्ति हेतु संघर्ष, यही आज के युद्ध की समस्या हैं कवि के शब्दों में-

'' किसी एक बलवान तम-श्याम लुहार ने बनाया
डण्डों का वर्तल ज्वलंत मंडल।
स्वर्णिम कमलों की पंखुरी-जैसी ही
ज्वाला उठती है उससे,
और उस गोल-गोल ज्वलंत रेखा में
लोहे का चक्का
चिनगारियां स्वर्णिम् नीली व लाल
फूलों-सी खिलती, कुछ बलवान जन सांवले मुख के
चढ़ा रहे लकड़ी क चक्के पर जवरन
लाल-लाल लोहे की गोल-गोल पट्टी। धैर्य
घनमार घन भार
उसी प्रकार अब

आत्मा के चक्के पर चढ़ाया जा रहा
शकल्प-शक्ति के लोहे का मजबूत
ज्वलते समर !!
अब येग बदला है वाकई,
कठी आग लगाई, कहीं' गोली चल गई। ''११

''पटकथा' के माध्यम धूमिल ने चुनाव प्रक्रिया में समस्त जन के लिये आवश्यक एवं नैतिकतापूर्ण आचरण की प्रतिष्ठा है किन्तु आपस में राजनीतिक दलों की उठा-पटक को कवि ने चित्रित किया है-

'' मैंने देखा हर तरफ
रंगबिरंगें झंडे फहरा रहे हैं
गिरगिट की तरह रंग बदलते हुये
गुट पे गुट टकरा रहे हैं
वे एक दूसरे से दांता किलकिला कर रहें हैं
एक दूसरे को दुर-दुर-बिलकर रहे हैं
हर तरफ तरह तरहके जन्तु है।''१२

'मुक्ति प्रसंग को पुरुष को जन्म देना, पालन करना, पोषण करना, युवा करना, और उसी युवक द्वारा नारी की हत्या करना, घर, समाज, परिवार, देश, विदेश, की रचना और अपने ही द्वारा रचे गये स्वर्ग को नर्क का रूप प्रदान करने के लिये अपने स्वार्थ सिद्ध की चाहत में नाना प्रकार की समस्यें को मुक्ति प्रदान करने के लिये युद्ध करना। तब मनुष्य अपनी इच्छाओं का विस्तार करता है तब ईच्छाओं की पूर्ति के लिए उसे संघर्ष-युद्ध की ओर बढ़ने के अलावा कोई रास्ता नहीं रह जाता। युद्ध चाहे परिवार की समस्याओं से हो, चाहे देश के अन्दर पनप रही विकृतियों की समस्या का या फिर अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं की समस्या हो वैसे तो यह मानव जीवन ही है जो मजबूत चलता रहेगा।

युद्ध-युद्ध-युद्ध !

जागा मेरा देश काव्य संसद में कवि युद्ध समाप्त नहीं शीर्षक कविता में आज के युग में युद्ध को पूरी तरह कोई समाप्त नहीं करना चाहता युद्ध विराम को भी वे खोज के साथ व्यक्त करते है कि यह अभी समाप्त नहीं हैं-

''युद्ध विराम हुआ है साथी, युद्ध समाप्त नहीं
बादल अब भी घिरे हैं केवल वर्षा बन्द है।
विगुल समर के ही बजते है, केवल स्वर कुछ मन्द है।
दुश्मन का यह मौन, घोषणा सुलग रहे तूफान की।
प्रतिशोधों के लिये आज भी, खाता वह सौगन्ध है।''१३

(ब) अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध-

आज संसार में उदान्त विचारों को लेकर जो देश अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करेगें युद्ध की संभावना उतनी ही कम होती जायेगी तथा देश के चतुर्मुख विकास के लिये अन्तर्राष्ट्रीय संम्बन्ध का ज्ञान होना आवश्यक ही है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात ही अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की विकास गति से हुआ है अन्तराष्ट्रीय सम्बन्ध का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है, जिसके अर्न्तगत वाहय देशों से सम्बन्ध अनेकानेक समस्याओं पर विचार, विश्व व्यवस्था एवं रातनीतिक समूहों का सम्बन्ध, अन्राष्ट्रीय सम्बन्ध ाों का विशेषण शक्ति सम्बन्धों पर विचार, युद्ध रोकने के उपाय सामाजिक संघर्षों एवं समायेजन का अध्ययन, विदेश नीतियों का ज्ञान, मानवीय व्यवहार पर विचार सांस्कृतिक अध्ययन आदि इसके प्रमुख विषय हैं। मैं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को युद्ध की रोकथम पर उसके योगदान पर विजार कर रही हूं- अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में युद्ध एक महत्पवूर्ण पहलू है कि इसे कैसे रोका जाये, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का भरसक प्रयास रहता है कि इसे कैसे रोका जाय इसके लिए विभिन्न राष्ट्र मिलकर अपने बीच उपजे आपसी मतभेदों को समझौते एवं शान्ति पूर्ण तरीके से निपटाने का प्रयास करते है और संघर्ष की स्थिति से दूर रहना इनका पहला लक्ष्य होता है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था वही आदर्श होती है जिसमें युद्ध के लिये कोई स्थान न हो । द्वितीय विश्व युद्ध के बाद काफी परिवर्तन आया जिसमें शस्त्र युद्ध का स्थान शीत युद्ध ने ले लिया इस प्रकार दोनों महाशक्तियां रूस तथा अमेरिका अपने प्रयास को बढ़ाने से ही प्रयत्नशील रहीं।

हार्टमैन के अनुसार- '' अन्तर्राष्ट्रीय सम्बनधों से आशय उन प्रक्रियाओं के अध्ययन से है जिसके द्वारा राज्य अपने राष्ट्रीय हितों का तालमेल अपने दूसरे राष्ट्रों के राष्ट्रीय के साथ बैठने का प्रयास करते हैं। ''१४

बर्टन के अनुसार-'' अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के क्षेत्र में अन्य बातों के अलावा वेसारी घटनाओं और परिस्थितियां आती हैं जिनका प्रभाव एक से अधिक राज्यों पर पड़ता है।''१५

राष्ट्रीय अखण्डता एवं सुरक्षा के लिए एक सुदृढ़ की आवश्यकता होती है, अन्तराष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न देशों के साथ आर्थिक, सामाजिक, वैज्ञानिक, एवं तकनीकी सम्बन्धों की मैत्रीपूर्ण आधारशिला अपरिहार्य है क्योंकि कोई भी राष्ट्र अकेला नहीं रह सकता। अवभिन्न देशों के साथ विवाद का कारण राष्ट्रों के मध्य कटुता एवं विचार वैम्य ही है, यही कटुता क्षेत्रीय अस्थिरता एवं स्वदेशी शक्तियों को सैनिक हस्तक्षेप हेतु प्रोत्साहित करती है इसके विपरीत पडोसियों से मधुर सम्बन्ध एवं सामंजस्य वाहाय शक्तियों के हस्तक्षेप निस्प्रभावी बना देता है। भारत प्राचीन काल से ही 'वसुदेव कुटुम्बवम' के सिद्धान्त का समर्थक रहा है। महाशक्तियों के सैनिक के सैनिक गुटों से अलग रहकर अपने पडोसियों से मैत्री पूर्ण सम्बन्धों की स्थापना उसकी विदेश नीति का परम लक्ष्य रहा है।

वर्तमान समय में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का महत्व बहुत बढ गया है क्योंकि प्रत्येक देश इनके महत्व को भली भांति समझ चुका है। जब तक पूरा संसार एक मंच पर आसीन होकर विचार विमर्श करता है तो युद्ध की सम्भावना कुछ हद तक कम होती है युद्ध की परिस्थितियों से कई बार संयुक्त

राष्ट्र संघ ने हमें बाहर निकाल I है उदाहरण के लिये हम चीन जैसे आततायी देश को ले सकते हैं यह एक ऐसा विषय है जो अत्यन्त व्यापक है मैं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध को भारत-पाकिस्तान एवं भारत चीन तक सीमित रखकर अन्तराष्ट्रीय सम्बन्ध की संक्षिप्त चर्चा प्रस्तुत कर रहीं हूं। भारत और पाकिस्तान का सम्बन्ध कभी समाप्त नहीं हो सकता क्योंकि उसकी भौगोलिक प्रष्ठभूमि ने उसे एक दूसरे से जोड़कर रक्षा हैं यह सम्भव नहीं कि एक देश दूसरे का विनाश कर सके यदि विनाश होगा तो दोनों ही नष्ट हो जायेगें।'' हे भगवान सद् बुद्धि दे भारत को सद् बुद्धि दे पाकिस्तान को ताकि हम दोनों पहचाने कि हम न सिर्फ पड़ोसी ही है, हम दोस्त भी है, भाई भी है।''१९

कवि खड़ग सिंह रावत ने भारत पाकिस्तान सम्बन्ध को 'कारगिल का दोषी कौन' कविता शीर्षक में सन् १९४७ से १९९०, कारगिल युद्ध द्वारा तक का वर्णन किया है। पाकिस्तान द्वारा भारत की सीमाओं पर लगातार किये जा रहे दुराग्रह एवं बार-बार पराजित होना उसकी विवशता है क्योंकि हमारे यहां के वीर सरहदों पर अपने शौर्य का इतिहास रचाने वाले है कवि के शब्दों में-

'' सैंतालिस से यह सिला-सिला,
चलता आ रहा है
दुश्मन की इस चुनौती को,
किसने स्वीकारा है।
कौन जीता कौन हारा है,
किसने ललकारा है,
''याद करो अड़तालिस को,
किया दुश्मन से समझौता
दिया लौटा जीता प्रदेश
रोक दिया वीरों की बढ़ती गति को
\+ + + + + + +
मन भरा नहीं दुश्मन का
इस समझौते से
ललकारा दुश्मन ने फिर पैसठ में,
सेना ने फिर शौर्यमय
फिर खदेड़ दुश्मन को
दूर-दूर उस पार
लाहौर तक दुश्मन को
रौंद दिया
फौलाद हमारे वीरों ने

\+ + + + +

इकहत्तर में दुश्मान फिर गुर्राया,

लड़ने को सीमा पर आया

नेताओं ने फिर सेना को झोंक दिया

समझ उसका खून पानी-बसपानी

तिरानबें हजार

दुश्मन के सैनिकों को

बना बन्दी

किया फिर समझौता

खददर खाड़ी वाली ने

लौटा दिया सब बन्दियों को

अपनी भी जीती धरा

लोटा दी

शिमला समझौता नाम दिया

दें मूंछों पर ताव, हारा दुश्मन

वर लौट गया,

\+ + + +

'' अबके निन्याते में फिर उसने

अपने तम्बू तान दिये गुप-चुप

बेचारे नेताओं को पताही नहीं चला,

वह कल काया ?

एकबार फिर पूँछों अपने से,

कागिल का दोषी कौन ? '' १७

कवि युगीय परिस्थितियों से सामना करने का आह्वान करता है तथा पाकिस्तान से चीन के नये सम्बन्ध
ों के बारे में महावीर त्यागी के विचार निम्न शब्दों में देख सकतें है।-

'' चप्पा-चप्पा चीन वाले तुम से छीनेगें अयूव, खूं से खुँखार है, गो लगते है ममखार से।

भरते हैं दम दोस्ती का, है वह मारे-आस्त्री, ''

कर चुके है दोस्ती, हम भी उन्हीं ऐभार से।'' १८

भारत और चीन का सम्बन्ध सुराक्षत्मक था तथा हिन्दी चीनी भाई-भाई का सिद्धान्त भारत चीन की मौसी का परिचायक था किन्तु चीन की कूटनीति के उद्देश्य कुछ और ही थे जिसके परिणाम स्वरूप १९६२ में चीन द्वारा भारत में आक्रमण किया गया स्वतप्त्रता के कुछ ही दिनों बाद राष्ट्रीय

सन्दर्भों जैसे पाकिस्तान एवं चीन ,ारा किये गये आक्रमण ने कवियों में आक्रोश एवं क्रान्तिपरक भावनाओं को जन्म दिया चीनी आक्रमण ने देश भय वातावरण उपस्थित कर दिया जो हमारी स्वतनत्रता एवं भारतीय मान्यताओं के साथ कार्यपूर्ण व्यवहार था। भारत समबन्ध एवं १९६२ के युद्ध को कवि श्री श्यामलाल शुक्ल जी ने 'चीन से' शीर्षक कविता के माध्यम हो चीन के साथ हुये सारे समझौता, हिन्दी चीनी भाई-भाई जैसे भावनात्मक रिस्तों एवं भारत की गौरव गाथा के माध्यम से उसे ललकारा है एवं पुनः ऐसी पृष्ठटता न करने का सुझाव भी दिया है, 'कवि के शब्दों में-

'' चुप्पे-चुप्पे किहेय तैयारी, सोंचेव भारत का हथियाई।
पंचशील भंग शान्ति शान्ति कहि, आय व नेव तुम हूं भाई।
पर निकरेव पक्के दगाबाज, मिलिकें तुम मारा चहेब हमें।
हे धृतराज ! तुम लौटि जाव, जौ चाहति है कल्यान अपन।
तुम छोड़ि देव धरती हमार, जो चाहति ये सम्मान अपन।'' १९

पटकथा- में धूमिल ने भारत-पाक युद्ध में
पाकिस्तान, ६ सितम्बर १९६५ को भारत द्वारा परास्त होता है।१९६६
में भारत पाकिस्तान के बीच 'ताशकन्द' समझौता होता होता है जिसका प्रतिनिधित्व लाल बहादुर शास्त्री करते तथा उनके निधन के पश्चात श्रीमती इन्दिरा गाँधी-

'' मगर उसके तुरन्त बाद।
मुझे झेलनी पड़ी थी-सबसे बडी है जेड़ी
अपने इतिहास की
जब दुनियाके स्याह और सफेद चेहरों नें
विस्मय से देखा कि ताशकन्ड में
समझौते ही सफेद चादर के नीचे
एक शान्ति----यात्री की लाश थी,
और अब यह किसी पौराणिक कथा के
उपसंहार की तरह हैं कि इस देश में
रोशनी उन पहाड़ों से आयी थी
जहां मेरे पडोसी ने मात/खाई थी। ''२०

राजकमल चौधरी ने 'मुक्ति प्रसंग' में १९६६ में हुये ताशकन्द समझौते की विपुलता पर उसे स्मरण न करने उसके इतिहास बन जाने की विडम्बना की और संकेत किया है कि आत्म रक्षा के लिये आज हमें सभी पापों को शिरोधार्य कर लेना चहिये क्योंकि स्वार्थमय समाज में समझौतों पर संकट बरकरार रहता है कवि के शब्दों में-

''अपने पावों में बांधता है एक, तक्षक-सांप-

अथवा रक्त धरा--- नदी
भागीरथी के वरांज इस पुण्य देहा जाह्वी
स्पर्श के बिना
मोक्ष नहीं पायेगें
और अब १६६६ में स्परण करने से क्या
लाभ है जाधवी के सहस्त्रों पुत्र
मारडाले गये थे तीन रंगों का एक चिथडा
अपने ही रक्त से रंगे गये आकाश में फहराने के लिये
चाहिये वर्ष पहले जो बीत गया है उसे दुहराया क्यों जाये
पाठय पुस्तकों में अथवा दलालों के द्वारा लिये गये-
इतिहास में'
इस नाटक के प्रारम्भ में ही अतएव
अपने कवि से कहना चाहता था मैं आत्मरक्षा-
के लिए।
इस मूर्ति के सम्मुख झुक जाये साष्टांग आत्म
समार्पित।
सवीकार कर ले इस युग के समस्त पाप " २१

(स) गृह युद्ध- ब्रिटेन एवं अमेरिका में हो चुके गृह युद्ध के दुष्यपरिणाम से सबक लेते हुये गृह की स्थितियों से बचना ही एक उपाय है। जहां कहीं भी युद्ध है वहां सुरक्षा का प्रश्न उठता स्वार्थविक ही है क्योंकि किसी भी राष्ट्र की सुरक्षा को समाप्त करने वाले स्रोतों का अनुमान लगाकर ही हम अपनी रक्षात्मक कार्यवाही की ओर बढ़ते हैं। यदि हम पार्यस्टन के निम्न विचार को देखें तो चाहे वे युद्ध हो या गृह युद्ध उसके पीछे स्वार्थ ही हैं- " कोई भी शास्वत शत्रु या शाश्वतमित्र नहीं होता, केवल शाश्वत स्वार्थ होते है। " २२ जहां पर हम अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार, शोषण और असमानता, साम्प्रदायिकता तथा हिसा आदि को दूर करने के लिये युद्ध लड़ते है उसे गृह -युद्ध कहते है। यह युद्ध किसी भी देश के अन्दर संकीर्णता की भावना के कारण होता है। वर्तमान समय में हम गुजरात की साम्प्रदायिक हिंसा, नेपाल के महराजा का माआवासियों द्वारा मारा जाना, बिहार में जातिगत लडाई, जिसमें हिंसा के द्वारा सत्ता हथियाने के प्रयास जारी है, तथा राजनीतियों का दलगत विद्रोह आदि गृह युद्ध को कारण बनते हैं। जबतक इस अन्तरिक दृष्टि से सुरक्षित एवं एकजुट नहीं होगें तब तक बाध्य खतरों का सामना हम दृढता के साथ नहीं कर सकतें।

वर्तमाम 'समय में बुन्देलखण्ड राज्य को अलग से बनाये जाने के लिये राजनीतिक वहल कदमी काफी तेज है संसद में हो या विधान सभा में बुन्देलखण्ड राज्य अलग करने की मांग काफी जोर

पकड़ती जा रही है औरगृह के रूप में प्रस्फुरित होती दिखाई दे रही है। इसी तरह वर्तमान समय में कावेरी जल विवाद को लेकर राजनीतिक जंग जो छिड़ी है वह भी देश के लिये शुभ संकेत नहीं है तमिलनाडु और कर्नाटक में पानी की काफी है और दोनों को ही पानी मिलना चाहिये यदि यह मुछ्दा काबू से बाहर जायेगा तो दोनों राज्यों के बीच हिंसक कार्यवाही होते देकर न बगेगी। 'अंधायुग काव्य नाटक दृश्य युक्त धारा वाहिहिक कविता कृति है इस कृति महाभारत के गुह युद्ध को उन दृश्यों काचित्रण है जो अन्याय के उन पात्रों को अपने अंधायुग की भूमिका की भूमि पर स्थान दिया जो पद लुलुयता, स्वार्थ, अन्याये, अत्याचार मानव मूल्य के हताव थे चाहे हस्तिनापुर के राजा धृतराष्ट्र हो, चाहे वहां की महारानी गंधारी हो चाहे अस्वथामा हो, चाहे दुस्शासन हो या पाण्डव हो अपना-अपना स्थापित करना ही गृहयुद्ध के कारण बने जिनहें उस काल के अविवेकी पुरुष ही कहा जाना यथार्थ होगा क्योंकि यदि इन लोगों में विवेक से स्वार्थ के रास्ते से हटकर सूझ-बूझ से काम लिया होता तो महाभारत का यह युद्ध टल सकता था परन्तु ऐसा न करके राजा धृतराष्ट्र जो जन्मानध होने के साथ-साथ आतम विवेक से भी अंधे थे उन्होंने अपने सलाहकार संजय की आंखों से हो रहे महा विनाश का दृश्य तो देखा परन्तु स्वार्थ को फालीभूत होने के कारण अनदेखा कर गये थे। धृतराष्ट्र अन्ध ो थे परन्तु गान्धारी तो अन्धी नहीं थी वह तो उस समय हो रहे अनीति, अपने पुत्रों द्वारा किये जा रहे मानवता के विरूद्ध कार्यों को, रोक सकती थी परन्तु वह भी वैसा नहीं कर सकी, इसका मुख्य कारण था सत्ता सुख, स्वार्थ, लोलुपता, और अपने ही कोख से जन्माये पुत्रों के प्रति मामत्य की गहन भावना, वसलिये उसने जो हो रहा है, होते रहने देने के लिये, पतिबुता धर्म का आश्रय लेकर अपनी आंखों में पट्टी बांधकर आजीवन अन्धी बन जाने का नाटक जारी कर इस अनधे युग के क्रिया कलापों के गति प्रदान करने में सहायक बनीं। इस विनाशक गृह युद्ध को रोकने के लिये श्रीकृष्ण ने पूरी शक्ति के साथ धृतराष्ट्र व गान्धारी को बहुत समझाने का प्रयास किया, उनके इस प्रयास से कौरव व पाण्डवों में सन्धि भी हुयी परन्तु इस सन्धि को कौरव पुत्रों ने नहीं माना और संन्धिता तोड़त्रकर युद्ध के मैदान में पुनः उतर पड़े थे कृष्ण ने पुनः धृतराष्ट्र को समझाया कि मर्यादा युक्त आप अपने बचन को मत तोडों, यदि आपने इस युद्ध को नहीं रोका तो सर्व नाश के अलावा अपके हाथ कुछ भी नहीं लगेगा। इसलिये सामाजिक मर्यादा बनाने रखने के लिये सन्धि के अनुसार पाण्डवों को भी मर्यादा सहित जीने का अधिकार देकर इस युद्ध को रोकें परन्तु राज्य पर एकाधिकार की भावना से ग्रसित, धृतराष्ट्र ने श्री कृष्ण की बात नहीं मानी और जिसके परिणाम स्वरूप गृह युद्ध की विनाश लीला होकर इतिहास बन गयी।

डा० धर्मवीर भारती इस दृश्य काव्य-नाटक के द्वारा कहते है कि महाभारत का यह गृह युद्ध इतना भयानक हुआ कि जिसने श्रीकृष्ण नरसंघार कर मानवता को टुकड़े-टुकड़े कर डाला, इस कृत्य में जहां कौरव ने मनमानी मर्यादा तोड़ी वहीं कुछ पाने में पाण्डव भी मर्यादा तोडने में पीछे नहीं रहे, दोनों पक्षों ने ऐसा विचित्र युद्ध छेड़ रखा था। जिससे रक्तपात रुकने का नाम ही नहीं ले रहा था।

डा० भारतीय कहतें है कि युद्ध में दोनों पक्षों को कुछ हाथ नहीं लगने वाला शिवा सब कुछ खोने के विजय चाहे जिसे मिले वह जीतने के बाद भी द्वारा हुआ ही होगा क्योंकि जिसमें कारण महायुद्ध हो रहा है वह कारण ही समाप्त हो जाना है।

महाभारत के समूचे कौरव वंश का विनाश धृतराष्ट्र की आत्म केन्दित संकीर्ण दृष्टि के कारण हुआ कौरवो के वैयक्तिक मानव मूलयों का ह्रास ही वंश स्वाहा कर देता है। सब कुछ लुटा देने के पश्चात ही धृतराष्ट्र में सत्य दर्शन करने की सामर्थ्य आती है।

जहां तक हम अंधा युग में युद्ध को देखें तो यह परिवार का युद्ध गृह-युद्ध के रूप में कवि ने प्रस्तुत किया है कवि के शब्दों में-''

''आज मुझे ज्ञान हुआ।
मेरी वैयकितम सीमाओं से बाहर भी
सत्य हुआ करता है
आज मुझे भान हुआ।
सहसा यह कोई बांध टूट गया है
कोटि-कोटि योजन तक दहाड़ता हुआ समुद्र
मेरे वैयक्तिक अनुमानित सीमित जग को
लहरों की विषय-जिहावाओं से निगलता हुआ
मेरे अन्तर्मन में पैठ गया
सब कुछ वह गया
मेरे अपने वैयक्तिक मूल्य
मेरी निश्चिन्त किन्तु ज्ञानहीन आस्थायें। ''२३

' अंधेरे में' कविता मे मुक्तिबोध ने गृह-युद्ध की स्थिति को बखूबी से पेश किया है कवि देखा है कि भयानक धुआं उठ रहा है, आग लग गई है उसके साथ ही उठी पर गोली काण्ड हुआ है, सड़को पर मृत्यु जैसी मनहूसियत दिखाई देती है तथा हवाओं में अदृश्य ज्वाला की गरमी हैं। कवि ऐसे युद्ध के मुख्य कारण कीओ र संकेत करता है कि भोग और ऐश्वर्य के जाल में जकड़े हुये लोग ऐसी स्थितियों के प्रति अनजान एवं वाणी मूक रहते है, क्योंकि उनके दिलों पर किसी निर्दयी पूंजीवादी व्यक्ति का अधिकार होता है अतः उन्हें अपने आसपास की गतिविधियों से सरोवार नहीं होता है कवि के शब्दों में-

'' कही आग लग गयी, कहीं गोली चल गयी।
सड़कों पर मरा हुआ फैला है सुनसान
हवाओं में अदृश्य ज्वाला की गरमी
गरमी का आवेग।
साथ-साथ घूमते है साथ-साथ रहते है,

साथ-साथ सोते है, खाते है पीते हैं

जन-जन उदेदश्य!!

पथरीले चेहरों के खाकी ये कसे ड्रेस

घूमते हैं यत्रवत

वे पहचाने-से लगते हैं वाकई

कहीं आग लग गयी कहीं गोली चल गई!!

सब चुप, साहित्यिक चुप और कविजन निंवाक

चिन्तक, शिल्पकार नर्तक चुप है

उनके ख्याल से यह सब गप है

मात्र किंवदनी।

रक्तपाई वर्गसे नाभि नाल बद्ध ये सब लोक

नपुंसक-भांग-शिरा-जालों में उलझे।

प्रश्न की उथली सी पहचान

आक रूदन्ती।

चढ़ गया उर पर कहीं कोई निर्दया,

कहीं आग लग गई गयी, कहीं गोली चल गयी। २४

' एक कण्ठ विषपायी ये शंकर ने सती के जर्जर शव को लिये हुये देवताओं के बीच युद्ध की स्थिति पैदा कर दी ब्रम्हा द्वारा युद्ध रोकने के उपाय इन्द्र के वार्तालाप तथा वरुण, कुबेर, आदि द्वारा युद्ध को अनेक दलीलों द्वारा अवश्यक घोषित किया जाता है। वरुण द्वारा शंकर की वस्तु स्थिति से भली भांति परिचित कराते हुये उनके मुद्धोंन्माद एवं क्रोध को कवि ने निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत किया है-

''आपको विदित है प्रभु!।

शंकर-कैलाश नाथ

अपने स्कंधों पर

भगवती सती का अध झुलसा शान लटकाये

गहन मनस्ताप की विषमता हो भरमायें

रह-रहकर अब तक भी

वीरिवी-सुता का मुख

देखते, बिलखते हैं

पर्वत के हिम-मंडित शिखरों पर

कल- सा त्रिशूल गड़ा

व्याकुल से चरण पुनः।

इधर-उधर रखते हैं।
और उनके नेत्रों से
अग्नि-वृष्टि जारी है।'' २५

कवि ने जो देवताओं के बीच विद्रोह चित्रित किया है। वह वर्तमान में इन पात्रों के माध्यम से जन जातिय विद्रोह को चित्रित करता है क्योंकि एक ओर सुरक्षा एवं एकता के लिये ब्रम्हा जी इन्द्र वरूण, कुबेर द्वारा शंकर जी द्वारा की जा रही कार्यवाही से पूरा जनमानस अशान्त है अपने रूपनेहितों की रक्षा के लिये युद्ध की अनिवार्यता सिद्ध करना चाहते है देवताओं के प्रति शंकर ने विद्रोह की ब्रम्हा जी ने अपनी तकनीक से देवताओं पर किये जा रहे अनावश्यक कुठारघात से रोका है।

निराला कृत 'राम की शक्ति पूजा' एवं 'संशय की एक रात' में बाह्य युद्ध का विवरण मिलता है क्योंकि इन दोनों कृतियों के नायक राम बाहरी शक्तियों के आक्रमण के शिकार हैं। अतः नरेश मेहता युद्ध के सम्भावित खतरे को चित्रित कर रहे हैं। इधर निराला राम की पराजय रावण के युद्धोत्साह एवं राम की विजय कामना का वर्णन प्रस्तुत रचना में करतें हैं अज्ञेय कृत असाध्य वीणा में कवि ने वीणा के ध्वनि से आतंक मुक्ति का आश्वासन सुनते हुए दिखाया है क्योंकि वर्तमान में आतंक की चुनौती गंभीर रूप से उभर कर आई है इसे हम राष्ट्रीय स्तर पर पहले पंजाब फिर कश्मीर में देख सकते है जहां नवजवानों को आतंकवाद के रास्ते पर ले जाकर बदूंक पकड़ाई जाती है और इस तरह गृह युद्ध का वातावरण तैयार होता है। आतंकवाद की समीक्षा सुरेन्द्र मोहन के पूर्णविचारों में देख सकतें है-'' १९९० की फरवरी में आतंकवाद आरम्भ ही हुआ था जबकी वर्ष वाद यह अपनी पराकाष्ठा पर है। जिन आतंकवादियों को रिहा किया गया था उनमें से कोई वैसा नामी गिरामी भी नहीं था जैसा कि अजहर मसूद है। पाकिस्तान के साथ भारत के सम्बन्ध भी वैसे कुछ न हुये थे जैसे कारगिल के संघर्षों के चलते हो गये। बहरहाल १९९० का फैसला भी गैर वार्जित और अब जो फैसला किया गया है, वह तो आत्म पराजयकारी बल्कि आत्मघाती है। ''२६

आधुनिक कवियों ने अपनी लेखनी द्वारा राष्ट्रोत्थान की बात कही है विश्व बन्धुत्व एवं वसुधैव कुटुम्बकम जैसे भावों को अभिव्यक्त किया है देश में उत्पन्न अनेकानेक समस्याओं भाषावाद, गरीबी, प्रादेशिकता, श्रम विवाद, जातिवाद, घूसखोरी, सम्प्रदायवाद, कालाबजारी, से ग्रह युद्ध की स्थिति उत्पन्न होती है इसे उर्पयुक्त भावना के आधार पर ही रोका जा सकता है। कवि मदन वात्स्यापन द्वारा रचित निम्न पंक्तियां प्रदेशवाद की भावना पर चोट करने वाली है।-

''ओ मेरे अफसर,
मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था।
क्या यह इतना बड़ा अपराध है कि मैं भारतीय हूं।
पर तुम्हारे प्रान्त का नहीं हूं।'' २७

आधुनिक कवि श्री श्यामलाल शुक्ल जी ने 'देश' शीर्षक कविता में ग्रह युद्ध के सभी कारणों को

ऐतिहासिक एवं वर्तमान विसंगतियों को कुछ पंक्तियों में ही व्यक्त कर दिया है, कवि के शब्दों में-

''यवनों के शासन में सामन्ती प्रशासन में
आपस में युद्ध हुये, धर्म की दुहाई दे।
सत्ता में न बट्टा लगे, जनता सब साथ-सथ रहे।
धन और दौलत, वोटो, नारा, खुदाई दे।
कुछ कठोर शासकों ने धर्म के प्रधारकों ने।
घश्णा भाव भर परस्पर बुराई के।
कटुता बढ़ाई साथ पटुता दिखाई खूब,
भूल गये काम सभी जनता की भलाईके।'' २८

इसीप्रकार कवि 'आतंकवाद' कविता में सम्पूर्ण विश्व में फैली आतंकवादी गतिविधयों की चर्चा करता हुआ भारत में आतंकवाद एवं उसके खिलाफ अपने देश के संकल्प को दृढ़ता के साथ पुस्तुत करता है।-

''है कई साल से भारत भी आतंकवाद से जूझ रहा।
जिन नरसंहार शन्ति मिल जाये, मार्ग नहीं वह सूझरहा।।
है पाकिस्तान मिल गया आज, इन आतंक कुत्तों से।
रहरहकर अशान्ति फैलाता भेद भेद इन बुतों से।।
बहुत परिक्षा देडाली है, हमने शान्ति प्रयासों की।
हम चाहे भी हमने सहली मारकाट बदमासों की।।
जिससे न दुबारा उठासके ऐसा ही अब कुछ करना है।'' २९

पाकिस्तान समर्पित आतंक वादियों के जत्थे नये-नये बनाकर देश में घूमते हैं और उत्पात मचाकर भारत में अशान्ति का वातावरण तैयार करते हैं। यह वे तथ्य हैं जो भारत की व्यवस्था में विद्यमान है और आन्तरिक सुदृढ़ता में वाधक है अतः किसी भी देश में अपनी एकता एवं सुरक्षा की मजबूत बनाये रखने के लिये यह आवश्यक है कि इनका समाधान शीघ्रातिशीघ्र किया जाये इसके लिये राष्ट्रीय चेतना का होना आवश्यक है इस कार्य को कवियों ने बड़ी सुगमता के साथ अपने हाथों से सभाले हुये है, इसके अतिरिक्त सरकार को ठोस एवं इरदर्शिता पूर्ण कदम उठाने चाहिये तथा जन समान्य को अपने एकता की परिधारी को बनाये रखने में सहयोग देना होगा तभी कोई भी राष्ट्र अन्तरिक ऐक्स एवं समृद्धि से युक्त होने पर अपनी सुरक्षा एवं आखण्डता को बनाये रख सकता है।

(द) आधुनिक युग में युद्ध की समस्या से प्रभावित काव्य-

आधुनिक युद्ध परक काव्यों में युद्ध चिन्तन की विविधता एवं नवीनता दिखाई देती है। मैं यहां चयनित युद्ध परक काव्यों के कथानक का क्रमशः विश्लेषण प्रस्तुत कर रही हूं। युद्ध परक काव्यों की लम्बी सूची है लेकिन जिन युद्ध परक काव्यों को प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में आधार बनाया गया है वे क्रमशः

निम्नलिखित हैं-

राम की शक्ति पूजा- निराला राम की शक्ति पूजा महाप्राण निराला की एक ऐसी महनीय काव्य कृति है जिसका मुख्य स्थर दार्शिनिक चेतना से सम्बन्ध होने पर भी युद्ध मूलक है।'' इसके कथनक में राम रावण का युद्ध दो व्यक्तियों का ही संग्राम मात्र नहीं है। यह उन आदि शक्तियों का संघर्ष है जो विश्व में सतत् क्रियाशील रहती है। '' ३०

'राम की शक्ति पूजा' का प्रारम्भ निम्नलिखित पंक्तियों से होता है।-

''रवि हुआ अतः ज्योति के पत्र में लिखा ऊपर

रह गया राम-रावण का अपराधेय समर

आज का ------------------। '' ३१

उक्त पंक्तियों में अपराय समर हमें युद्ध के अनिर्णीत परिणाम की ओर संकेत करता है। दोनों सेनाओंका अपने -अपने शिवरो की ओर लौटने , से रावण की सेना की प्रसनता और राम की सेना के विषाद का संकेत कवि ने किया है। राक्षसों के अत्याचार से वश्थ्वी का वस्त्र होन औी आकाश का व्याकुल होना युद्ध के भी षण परिणाम की ओर संकेत करते है महाकवि निराला के शब्दों में-

''लौटे युगन्ता, राक्षस पदतल पश्थ्वी तलमल,

विंद्यम होलास से वार-बार आकाश विकल।''३२

युद्ध के वातावरण को कवियों ने ही मार्मिक और जीवन्त रूप में प्रस्तुत किया है, प्रकृति का ओज पूर्ण निरूपण चतुर्दिक प्रवाहित होने वाले अन्धकार का चित्रण पवन की स्तब्धता, विशाल समुद्र का गर्जन, जहां एक ओर रावण की विकरालता तथा उसकी प्रचण्ड शकितयों का संकेतक है वही राम को यह वातावरण आक्रान्त करता हुआ प्रतीत होता है अन्धकार का युद्ध की पृष्ठभूमि में जो वर्णन महाकवि निराला ने किया है। वह मिलटन के भ्मसस की च्ंस चंइंसम कंतादमे से भी अधिक तामसी और सघन अन्धकार युक्त दिखाई पड़ती है कवि निराला के शब्दों में-

''हैं अमानिशा, उगलता गगन घन अन्धकार,

खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्धं है पवन चार,

अप्रतहित गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल,

भूधर ज्यों ध्यान-मग्न केवल जलती मशाल।'' ३३

युद्ध के परिणाम स्वरूप मनोंसगत में युग परिवर्तन तथा मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ना स्वभाविक है, 'राम की शक्ति पूजा' में भी प्रभू श्रीराम का मन ही मन में व्याकुल होना युद्ध के प्रभावक परिणामों एवं आशाकाओं की ही परिणत स्वीकार की जायेगी।

कवि निराला ने इस भाव को राम की शक्ति पूजा में अभिव्यक्ति इस प्रकार की है-

''रह-रह उइता जग जीवन में रावण-जय भय,

जो नहीं हुआ आज तक हृदय रिपु हक्य श्रान्त,

एक भी अयुक्त-लक्ष्य में रहा जो दुराकान्म,

कल लड़ने को हो रहा विकल वह बार-बार,

असमर्थ मानता मन उधत हो हार-हार,। ३४

युद्ध के प्रेसगों में नायक और प्रतिनायक के मध्य जो भाव द्वन्द्व उपस्थित होते हैं उनमें नायक की पराजय और प्रति नायक के विजय के निरूपण में राम की शक्ति पूजा के कवि निराला ने जिस मार्मिक वेदना का प्रकाशन किया हैं। वह निम्नलिखित द्वन्द में प्रस्तुत है-

''निज सहज रूप में संयन्त हो जानकी-प्राण

बोले-आया न समझ में यह दैवी विधान,

रावण अधर्म रत भी, अपना, मैं हुआ अपर-

यह रहा शक्ति का खेल समर, शंकर-शंकर!

कर्ता मैं योजित बार-बार शेर निकर निशित

हो सकती जिनसे यह संसश्ती सम्पूर्ण विजित,। '' ३५

संग्राम में शंकर ने राम की उपासना कि परन्तु उन्होंने राम का साथ न देकर रावण का साथ दिया। क्योंकि महाशक्ति की उपासना राम के द्वारा पूर्ण नहीं हुयी थी। युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए जाम्बवान् ने शक्ति की नये रूप में पूजा करने की मंत्रणा की प्रातः से ही आसन पर बैठ गये। दूर से ही युद्ध का कोलाहल सुनाई पड़ता है परन्तु वह चुपचाप अपने ध्यान में लीन बैठे है। एक दिन पूजा बीत गया छः दिन पार होने पर अन्तिम चक्र शेष रह गया और राम के पास कमल भी एक रह गया किन्तु अर्धरात्रि में दुर्ग में आकर वह कमल चुरा लिया कमल न मिलने पर राम निराश हो गये और उन्हें लगा कि जानकी का उद्धार न होसके गा। युद्ध में पराजय कि सम्भावना से राम का नैराभ्य प्रस्तुत पंकितयों में चित्रित है।

''धिक जीवन में जो पाता ही आया विरोध

धिक साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध,

जानकी हाय उद्धार प्रिया का न हो सका। '' ३६

राम की चेतना पुनः जाग्रति होती है और वे विपत्ति के समय अपनी मां का स्मर्ण करते है और उन्हें याद आया कि मेरी मां मुझे राजीव नयन कहा करती थी। अतः क्यों न मैं अपने नेत्रों से कमल पखुड़ी को देवी की अर्चना के लिये अपने कमल नेत्रों को समर्पित कर दूं कवि निराला के शब्दों में-

''कहती थी माता मुझे सदा राजीव नयन।

दो नील कमल हैं शेष अली, परश्चरण

पूरा करता हूं देकर माता एक नयन।'' ३७

कमल नेत समर्पित कटने पर देवी पूर्णठप में प्रकट होती है और विजय का आश्वासन प्रदान करती है। इस प्रकार राम जो संशय से ग्रस्त थे वे विजय की भावना से आशान्बित होते हैं महाकवि निराला

ने महाशक्ति के राम के भीतर प्रवेश करने का संकेत किया है। '' होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोंत्तम नवीन !

यह महाशक्ति राम के बदन से हुई लीन,। '' ३८

इस प्रकार उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि राम की शक्ति पूजा का संस्कृतिक एवं दार्शनिक भाव जगत चहे कितना भी उदान्त हो किन्तु इस महाकाव्य का केन्द्रीय चिन्तन एवं साक्षिक युद्ध से सम्बन्धित है। और मानसिक रूप से युद्ध की प्रस्तावना पर ही निराला की प्रतिभा 'राम की शाक्ति पूजा' के रूप में प्रबुद्ध हुये।

अंधायुग-धर्मवीर भारती- 'अंधायुग' धर्मवीर भारती जी का सुप्रसिद्ध काव्य नाअक है, जिसके आरम्भ में ही कवि ने युद्धोतर परिस्थितियों एवं आधुनिक युगबोध की ओर हजार आकर्षित किया हैं-

'' उद्घोपरान्त

वह अंधायंग, अवतरित हूआ

जिसमें स्थितियां, आत्माएं सब विकृत है

हैं एक बहुत पतली डोरी मर्यादा की

पर वह भी उलझी दोनों पक्षों में

सिर्फ कृष्ण में साहस है सुलझाने का

वह है भविष्य का रक्षक, वह अनासक्त

पर शेष अधिकार है अंधे

पदभ्रष्ट, आत्हारा, विगलित

अपने अन्तर की अन्ध गुफाओं के वासी

यह कथा उन्हीं अन्धों की है,

या कथा ज्योति की है अन्धों के माध्यम से। ''३९

कवि ने आज के विसंगतिपूर्ण जीवन की पश्ष्ठभूमि में समाज एवं मानव मन में व्याप्त युद्धोतर कालीन, कुण्ठा, पराजय, प्रतिशोध निराला, रक्तपात, विध्वंस, कुरुपता, विकृति, अद्योपतन, अन्धस्वार्थ, विवेक शून्यता, कुण्ठा, जनित बर्बरता, त्रास, द्वाद, हासोन्मुख, मनोवश्त्ति, भयानक, टूटन विघटन, मानव मूल्यों की खण्डित परम्परा, जीर्ण शीर्ण मर्यादाएं, शोषित भावनाओं आदिका सशक्त अंकन किया है, जिसमें महाभारत काल के घटना चक्र व उसी के इतिहास पुरुषों के क्रिया कलाप इस काव्य कृति में प्रस्तुत किये गये हैं। कौरवों पाण्वों के बीच चल रहे युद्ध के चत्रह दिन व्यतीत हो जाने के उपरान्त अठारहों दिन के युद्ध का दृश्य प्रंसग प्रस्तुत करते हुए कौरव नगरी का विनाशक दृश्य एवं इससे पूर्व हुए युद्धों का चित्रण करते हुए कहा है-

'' टुकड़े-टुकड़े हो बिखर चुकी मर्यादा

उसको दोनों ही पक्षों ने तोड़ा है

पाण्डव ने कुछ कम कौरव ने कुछ ज्यादा।''४०

प्रस्तुत पंक्तियों में आधुनिक युग के आस्थावन और आस्थाहीन नीति कुशल और नीतिहीन व्यक्तियों का जीवन भी उलझा हुआ हैं जिसे कौरव और पाण्डवों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। कौरवों ने राजवंश की सारी सीमायें तोड़कर नीति नियमों के मान को ध्वस्त कर सदाचार को कुचलकर स्वार्थ एवं राज्य विप्सा के वशरभूत होकर अधर्म का वातावरण उत्पन्न कर दिया जिसमें छोटे-बडों का मान-सम्मान ध्वस्त हो गया मर्यादा तोड़ने के कार्य में पाण्डव भी पीछे नहीं रहें है। इस विनाशलीला में धैर्य, संयम, नीति, एवं नियम के ऊपर स्वार्थ इस प्रकार सवार हुआ कि अपने-अपनों का रक्त पात समाप्त होने का नाम ही नहीं ले रहा था। इस युद्ध की विभीषिका में कौरव नगरी का सारा सुन्दर स्वरूप भस्मीभूत हो गया और जब युद्ध निर्णयक स्थिति में पहुंचा तो सब कुछ युद्ध के दावानल में हो चुका था अतः विजयी पक्ष भी कुछ खो देता है। कवि ने सामाजिक व्यवस्था, जटिल समस्याओं एवं राज-द्वेस से युक्त कुरितियों से बचने का संकेत प्रतीकों के द्वारा प्रस्तुत किया है। क्योंकि मानव मूल्यों की प्रतित्यापना से ही मानव भविष्य सुराक्षित रह सकता है, का गम्भीर बोध कराया है। मानवता के पुजारियों को उन लोगों का सामना करना चाहिए जो मनुष्यता का रास्ता छोडकर अमानुषिक कार्य कर समाज को विकृत करने का कार्य कर रहे हैं, अन्याय में लिप्त समाज की दुर्दशा करने में अंधे होकर मानव मूल्यों का भक्षण कर भविष्य को स्वार्थ के लिए विध्वंसक करने में जुटे हुये है, और जानते हुये भी अन्जान बनकर पशुओं की भांति देश, समाज, काल, एवं अपनी संस्कृति की धज्जियां अपने स्वार्थ के तहत उडझने में लगे हैं। अंधायुग इसी मानव मूल्यों की अखण्ड स्थापना पर मानव भविष्य को सुराक्षित बनाने की घोषणा करता है। कवि अंधायुग काव्य नाटक में कहते है-

'' दोनों ही पक्षों में जीता अंधापन
भय का अंधापन, ममता काअंधापन
आधिकारों का अंधापन जीत गया
जो कुछ सुन्दर था, शुभ था, कोमल तम था
वह हार गया-------द्वापर युग बीत गया। ''४१

यह द्वापर युग अंधों का युग था इस युग में राज्य सिंहासन पर विवेक हीन अंधा शासक बैठा था, अंधापन द्वारा ही, दूसरा अंधापन जीत गया, यह दूसरा अंधापन पाण्डव पक्ष है, जिसने इस युद्ध में विजय प्राप्त की है। इस युद्ध में विवेक पूर्णतः हार गया है और अविवेक ने विजय प्राप्त की, क्योंकि जब विवेकहीन दो पक्ष आमने-सामने आ जाते है तभी युद्ध होता है, यदि इनमें से एक भी पक्ष विवेकी होता तो यह युद्ध न होता किन्तु यहां दोनों पक्ष ही अंधं थे।

अंधायुग का लक्ष्य मानव भविष्य को सुराक्षित बनाना है। युद्ध की वर्तमान समय में पुनरावशक्ति रोकने के लिये महाभारत की कथा को जीवन-दर्शन बनाया जा सकता है व युद्ध से होने वाली क्षति को समझा जा सकता है, इस कारण के नियोजन के लिये आत्म दृष्टि की आवश्यकता होगी। महाभारत

के युद्ध से उत्पन्न लाभ-हानि का आकलन करने वाला ही मानव मूल्यों की स्थापना कर भविष्य को सुराक्षित रखा जा सकता है। कटटोन्माद के वातावरण को मानवता के शोधवाद से निष्क्रिय कर मानव समाज को सुख-शान्ति प्रदान करने का मार्ग प्रशस्त करता है।

संशय की एक रात-नरेश मेहता- 'संशय की एक रात' हिन्दी के यशस्वी कवि भी नरेश मेहता का एक ऐसा खण्डकाव्य है जिस में महामानव के प्रतीक राम अपहरत स्वतन्त्रता की प्रतीक सीता को मुक्त कराने हेतु जिस मानसिक युद्ध में लगे हुये है उसमें संशय ग्रस्त है। जीत और हार के बीच चलने वाला द्वन्द ही संशय की एक रात में व्यक्त हुआ। इस प्रबन्ध में युद्ध और शान्ति के संदर्भो को भी लिया गया है। एक ओर राम है दूसरी ओर लक्ष्मण समसया है सीता की वापसी। सीता अपहरत स्वतन्त्रता के रूप में चित्रित है किन्तु राम महामानस होकर भी उसे पाने में संदिग्ध दिखाई पड़ते है किन्तु लक्ष्मण जी अपने को महामानव नहीं बल्कि लघु समझते हैं वे इतिहास की चिन्ता नहीं करते राम इतिहास के लिए, अभिशाप के लिए चिन्तित है, अर्थात विजय के लिए चिन्तित है पराजय उनके लिये अभिशाप बन जायेगी किन्तु लक्ष्मण कर्म के लिये प्रस्तुत है कर्म वृत्ति के सामने जीत और हार का सन्देह नहीं होता उसके सामने तो संकल्पित प्रज्ञा और इच्छाओं का उत्सर्ग ही होता है। पलने वाले को फिर क्या चिन्ता चलते-चलते चाहेती में जाये अथवा कीर्ति बन जाये अथवा पसली में बाण चुभ जाये वो तो जीवन के हित युद्ध ही करते रहते है।

अपने में
अपने से बाहर हैं।
धूप और अधिकार चीरे
हम चलते हैं।
चलने पर
सम्भव है-
तीर्थ मिले
कीर्ति मिले
चामर की छांह मिले
समभव है-
पसली में बांण फंसे
प्यासे ही दम तोड़े
चीलों से
आखिर तक
युद्ध करें जीवन हित। '' ४२

नरेश मेहता ने 'संशय की एक रात' में शीर्ष बन्धु नामक भूमिका में अपना उद्देश्य स्पष्ट करते

हुये लिखा है। प्रसतुत कृति में राम आधुनिक प्रजा का प्रतिनिधित्व करते है। युद्ध आज की प्रमुख समसया है सम्भवतः सभी युग की विभीषिका को सामाजिक एवं वैयक्तिक धरातल पर सभी युगों में भोगा जाता रहा है और इसलिए राम को भी ऐसा एकत्व देकर प्रश्न उठाये गये जिस प्रकार कुछ प्रश्न सनातन होते है राम ऐसे ही प्रजा प्रतीक हैं। नरेश मेहता ने संशय की एक रात' में जिस युद्ध की समस्या को चुना है ये समस्या सामाजिक और व्यक्तिगत दोनों स्तर पर भोगी जाती रही है राम ने भी इसे भोगा होगा अतः उस अनुभूति का चित्रण इस कृत्य-कृति में स्वाभाविक है।

हमारे देश में एक विकासमान काव्य परम्परा प्रचलित रही है उसके प्रेरणा स्त्रोत प्रायः रामायण और महाभारत रहे है। नरेश मेहता ने भी रामायण से अपने काव्य की कथा वस्तु काचयन किया है किन्तु पराम्परा कोग्रहण करके भी अपने युग के समबोध को समस्त मानव अनुभूतियों में सम्मिलित राम का चि़त्रण किया है। कथावस्तु में नरेश मेहता ने शेक्स बिचार को द्वसदी 'हेमंलेट' की प्रेत पददति के आधार पर पुरातन कथा में नवीन उद्वभावना की है। वन्य जातियों को संगठित कर उनमें स्वतन्त्रतय भाव का वर्चश्व भर दिया है।दूसरे शबदों में कवि ने इस कृति में युद्ध की समस्या के व्यास से अस्तित्व वादी जीवन दृष्टि का विकास किया है। कर्तव्य के प्रति व्यक्ति हित का त्याग भी इस काव्य का उद्देश्य है राम चरित्र एक ऐसा चरित्र है जो अन्त में युद्ध के लिये सन्देश से घिर जाता है कवि के शब्दों में-

'' प्रतीक्षा है
कवचित कर्म हूँ
प्रतिभूत युद्ध हूँ।
निर्णय हूं सबका
सबके लिये,
केवल अपने ही लिए
सम्भवतः नहीं।
नहीं !!। ''४३

मानवता के लिए युद्ध सदैव से एक समस्या रही है जीवन के सारे राम विराग विकल्प सुख, दुःख, आकर्षण निकर्षण परिथतियों की भीशणता के सामने मूल्यहीन प्रतीक होने लगते है। युद्ध मानों कोई भीषण भयंकर सैलाब हो जो हमारा सब कुछ बहाले जाता है, न हमारे अन्दर नैतिकता रह जाती है न कोई दायित्व, प्रथम और द्वितीय महायुद्धों में संसार को आज ऐसे ही रास्ते पर खड़ किया है, जो दोनों युद्ध विश्व जीवन के लिए गहरे चिन्तन का विषय बने है। '' कुछ ने भारतीय साहित्यकारों को उत्प्रेरित किया है युद्ध की समस्या को लेकर आधुनिक हिन्दी के प्रतिष्ठित कवि श्री दिनकर ने 'कुरुक्षेत्र' १६४६ लिखा धर्मवीर भारतीय ने १६५४ में अंधा युग १६५८ 'अनुप्रिया' की रचना की गिरिजा कुमार माथुर ने 'पृथ्वी कल्प' लिखा 'संशय की एक रात' की भी गणना इसी संदर्भ में होती है। संशय की एक रात में कवि का ये भी संदेश हैकि युद्ध से युद्ध का अन्त नहीं होता और उलझन

ही का वहीं बनी रहती है। मन्त्रणा परिषद में जब युद्ध की अनिवार्यता पर जोर दिया जाता है तो राम का कथन इस प्रकार है-

''हनुमत वीर/युद्ध की अनिवार्यता को जानता हूं

\+ + + + +

सम्भव है अनागत युद्ध का कारण बने।

तब/अनेकों लंका/अनेकों रावणों का जन्म हो

सम्भव है/हमारे लौटने के बाद ही

आक्रमण कारी/नयी सैनिक, उपनिवेशों योजनाएं ले,

इसी सेतु बन्ध से लौटे।

फिर संघर्ष/फिर संहार/इस ऐतिहासिक,

विषमता का/कौन सा प्रतिकार?

इस चक्र का कोई नहीं है अन्त

हनुमत वीर!/कोई नहीं है अन्त। ''४४

युद्ध को दोड़कर कोई और रास्ता शेष नहीं रह जाता राम के सामने, राम इसी खोज में व्यस्त है। संशय की एक रात में इन्हीं नये मूल्यों की खोज में कवि का रचना संसार व्यस्त है युद्ध से मानव को मुक्ति किस प्रकार मिले।

भारत के रामायण अथवा महाभारत हो अथवा यूरोप के '' एशिड'' और 'ओडसी' एक प्रकार से सभी युद्ध काव्य है प्राचीन जातीय महाकाव्य युद्धों से प्रथम नहीं है। युद्ध के सम्बन्ध में प्रत्येक युद्ध में धारणाएं बदलती रहती है आधुनिक युग में हिरोशिया और नागासाकी ने युद्ध की जिस नये और विकराल रूप को धारण किया है उसके कारण मनुष्य बड़ी तीव्रता से इस बात को सोचने लगा है कि युद्धों को कैसे रोका जाये।

नरेश मेहता ने रामायण कालीन परिस्थियों और घटना चक्रों का आश्रय लेकर कुछ ऐसी ही समस्यायें उठायी है जिनकी संगति आज की विसंगतियों से भरे जीवन में बैठती दिखाई देती है। आज के वैज्ञानिक युग में मनुष्य के सामने बहुत सी आन्तरिक और बाहर समस्याएं उपस्थित हो गई है। जिन्होंने मानव को विचलित कर दिया है। संशय की एक रात में राम यह चाहते हैं कि मनुष्य के सारे शुभ और अशुभ कार्य युद्ध के बन्द भी में आंके जायें, इसी लिये राम अपने पिता दशरथ की छाया से कहते है-

यदि सारे शुभा शुभ युद्धों से ही प्रतिपादित होने हैं।

सारे मानवीय शुभा शुभ की क्या यही परिणति है। राम संशय से ग्रस्त है और यह संशय अकेले 'राम' का ही नहीं है और यह संशय अकेले राम का हीं नहीं है सारी मानव जाति का संशय है। आज के प्रत्येक प्रयुद्ध प्राणी का संशय है। यही तथ्य संशय की एक रात के माध्यम से कवि ने व्यक्त किया

है। इस संशय की एक रात मनोवैज्ञानिक और प्रतीकात्मक काव्य होकर भी युद्ध की समस्याओं से जुड़ा हुआ है-

'' मानव के रक्त पर पग धरती ऊबी

सीता भी नहीं चाहिये,

सीता भी नहीं।''४५

एक कंठ विषपायी-दुष्यंत कुमार- 'एक कंठ विषपायी- नामक काव्य नाटक के प्रणेता दुष्यन्त कुमार है। कथा का आधार पौराणिक है। मुख्य शिव पार्वती को लेकर इस काव्य की रचना हुई है। अन्य पात्रों में ब्रम्हा, विष्णु, सर्वहत आदि सम्मिलित होते है। समीक्ष्य कृति का कथानक अवश्य पुरातन है किन्तु विचार आधुनिक है। प्रस्तुत काव्य की रचना चार अंकों में विभक्त है। कवि मुख्यतः जर्जरिह सामाजिक रूढ़ियों एवं मृत परम्परओं को उखाड़ फेकने के पक्ष में है। उन्होंने आचार कथा में अपने विचारों को निम्न प्रकार से व्यक्त किया है।

''जर्जर रूढ़ियों और परम्पराके शव से निपटे हुये लोगों के संदर्भ में प्रतीकात्मक रूप से आधुनिक प्रष्ठभूमि और नये मूल्यों को संकेतिक करने के लिये इस कथा में पर्याप्त सामर्थ्य है। ''४६

प्रबन्ध काव्य की संक्षिप्त कथा के रूप में शिव पार्वती पिता दक्ष के यहां होने वाले यज्ञ में जाते है। वहां शिव के प्रति आप त्याग की भावना को न लेखकर अपमानित होती हुई स्वयं अग्निदाह कर लेती है। शिव के गण यज्ञ को विध्वंस कर देतें हैं। पुरोहित, यज्ञिकों, अतिथियों, को इस कृत्य से अत्यधिक संशय होता है। सर्वहित के रूप में, प्रजा के स्वरूप को उसकी मानसिक दशा को व्यक्त किया गया है। इन्द्र, ब्रम्हा, विश्णु, हारा शिव के उत्वेजनापूर्ण ब्यवहार की चर्चा और अन्त में ब्रम्हा -विष्णु के अथक प्रयत्न से युद्ध रूक जाता हैं।

प्रस्तुत प्रबन्ध काव्य के द्वारा कवि ने नयी और पुरानी पीढियों के परस्पर भेद को आज की ज्वलन्त समस्या के रूप में निरूपित किया है। दो पीढ़ियों के अन्तराल को, शान्ति से समझना होगा, अन्यथा विचारों की भिन्नता मानवीय संदर्भों में अत्यधिक वीभत्स रूप में प्रतिपादित होगी।

युगधर्मिता में युद्ध के प्रश्न को कवि ने लिया है। युद्ध की अनिवार्यता भी कवि के द्वारा अपने ढंग से स्वीकार की गई है। समीक्ष्य कृतिकार 'एक कंठ विषपायी'में वर्णित प्रजा के दु:खों को भी सही रूप में प्रस्तुत करने में समर्थ हुआ हैं। डा० हरि चरण शर्मा 'चिन्तक' के विचार है।-'' एक कंठ विषपाई' पौराणिक प्राचीन पर आधुनिक भाव-बोध की एक तस्वीर है, जो युद्धाकान्त युद्ध जीवन के अंगों में इवी हुई किन्तु नवीनता की ओर से बंधी हुई लगती है। '' ४७

शंकर सती के शव को लिये हुये उसके पीछे की ओर झुके मुख को अपने सामनें करते हैं अपने देवत्व अपनी सामर्थ्य तथा प्रतिशोध का बदला न ले पाने पर जीवन की घोर उपेक्षा करते है तथा सती की ओर संकेत करते हुये निम्न कथन कहते हैं-

'' जिस भाषा में

मिला मुझे यह प्रश्न भयंकर

मुझे उसी भाषा में

देना होगा अन्तर!

सम्प्रति बस प्रतिकार

देव, ऋषि, दानव सबसे।

आह! तीसरा नेत्र

रक्त का प्यासा कबसे। " ४८

शंकर सती की इस स्थिति का बदला युद्ध की भाषा में लेने का निश्चय करते है तथा अपने युद्ध में प्रतिपक्ष के रूप में देवी, ऋषियों, दानवों सभी को मानते है। इस विनाश लीला को रोकने के निमिन्त वरुण तथा कुबेर भगवान शंकर की स्तुति करते हैं इसकी समाप्ति होने पर शंकर विष्मय से भरे हुये आवेश में आ जाते हे। कवि के शब्दों में-

" ये कौन?

कौन, केलाश-शिखर पर

अनारस्त आया ?

ये किसका स्वर है

जो मेरे निश्चय से टकराया ?

स्तुति करता

सामने नहीं आता

बचता है।

ये कौन मुझे/सम्मोहित करने को/हल रचता है।" ४६

जब शंकर की सेना आक्रमणात्मक कार्यवाही हेतु देवलोक के समीप पहुंचती है, तब एक तरह से शंकर ने युद्ध को अनिवार्य कर दिया था। अतः इन्द्र सैनिक के वेश में ब्रम्हा जी से आकर युद्ध के लिये अनुमति मांगते है-

" हां! युद्ध के सिवा

अब कोई भी विकल्प अवशेष नहीं हैं।

महादेव शिवशंकर अपनी पूर्व-नियोजित

डाकनियों, शकिनियों, प्रेतों और गणों की

सेना लेकर

देव लोक की सीमाओं पर चढ़ आये हैं।

प्रभु !/आज्ञा दें,

महादेव शंकर का पूजन अब युद्धस्थल में ही होगा।" ५०

किन्तु ब्रम्हा युद्ध की अनुमति नहीं देते क्योंकि वह युद्ध को सामूहिक आत्मघात के रूप में देखते है। सम्पूर्ण जनता उत्तेजित हो जाती है तथा ब्रम्हा से इस कायरता पूर्ण कार्य के लिये सिंहासन छोड़ने की मांग करती है, किन्तु विष्णु न्याय और सत्य का पक्ष लेते हुये युद्ध में प्रस्तुत होने के लिये सेना के नायक बनकर सीमा रक्षा हेतु सैनिकों को आदेश देते हैं तथा युद्धमय वातावरण में उत्साह उत्पन्न करने वाले मकवाध के प्रयोग की घोषणा करते है विष्णु के शब्दों में-

" सैनिक !
सबसे जाकर कह दो,
शीघ्र युद्ध होने वाला है।
क्षीर सिंधु के वासी विष्णु
हमारी सेना के नायक है
सेना से कह दो
वह सीमाओं पर जायें।
कह दो उससे
शत्रु न आगे आने पावे।
जल्दी जाओ
कह दो सबसे।
रण में मार वाद्य बजाओ ! " ५१

भगवान विष्णु कहते हैं कि पहले कर्म होता है तभी उसकी व्याख्या सम्भव है विष्णु इन्द्र से कहते हैं कि " मैंने जो कर्म किया है वह चिंतन-प्रसूत है।
उसका फल
क्षण दो क्षण में सम्मुख आयेगा।
मैंने अपना पक्ष तौलकर
सत्य समझ कर ही शंकर पर
अपना प्रथम बाण छोड़ा है,
इसके द्वारा
उनका एक स्वपन तोड़ा है। " ५२

इन्द्र विष्णु से अपने द्वारा युद्ध में प्रस्तुत होने की कल्पना से आहत हो रहे और अपनी प्रति हिंसा को पूरा करने के लिये, अपने को पागल और सोचनें की क्षमता का अभाव, तथा अपनी दृष्टि से तमाम अवसरोंधों को दूर कर दिया आज मुझे ऐसा लग रहा है, मानों मैंने मरकर जन्म लिया हो। इन्द्र विष्णु से कहते है कि क्या यह सम्भव नहीं कि आप उन्हें नई दृष्टि दे उन पर पडे आवरण को हरा सकें क्या शिव को संकृमण काल में विष पीने की शक्ति नहीं या सिर्फ नीलकंठ ही कहलाते है। विष्णु

आश्वसन देते है कि इस त्रिलोक में महादेव का एक कंठ ही विषपाई है जो अपार क्ष्मताओं को धारण करने वाले है। विष्णु कहते हैं कि मैंने एक प्रणाम वाण छोड़ा है उससे शीघ्र ही सत्य का परिणाम ही सामने आयेगा-

''---मेरा मूल बाण शिव के चरणों में
एक चुनौती या प्रणाम का कार्य कहेगा
चाहे वे प्रणाम स्वीकारें
चाहे वे युद्ध की चुनौती,
हर हालत में सत्य हमारी ओर रहेगा,
----अन्तिम विजय हमारी होगी। '' ५३

इस प्रकार विष्णु के विचार पूर्ण निर्णय की विजय होती है-

महादेव शंकर की सेनायें लौट गई-------। ''५४

युद्ध समाप्त होता है जो प्रजा के लिये सबसे बड़े हर्ष का कारण है।

उपर्युक्त उदाहरों से स्पष्ट है कि ' एक कंठ विषपायी ' में मूल स्वर युद्ध की विभीषिका है इसी के उपलबधि अन्य समस्यायें जैसे राजनीति, हड़ताल, भूख, अमान्स्वी तथा पुरानी परम्पराओं का खण्डन किया गया है। शंकर किस प्रकार परम्परा के मोह से ग्रसित 'सती की लाश को कंधे से चिपकाये भटकते फिरे हैं, शंकर की मानवीय संवेदनाओं को सफलता के प्रस्तुत किया गया है। युद्ध आधुनिक समय में संभावित घटना है जिससे हम दूर नहीं रह सकतें इस सन्दर्भ को नाटक कृति में शसक्त रूप में प्रस्तुत किया गया है। सर्वहित के द्वारा युद्ध को समस्या से देश काल से परे व्यक्ति भी प्रभावित होता है जिसे इस नाट्य कृति में सर्वहत के द्वारा को चित्रित किया गया है इसके परिणाम स्वरूप भूख ,प्यास, विघटन, मृत्यु और निराशा जैसी स्थितियां सामने आती है इसमें प्रजातन्त्र की नित्यप्रति की परिवर्तन शीलता को ब्रम्हा के शब्दों में देख सकतें है,

'' क्या कहते हो ?
देवराज,
क्या यह भी लौकिक नेताओं का प्रजातन्त्र है,
जो जब चाहे
इच्छाओं में परिर्वतन कर
नियमों को अनुकूल बना लें।'' ५५

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि यह कि यह युद्ध परक काव्य नाट्य है जिसमें युद्ध की भयंकर एवं युद्धोंत्तर स्थितियों का भी चित्रण किया गया है।

<u>५- कुरुक्षेत्र-रामधारी सिंह दिनकर-</u> प्राचीन काल से संसार के सामने सबसे विकट समस्या है युद्ध और शन्ति की यही समस्या कुयक्षेत्र की मूल्य समस्या है। कुरूक्षेत्र की कथा का आधार

महाभारत से लिया गया है। प्रथम सर्ग में कुरूक्षेत्र' का युद्ध समाप्त हो चुका है। पाण्डुवों की विषय हो चुकी है किन्तु उनकी इस विजय का क्या प्रभाव पड़ा?

उनकी विजय के पीछे छिपा हुआ ध्वंस कितना दर्दनाक है, यदि वे युद्ध न आरम्भ करते तो य ह नाश क्यों होता? भारत वर्ष की वीरता की तथा पराक्रम का वैभव क्यों नष्ट होता ? क्यों पुत्रहीन मातायें होती और वैद्धव्य को देखती ? किन्तु उन्हें इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं मिला। यह प्रश्न उन जीतने वालों के हृदय में आघात पहुंचाते है, वे सोंचते है कि किसी भी प्रकार हम अपने आपको इस भीषण आघात से बचा नहीं पाते। युधिष्ठिर और अर्जुन भीष्म पितामाह के पास जाते है-

युद्ध की ज्वाला प्रथमतः नायकों के पेट में जहराग्निसी जलने लगती है-

''स्वार्थ लोलुप सभ्यता के अग्रणी

नायको के पेट में जगराग्नि-सी। ''५६

जन समूह अपने आप युद्ध में भाग लेना नहीं चाहता परन्तु व्यक्तियों की विषैली सांसे सामाजिक वातावरण को कलुषित कर देती है जिसके परिणाम स्वरूप समुदाय को भी युद्ध में भाग लेना पड़ता है-

''चाहता लड़ना नहीं समुदाय है,

फैलती लपटें विषैली व्यक्यिों को सांस से। '' ५७

महाभारत में युद्ध की आग, जो धधकी, उसके पीछे कौरव और पाण्डवों के बीच के द्वेष एवं प्रतिशोध ा की भावना है जिससे सारा देश नष्ट हो जाता है-

'' पाँच ही असहिष्णु नर के द्वेष से

हो गया संहार पुरे देश का। '' ५८

कवि युद्ध की भी व्याकुल है तथा किसी प्रकार उससे मुकित खोज लेना चाहता है। यह समस्या इस काव्य की मूल समस्या है। कवि कहता है कि यह तूफान कई कारणों से आय-कौरवों ने पाण्डुवो का अपमान किया, उनका राज्य छीन लिया, भीम को जहर पिलाया, द्वोपदी को दासी बनाकर सभा में लाये तथा उसका चीरहरण किया, लाख के घर में उन्हें जलाने की कोशिश और अन्त में वनवास से वापिस आने पर राज्य लौटने का बचन भी पूरा नहीं किया, इन्हीं प्रतिशोध के कारणों ने महाभारत के विनाशक, विध्वंषकाणी युद्धों का जन्म दिया। महाभारत के युद्ध के अनेक कारण थे। बचपन में जब अर्जुन ने पक्षी को बेध दिया था तभी दुर्योधन के मन में पाण्डवों के लिये ईष्षा जाग उठी थी, और वह ईष्षा निरन्तर बढ़ती ही गयी, उसे शान्त करने का प्रयास ही नहीं हुआ, इसी ईष्षा के कारण सुयोध

ान ने तुम्हारा राज्य जुएं में जीता तथा द्वौपती का भरी सभा में अपमान किया। इस महाभारत के युद्ध में अनेक योद्धाओं ने अपने व्यक्तिगत कारणों से प्रेरितहोकर युद्ध में तुमहारा युधिष्ठिर या युयोधन का साथ दिया।

'' इस प्रकार यह स्पष्ट है कि महाभारत के युद्ध के बहुत पहले से ही उसकी पृष्ठभूमि तैयार होती चली जा रहीं थी। ज्वालामुखी पर्वत अचानक ही नहीं फटता। उसके भीतर धीरे-धीरे ताप संचित होता रहता है जो किसी दिन शकितकी बन कर फट पड़ता है। '' ५६

आज से हजारों वर्ष पूर्व जो युद्ध की समस्या युधिष्ठिर के सम्मुख उपस्थित थी वही आज के संसार के सामने उपास्थित है। भीष्म ने जो उपाय युद्ध रोकने के सुझाये थे वे आज भी उतने ही महत्वपूर्ण है जितने कि उस युग में थे। हजारों वर्ष के अन्तर में भी विषयक समाज के जीवन में कितनी समानता रहती है, व्यक्ति हमेशा शान्ति की कामना करता है और युद्ध से घ्रणा करता है। यही मानव जीवन का आधार है।

''युद्ध शुरू होते ही मूल्य ऐसे उलझ जाते हैं कि रावण और कौरवों के अर्द्वष्य अर्धम प्रहारों के साथ राम और पाण्डवों को भी कुछ न कुछ अर्धम प्रहार करने ही पड़ते है। धर्म जहां थोड़ा सा रखलित हुआ वह सरकता और उलझता हुआ चला जाता है और धर्म युद्ध शुरू करने वाला इस आधर्मिकता के लिए कहीं न कहीं विवश हो जाता है और अपनी इस विवशता और उसके परिणाम स्वरूप उत्पन्न आधार्मिकता का बोध उसे निरन्तर पीड़ित करता है अर्थात वह एक ही साथ एक युद्ध बाहर लड़ता है एक भीतर युयुत्सा और मानवीय उजण्य का एक भयानक द्वन्द् उसे कसता चला जाता है और विजय के पश्चात भी वह उल्लास नहीं पश्चात भोगता है, साम्राज्य नहीं सामने बिछा हुआ शमसान आता है। ''६०

६- मुक्तिबोध की रचनाएं-

क- लकडी का बना रावण-'' लकडी का बना रावण' कविता में मुक्तिबोध ने रामायण के प्रसिद्ध असदपान रावण का चयन किया है। लोक चेतना में रावण एक अधम चरित्र प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत कविता में मुक्ति बोध ने रावण की पहचान मिट्‌टी या कागजी शेर से की है। लकड़ी काबना रावण कविता में जीर्ण-शीर्ण सामन्ती समाज व्यवस्था के प्रतीक के रूप में है इसे मार्म्सवाद की भाषा में वुजुर्ग का प्रतीक माना जा सकता है। प्रस्तुत कविता में वानर व लंगूर है जिन्हें रावण कुहरे एवं अंधकार के रूप में देखता है ये उस जन समूह के प्रतीक है जो शोषण में जी रहे है। परन्तु आज उनमें अपने अधिकार को पाने का संकल्प दिखाई पड़ता है जिससे रावण भयाकृत दिखाई देता है कि कहीं वे कुहरे अंधकार के रूप में ये जन शक्ति के प्रतीक बानर हमला कर बैठे-

'' मेरी इस अहिवीय

सत्ता के शिखरों पर स्वर्णभ

हमला न कर बैठे खतरनाक

कुहरे के जनतन्त्री

बानर ये नर ये

समुदाय भीड़

डार्क मासेज ये मात्राऐं---------। ''६१

परछाहीं मालुम पड़ती है वही वारनाकृतियों धीरे-धीरे ठोस हो जाती है। यह संकेत भी मिलता है कि जो आकृतियां छने-छने रूप में माना जा सकता है। यह जन-सोकृिता क्रान्ति या विद्रोह के समान्तर है। इस पषाने के लिये दमन चक्र चलाने के भी संकेत है। रावण फुहड़ शब्दों का प्रयोग करते हुये आसमानी शमशीरों और विजलियों का आवाहन ब्रम्ह शक्ति के रूप में करता है।

ख- जिन्दगी का रास्ता- 'जिन्दगी का रास्ता' कविता में मुक्ति बोध ने युद्धोत्तर विश्व की पूंजीवादी शक्तियों एवं शोषण की समस्या को अपनी रचना का विषय बनाया है। मुक्तिबोध ने मुकितबोध ने इस अत्याचार की अभिव्यक्ति इसके पात्र राम के कल्पना चित्रों के द्वारा करता है। कवि ने बीसवीं शदाब्दी के विश्व का सामाजिक-राजनीतिक तथा आर्थिक चित्र कवि पौराणिक और आधनिक सभ्यता के संयुक्त उपादानों के सहारे खींचता है।-

'' आधुनिक सहस्वमुख रावण से द्रोह कर।

विद्रोही भूमि के संगर-रत पुत्रों ने।

धुयें के उभरते हुये बादलों के ठीक बीच।

भागती हुई कौंधती सी ज्वाला सी।

प्रबंन्ति धारा को

आंखों से देखा-------

अपने ही हाथों से छूटी हुई।

(स्टेनगन की ही) वह आग थी। '' ६२

आधुनिक पूंजीवाद के रूप में चित्रित है तो इसके विरोध में सहस्त्र मुख रावण संगर-रत पुत्रों की उपस्थित है। कवि ने राम कथा के पात्र दसमुख रावण को सहस्त्रमुख रावण कहकर आधुनिक पूंजीवाद के जीवन संदर्भ में गुणात्मक रूप में बढ़ जाने की ओर संके दिया है। पूंजीवादी शक्तियां जिस तरह निम्नवर्ग का शोषण करती है उसका मूर्त चित्र निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है-

'' पूंजीवादी शक्तियां भयंकर।

जन-जन को।

दमन की फसिरती भट्ठी में झोंककर।

बनाया चाहती है वे उनकी अस्थियें से श्वेत

आराम का फर्नीचर। ''६३

ग- जमाने का चेहरा- '' जमाने का चेहरा'' कविता में मुकितबोध ने आन्तर्राष्ट्रीय राजनीति

को दो महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन किया है। प्रस्तुत कविता में पश्चिम यूरोप की स्थिति का वर्णन, स्टालिन ग्राद का युद्ध, द्वितीय विश्वयुद्ध, गुरिल्ला (छापामार) युद्ध एवं लाल सेना की विजय की चर्चा की गई है। द्वितीय विश्वयुद्ध में ब्रिटेन और यूरोप हिटलर के अधीन हो गया था। परिणाम स्वरूप सोवियत संघ पर हमला कर दिया। सोवियत संघ ने आत्म सर्मपण बदले युद्ध के मुकाबले को ही आत्म स्तमान करे अनुकूल समझा। सोवियत संघ जिस समय नाव्सियों के इरादों को कुचलने का निर्णायक प्रयत्न कर रहा था उस समय भारत में महात्मा गाँधी के नेतृत्व में भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन भी अपने चरम पर था। मुक्तिबोध ने नाजियों के सोवियत संघ की ऐतिहासिक लड़ाई और भारतीय राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन दोनों जोड़कर देखा-

'' खून टपकता हुआ
जलता हुआ
पंजा एक
गगन के घोर से
स्तालिनग्राद पकड़ने में जिस दिन मुड़ा था।
उसी दिन शिक्षा की धारा में।
करूणा की गहरी नील लहरों में
भभकती परछाई छायी थी। ''६४

\+ + + +

'' फिरंगी फौजियों का बलात्कार
गाँधी थे गिरफ्तार
फिरंगी फौजों की टोलियों की
गोलियों की बौछार !!
मैदानी पवन में कांपते थे सुबह से।
खून-सनी जिस हवा से।
संम्भावी भारतीय।
विभाजन समाचार।'' ६५

यही फासिस्ट विरोधी युद्ध सोवियत संघ से लेकर भारत तक लड़ा जा रहा था, कवि थी उसे निजी स्तर पर लड़ रहा था। वह यह संकेत है कि स्टालिन याद के युद्ध पर हारे विश्व की शान्ति और स्वतन्त्रा-प्रिय जनता की नजर टिकी हुई थी। फासिस्ट विरोधी इस युद्ध में मुक्तिबोध विश्व मानवता की शक्ति, वेदना और नयी चेतना को अपनी तरह से सुनते है-

'' उसी की आवाज।
भीतर से उठती हुई।

बोल्गा के सैनिकों ने सुनी थी।

अफ्रीकी जंगलों में।

नीग्रों ने सुनी वह।

मलाया के जंगल के योद्धा ने सुनी थी।

मात्रवे में बैठे हुये।

मैंने भी सुना उसे।'' ६६

<u>७- वीरवाला कुंवर अजबदे पवाँर-डॉ. महेश दिवाकर-</u> आधुनिक युग में युद्ध काव्यों के नायक एतिहासिक वीर चरित्र ही नहीं रहे वरन वीरांगनाओं को भी युद्ध काव्यों में या तो प्रधान नायिका के रूप में चित्रित किया गया है अथवा वे युद्ध की प्रेरणा देने वाली वीरगना चरित्र के रूप में चित्रित कुंअर अजब के पंवर एक ऐसी ही वीरगंना थी वह महाराणा प्रताप सह धर्मणी थी और जिसने महाराणा प्रताप को अकबर से संधि के लिये रोका और वर्षो कष्ट सहने के बाद घास की रोटी खाने के लाले पड़ जाने पर भी और नवजात राजकुमार अमर सिंह पुत्र के भूख से विध्वल होने के बावजूद भी कष्टों से न विचलित होने के लिये प्रेरणा दी जिसके स्वरूप महाराणा प्रताप ने वीर सैनिक और सरदारों को एकत्र किया, छापामार युद्ध किये और राणाप्रताप को स्वाभिमान प्रदान कराया ऐसी महान प्रेरणा प्रदान करने पाली कुंवर अजबदे पवांर को इतिहास ने उपेक्षित कर दिया था। इधर आध ुनिक युग के कवि डा० महेश दिनकर ने वीरवाला कुंवर अजबदे पंवार आठ सर्गों का खण्ड काव्य लिखकर इस ऐतिहासिक किन्तु उपेक्षित चरित नायिका को पहली वार हिन्दी कविता में स्थान देकर संकल्प कार्य किया है।

जहां तक कुंवर अजबदे पंवार के ऐतिहासिक होने का प्रश्न है इसके कोई सनेह नहीं कुंवर राणा प्रताप की पत्नी थी, जिन्होंने राणाप्रताप को अकबर से संधि करने से रोका अथवा नहीं इस विषय में इतिहास कार मौन है। किन्तु वे इस प्रकार कल्पना करके एक ओर कुंवर अजबदे पंवार के चरित्र को ऊँचे उठाया है दूसरी ओर इतिहास कारों का ध्यान इस आकृष्ट किया हैं कि वह शोध द्वारा निकर्ष निकाले कि इतिहास का काव्य क्या था। कवि डा० महेश दिनकर के अनुसर-कुंवर अजबदे पंवार का रूप और सौन्दर्य उनके नाम के अनुसार अन्त ही था-

'' अजब सलौना रूप था

सौन्दर्य की खान

वह वाला थी षोडसी

क्षत्रिय कुम की शान। '' ६७

कुंवर अजबदे केवल सौन्दर्य में दी अजब गजब नहीं थी बल्कि वह आप से प्राणनाथ को अकबर की आधीनता न स्वीकार करने की भी प्रेरणा देती हैं। उस वीर वाला की सिंह गर्जना कवि के शब्दों में-

'' अकबर की आधीनता।

करो नहीं स्वीकार।

जब तक तन में प्राण है।

करो युद्ध भवीर। '' ६८

वीरगांना रानी में ही अकबर रूपी व्याल का फन कुचलने के लिये और विजय भी प्राप्त करने के लिये प्रेरणा प्रदान की-

'' अकबर रूपी व्याल का

फन कुचलो दे मीत।

करो राज गण-मन्त्रणा

होय सुनिश्चित जीत।'' ६९

महाराणा प्रताप ने स्वयं वीरांगना अजबदे के सौर्य और स्वाभिमान की प्रशंसा करते हुये उसे क्षत्रिय कुल की शान की संज्ञा दी-

'' कहावीर प्रताप ने

धन्य ! अजबदे प्रान !

तुम संदृश वीरांगना

क्षत्रिय-कुल की शान। '' ७०

वीरांगना अवंतीबाई लोधी-थम्बन सिंह

वीरांगना अपन्ती बाई लोधी''- खण्ड काव्य थम्म्नयसिंह सरल ने आठ सर्गो में विभाजित किया है। अवन्ती बाई लोधी १८५४ की क्रान्ति का एक उपेसित पात्र है जिसे कवि ने नये रूप में प्रस्तुत किया है। मध्यप्रदेश के मण्डला जिले में स्थिति राज्य रामगढ़ की वह रानी थी उनके शौर्य एवं वीरता की गथायें अपना मत्रण अलग-प्रभाव छोड़ती है। इन्होंने सुरक्षातमक लड़ाई नहीं लड़ी इन्होंने अंग्रेजों को मण्डला के अतिरिक्त ग्यारह स्थानों पर पराजित कर अपने देश की महान वीरांगना में स्थान बनाया है। यह वीर रस से युक्त स्वतन्त्रा संग्राम का संक्षिप्त युद्ध परक काव्य है निम्न पंक्ति में इसकी क्रतियां मिलती हैं। अवन्ती बाई लोधी के वीरत्व को इन शब्दों में देख सकते है-

'' धन का घमण्ड तोड़ देने वाली गर्जवा से,

मेदिनी चमक जिमि व्यूह को तराशती है।

सूरज प्रलय का उगा हुआ तो गगन में।

ब्रहिमान-ब्रहिमान सर्जना पुकारती है।

हृदराती आधी हुई आंधी सी अवन्ती बाई।

सिंहनी-सी शावको में झुण्ड पै दहाड़ती है।

चौंसठ कलाओं से नचा रही कलाई मध्य,

तलवार बौरियों के पक्ष में उतारती है। '' ७१

स्वतन्त्रा संग्राम की समर भूमि में अंग्रेजों को ललकारते हुये प्रेरणा दामिनी चरित्र बनकर वीरगति को प्राप्त हुई।

क्रान्ति महारथी-धर्मपाल अवस्थी

भारतीय स्वतन्त्रा संग्राम से जुड़े क्रान्तिकारियों की अदम्य देशभक्ति और उनके जीवनोत्सर्ग के जीवन्त एवं प्रेरणाप्रद प्रसंगों से उन्हें परिचित कराना तक आवश्यक नहीं समझा गया। इसी से आधुनिक पीढ़ी में क्रान्तिकारियों के प्रति समुचित श्रद्धा तथा उनके आदरी जीवन का अनुकरण करने की प्रवृत्ति का प्रायः भायाव दिखता है। 'धर्मपाल अवस्थी' जी ने 'क्रान्ति महारथी' खण्डकाव्य के माध्यम से देश की स्वतंत्रता के लिए संकलित अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद की जीवन भाषा प्रस्तुत की है।

' क्रान्ति महारथी' वीर काव्य होने के कारण युद्ध काव्य हैं। यह धनादरी छन्दों में ग्यारह सर्गों में लिखा गया है। सर्गों का नामकरण रहा इस प्रकार है- प्रणाम, उदय, वेप्रदण्ड महन्त, काकोरी काण्ड, साधुवेश, मातृमिलन, साण्डर्सबध, ऐसाननीवय काण्ड, संख्यरण, मोंर अमर बल्दिान।

आजद का जीवन सचमुच आजाद प्रकृति का ये, आजादी लक्ष्य था। स्वतन्त्तता के लिये वे बन्दीग्रह को अपना घर मानते थे। गाँधी के असध्योग आन्दोलन के लिये आजाद अत्याचारियों के और जुल्म का विरोध कर रहे थे। कवि के शब्दों में-

'' कैदकर लाए गये सरेधार के समदन
थे जो मजिस्ट्रेड सिद्ध क्रूरता दिखाने में।
पूंछा उसने कि नाम बोले, है आजाद और
काम ?'मजदूरी' आजादी के कारखाने में।
झंझला के बोला 'नाम पिता का बताओ' वीर
ने कहा 'स्वतत्र कहलाते हैं जमाने में।'
हुआ जल मनु के कबाब सुनके जवाब
पूँछा रहते कहां ? बताया जेलखाने मैं। '' ७२

आजाद के व्यक्तित्व का ओजस्वी चित्रण करते हुए कवि धर्मपाल अवस्थी ने कहा है-

''दंग रह गया निर्दयी विचारने लगा कि
सामने का सत्य हो कि इन्द्रजान है।
कहां यह उम्र और कहां ये असीम शक्ति
बाकभाल शौर्य का प्रतीक नौनिहाल है। '' ७३

अंधेरे में-

अंधेरे में गजानन माधव मुक्ति बोध की सुप्रसिद्ध एवं सर्वधिक लम्बी कविता है जो आधुनिक हिन्दी काव्य को विशिष्ट देन है। इसे कवि ने आठ खण्डों में विभाजित किया है। शमशेर बहादुर सिंह के अनुसार- '' यह कविता देश के आधुनिक जनत्त इतिहास का स्वतन्त्रा पूर्ण और पश्चात का एक

दहकता इस्पाती दस्तावेज है। इसमें अजब और अदभुत रूप से व्यक्ति और जनका एकीकरण है। देश की धरती हवा आकाश देश की सच्ची मुक्ति आकांक्षी नस-नस इसमें कउक रही है।---- और भावनाओं के टकराहट की कविता है। '' ७८

अंधेरे में तनाव एवं टकराहट की एक ऐसी कविता है कि जो सामाजिक संदर्भों को लेकर कथा का संयोजन करती है। यह कथा कवि की आत्मकथा बनी बनाई नहीं बल्कि उसकी यातना उसकी चिंतन उसकी संवेदनाओं से गढ़ी हुई है। इसका नायक कवि अपने पर ही केन्द्रित न होकर समष्टि जात से जुडा हुआ है अतः संघर्ष की गाथा प्रस्तुत करता है। कवि जीवन रूपी अंधेरे कक्ष में एक रहस्य मय आकृति का अध्यक्ष होता है। किन्तु वह दृष्टि गोचर नहीं होता जिसमें वह प्राचीन परम्पराओं को क्रमशः नष्ट होते हुए देखता, इस परिवर्तन का प्रभाव सालिन के रूप में दिखाई देता है जिससे प्रभावित होकर चूनाखिरने लगता है तथा से फूले प्लास्टर ढह रहे है जिससे एक आकृति उभर आती है। यह आकृति समाज रचना के संस्थापक मनु की है-

'' मेरे ह्रदय की धक-धक
पूछती है-वह कौन
सुनाई जो देता पर नहीं देता दिखाई।
\+ + + +
कौन मनु ? '' ७६

यहां अंधेरा परे विश्व में फैला दिखाई देता है, कवि के अन्तः स्थल में एवं ब्राह्य परिवेश में भी अतः दोनों में गहरा सम्बन्ध है, हर क्षण कवि के मन में द्वन्द एवं संघर्ष ही चलता रहता है। सामाजिक अव्यावस्था ही अंधकार का सृजन करती है और अंधकार ही सामाजिक अव्यावस्था का, अंत अंधेरे में भी कवि प्रकाश के लिए निरन्तर संघर्ष ही करता है। कवि कमरे के सूनेपन और अंधेरे के द्वारा स्वर और सन्नाटे का संघर्ष प्रस्तुत करता है जिसमें कवि के हृदय द्वारा की सांकल कोई खटखटाता रहा है वह सीधी और यथार्थ स्थिति से अवगत कराने के लिए तड़प रहा है कवि के अन्तर्मन में अनेक प्रश्न उठते है कि मुझसे कौन मिलने आया है, इस कुहरे में मुझसे मिलने के लिए कौन प्रतीक्षारत है-

आगे चलकर अंधेरे और प्रकाश का तनाव सामने आता है, कवि ने कई जगह अनेक महापुरुषों का नामोंल्लेख करके स्थिति को स्पष्ट करना चाहा है जैसे टॉल्सटॉय, गाँधी, तिलक ये सभी आकाश के प्रतीक है तथा यही प्रकाश पुरुष मानों अपनी अपनी मानवीय पीड़ा और करूणा लिए युगों के अंध ेरे में भटक रहे हैं। टाल्सटांय तारों के बीच दिखाई देते है जो घूमते व रूकते हमे पृथ्वी की ओर दृ ष्टि किये हुये हैं-

''हाय! हाय ! टाल्सटॉय
कैसे मुझे दीख गये
सितारों के बीच

घुमते व रुकते

पृथ्वी को देखते। '' ८०

कवि प्रोसेशन का चित्रण करता है जिसकी हवनि तरंगें उदास और गंभीर लहरों से युक्त है, जुलूस में सोमल व्यक्ति बहुत प्रतिष्ठित माने जाते है किंतु यहां वह अपने विकृत रूप में हैं। इस जुलूस की विचित्रता यह है कि इसमें सभी वर्ग के लोग शामिल है- प्रकाण्ड आलोचक, कर्नल, ब्रिगेडिया, सेना पति, सेनाध्यक्ष, विचारक, कपिण्व, मन्त्री, उद्योगपति विद्वान और हत्यारा कुख्यात डोमा जी उस्ताद सभी अपनी वास्तविक सिथति में हैं। जुलूस समष्टि की समस्या के समाधन रूप में लाया जाता है किन्तु जब इसके लक्ष्य का निर्धारण इसके विपरीत होता है और इस स्थिति को जान लेने वालों का जीवन असुरिक्षत हो जाता है। इसी प्रकार स्वर्थरता कवियों की धूर्तता का उदघाटन करते हुये एवं एक पागल के गीत सुनकर नया संघर्ष बोध जाग पडता है वह अपनी निष्क्रियता को सामाजिक विद्रपताओं का कारण मानने लगता है। सामाजिक यथार्थ एवं व्यक्तिगत यथार्थ में संघर्ष चलता है, अतः संघर्ष की कविता है। कवि अंधकार की कालिमा में डूबे हुये देवता कथति गाँधी जी की मूर्ति देखता है, चारो ओर चीखने की विसंगतिपूर्ण करुण पुकार सुनाई देती हैं। गांधी जी की कल्पित मूर्ति यह अवगता कराना चाहती है कि यह संसार कूड़े-कचरे का ढेर नहीं गुणों का पुंज है अतः संसार की प्रगति गुणों के आधार पर हो सकती है। मूर्ति के इस सन्देश से कवि बेचैन हो जाता है क्योकि समाज के मसीहा तो बहुत बनने वाले है किन्तु वास्तव में उसकी किसी प्रकार की समस्या का समाधान नहीं करना चाहिये, मात्र अपने आपको समाज में प्रतिष्ठित करना अपना वक्ष मानते हैं। वर्तमान के गहन अंधकार मय परिवेश में सुन्दर भविस्य को वहन करने का सुखद अनुभव आ चुका है उसका स्थान अब कारी बन्दूक से होती है। यह बन्दूक किसकी है ? यह जन-समान्य एवं कवि के विद्रोह को व्यक्त करती है, बन्दूक, ही जन, सामान्य को व्यकित करने का माध्यम है क्योंकि बन्दूक सत्ता वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है अतः जन-सामान्य इसके बोझ को ढोने के लिये बाध्य है।

मुक्तिबोध ने इस कविता में समकालीन जिन्दगी की वास्तविकताओं से परिचित कराया है क्योंकि मानव जीवन युद्धमय हो गया है कारण यह है कि मनुष्य के भीतर ही भीतर बाहर तथा बाहर में जोरदार टकराकर चलती ही रहती है समाज में कोई भी जीवित प्राणी कहीं न कहीं संघर्ष ही कर रहा है। यह संघर्ष का द्वन्द्व ही समाज में युद्धमय वातावरण को जन्म देता है। यक कविता आत्म संघर्ष के माध्यम से समाज के संघर्ष की गाथा प्रस्तुत करती है।

असाध्य वीणा-अज्ञेय

' असाध्यवीणा' प्रयोगवाह नामक काव्य धारा के प्रवद्रक एवं आधुनिक काव्य-जगत के यशकित कवि सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यापन 'अज्ञेय' कृत लम्बी कविता है, जिसमें वीणा बजाने को लेकर, व्यापक संघर्ष एवं द्वन्द्व को चित्रित किया गया है। केशकम्बली के आगमन पर राजा वीणा बजाने को लेकर उसके प्रति आस्थावान हो असाध्यवीणा का पूरा रहस्य सुनाते हैं। कवि में द्वन्द्व युद्ध एवं संघर्ष

असाध्यवीणा को बजाने के लिये है अतः अतीत का सन्दर्भ लेकर वर्तमान परिस्थितियों से कवि प्रभावित हुआ है, क्योंकि इसकी प्रमुख समस्या है वज्र कीर्ति द्वारा निर्मित वीणा का न बजना, तत्वपश्चात अनेकानक साधको द्वारा वीणा बजाने का भरसक प्रयास, किन्तु इस प्रयास की असफलता के पश्चात केश कम्बली द्वारा असाध्य वीणा को बजाकर राजा के अन्तर्द्वन्द्व तथा अन्य साधकों, द्वारा वीणा साधनों का संघर्ष 'असाध्य वीणा' बजाकर दूर करता है।

केशकम्बली समष्टि सुख की प्राप्ति हेतु वीणा को साधता है इससे मधुर संगीत ध्वनि होता है, जिसमें राजा को यश प्रदान करने वाली देवी वरमाला लिये मंगलगीत गा रही है। असाध्यवीणा के ध्वनि हो जाने पर मानों राजमुकुट हल्का प्रतीत हो रहा है तथा ईर्ष्या, महत्वकांक्षा, द्वेष, चाटुकारिता आदि उनके व्यक्तित्व से तिरोहित हो गये, तथा धर्म भाव से उसे उतसर्ग करने की प्रेरणा मिलती है क्योंकि राजा का कर्तव्य समष्टि हित की चिनता से होता है। रानी ने इस शब्द ध्वनि को अलग सुना-

" तुम्हारे ये मणि-मणिक, कंठहार, पट-वस्त्र,
मेखला-किंकिणि-
सब अंधकार के कण है ये। आलोक एक है
प्यार अनन्य ! उसी की
विधुल्लता घेरती रहती है रस-भार मेघ को
थिरक उसी की छाती पर, उसमें छिपकर सो जाती है
आरवस्त्र, सहज विश्वास-भरी।
रानी
उस एक प्यार को साधेगी। " ८१

रानी जो राजा के साथ प्रजा की हितकारी बनकर उनके हित की सोंचती और क्रियान्वयन पर बल देती किन्तु वह अपने ऐंश्वर्य की दुनिया में डूबी हुई समाज की समस्याओं से विमुख थी, यह ध्वनि रानी के अर्न्तमन में प्रेम की भावना जाग्रत करती है और उसे यह एहसास होता है कि मुझे अपार लोगों के भरण-पोषण के कर्तव्य का निर्वाह करना है। इसी प्रकार किसी को नयी वधु की सहमी-सी पायल की ध्वनि, किसी दूसरे को शिशु की किलकारी, जाल में फंसी मछली की तडपन, शान्त आकाश में उड़ती चिडिया तीसरे को मंडी की हेलमठेल, ग्राहकों की अस्पर्घा भरी बोलियां चौथे को मन्दिर की तालयुक्त घंटा-ध्वनि, पांचवे को लोहे के सधे हथौंडे से एक-सी, छठवें को लंगर पर कसमसा रही नौका पर लहरों की विना रूकी हुई थपक, सातवें को बटिया पर चमरौधें की रूंधी चाय, आठवें को कुलिया से कटी मेड़ पर बहते जल की छुल-छुल, युद्ध का ढोल संझा गोधूलि की लघु टुन-टुन प्रलय का डमरू नाद, जीवन की पहली अंगडाई, महाजृम्भ विकास काल, सभी को अलग-अलग स्वर देकर वीणा पुनः मूक हो गई। " उसको आतंक-मुक्ति का आश्वासन- " ८२

प्रस्तुत पंक्तियों के माध्यम से कवि ने आतंकवाद की समस्या को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में दिखाने

का प्रयास किया है क्योंकि द्वितीय विश्वयुद्ध में अमानवीय विज्ञान एवं यन्त्र विज्ञान का व्यापक रूप देखा जा चुका है इस खतरे की ओर ही कवि की दृष्टि गई है। एक ओर कवि विज्ञान के अमानवीय प्रयोग से मुक्ति की कामना करता है तो दूसरी ओर सर्वसत्तावादी शासन से मुक्ति चाहता है इसके प्रभाव को हम निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं-

'' वह भरी तिज़ोरी में सोने की खनक-
उसे
बटुली में बहुत दिनों के बाद अन्न की सोंधी खुदबुदा '' ८३

युद्ध प्रिय लोगों को युद्ध नाद लगता है-

''उसे युद्ध का ढोल,
इसे संसा-गोधूलि की लघु टुन-टुन
उसे प्रलय का डमरू- वाद। '' ८४

डमरू जो शंकर जी के प्रतीक रूप में चित्रित है इससे प्रलयकारी रूप ही सामने आता है अतः कुछ सुनने वालों ने इस वीणा से प्रलय-ध्वनि सुनी तथा आगे इस वीणा से विकराल काल का अट्टाहास सुनाई पड़ा। असाध्यवीणा का न बजना किसी की समस्या नहीं थी वरन सब उसे सुनना-चाहते थे, केशकम्बली अपने अहं को समष्टि के लिये समर्पित कर, उसे साधता है और सफलता मिलती है इस प्रकार अतीत के सन्दर्भ के साथ -साथ वर्तमान विसंगति पर दृष्टि डाली हुई है।

पटकथा-धूमिल-

'पटकथा' सुदामा प्रसाद पाण्डेय 'धूमिल' द्वारा रचित हिन्दुस्तान की कहानी है जिसमें स्वतन्त्रता के बाद के वर्षो का लेखा -जोखा प्रस्तुत किया गया है कविता के म्रत्य स्वर आक्रोश एवं व्यवस्था के प्रति विद्रोह है। कवि के मनोभाव विभिन्न प्रकार की सोच उत्पन्न करते है ,जिसमें आदेर्श पीछे छूटते जा रहे है और मूल्य तिरोहित हो रहे है, स्वतंत्रता काले धब्बे के रूप में परिवर्तित हो गई है, औरतो के लिये इस शब्द की कोई सार्थकता नही क्यों कि औरत के प्रति समाज के नजरिए में कोई फर्क नही पडा। स्वतन्त्रता का हमारे जीवन में कैसा स्वद है? अपनी भूख को जिन्दा रखना अर्थात स्वतन्त्रता की महत्वाकांक्षा को बनाए रखना व्यवस्था के प्रति कवि बराबर समाज से युद्ध करता रहता है क्योंकि व्यवस्था को सुदृढ बनाए रखने की उसकी महत्वाकांक्षा अतितीव्र है, वह इस आस्था के साथ श्री रहा है कि आज नहीं तो कल या कुछ दिनों के बाद यह समस्या दूर अवश्य होगी। कवि युद्ध करता है अपने देश की प्रजातान्त्रिक शासन-प्रणाली से जिसमें जनता तथा सरकार के बीच कोई भेद भाव नही होता, जिसका लक्ष्य जनता की सुरक्षा तथा हित करना होता है उनकी समस्याओं को सुलझाने का प्रयास करना किन्तु यह एक शब्द मात्र बनकर रह गया है, यह शब्द कुहरा,कीचड,कॉच से बना हुआ दिखाई देता है। मनुष्य की स्वार्थपरता को भेड के उदाहरण द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत किया है

अपने स्वार्थ हेतु समाज के विभिन्न वर्गो एवयं सम्प्रदायों के बीच युद्ध का वातावरण बनता है यदि व्यक्ति ब्यष्टिवादी चिन्तन छोडकर समस्टिवादी चिन्तन यको महत्व दे तो संघर्ष की स्थिति उत्पन्न नही हो सकती तथा कभी भी युद्ध जैसी वीभत्सकारी स्थिति का सामना नही हो सकता,यहां यदि भेंड से प्रेरणा लेकर जीवन जिया जाये तो ऐंसी स्थिति से निपटा जा सकता है, कवि के शब्दों में-

'एक भेंड है जो दूसरों की ठण्ड के लिये
अपनी पीठ पर
उन की फसल ढो रही है।'

और करनी के भेद से इतना आहत कि वह अन्तर्द्वद्व से घिर जाता है और सांचता है कि सामान्य जन जो मूलभूत आवश्यकताओं से वंचित हो वह गुलामी और आजादी को बाटे नही समझ सकता। यदि सामान्य वस्तुओं के अभाव में जी रहे व्यक्ति को हम सौभाग्य शाली कहें कि वह आजाद देश का रहने वाला है तो यहां आजादी शब्द का अर्थ बेमतलब है क्योंकि न तो आजादी से वह अपनी भूंख मिटा सकते है और न ही उसे ओढा और विछाया जा सकता है। देश के नेता सिर्फ चिन्तन करते है किन्तु दरिद्र व्यक्तियों एवं समाज को बुरी दशा से निकालने के निमित्त कोई प्रयास नहीं करते। पटकथा पर डॉ०ब्रम्हादेव मिश्र का मत है कि 'पटकथा निश्चय ही धूमिल की महत्वाकांक्षी कविता है जिसमें अपनी सोंच को एक व्यायपक पलक पर रूपायित करने की कोशिश की है। यह कविता आज के हिन्दुस्तान में एक सोजवान कवि की अपने देश को और उसमे अपने आपको पहचानने की कथा है। '८६कविता का
सबसे महत्वपूर्ण टिस्सा यह है कि उसने भावी समाज की विसंगतियों के बारे में लिखा है जिस समाज की स्थापना के लिये सब ललायित थे।कवि का स्वप्न लोक-प्रगति करते हुये आजादी तक तो पहुंचा देताहै किन्तु राजनीतिज्ञों के सिद्धान्तो का अभाव उस व्यवस्था को तहस-नहस कर देता है आजादी के वाद के जो स्वप्न कवि ने देखे वह आज कितनी बुरी तरह टूटते हुये दिख रहे है कवि ने सामाजिक व्यवस्था एवं राजनीतिक पतन की गाथा-सी प्रस्तुत कर दी है।

मुक्तिप्रसंग--------१९६६

'मुक्ति प्रसंद' राज कमल चौधरी की एक ऐंसी काव्य क्रवि है जिसमे समकालीन यथार्थ की कटुता को विस्र्र से प्रस्तुत कर अंत में छोटे -छोटे आठ प्रसंगों के माध्यम से व्यवस्था का खुलासा किया गया है। कवि ने कृति के माध्यम से जीवन और मृत्यु के बीच झूलते हुये भी जीवन जीने की कला एवं आत्म-मंथन कर जीवन जीने की प्रेरणा की है कवि जीवन की वास्तविकता का चिंतन का अपने आपसे प्रश्न करता हैं तत्पश्चात अपने यथार्थ को स्वीकार करता है- " मुक्ति प्रसंग मेरा वर्तमान है। " ८९

कवि जीवन का जहां वास्तविक चित्र खींचता है वहीं वर्तमान के प्रत्येक उस बिन्दु का खाका सफलता पूर्वक खींचते हुये समाज के सामने सच्चाई व्यक्त करते हैं, इन्होंने सत्य के दृश्य के बड़े ही सहज और सरस परन्तु गम्भीर वातावरण के अर्न्तगत प्रस्तुत किया है। अपने को प्रमुख पात्र तथा

अन्य व्यक्तियों को मुक्ति प्रसंग के सहनायक के रूप में रखते हुये जीवन एवं समाज के नीति अनीति घर-परिवार, रिस्ते नाते, नियम-कानून, शासन प्रशासन के क्रिया-कलापों का आकालन किया जिसमें व्यवस्था अव्यवस्था, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की जटिल समस्याओं पर दृष्टि डाली उन उभरते सवालों पर जिसके कारण युद्ध का जन्म हुआ- युद्ध, ग्रहयुद्ध, अर्न्तराष्ट्रीय युद्ध, अभावों का युद्ध, व्यवस्था का युद्ध, बढ़ती जनसंख्या से युद्ध, विकास कार्यों से युद्ध, राष्ट्रीय कुरीतियों से युद्ध, बेरोजगारी से युद्ध, भुखमरी से युद्ध, जाति से युद्ध, पर्यावरण से युद्ध, गरीबी से युद्ध, अंपना प्रभुत्य स्थापित करने का युद्ध, सीमा-सुरक्षा का युद्ध, बमों अणुबमों के होड़ का युद्ध, अन्याय की समाप्ति का युद्ध, सुख-शान्ति की स्थापना हेतु युद्ध और जीवन मृत्यु का युद्ध आदि अनेकानेक युद्धों का भयावाह दृश्य देखकर उन्होंने अनुभव किया मानव जीवन का तथा मृत्यु का, कवि के शब्दों में-

"इस नगर वधु को महाश्मसन बनाने का श्रेय
मेरे ही रक्त के शंक चक्र सामुद्रिक स्वाद में
जलते हुये नाम मेरे ओत दुहराते हैं वही एक शब्द-
बार-बार बीसमन्त्र
वही एक कामतन्त्र
छत से पलंग झूलती हुई रस्सी का फन्दा और सर्जिकल अस्पताल
तक की इस स्वप्न-यात्रा में कहता है उपाध्याय " ९०

मुक्ति प्रसंग-राजकमल चौधरी- मुक्ति प्रसंग में जीवन और मृत्यु के बीच घटित होने वाली सामाजिक राजनैतिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय और व्यकित विशेष से सम्बन्धित घटनाओं का युद्ध प्रेरित मित्रों का जहां चित्रण किया है वहीं समस्याओं से निरन्तर युद्ध करते हुये जीवन के अन्तिम क्षणों को उत्साह पूर्वक एवं स्वतन्त्र जीवन जीने की प्रेरणा दी है जब तक मानव जीवन है तब तक समस्याऐं साथ रहेगी और उन समस्याओं से हमें संघर्ष करना पड़ेगा, युद्धरत रहना पडेगा इसलिये समस्याओं को जन्म देना हमें बन्द करना चाहिये तथा प्रत्येक व्यक्ति में अपने आपको देखते हुये एक दूसरे को जीवन जीने के मार्ग को सुगम बनाने की प्रयास करना चाहिये। वर्तमान को ऐसा स्वयप प्रदान करना चाहिये जिसमें प्रत्येक व्यक्ति सुख-शान्ति से जीवन व्यतीत कर विभिन्न प्रकार के युद्धों की विभीषिका से मुक्ति पायी जा सके।

नाटक जारी है-लीलाधर जगूड़ी

नाटक जारी है के कवि लीलाधर जगूड़ी साठोत्तर कविता के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। यह काव्य संग्रह आजादी के बाद देश रूपी रंग -मंच पर होने वाले नाटक का प्रमाणित दस्तावेज है। वर्तमान व्यवस्था में माननीय संवेदना की तलाश में जगूडी निर्भय होकर देश में घटित नाटक का रंगमंच पर दर्शाते हैं तथा वितहित व्यवस्था के ध्वंस की कामना करते हैं। कवितारूपी अस्त्र से व्यवस्था की चटटानों को खण्ड करते हुये सैंतीस नाटकीय दृश्यों के माध्यम से आगे बढ़े है। देश नरक के समान, वर्तमान

संत्रासयुक्त जीवन सुनहरे एवं कोरे वायदे, अकवितावादी धराल पर चौथे आम चुनाव की क्रान्ति और उसकी असफलता, बाजार में वस्तुओं का अभाव आदि तथ्य एक साथ एक जगह प्रस्तुत किये गये हैं-

''अपने जमाने के कठोर दृश्यों का क्रम
इतना अनिश्चित है
कि न दर्शक बना जा सकता है
और न अभिनेता
सिर उठाने के बाद जिन्दगी अगर कुछ है
तो सिर्फ अपने खड़्ड़ का अतिक्रमण है''[८५]

कवि अपने अपने विचारों एवं संकल्प शक्ति के सहारे व्यवस्था एवं शत्रुओं से लड़ने की शक्ति लेकर सामने आता है। वह समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार का वर्णन करता है-

''अपनी दरिद्रता झाड़ चुकाने के बाद
सुबह हमारे कपड़ो में
खयाल तक अंखुवाया हुआ नहीं मिलता''[८६]

जीवन में निर्वासन इतना अधिक है जितना 'रामायण में भी नहीं मिलता इसके लिए कवि ने विरोध और चोट करने वाले साहसी लोगों को जगाने का प्रयत्न किया है। कविता में राजनीतिक एवं सामाकि व्यवस्था का विड्रूप चित्रण मिलता है जिससे कवि युद्ध करता है और जनता को भी बिगड़ी व्यवस्था के खिलाफ युद्ध करने को प्रेरित करता हैं। 'भूख चाहे किसी की हो, सार एक है, से गरीबी की समस्या को उजागर करते हैं जिसमें सामान्य व्यक्ति को अपना सहयोग कवि ने दिया हैं। कवि ने प्रमुख रूप से शासकों के चरित्र एवं साजिशों का खुलासा करने का प्रयत्न किया है तथा अत्याचारियों की हरकतें, भ्रटाचार, त्रासदी तथा दमन की आमानुषिक कार्यवाही का पर्दाफाश करने का प्रयत्न किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1— 'कल्पान्तर'—गिरिजा कुमार माथुर—पृष्ठ— 7 नेशनल पब्लिक हाउस नई दिल्ली संस्करण 1983
2— अहिंसा का अमोघ अस्त्र— यशपाल जैन संस्करण—1984 (वर्तमान चुनौतियों का सामना कैसे करें ? —विमला ठकार पृष्ठ 27
3— अहिंसा का अमोघ अस्त्र संकलन सम्पादक— यशपाल जैन पृष्ठ 15 संसकरण 1984 (विश्व कल्याण के लिए— राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह)
4— 'अंधायुग'—धर्मवीर भारती—पृष्ठ—11— संस्करण 1992—लाक भारती इलाहाबाद
5— पूर्वोक्त—पृष्ठ—85
6— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृष्ठ 66—67 संस्करण—1999 तृतीय सर्ग
7— पूर्वोक्त— पृष्ठ—71
8— एक कंठ विषपाई —दुष्यंत कुमार— पृष्ठ—103 दृष्य—4 संस्करण 1997
9— पूर्वोक्त— पृष्ठ— 109
10— पूर्वोक्त— पृष्ठ—113
11—
12— 'अंधेरे में— मुक्तिबोध— पृष्ठ—151 संस्करण 1194
13— 'पटकथा'—धूमिल—पृष्ठ—117—18 संस्करण छठवां 1990
14— 'जागा मेरा देश'— विन्ध्य कोकिल भैयालाल व्यास— पृष्ठ— 86 संस्करण 1990
15— अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध— पी0 रस्तोगी— पृष्ठ— 3 से 11 वां संस्करण 1998
16— पूर्वोक्त— पृष्ठ—3
17— नित्य नूतन—हिन्दी पाक्षिक 15 अगस्त 2000 (हमारा दायित्व—निर्मला देश पाण्डेय सम्पादक) पृष्ठ—21
18— राष्ट्र धर्म सम्पादक आनन्द मिश्र 'अभय' पृष्ठ— 30 जनवरी 2000
19— समकालीन साहित्य समाचार— फरवरी 2000 पृष्ठ— 30
20— 'चीन से' श्री श्यामलाल शुक्ल दैनिक प्रताप संस्करण 1962
21— 'पटकथा'—धूमिल— पृष्ठ—107—108 छठा संस्करण 1990
22— 'मुक्तिप्रसंग'— राजकमल चौधरी— पृष्ठ—19—20 प्रथम संस्करण 1998
23— 'नाटक जारी है'—लीलाधर जगूड़ी— पृष्ठ—91
24— पूर्वोक्त—पृष्ठ—92
25— डा0 के0 पी0 मिश्र संपादक भारत की विदेश नीति पृष्ठ 103
26— 'अंधायुग'— धर्मवीर भारती पृष्ठ—17—18 संस्करण 1992
27— अंतरत्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में सम्पादक निर्मला जैन संस्करण 1994 राधा कृष्ण प्रकाशन
28— अंधेरे में—मुक्तिबोध पृष्ठ—149
29— एक कंठ विषपाई—दुष्यन्त कुमार पृष्ठ 57—58 संस्करण 1997
30— दैनिक 'आज' दिनांक 11 जनवरी 2000 पृष्ठ 8
31— आधुनिक हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियाँ—डा0 ओमप्रकाश शर्मा पृष्ठ—134
32— श्री श्यामलाल शुक्ल से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त रचना 'दंगा शीर्षक'
33— पूर्वोक्त—आंतकवाद शीर्षक कविता से
34— अनामिका से उदधृत राजकमल प्रकाशन दिल्ली संस्करण 1992
35— राम की शक्ति की पूजा निराला— पृष्ठ—109
36— पूर्वोक्त— पृष्ठ—109
37— पूर्वोक्त— पृष्ठ—110
38— पूर्वोक्त— पृष्ठ—110
39— तदुंपरिवन्त पूजा पृष्ठ—114
40— राम की शक्ति पूजा पृष्ठ— 117
41— तदुपरिवन्त पूजा पृष्ठ—117
42— पूर्वोक्त—पृष्ठ—3
43— अंधायुग—भारती प्रष्ठ—10 (स्थापना) संस्करण 1992
44— पूर्वोक्त—पृष्ठ—11 किताब महल इलाहाबाद संस्करण 1992 (पहला अंक)
45— संशय की एक रात— पृष्ठ—93
46— पूर्वोक्त— पृष्ठ—66—67
47— पूर्वोक्त— पृष्ठ—32
48— 'अंधायुग'—भारती—पृष्ठ—11
49— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृष्ठ— 15 प्रथम सर्ग
50— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—अमर कथा से उदधृत
51— हिन्दी प्रबन्धों में जीवन दर्शन—डा0 गायत्री जोशी राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर संस्करण 1992
52— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार पृष्ठ—78 संस्करण 1997
53— पूर्वोक्त—पृष्ठ— 81
54— पूर्वोक्त—पृष्ठ— 129—30
55— पूर्वोक्त—पृष्ठ—136
56— पूर्वोक्त—पृष्ठ—137
57— पूर्वोक्त—पृष्ठ—108—9

58– कुरुक्षेत्र–प्रथम सर्ग–रामधारी सिंह दिनकर पृष्ठ–5 संस्करण 2000 राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली
59– पूर्वोक्त–पृष्ठ–5
60– पूर्वोक्त–पृष्ठ–9
61– रामधारी सिंह दिनकर और उनका कुरुक्षेत्र–तारकनाथ बाली पृष्ठ–5
62– आधुनिक हिन्दी कविता सर्जनात्मक संदर्भ–डा0 रामदरश मिश्र पृष्ठ–187
63– लकड़ी का बना रावण–मुक्तिबोध गजानन माधव सृजन और शिल्प–डा0 रणजीत सिंह पृष्ठ–152
64– गजानन माधव मुक्ति बोध सृजन और शिल्प–डा0 रणजीत सिंह पृष्ठ–127
65– पूर्वोक्त– पृष्ठ–128
66– पूर्वोक्त– पृष्ठ–57
67– पूर्वोक्त– पृष्ठ–57
68– पूर्वोक्त– पृष्ठ–58
69– बीरवल कुँवर अजबदे पँवांर–डा0 महेश दिवाकर पृष्ठ–7 प्रथम संस्करण 1997
70– पूर्वोक्त–पृष्ठ–17
71– पूर्वोक्त–पृष्ठ–17
72– पूर्वोक्त–पृष्ठ–19,
73– विरांगना अवन्ती बाई लोधी–थम्मन सिंह 'सरस' पृष्ठ– 69 सप्तम सर्ग संस्करण 2000
74– क्रान्तिमहारथी–धर्मपाल अवस्थी पृष्ठ–43
75– पूर्वोक्त–पृष्ठ–43
76– अन्तस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में– संपादक निर्मला जैन पृष्ठ 109 (दहकता इस्पाती दस्तावेज–शमशेर बहादुर सिंह) प्रथम संस्करण –1994
77– से उद्धृत अंधेरे में–मुक्तिबोध पृष्ठ–111–112
78– अन्तस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में–निर्मला जैन पृष्ठ–119
79– असाध्यवीणा और अज्ञेय–सम्पादक रमशचन्द्र शाह– पृष्ठ–44 नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली संस्करण 2001
80– पूर्वोक्त –पृष्ठ–44
81– पूर्वोक्त–पृष्ठ–44
82– पूर्वोक्त–पृष्ठ–45
83– पटकथा–धूमिल संसद से सड़क तक से उद्धृत पृष्ठ–104 राजकमल प्रकाशन दिल्ली संस्करण 1990
84– चालीसोत्तर कविता के हीरक हस्ताक्षर–डा0 दुर्गा प्रसाद ओझा पृष्ठ–247–48 संस्करण 2002
85– मुक्ति प्रसंग–राजकमल चौधरी पृष्ठ–10 वाणी प्रकाशन 1988
86– पूर्वोक्त–पृष्ठ–11
87– लुकमान अली–सौमित्र मोहन
88– पूर्वोक्त–
89– मुक्तिप्रसंग–राजकमल चौधरी
90– पूर्वोक्त–
91– 'नाटक जारी है'–लीलाधर जगूड़ी– पृष्ठ–91–संस्करण 1994–किताब घर दिल्ली
92– पूर्वोक्त–पृष्ठ 105

चतुर्थ परिवर्त्त

युद्धपरक आलोच्य काव्यों की कथावस्तु

अ- कथावस्तु के स्त्रोत

ब- कथावस्तु में प्रख्यात और उत्पाद्य

स- स्वकल्पित पात्र और स्वकल्पित घटनाएँ

द- कथानक के चयन एवं संयोजन की प्रक्रिया

चतुर्थ परिवर्त
युद्ध परक आलोच्य काव्यों की कथा वस्तु

आलोच्य काव्यों की कथा वस्तु निम्न लिखित है–

(1) राम की शक्ति पूजा–

'राम की शक्ति पूजा' का आरम्भ राम–रावण युद्ध संघेता है। प्रथम दिन के युद्ध में राम राम की सेना पराजित होती है, अतः वानर वाहिनी खिन्न मन से लौटती है इधर विजयी राक्षस वाहिनी मन से लौटी। पराजय से खिन्न विषष्णानन राम सेना सहित पर्वत शिखर पर बैठे हैं। संशय से वे बार–बार अस्थिर हो उठते हैं। सहसा उन्हें विदेह के उपवन में सीता से मिलन का स्मरण हो जाता है, उनमें उत्साह का संचार होता है और हर ध ुनष को भंग करने वाली बाहुओं में बल आ जाता हैं, लेकिन दूसरे ही क्षण उन्हें देवी की उस मूर्ति का स्मरण आ जाता है जो रण क्षेत्र में राम के शरों से रावण की रक्षा कर थी। उस समय रावण का भयंकर अट्टाहास सुनकर उनके नेत्रों से दो मुक्तत्रु गिर पडते हैं। राम को विचलित हुआ देखकर हनुमान आकाश को ग्रसने के लिए आतुर हो उठते है किन्तु अंजता रूप में अपतीर्ण होकर शक्ति उन्हें रोकती हैं। विभीषण राम को हवोत्साहित देखकर अनेक उत्साहवर्धक शब्द कहते है और शक्ति की मौलिक कल्पना करने की सलाह देते हैं। हनुमान राम की आज्ञा पाकर शक्ति साधना के लिए एक सौ आठ कमल ले आते हैं। राम जप प्रारम्भ करते है। जैसे ही जप पूर्ण होने को होता है साक्षात मां दुर्गा आकर कमल उठा ले जाती है। उसी समय राम की स्मृति सजग हो उठती है कि माता मुझे 'राजीव नयन' कहा करती थी, अतः अभी नील शेष हैं। यह सौचकर वह ब्रह्मशर लेकर ही दक्षिण नेत्र बींघने का उपक्रम करते है कि साक्षात देवी दुर्गा उनका हाथ रोक लेती हैं।

अन्धा युग की कथावस्तु–

कथागायन के उपरान्त– अन्धा युग की कथा वस्तु को कवि ने दो प्रहरियों के वार्तालाप से शुरू की है जो युद्धोत्तर परिस्थितियों कोउजागर करते हुए अपनी अस्तित्वहीनता पर भी विचार करते हैं। प्रहरी एवं विदुर धृतराष्ट्र के अन्ध ेपन पर व्यंग्य करते हैं तथा संजय से अप्रत्याशित समाचार प्राप्ति की आशंका से भयभीत है। कथागायन के माध यम से बचे–खुचे कौरव दल की हार–जीत के समाचार, अन्तःपुर में मरघट–सी खामोशी तथा गांधारी एवं धृतराष्ट्र संजय से युद्ध के संवाद सुनने की प्रतीक्षा करते हैं। विदुर महाराज धृतराष्ट्र के पास पहुंचते हैं तथा नगर की वीरानगी का वर्णन करते हुए बताते हैं कि बचे–खुचे लोगों में हार–जीत के फैसले की प्रतीक्षा दिखाई देती है। विदुर महाराज तथा माता गांधारी के मौन पर प्रश्न उठाते हैं तथा आश्चर्य प्रकट करते हैं।

विदुर के पूछने पर धृतराष्ट्र कहते हैं कि आज प्रथम बार मेरा हृदय आशंका से व्याप्त है। विदुर ने कहा कि आज आपका हृदय जिस आशंका से अभिभूत है, उसने वर्षों पूर्व सबके हृदय को दहला दिया था। भीष्म और द्रोण पहले ही इस आशंका को व्यक्त कर चुके थे। कृष्ण ने तो यहीं अन्तःपुर में आकर आपसे स्पष्ट कह दिया था कि मर्यादा को मत तोड़ो। यदि एक बार तोड़ दिया तो भंग मर्यादा दलित अजगर की भांति अपनी कुण्डली में समस्त कौरव–वंश को लपेटकर तोड़ डालेगी नष्ट कर देगी। धृतराष्ट्र कहते हैं कि एक जन्मान्ध बाहर यथार्थ और सामाजिक मर्यादा को क्या जाने! विदुर का प्रश्न था कि अन्धेपन के बावजूद फिर आपने इस संसार को कैसे

समझा? धृतराष्ट्र विदुर से कहते हैं कि जिस प्रकार का संसार मैंने ग्रहण किया था, उसका जन्म मेरे ही अन्धेपन से हुआ था। अतः अन्धेपन के अनुरूप ही मैंने संसार को समझा। मेरा वस्तु जगत मेरे व्यक्तिगत अनुभव तक ही सीमित था। मैं अपनी निजी ममता के अन्धकार में लोक–व्यापकता को नहीं देख पाया।

विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा कि आपके कौरव–दल की शक्ति का अन्तिम सत्य गत सत्रह दिनों में मिथ्या एवं शक्तिहीन हो चुका है। आप समूचे वंश के विनाश का दुःखद संवाद संजय से सुन चुके हैं। धृतराष्ट्र कहते हैं कि मैं केवल शब्द ही सुन सकता हूं, किन्तु उन शब्दों से बने आकार चित्रों से अपरिचित ही हूं, किन्तु अपे वैयक्तिक सत्य के मिथ्यात्व के परिज्ञान से आज मुझे ज्ञान मिला है। विदुर कहते हैं इस युद्ध से जो पीड़ा और पराजय मिली है वह ज्ञान को दृढ़ता ही प्रदान करेगा। धृतराष्ट्र कहते हैं कि इस ज्ञान ने तो मुझे भय ही दिया है तब विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा कि भय ग्रस्तता का ज्ञान अपूर्ण होता है, भगवान कृष्ण ने भी कहा था कि जो ज्ञान समर्पित नहीं है, वह अपूर्ण होता है। तुम मुझे अपनी समसत मनोबुद्धि समर्पित कर दो। इस समर्पण के बाद तुम भय–मुक्त होकर मुझको ही प्राप्त होंगे। गांधारी ने कृष्ण के इस कथन पर सन्देह किया, कहा कि कृष्या ने भीष्म के बाणों से आहत होकर स्वयं अपनी मनोबुद्धि को खो दिया था। उन्होंने इस युद्ध में बार–बार मर्यादाओं को तोड़ा है मैं उनके कथन पर कैसे विश्वास कर सकती हूं। धृतराष्ट्र गांधारी को शान्त करते हैं। और कहते हैं किसी को दोष मत दो। यह दोष मेरे अन्धेपन का था। इसके उत्तर में गांधारी नैतिकता एवं धर्म आदि के विषय में अपना मत व्यक्त करती है। याचक ने द्वन्द्व युद्ध में कौरव–विजय की भविष्यवाणी की थी। वह स्वीकार करता है कि उसका भविष्य कथन आज झूठा हो गया। उसने कौरव–नगरी के नक्षत्रों की गति को मापकर मानव–नियति के अलिखित अक्षरों का परीक्षण कर द्वन्द्व युद्ध की अनिवार्यता में कौरव दल की विजय की घोषणा की थी जो आज झूठी हो गई। अपने ज्योतिष विज्ञान की असफलता के सम्बन्ध में वह कृष्ण को ही इस नियति को बदल देने का प्रमुख कारण मानता है। उन्होंने ही अर्जुन से कहा था कि तू विगत ज्वर होकर युद्ध कर। मैं परमात्मा हूं, तू विश्वास कर कि इस युद्ध में सत्य ही विजयी होगा। विदुर ने कहा कि वे प्रभु थे। गांधारी ने कहा–कभी नहीं। इस पर याचक ने श्रीकृष्ण की मानव–नियति को बदलने की शन्ति को व्यक्त करते हैं। गांधारी, प्रहरी से याचक को एक अंजुल मुद्राएं देने के लिए कहती है, किन्तु याचक वर्तमान में इस शब्द की निरर्थकता को स्वीकार करता है। प्रहरी मुद्राएं लेकर आता है, याचक दुर्योधन एवं गांधारी का जयगान करते हुए चला जाता है। गांधारी, दुर्योधन की विजय हेतु आशान्वित है। दिन समाप्त हो जाता है, संशयग्रस्त धृतराष्ट्र विचार करते हैं कि सब योद्धा शिविर में लौट गए होंगे, कौन जीता होगा और कौन हारा होगा। विदुर धृतराष्ट्र को विश्राम का सुझाव देते हैं और यह भी कहते हैं कि नगर द्वारा अपलक खुले हैं संजय के रथ की प्रतीक्षा में। विदुर, धृतराष्ट्र एवं गांधारी लौट जाते हैं तथा प्रहरी अपनी अस्तित्वहीनता पर विचार–विमर्श करते हैं। कथा गायन के माध्यम से पराजित नगरी की स्थितियों को व्यक्त करते हैं।

दूसरे अंक की शुरुआत कथागायन से होती है, जिसमें संजय की तटस्थता एवं तटस्थ व्यक्ति के संकट को चित्रित करते हैं। कृत वर्मा संजय को देखकर कहते हैं कि पाण्डव योद्धाओं ने जीवित छोड़ दिया तुम्हें प्रत्युत्तर में संजय युद्धोत्तर परिस्थितियों का वर्णन करते हुए अपनी जीवित अवस्था को अभिशाप के रूप में बताता है। कृत वर्मा

कहते हैं कि संजय धैर्य धारण करो धृतराष्ट्र एवं गांधारी को दुर्योधन की पराजय तुम्हें ही बतानी है। विषाद से भरा संजय इस स्थिति को उन दोनों के समक्ष कैसे व्यक्त करेगा। कृत वर्मा कहते हैं कि जो आज हुआ है उसे विदुर ने बहुत पहले कहा था कि ऐसा होकर रहेगा। कौरव पक्ष में कृत वर्मा, कृपाचार्य एवं अश्वत्थामा ही शेष बचे, जिसमें अश्वत्थामा प्रतिशोध का पुंज बनकर सामने आता है। अश्वत्थामा अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए प्रतिशोध का मार्ग चुनता है जो उसे पशु बना देती है। संजय सत्य कहने के लिए बाध्य हैं, अश्वत्थामा संजय पर आक्रमण करता है, कृत वर्मा एवं कृपाचार्य उसे समझाते हैं प्रत्युत्तर में अश्वत्थामा कहता है कि मैं बर्बर पशु हूं जो मेरे पक्ष में नहीं है वह मेरा शत्रु है। संजय उन दोनों से सत्य कहने की बजाए वध को सुखमय मानता है। अश्वत्थामा कहता है कि वध मेरे लिए मनोग्रन्थि बन गई है। कृपाचार्य, कृतवर्मा एवं अश्वत्थामा दुर्योधन के बारे में संजय से पूछते हैं। संजय बताते हैं कि दुर्योधन सरोवर में है, यह बात पाण्डव दल को ज्ञात नहीं है। अश्वत्थामा वृद्ध याचक का वध कर देते हैं। कृत वर्मा कहते हैं अब हम बूढ़े निहत्थों का ही वध करने को शेष बचे हैं तब कृपचार्य गुरु द्रोण एवं अभिमन्यु वध का प्रसंग उठाते हैं। अश्वत्थामा वध करके दुःखी होते हैं कृपाचार्य उसे सम्भालते हैं। कथा गायन के माध्यम से अश्वत्थामा की विवशता, दुर्योधन एवं पाण्डवों की स्थिति को व्यक्त करते हैं।

3. तीसरे अंक में संजय का रथ नगर द्वार में पहुंचता है। धृतराष्ट्र एवं विदुर के वार्तालाप से विकलांग जीवन की समस्या को प्रस्तुत किया गया है। विदुर के माध्यम से गांधारी की जड़वत स्थिति का चित्रण तथा धृतराष्ट्र द्वारा दुर्योधन के अन्तिम द्वन्द्व युद्ध का समाचार पाने की प्रतीक्षा में हैं। प्रहरी आतंक की त्रासदी से चिन्तित है। पाण्डव पक्ष से निरस्कृत युयुत्स वापस आ जाता है। वह अपने द्वारा लिए गए निर्णय से दुःखी है तब विदुर समझाते हैं कि कौरव पक्ष में तुम ही एक ऐसे प्राणी हो जिसने धर्म की रक्षा की है। विदुर माता गांधारी को बताते हैं कि युयुत्सु चरण छू रहे हैं इनको आशीष दो इस पर गांधारी विक्षोम्भाव से भरकर न जाने क्या-क्या कहती है। विदुर युयुत्सु को समझाते हैं कि यदि तुम असत्य से समझौता कर लेते तो जर्जर हो जाते तुमने सांस्कृतिक मूल्यों की रक्षा की है। गूंगा सैनिक युयुत्सु को देखकर भागता है युयुत्सु उसके व्यवहार परिवर्तन का कारण बताते हैं। संजय समाचार लाते हैं कि द्वन्द्व युद्ध में दुर्योधन पराजित हुए। अश्वत्थामा छद्म वेश धारा करके दुर्योधन भीम युद्ध देखने गया था जो लौट रहा है। कृपाचार्य एवं कृत वर्मा विजयी पाण्डवों, उनसे पृथक हुए बलराम एवं कृष्ण को आते देख भयभीत होते है। बलराम-कृष्ण की छद्म नीति का विरोध करते हैं। अश्वत्थामा पाण्डवों को भी अधर्म से मानने का संकल्प धारण करता है। कृत वर्मा कहते हैं यह लज्जाजनक युद्ध खत्म हो चुका है अपनी वीरता कहीं और आजमाओ। इस पर अश्वत्थामा कहते हैं उठाओ शस्त्र तुम पाण्डवों के हितैषी हो इसलिए मैं पहले तुम्हारा ही वध करूंगा, इस पर कृपाचार्य समझाते हैं। इस नकार अश्वत्थामा अपने को अकेला महसूस करता है, किन्तु कृपाचार्य आक्रमण के अतिरिक्त कोई दूसरी राह खोजना चाहते हैं, इस पर अश्वत्थामा पाण्डवों द्वारा किए गए अधर्म प्रहारों का क्रमशः वर्णन करता है। अश्वत्थामा अब भी सेनापतित्व पद ग्रहण करके युद्ध के द्वारा अपना प्रतिशोध ढूंढना चाहते हैं। कृतवर्मा अश्वत्थामा के इस विचार पर कौरव पक्ष की वर्तमान स्थिति को प्रस्तुत करते हैं। कृत वर्मा को कृपाचार्य दुर्योधन द्वारा अश्वत्थामा के अभिषेक का वृतान्त बताते हैं। अश्वत्थामा

मित्रता के लिए अकेले ही प्रतिशोध लेने की प्रतिज्ञा लेते हैं। कल की योजना के बारे में सेनापति अश्वत्थामा कौरव सेना को बताएंगे कहकर तीनों लोग विश्राम करते हैं। अश्वत्थामा पाण्डवों से प्रतिशोध लेने का मार्ग ढूंढ लेता है। वृद्ध याचक प्रेतात्मा के रूप में प्रवेश करता है तथा युग की विसंगतियों को एक–एक कर सामने लाता है। कहता है कि मैंने अपनी प्रेतशक्ति से सब पात्रों को एक स्थान पर स्थिर कर दिया है। क्रमशः युयुत्सु संजय एवं विदुर अपने बारे में अपने वक्तव्य कहते हैं। मोर पंख उड़ता हुआ आकर गिरता है वृद्ध उसे उठाकर कहता है क्या यह कृष्ण को किरीट का पंख है किन्तु कथा के प्रवाह को जैसे मैंने रोका वैसे समय के प्रवाह को मैं नहीं बांध सकता। दूसरा रथ अश्वत्थामा का है घृणा के उस कालिया नाग (अश्वत्थामा) का दमन अब क्या कृष्ण कर पाएंगे, और अश्वत्थामा का रथ पाण्डव शिविर में पहुंच गया। चौथे अंक में अश्वत्थामा को विजय का आशीर्वाद मिलता है, क्योंकि पाण्डवों के पुण्यों का छय हो चुका है और इस प्रकार उन्होंने स्वयं मृत्यु के द्वार खोले हैं, आगे संजय कहते हैं कि किस प्रकार धृष्टद्युम्न को तड़पा–तड़पाकर अपने पिता की घटना जानने को उत्सुक होती है संजय पुनः कहते हैं कि अनेक योद्धाओं तथा शिखण्डी की मर्मान्तक घटना सुनाते हैं गांधारी पुनः आगे की घटना सुनने को कहती है तब विदुर कहते हैं तुम्हारा हृदय पत्थर का है गांधारी। गांधारी कहती है बाधा मत डालो, आगे कहो संजय, विदुर कहते हैं संजय से नही मुझसे सुना और वह जघन्य प्रतिहिंसा का वर्णन करते हैं। गांधारी इस प्रतिहिंसा को अपनी आंखों से देखने की कामना करती है तथा अश्वत्थामा को एक बार देखना चाहती है। कृपाचार्य एवं कृतवर्मा दुर्योधन का क्षत–विक्षत रूप में ढूंढ लेते हैं। कृपाचार्य कहते हैं महाराज सेनापति अश्वत्थामा ने पाण्डव शिविर को आज ध्वस्त कर दिया है शेष एक भी योद्धा नहीं बचा। कृतवर्मा कहते हैं देखो महाराज के मुख में सन्तोष की आभा दौड़ गई। गांधारी संजय से दुर्योधन के मृत्युपरान्त भी वहां के सारे हाल जानना चाहती है। कृपाचार्य दुर्योधन से अश्वत्थामा को दृष्टि से ही आशीष देने को कहते हैं। अश्वत्थामा पाण्डव शिविर की घटना दुर्योधन के समक्ष सुनाता है तब कृतवर्मा कहते हैं महाराज नहीं रहे। अश्वत्थामा गांधारी के समक्ष उत्तरा को पुत्रहीन करने की प्रतिज्ञा लेते हैं गांधारी अपनी दिव्य दृष्टि से अश्वत्थामा को देखना चाहती है, किन्तु संजय की दिव्य दृष्टि विलुप्त हो जाती है। विदुर माता गांधारी कुटुम्बियों के अन्तिम संस्कार हेतु कहते हैं। युयुत्सु को भी संस्कार के लिएले जाना चाहते हैं, किन्तु युयुत्सु कहते हैं जिनका वध, मैंने अपने हाथों से किया है उनका तर्पण में किस मुंह से करूं। कथा गायन के माध्यम से कौरव दल के अन्तिम संस्कार में जाने का वर्णन है। धृतराष्ट्र, विदुर, युयुत्सु, संजय, गांधारी विषाद युक्त वातावरण में नीति एवं ज्ञान की भी चर्चा करते हैं। अर्जुन के बाण से पीड़ित अश्वत्थामा प्रतिशोध के आवेश में अपना ब्रह्मास्त्र छोड़ देता है। महाविनाश की आशंका से अविभूत व्यास आकाशवाणी में चेतावनी देते हैं कि नराधम! अश्वत्थामा तूने यह क्या कर डाला? इससे सारे विश्व का सर्वनाश हो जाएगा। अश्वत्थामा अपनी विवशता को बताते हैं तथा यह भी कहते हैं मुझे केवल आक्रमण की रीति का ज्ञान है। ब्रह्मास्त्र प्रयोग पर श्रीकृष्ण अश्वत्थामा को श्राप दे देते हैं, शापित, घावों से भरा, दुर्गन्धयुक्त अश्वत्थामा चला गया। संजय ने गांधारी से कहा कि अश्वत्थामा नहीं रुका, चला गया। सम्भवतः वह राजा दुर्योधन के अस्थि–शेषों से विदा लेने आया था। अस्तिशेष! आश्चर्य से गांधारी ने पूछा। तो क्या यहां मेरे ही पुत्र का कंकाल पड़ है? विदुर ने कहा– 'माता धैर्य धारण करें। गांधारी का हृदय विदारक स्वर फूट पड़ा और श्री कृष्ण को श्राप देती हैं– आज मैं अपने इस जन्म के और पूर्व जन्म के समस्त पुण्यों के बल पर तुमसे

जो कुछ कहती हूं, उसे कान खोलकर सुन ली। गांधारी पुत्र–शोक के प्रतिशोध में श्रीकृष्ण को पशुओं की तरह मारे जाने का श्राप देती है। अन्त में पुत्र शोक अभिभूता गांधारी के मुख से श्री कृष्ण के लिए दिए गए श्राप पर पश्चाताप करती है। माता गांधारी का श्राप अग्नि, आत्महत्या, अधर्म और गृहकलह के रूप में शतधा होकर वन और नगर में फूट पड़ा। सहसा वन में भीषण दावाग्नि लग गई। धूम्र मेघ घिर उठते हैं। संजय महाराज धृतराष्ट्र को बचाने के लिए निरापद स्थान पर ले जाना चाहते हैं। जर्जर धृतराष्ट्र चलने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हैं। व्याध एक तीर छोड़ देता है। एक ज्योति चमककर बुझ जाती है। वंशी की एक तान हिचकियों की तरह तीन बार उठकर टूट जाती है। श्री कृष्ण इस लोक से प्रस्थान कर जाते हैं। अश्वत्थामा अट्टहास करता है और संजय इस दृश्य कोदेखकर चीत्कार कर अर्द्ध–विमूर्च्छित सा गिर जाता है। सर्वत्र अन्धेरा छा जाता है तथा कथा गायन से युग परिवर्तन की सूचना मिलती है। श्री कृष्ण के प्रस्थान के उपरान्त वृद्ध व्याघ, अश्वत्थामा और युयुत्सु तीनों ही स्वीकार करते हैं कि कृष्ण ने सभी का दायित्व अपने ऊपर ही ले लिया। वृद्ध व्याध कहता है कि यह कृष्ण का मरण नहीं मात्र रूपान्तरण है। बार–बार जीवित हो युग के संचालन में क्रियाशील हो उठेंगे।

(iii) संशय की एक रात–

कथा के प्रारम्भ में रामेश्वर के सिन्धतट पर चिन्तामग्न राम टहलते हुये दिखाई देते हैं। वह सोंचते हैं कि मैंने न जाने कितनी संध्यायें इस तट पर बितादी। बालू द्वारा जानकी की मूर्ति बनाता रहा और वह इस जल में विलीन होती रही है। सीता को रावण से कैसे मुक्त कराया जाय अभी तक मैं निश्चय नहीं कर सका। दूतों के माध्यम से भी कोई समाधान न हो सका। राम यह भी सोंचते है कि उनके सम्बन्धी एवं सीता उनके बारे में क्या सोंचती होगी ? ऐसी खिन्न मुद्रा में ही लक्ष्मण राम को सूचना देते है कि पंपा नरेश सुग्रीव से सन्धि हो गई है वह रात्रि में ही शिविर में उपस्थित होगें। राम निराशा पूर्ण एवं युद्ध से विरक्ति की बातें करते हैं। ऐसे अवसर पर लक्ष्मण उत्साह पूर्वक स्वरों से राम की निराशा पूर्ण मनोदशा को तोडने का प्रयास करते हैं। वह शक्ति तथा साहस का स्मरण कराते है। यह भी विश्वास दिलातें है कि उनकी आज्ञा पाकर वह स्वयं सीता का उद्धार करेगें, इस पर राम अपने संशय का कारण बताते हैं– कि मानव में जो श्रेष्ट अंश है उसको कैसे सुरक्षित रखा जाये तथा सीता हरण मेरी व्यक्तिगत समस्या है, व्यक्तिगत समस्या के निदान के लिए वह असख्य प्राणियों को युद्ध की ओर ढकेलना नहीं चाहते। राम युद्ध तथा शान्ति के बीच निर्णय नहीं ले पाते।

द्वितीय सर्ग में भी राम युद्ध विषयक चर्चा में लीन दिखाई पड़ते हैं। लक्ष्मण चले जाते है और नील का आगमन होता है। जो यह सूचना देते है कि पुल की मीनार के पीछे एक अस्पष्ट छाया घूम रही है। वह किसकी छाया है नहीं जानते। राम उस स्थान पर पहुँच जाते हैं। जहाँ वह छाया राम को दिखाई पड़ती हैं। छाया के अंक में एक पक्षी फड़ फडाता दिखाई देता है। छाया राम से अकेले में बात करना चाहती है अतः नील और जामवन्त वहाँ से चले आते हैं। छाया राम से स्नेहमय शब्दों में कहती है कि वह उनके दिवगंत पिता दशरथ की आत्मा है और यह पक्षी जटायु है। राम के संशय को तोड़ने में आत्मा और जटायु उत्साह पूर्ण तर्क प्रस्तुत करते है तत्पश्चात दोनों राम से विदा लेते हैं।

तृतीय सर्ग के वर्णन में अर्द्ध रात्रि हो चुकी है। युद्ध परिषद की बैठक में लक्ष्मण, विभीषण, सुग्रीव, हनुमान जामवन्त, आदि उपस्थित होते है राम उनके साथ युद्ध विषयक मन्त्रणा करते हैं। लक्ष्मण हनुमान से कहते है

कि राम सीता को व्यक्ति गत समस्या मानते है जिसके कारण अवसाद ग्रस्त मनोदशा में हैं। तब हनुमान राम के संशय को तोड़ने के विविध तर्क प्रस्तुत करते हैं– यदि सीता हरण उनकी व्यकितगत समस्या होती तो असंख्य लोग दुबले, मटमैले तथा काली देहों वाले करोड़ों लघु प्राणी वहाँ एकत्र हो पुल बाँधने का पराक्रम पूर्ण एवं आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न न करते। हनुमान पुनः कहतें है कि रावण असंख्य नर–नारियों की स्वतत्रता का अपहरणकर्ता है इसलिए लंका पर आक्रमण होना आनिवार्य हैं। राम हनुमान के तर्क को स्वीकार करते है कि ऐसी परिस्थिति में युद्ध अनिवार्य हो जाता है। राम युद्ध को ऐतिहासिक फेन बताते हैं किन्तु सुग्रीव इसका खण्डन करतें है एवं युद्ध को एक ऐसा निर्णय बताते है जो इतिहास का निर्माण करता है। विभीषण की मन्त्रणा भी जो इसी मत की ओर है जो युद्ध को दर्शन के रूप में देखता है। विभीषण अपनी ही मातृ–भूमि में हो रहे आक्रमण में आक्रमणकारियों का साथ देते हैं किन्तु यह सोचकर चिंतित हैं कि आज मैं अपने ही देश के खिलाफ खड़ा हूँ। युद्ध का विकल्प न निकलपाने की स्थिति में विभीषण ने भी युद्ध का अनुमोदन किया है।

चतुर्थ सर्ग में आधेमन से स्वीकार कर लेते है। वे अपने अन्दर वाले संशयों, प्रश्नों तथा शंकाओं को दबा लेते हैं और विवशता में इस निर्णय को स्वीकार करते हैं।उन्हें यह स्वीकार करना पड़ता है कि व्यक्ति इतिहास के हाथों में शस्त्र की भॉति है जिसे इतिहास की आने वाली पीढ़ी यह कैसे समझेगी कि युद्ध के निर्णय से पहले उन्हें कितने मानसिक संशय एवं संकट का सामना करना पड़ा था। प्रातः काल राम युद्ध के लिए तैयार हो जाते हैं यद्यपि उनकी मजबूरी की भावना अन्त तक बनी रहती है।

(iv) एक कंठ विषपायी–

प्रथम दृश्य का प्रारम्भ प्रजापति दक्ष और उनकी पत्नी वीरिणी के यज्ञ विषयक वार्तालाप से होता है। दक्ष एक विराट यज्ञ का आयोजन करते हैं। किन्तु उसमें अपने जमाता शंकर को आमन्त्रित नहीं करते वीरिणी अपने पति के इस विचार से सहमति नहीं होती, क्योंकि लौकिक मर्यादाओं के पालन के लिए समाज में हमें कभी–कभी आनी इच्छा के विरुद्ध भी काम करने पड़ते है। जब तीनों लोकों के प्रतिनिधियों को आमन्त्रित कर रहे है और यज्ञ में सभी का अलग–अलग भाग रखा गया है वहाँ अपने ही जमाता को कैसे भुलाया जा सकता है। दक्ष प्रतिशोध की आग में जल रहे है। अनाहत यज्ञ आयोजन में पहुँच जाती है। दक्ष की उत्तेजना इससे और बढ़ जाती है किन्तु वीरिणी उन्हें शांत कर लेती है। अनुचर सती के हठ और प्रतिरोध की सूचना देते है, दक्ष यह निश्चय करते है कि यज्ञ के किसी भी भाग में शंकर का कोई स्थान नहीं होगा। सती को यदि रहना हो तो दर्शक की भॉति रहे वरना लौट जाये। वीरिणी स्तम्भित सी खड़ी रहती है दक्ष वहाँ से यज्ञ मण्डप की ओर जाते है वहीं सती आत्मदाह कर लेती है। कुछ ही देर में द्वारपाल वीरिणी को सती की दुर्घटना से अवगत कराते हैं।

दृश्य को में सभी देवता ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, वरुण, आदि एकत्र होते है। विष्णु युद्धोत्तर स्थितियों को देखकर दुःखी होते है। सर्वहत का प्रवेश होता है जो दक्ष का बचा हुआ भृत्य है। वह क्षत–विक्षत अवस्था में लड़खडाते हुये आता है। यही सारी घटनाओं का भोक्ता है, जो राज्य लिप्सा और मनोवृत्ति से मारा हुआ पात्र है। शासन और सत्ता के नाम पर कुवेर आदि अपनी रक्षा हेतु शंकर के लिए दण्ड का प्रस्ताव रखते है किन्तु इसका बहिस्कार किया जाता है। ब्रह्मा और विष्णु शंकर के प्रति अपनी गहरी सवेदना प्रकट करते है। सर्वहित पुनः प्रवेश करता है जो इन्द्र, वरुण, और कुबेर के चेहरे के नकाब उतार देता है।

दृश्य तीन में हिममण्डित कैलाश शिखर पर सती के शोक में निमग्न अपने कंधे पर सती के शव को लटकाय हुये शंकर प्रकट होते है। इसके बाद शंकर स्तुति के कुछ स्त्रोत वरुण और कुबेर की वाणी में नेपथ्य से प्रतुस्त किये है। शंकर यह सोचते है कि देवत्य और आदर्शों ने मुझे क्या दिया ! केवल निर्वासन प्रेयसि वियोग महिमा मण्डित छल में शंकर डूब जाते है। देवों की दूरभि सन्धि के प्रत्युत्तर में युद्ध को अनिवार्य मानते है और अपने सभी गणों को जगाकर ब्रह्माण्ड को हिलाने का संकेत करते हैं। वरुण और कुबेर इस क्रोध को देखकर कॉप उठते है। वह घबराकर भागने का उपक्रम करते है। शिव का अट्टाहास और डमरू की आवाज सुनाई देती है।

दृश्य चार की शुरूआत की भूमिका से होती है। ब्रह्मा के कक्ष में प्रवेश करते हुये पति सेनापति के वेश में शंकर के साथ युद्ध की अनुमति मांगते है। ब्रह्मा जी युद्ध के पक्ष में नहीं वह युद्ध को सामुहिक आत्मा घात मानते हैं। दूसरी ओर शंकर को सेनायें निरन्तर आगे बढती आ रही है। इतने पर भी ब्रह्मा युद्ध का आदेश नहीं देते, वे युद्ध के प्रश्नों पर विचार करना चाहते है। शासन प्रणाली के प्रजा का आक्रोस पूर्ण विरोधी स्वर भी इस स्थान पर यथार्थ की भूमिका निभाता है। ब्रह्मा की सोच किसी को स्वीकार नहीं है। युद्ध सम्बन्धी वाद–विवाद के मध्य विष्णु का प्रवेश होता है। सभी अपनी –अपनी करुण का रोदन उनके समक्ष करते है। उसी समय सर्वहत भी प्रवेश करता है जो प्रजा सहन शक्ति का उत्तम उदाहरण है। देवता सर्वहत के सत्य कथन को स्वीकार करते है। प्रजा ज्यों ही निर्णय की कामना करती है त्योही विष्णु सभी को धैर्य धारण की प्रेरणा देते हुये कहते है कि मैं अपना मत सत्य के पक्ष में ही दूंगा। विष्णु स्वयं अपने हाथों में धनुष –बाण लेकर चिंतन–प्रस्तुत कर्म की ओर अग्रसर होते है कि मेरा प्रणाम बाण शिव के चरणों में चुनौती भी बनेगा, चाहे वे मेरा प्रणाम स्वीकारे या फिर चुनौती। एक क्षणबाद ही यह उद्ध्तेषण होती है कि सुने सब प्रजा शंकर की सेनाऐं लौट गयी। यहीं पर प्रस्तुत अंक समाप्त होता है।

<u>(अ) अंधेरे में–</u>

कथा वस्तु का आरम्भ जिन्दगी के अंधेरे कमरे से होता है। चित्र शुरू होता है इन अंधेरे कमरे में टहलते हुये किसी प्रकाश मय व्यक्तिगत के अस्तित्व बोध से। अंधेरे में बन्दी प्रकाशमय व्यक्तित्व जीवित है और गतिमान है।उसका बोध तो हो रहा है किन्तु वह दिखाई नहीं पड़ता। इसी कृम में एक छोटा सा मोड लक्षित होता है– अंधेरे में टहलतें हुये उदृश्य व्यक्तित्व के होने का बोध और मध्य हो जाता है। जब कवि अनुभव करता है कि उस व्यक्तित्व के दबाव से पुराने अंधेरे कमरे का अस्तित्व दरक उठा है। वह अदृश्य प्रकाश अस्तित्व अपने संघर्ष से अंधेरे के ऊपर अपनी आकृति बना लेता है। फिर यह कृम एक छोटा सा मोड़ लेता है वह प्रकाश पुरुष दिखाई पड़ने लगता है किन्तु पहचान में नहीं आता।

दूसरे खण्ड में कमरे के भीतर का चित्र उभरता है। कमरे में सूनापन है और अंधेरा है किन्तु उनमें से स्वर उभर रहे है। सन्नटे और स्वर का संघर्ष चल रहा है। उधर दरबाजे की सांकल बज रहीं है। कोई कवि को बुला रहा है। आधी रात में कोई मिलने आया है। साक्षात्कार होने पर जाग्रत व्यक्ति उसे आत्मीय समझने लगता है। कवि को इस प्रकाश मय में लीन हो जाने की इचछा होती है किन्तु उसे कमजोरियों से लगाव हो गया है इस लिए वह अपने या सामाजिक इस प्रकाशन रूप को देखने की क्रिया स्थगित करता रहता है।

फिर अंधेरे और प्रकाश के तनाव की मात्रा गहराई से उठती है।सब कुछ स्वप्न में चलता है किन्तु ऐसा लगता है कि सब कुछ खुली आंखों से देखा जा रहा है– सामाजिक अंधकार का यथार्थ,अंधकार के यथार्थ में रह–रह कर उभरता और अनाहत होता प्रकाश का यथार्थ। कवि ने यहां बारी –बारी से फैटेंसी में कई महापुरुष ों की अवधाख्य की है। जुलूस के बीच में ताल्स्ताप, तिलक, गाँधी आदि सारे प्रकाश पुरुष अपनी मानवीय पीड़ा और करुणा लिए युगों से धरेंरे में मटक रहे है। सुबह होने वाली है फिर भी चारों ओर बिखराव है और चुपचाप सेना सड़के घेर लेती हैं। जन क्रान्ति के दमन कविए मार्शल ला लगा दिया जाता है, कवि दम छोडकर भागता है और कई–कई मोड़ घूम जाता है। फिर एक मोड़ आता है। महक भरी मानसिकता में खाहे का आगमन होता है क्योंकि किसी ने एकाएक उसके कंधे पर हाथ रख दिया है फिर वह भागता है। बंदूके धॉय–धॉय छूटने लगती हैं और मकानों के ऊपर गेरुआ प्रकाश फैलने लगता है। कवि भागकर ए एक प्राकृत गुफा में घुस जाता है फिर सीन बदलता है सुनसान चौराहा है, उदासी है, बिखरी गतियाँ है, मद्धिम प्रकाश है, सिपाही वहां रहे हैं फिर भी चौकन्नें है, संगीनों के जत्थे खड़े है। कवि भय से भाग रहा है ठंडे लम्बे –चौडे कोणवारी रास्ते पर कोई नहीं है केवल अपना भय है। इस मनः स्थिति में फिर तिलक क रूप में प्रकाश पुरुष का उदय होता है। आतावायी कवि को रिहा तो कर देते है किन्तु उनकी छाया निरंतर उसका पीछा करती है, उसकी हर गतिविधि को निगरानी कहती हैं। उसकी हर गतिविधि को निगरानी कहती है। छाया कृतियों के दृष्टि पत्थर के समान कठोर और पैनी है अरूप और सुक्ष्म होकर भी उसे मूर्त और स्थूल के सामान बेधती रहती है इससे कवि आकुल ही नहीं होता उसे इसका प्रतिकार करने की तड़प भी होती है। अभिव्यक्ति के खतरे उठाने का फैसला करके कवि भागता है और देखता है कि वह बनी बनायी दीबारें तोड़कर उनके पार चला गया है– जहाँ सत्य और सत्ता के संघर्ष की बहस चल रही है। यहाँ सुरंग नुमा गलियों में–एक भीतरी आग लिए जन समूह चल रहा है। कवि की कला के विवेक और विक्षोम के प्रकाश को लेकर आगे बढ़ रहे हैं किन्तु कवि अब तक अपने को अकेला समझता रहा , है और बौद्धिक जुगाली करता रहा हैं। कवि रहाकि इतने में कोई एक पर्चा दे जाता है। कवि को लगता है उस पर्चे में उसकी संवेदनाऐं, अनुभव, और गुप्त विचार थे। पर्चा पढ़ते समय उसमें उत्साह जागता है उसे अनुभव होता है कि वर्तमान समाज पूँजी वादी समाज है इसमें चल पाना असंभव है। आगे बड़ी तत्परता से सकल क्रियाऐं और विचार धूमते है, टकराते है, आपस में बुन जाते हैं और एक संक्रान्त संश्लिष्ट प्रभाव की सृष्टि करते है। नगर में भयापक धुँआ उठ रहा है, कहीं आग लग गई है कहीं गोली है। यह वेदना पिताओं की वेदना से मिल गई है। इसमें श्रमिकों का संताप डूबा है फिर स्वप्न टूट गया। कवि अकेला हो गया किन्तु देखे हुये स्वप्न का प्रभाव शेष है। संसार सुनहरी तस्वीर सा दीख रहा है मानों कब रात किसी से प्रेम हो गया हो। फिर वही व्यक्ति (प्रकाश पुरुष) दिखायी पड़ता है। वह प्रकाश पुरुष (कवि की परम अभिवक्ति) खोंह में छिपने के स्थान पर जगत की गलियों में घूमता है।

कथावस्तु का प्रारम्भ राजा द्वारा आमन्त्रित प्रियंवद केशकम्बली नामक साथक के सभा में उपस्थित होने से होता है। केशकम्बली के आगमन पर राजा उसका अभिवादन करतें है और असाध्य वीणा के बज जाने के प्रति आश्वस्त हो जाते हैं। राजा के संकेत पर गण 'असाध्यवीणा' को लेकर साधक के सम्मुख रख देते है तथा उपथित जन बडी उत्सुकता के साथ प्रिंयवाद की ओर देखते हैं। राजा वीणा प्राप्ति का मार्ग बताते है किन्तु यह

भी उल्लेख करते है कि इसका पूरा इतिहास हम नहीं जान सके इसी क्रम में वीणा प्राप्ति की कथा पूरी करते है। यह भी बतातें है कि मेरे जाने –माने कलावत्त इस न बजा सके, तभी यह वीणा 'असाध्यवीणा' के रूप में विख्यात हो गई। किन्तु मुझे विश्वास है कि सच्चा स्वर सिद्ध साधक के द्वारा यह अवश्य ध्वन्ति होगी। प्रियवंद अब यह वीणा तुम्हारे सम्मुख है सभी की प्रतीक्षा का तुम पूर्ण करो। केशकम्बली ने वीणा बजाना स्वीकार किया वीणा को प्रणाम कर अस्पर्श हुअन से उसके तारों को हूआ और राजा से बोला कि मैं कलवन्त नहीं हूँ शिष्य साधक हूं। प्रियवंद ने वीणा के तारों पर मस्तक टेक दिया जिसे देख सभा प्रश्नात्मक दृष्टि से देखने लगी।केशकम्बली राज सभा को भूलकर वीणा पर अपने आपको समार्पित कर देता है। उससे ऐसा संगीत अवतरित होता है कि उसने राजा रानी को क्रमशः अपने जीवन को धर्म भाव से उत्सर्ग करने और प्रेम को जीवन में सर्वश्रेष्ट स्थान देने की प्रख्य प्राप्त हुई। जो श्रोता थे, उन्हें अपना –अपना काम मिल गया। तत्पश्चात केशकम्बली नमस्कार करके जिस गुहा गेह से आया था उसी गेह गुफा में चला गया। कहनी सनाने के बाद कवि अज्ञेय कहते है 'युग पलट गया' और अब मेरी वाणी भी मौन हुई इस प्रकार इसकी कथा वस्तु समाप्त हो जाती है।

(vii) पटकथा– 'पटकथा' की यौद्धिक पृष्टभूमि देश की विगडी व्यवस्था ही है। कविता की शुरूआत कवि मानसिक अन्तर्द्वन्द्व से शुरू होती है क्योकि वह अपने देश की भयावह स्थिति को देखता है। कुछ ही सत्ता बाड वह याद करता है कि आजादी के मेरे अन्दर कितने उत्साह जागा था। देश की शान्ति सुरक्षा व्यवस्था, शासन प्रणाली सभी के प्रति कितने आस्था थी। इस प्रकार जो कुछ भी आजादी के बाद परिवर्तन हुये उन्हें कवि प्यार से स्वीकार करता है और जो नहीं है उसके हो जाने का इन्तजार करता है। वह समाज के लिए सबसे अथिक शिक्षा व्यवस्था, कपडे जिसके अथाव में निर्वस्त्र न रहें वक्त की रोटी जिसके अभाव में वह भूंखा न मरें, आजादी के समय से आज तक वह इन्तजार ही करता रहा। अब उसके समक्ष जनतन्त्र शान्ति, स्वतन्त्रता, संस्कृति, त्याग मनुष्य आदि सिर्फ शब्द बन कर रहा गये हैं। राजनीतिक व्यवस्था उसी प्रकार चल रही है किन्तु वास्तविक ता कुछ और ही है। चौरहें चौडे हो रहे है और योजनायें चल रही है मगर एक दिन कवि स्तब्ध रहा गया जब उसने देखा कि नदियो की जगह मरे हुये सांपों की कुंचुले बिछी हैं जन–सामान्य के साथ इतना बडा झूठ वो भी आजाद देश में, आजादी का मखौल उड़ा रहा है। इतनी अव्यवस्था के बीच किसी एक व्यवस्था को देखकर कवि उससे भयभीत हो रहा हैं। वह कहता है मेरे देश का नाम तो शान्ति है किन्तु नफरत, साजिश और अंधरे से युक्त है। कवि भेड़ की परोपकार की भावना को मनुष्य के स्थार्थ परता के साथ जोडकर प्रस्तुत करता है। वह जनता की जनतन्त्र पर अटूट श्रद्धा को कृथकवि की अमूर्त मुद्रा के रूप में देखता है। जनतन्त्रत की वास्तविकता से सभी को परिचित कराता तथा जनतन्त्र प्रणाली को नदारी की झूंठी भाषा से जोड़ता है। अन्धकार में सुरक्षित होने का नाम तत्स्थता है तथा देशभक्ति के प्रति वफादार होने वालों के मुर्ख की संज्ञा देता है। किसी के भी परोपकार या मदद करने की भावना ही नहीं रही ऐसी स्थिति में कवि निराला में डूबा हुआ दिखाई देता है। वह भोले –भाले सामान्य जन पर हावी सत्ताधारी लोगों का चित्रण करता है करता जिसने अपराध स्थिर सा हो गया है। कवि अपने आक्रोश को व्यक्त करता है क्योंकि आम आदमी आपनी जरूरतों को पूरा नहीं कर पा रहा। कवि इसी क्रम में स्वपन में हिन्दुस्तान को खड़े देखता है जो अपना परिचय देता है तथा वर्तमान व्यवस्था को बदलने के

लिए आवाज लगता है। उसकी आवाज में असंख्य नरकों की घृणा थी उसकी आँख गुस्से में थी हरी थी। वह कह रहा था कि तुम अपनी शापित परछाई से टकराकर रास्ते में रूक गये हो अचानक आजादी के ह्रास में तुम चूक गये हो। दुनिया को उलझी हुई पाता है जिसमें वट फूलों की जगह पत्थर भरने, मासूमियत से दूर रहकर अपनी ऊब को आकार दो। वह कहता है कि यह सत्य है कि यहाँ झूंठ और फरेब का इतना बोबाला है कि जिसके आग हर सचाई छोटी पडेगी। इस अव्यवस्था में समाज का कोई भी वर्ग ऐसा नहीं है जो इसके साथ न हो बचा है तो सिर्फ वही जो रोटी कपडा और मकान की जरूरत के लिए आज तक जूझ रहा हैं। चुनावी गति विधियों से मंहगाई बढ़ी उसे भी झेलता है सामान्य जन। कवि कहता है कि मैं यहां स्थिर हो गया हूं क्यों कि यहां सब कुछ फरेब ही फरेब है। इन समस्याओं से संघर्ष करता है और पुनः संशय भाव से युक्त हो जाता है यही इसकी कथावस्तु समाप्त हो जाती है।

(vii) मुक्ति –प्रसंग–

कवि राजकमल चौधरी अस्पताल बीमार अवस्था में, आता है और सोचता है कि अबकी बार मैं बचूंगा नहीं। किन्तु डा. एवं उसके हितैषी उसे सत्वना –देते है कि तुम जैसे पहले बीमार अवस्था में आते थे और ठीक होकर लौट जाते वैसे ही इस बार भी ठीक होकर जाओगे।फिर भी वह विचार करता है अपनी पूर्व घटनाओं पर विचार करता है कि मैने क्या अच्छा किया और क्या बुरा किया मेरे अन्दर जिन बुराइयों ने स्थान बनाया क्या वे ठीक है यदि अच्छे मार्ग पर मेरे कदम पड़ते तो मैं बुराइयों से स्वतः ही बच जाता। वह पुनः विचार करता है कि मैने प्रत्येक किस्म के नसे को आदत डाली, वासनाओं के चक्रव्यूह में फंसा जिसका परिणाम यह है कि मैं आज मैं पहली बार ही नहीं बल्कि कई बार इसी अस्पताल में बीमार होकर आ चुका हूं। वह देखता है बीमार रोगियों को जिनके साथ अन्य चाहने वाले लोग हैं किन्तु कुछ रोगी ऐसे है जिनके पास कोई नहीं है वह अपना उपचार स्वतः ही करा रहे है। कितने ही गम्भीर रोगी व्यक्तियों को एम्बुलेन्स के द्वारा दूसरे अस्पताल में भेजा जाता है, निराश्रित अनेक मरीज मृत्युगत होकर स्ट्रचरों पर लक्ष्लद कर अन्तिम यात्रा के लिए जा रहें हैं। अस्पताल का ऐसा वीभत्स दृश्य देखकर अपने रोग ग्रस्त शरीर को देखकर निराश होता है किन्तु परिचारिकाओं को निस्वार्थ सेवा सुश्रुषा उसको राहत प्रदान करती है और अन्ततः वह ठीक होकर वापस लौट जाता है। वो अपने घर बैठा हुआ विचार करता है वर्तमान समाज पर, राजनीति की चाहत कदमियों पर।पर वह सोचता है कि राजनेता किस प्रकार अपने स्वार्थ के लिए देश को उजाड़ रहे है। सोचता है। कि जिन लोगों ने देश को पराधीनता से मुक्त कराने में अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया आज उन पर सच्चे हृदय से श्रद्धा –सुमन अर्पित करने वाला कोई नहीं रह गया। उसे सोचते हुये क्षोम होता है कि आज गरीबों के प्रति राजनीतिक करके रहनुमा बने हुये है। वो ही इन्हें लूटकर अपना पेट भरने में व्यस्त हैं, ये स्थिति देखकर आज अपनी भारत माता कराह रही है। वह देखता है कि चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा ही उजाला करने वाला तो कोई नजर नहीं आता।

कवि अन्त में छोटे–छोटे आठ प्रसंगों के माध्यम से जीवन सन्दर्भो को जोड़ते हुये कहते हैं कि कोई भी व्यक्ति मरता है लेकिन कुछ व्यक्ति ऐसे होते है जो मरकर भी जिन्दा रहते हैं। कि जो व्यक्ति समाज एवं देश के लिए अच्छे कर्म करता है वे मरकर भी मरते नहीं मरते। अगले प्रसंग में कहते है कि किसी भी मनुष्य को

8 जन्म उसकी माँ ही रोती है किन्तु कुछ लोग ऐसे होते है जिनकी जो गुजर जाती है ऐसे सभी लोगों की परवरिस भारत माँ करती है। इस लिए यह भारत माता समस्त मनत्रों की सिद्धदात्री है और समस्त तीर्थो सक भी पवित्र है इस लिए अपने को अनाथ नसमझकर इस भारत माँ की सेवा करो। वो विचार करता है कि इस प्रकृ ति से मनुष्य का घनिष्ट सम्बन्ध निरान्तर बना रहता है। लेकिन कुछ लोग इस प्रकृति को छिन्न–भिन्न करके बरबाद करने में लगे रहते है जबकि इसकी संरक्षा हमारा मूल उद्देश्य होना चाहिए। वो सोचता है कि आदमी अपनी सुरक्षा के कितने हैं प्रबन्ध करता है वह इसी सुरक्षा के घेरे में मर भी जाता है। किन्तु एक व्यक्ति ऐसा भी होता है जिसे सुरक्षा की आवश्यकता नहीं होती वह है भूखा, बीमार, लाचार व्यक्ति। वह कहता है कि व्यक्ति को ईश्वर पर विश्वास रखते हुये अपनी सीमाओं में सगठित रहते हुये, सामाजिक कार्य करते हुये मुक्ति की कामना करनी चाहिये। वह कहता है मैं अपनी मुक्ति के विषय में सोच रहा था कि मुक्ति कैसे मिलेगी। मैंने स्वपन में देखा कि मेरे ही हाथ मेरे गले को दवाये जा रहे हैं मैं अपनी सुरक्षा के लिए उठा सहसा मेरी नींद खुली और मैने सोचा कि मुक्ति के लिए शरीर से बाहर निकल कर ही सोचा जा सकता है। वह कहता है कि लोकतन्त्र का राज नियम व्यक्ति को भूखा मार देता है अपाहिज बना देता है इसमें काम न करने वाले स्वार्थी तत्व नागरिकों के नेता बन जाते हैं। इसीलिए वह कहता है की व्यक्ति को इस लोकतान्त्रिक व्यवस्था से अलग हटकर गांजाखेरों अफीमचियों आदि की अंधी दुनियों में चले जाकर जीवन व्यतीत करना चाहिए क्योंकि इन राजनीतिज्ञों ने समाज को इस तरह से बांट दिया है कि व्यक्ति अपने पडोसियों को ही खाने लगा है इस कुचक्र का फल यह की राजनेता अपने स्वार्थ के लिए इस दुनिया से देश का नामोनिशान मिटाने में लगा है। व्यक्ति को संगठित होकर इनसे युद्ध करना चाहिए

<u>नाटक जारी है–</u>

कथावस्तु का प्रारम्भ कवि अपने वक्तव्य से करता है कि जब मैं सेना में नौकरी करता था तब सरकार ने मेरा बड़ा सम्मान क्रिया –विभिन्न बैज एवं मैडल प्रदान किये आज वही शासनतन्त्र मुझे केई महत्व नहीं देता कि इससे मैं हतास नहीं हैं। पहले मैं सरकारी मुलजिम था इसलिए सरकार के साथ था आज मैं जानता हूं इसलिए जनता के साथ हूं। हम लाख कहें कि भ्रष्टाचार पनप रहा है, बड़ी चतुराई से कहें और आप लोग वाह वाह करें क्यों कि यही आपका भविष्य है किन्तु मैं गूंगा हूं एक किरदार की भॉति आज्ञा मानना मेरा कर्त्तव्य है और आप लोग भ्रष्ट कहते रहें। आने वाली हमारी सन्तानें अभावों के अंधेरे में जीवन निर्वाह करेंगी तब विस्फोट होगा और बेरोजगारी का आक्रोश दिखाई देगा।

इसके बाद कथावस्तु एक से सैंतीस खण्ड़ों में क्रमशः देश की राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक समस्यों को उजागर करते हुये आगे बढ़ती है। कवि आज की वर्तमान परिस्थितियों को उजागर करते हुये कहता है कि चारों तरफ भ्रष्टाचार का बोलबाला है और अत्याचार की चीखपुकार मची हुई है किसी के जीवन की कोई सुरक्षा नहीं है। कब किसकी मृत्यु हो जाये कब किसके साथ दुर्घटना हो जाये कुछ कहा नहीं जा सकता। आज के समाचार –पत्र ऐसी घटनाओं से भरे पड़े है। हमारे शासन की कुर्सी पर स्थायी रूपसे एक चेहरा नहीं बैठा फिर भी आम आदमी हर मोड पर समस्याओं से घिरा हुआ है। ऐसी स्थिति में दुःखी होने की बात नहीं है जीवन की

आवश्यकता को पूरा करने के लिए अभिनेता बन जाय और किसी भी तरह भारी हाथ मारता रहे तभी जीवन सुरक्षित रह सकता है। व्यक्ति पैरादो रहे है, जनसंख्या बढ़ रहीं है। केवल जनसंख्या रोकने के लिए भाषा का प्रयोग किया जाता है। जबकि इस समस्या का कोई हल नहीं है। राजनीतिक पार्टियां जनता के हितार्थ कुछ ीाी नहीं करती क्योंकि राजनीतिक नाटक में किसी दीन दुःखी के प्रति किसी के अन्दर करुण का भाव नहीं है। इसी लिए इस वर्ग के दुःख दर्द को मिटाने के लिए कोई संगठित होकर कार्य नहीं करता। इसका अन्त कैसा होगा इस विषय पर नियुक्त रूप से कुछ भी कहा नहीं जा सकता। आज हम स्वतंत्र है, वन्धन के लिए तो उजाले में है लेकिन लेने के कारण अंधेरे से घिरे हुए है प्रत्येक व्यक्ति अपने फायदे के लिए सार्वजनिक सेवक बनाकर डकैती डालने जैसा कार्य कर रहें है। आज एकता, अखण्डता एवं प्रेम से रहने की बात रेडियो और अखबारों में प्रसारित की जाती है। इस विषय पर आलोचकों व कवियों द्वारा आलोचनात्मक एवं व्यंगात्मक सच्चाई ब्यान की जाती है। ताकि मनुष्य मानवता की राह पकड़कर इंसान बना रहे फिर भी आदमी –आदमी नहीं रहना चाहता, आदमी को आदमी से लड़ाने का कार्य चल रहा होगा। सत्य बात तो ये है कि अब इस पृथ्वी पर मनुष्य का कार्य मात्र नाटक बनकर रह गया है वास्तविकता बिखर कर चूर–चूर हो गयी है। इसलिए गढ़ढे में परिवर्तित जिन्दगी को अपनी ही आत्मीयता से संभाल लेना और अपनी दरिद्रता से समझौता कर लेना ही श्रेयस्कर है। आज आदमी भय के वातावरण में जी रहा है और प्रयास कर रहा है इस मौसम को बदलने का क्योंकि इस समय संसार विनाश की ओर बढ रहा है। आम आदमी निर्दयता और दयालुता के बीच बार–बार एक लाश के समान घूम रहा है। वो सोचता है कि मेरा एक घर हो, घर है मगर उसमें प्रवेश नहीं कर सकता क्योंकि अब लाश बनाकर जीना उसकी रोजी बन कर जीना उसकी रोजी बन गयी है, वहीं जीवन से उदास रहना उसका कर्तव्य बन चुका है।आज संसद या विधान परिषद की गरिमा वहां पे बैठे नेताओं में घ्वस्त कर दी है एक दूसरे पर अरोप–प्रत्यारोप और अम्मुनीषिक व्यवहार कर के संसार के सामने असभ्यता का उदाहरण प्रस्तुत कर रहे है। आज जनता को दोखें में रखकर राजनीतिक दल भारत की मानमर्यादा से खिलवाड किये जाने का जो कार्य कर रहे है। वे इसी प्रकार है यदि टांग ढकी हेती है तो उसकी कीमत लाखों में होती है यदि खुली हुई है तो राख के समान होती है। आज संसार में मनुष्य चेहरे बदलकर अभिमान से भरे हुए है ऐसे वाताबरण में मैं कुछ भी नहीं कर पा रहा, जिससे मैं अपने परिवार का पालन पोषण ईमानदारी से कर सकू। देखते सब है कि सरकार क्या कर रही है, लेकिन कह नहीं सकते। सब मुंह के अन्दर बन्द है। भूख से विकल रहने के लिए हर मुख लाचार है। आज का समय अनेकानेक समस्याओ से घिरा हुआ है। जिसकी हर चोट हर दम पर पड़ती है जो दिखाई नहीं देती लेकिन एक लकीर की तरह उजागर हो जाती है। कवि ऐसे टूटे फूटे कुचले लोगों को इस नाटकीय जिन्दगी से बाहर लाने का प्रयास करता है, किन्तु फिर वह किसककर जहां कातहां पहुंच जाता है क्यों कि यह एक आदमी है। कवि कहता है आज सबसे ज्यादा अत्याचार नारी पर हो रहे है उन अत्याचारों को दूर करने के लिए मैं इस खतरनाक साजिशों से नारी जाति के उद्धार के लिए अपना हाथ बढ़ाता हूं। लेकिन मुझे अपना हाथ बापसे खीचना पड़ता है क्योंकि अपने ही लोग मेरे इस कार्य में बाधक बनकर उपहास करतें है। वहां उपहास करने योग बात यह है कि मै हिन्दू हूं लेकिन मेरा हिन्दुत्व दम तोडे हुये है यह विचार मेरे मस्तिक पर एक छत के

समान छाया हुआ है। आदमी आज कमजोर है और नेता शक्तिशाली। ये नेता दुनिया को सिर पर उठाये हुये है अब समय यह है कि व्यवस्था विरोधी दिवारों को ढहादिया जाये। नागरिता का पालन किया जाये।लेकिन यह सम्भव नहीं है क्योंकि आज जातिवाद गिरोह के रूप में बन चुका है जिससे सारे विकास स्थिर हो जाते है। नेताओं की कार्य प्रणाली ने आम जनता को गर्त में गिरा दिया है जिसका वर्णन अकथनीय है। फिर भी व्यक्ति उन्हीं नेताओं के साथ स्वर में स्वर मिलाने को विवस हैं। व्यक्ति की समस्याओं को नेता एकाधिकार के रूप में व्यक्ति को पीछे कर आगे की ओर बढ़ते हैं और व्यक्ति उनकी आवाज में आवाज इस इसलिए मिलाता हैकि ये नेता जी हमें अंधकार से उजाले की ओर ले जाते है लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हेगा, आम आदमी अंधेरे में था और अंधेरे में ही रहेगा किन्तु नेता उजाले की ओर बढ़ते रहेगें। आम व्यक्ति के जीवन में अंधेरा डटना और उजाला आना सिर्फ लोहे के चने चबाने के समान है। अधिकार प्राप्त करने का रिहसर्ल करते रहना ही व्यक्ति का उद्‌देश्य बन चुका है लेकिन वह समय आते नहीं दिख रहा जिससे व्यक्ति अपने घर की आग बुझा सके। अंत में कवि सोचता है कि यह संघर्ष खतम कहां पर हुआ।मैं अपनी पुरानी इच्छा के लम्बे तने पर अटका हुआ हूं क्योंकि जिस ओर भी व्यवस्था का कार्यन्वयन किया जाता है उसमें कुछ लाभ होते ही उदासीनता दिखाई पड़ती है और पूरी व्यवस्था पूर्ववत ही बनी रहती है।

(अ) कथावस्तु के स्त्रोत–

आधुनिक युद्ध प्रधान काव्यों का कथानक अधिकांश रूप में द्वितीय विश्व युद्ध से सम्बन्धित है। भारत, पाक, चीन, बांग्लादेश, कोरिया आदि के युद्ध भी कथावस्तु में कहीं न कहीं प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में व्यक्ति हुये हैं। इसके अतिरिक्त इन काव्यों की कथावस्तु पौराणिक सन्दर्भे से भी ग्रहीत की गई है। जिसमें अधिकांश रूप से महाभारत और रामायण के प्रसंग लिए गये है। कोई भी कौमिक कवि पराम्पराओं का पिष्ट पेषण नहीं करता और न ही उसका काव्य इतिहास की पुनरावृत्ति करता है। वह तो कथा के बीज का विस्तार अपनी मौलिक और उत्पाद्य कल्पना के माध्यम से करता है और इस प्रकार कथा के प्रबन्ध का एक नया पल्लवन करता है।

कथा संगठन के क्षेत्र में किसी कवि की पार दर्शिता इस बात पर निर्भर करती है कि उसे प्राचीन इतिहास

का आधिकारिक ज्ञान है और अपने समकालीन युगबोध के प्रति कितनी सजगता है। इन्हीं दो छोरों को मिलने से और अतीत तथा वर्तमान के सन्दर्भ से एक नया सांस्कृतिक सेतु बनाने के लिए रचनाकार जब–जब संकल्प लेता है तो उसके सामने कथावस्तु के संगठन, कथावस्तु के अतिशय विस्तार से बचाव तथा पिष्ट पेष्ण से दूर रहकर कथा के तन्तुओं को इस प्रकार व्यक्ति करना होता है कि वह अपने भीतर एक क्रमिकता भी उत्पन्न कर सके और उस कथावस्तु के भीतर से एक संकेत भी मुखरित कर सके, तभी उसकी रचना रचना और सफल होती है।

आधुनिक युद्ध से सम्बन्धि काव्यों की कथावस्तु का जब हम अवलोकन करते हैं तो पाते है कि उसमें कथा का संगठन तीन प्रकार का मिलता है–

(i) रामायण से प्रेरित अथवा रामायण से पूर्ण प्रभावित काव्य– आलोच्य कृतियों के अर्न्तगत 'राम की शक्ति पूजा' एवं 'संशय की एक रात' रामायण की कथावस्तु से प्रभावित कृतियाँ है।

(ii) महाभारत से प्रेरित अथवा महाभारत से पूर्णतया प्रभावित काव्य– आलोच्य कृतियों में धर्मवीर भारती कृत 'अंध ाायुग' महाभारत की अट्‌ठारहवें दिन की कथा पर आधारित आधुनिक काव्य कृति है।

(iii) पुराणों से प्रेरित अथवा पुराणों से पूर्णतिया प्रभावित काव्य–आलोच्य कृतियों में दुस्यन्त कुमार कृत 'एक कंठ विषपायी, श्री मद्‌भगवद्‌ पुराण की कथा पर आधारित कृति है।

(iv) आधुनिक विश्वयुद्धों, अन्तराष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं सीमावर्ती युद्धों से प्रभावित काव्य– 'पटकथा' मुक्ति प्रसंगों एवं 'नाटक जारी है' काव्य कृतियां उपर्युक्त सभी शीर्षकों को आंशिक रूप में ग्रहण करती हैं।

(ब) कथावस्तु में प्रख्यात और उत्पाध–

आलोच्य कृतियों से प्राप्त प्रख्यात एवं उत्पाध अंश को में निम्न प्रस्तुत कर रही हूं जो क्रमशः इस प्रकार हैं–

(प) 'राम की शक्ति पूजा' के पौराणिक सूत्र देवी –भागवत और शिव महिम्न स्त्रोंत में होते हैं। देवी भागवत में नारद के आदेशानुसार श्री रामचन्द्र जी के नव रात्रि व्रत के उपरान्त अन्तिम दिन के युद्ध से एक दिन पूर्व देवी पूजा का उल्लेख मिलता है। शिव महिम्न स्त्रोत के एक श्लोक में विष्णु की शिव –शक्ति तथा पूजा अर्चना के निमित एक सहस्त्र कमल पुष्प चढ़ाने का उल्लेख है। प्रस्तुत प्रसंग के अर्न्तगत एक कमल पुष्प के कम हो जाने पर पुण्डरी कक्ष श्री विष्णु अपने नामनुसार नयन अपर्ण का उधस कर जी को प्रसन्न करते हैं। रावण को युद्ध में प्राप्त शक्ति का वरदान प्रख्यात है। इन्हीं पौराणिक सूत्रों के आधार पर युद्ध परक कृति का निर्माण हुआ है।

श्री हनुमान द्वारा सपाकाश पर आक्रमण की अवान्तर कथा मिलती हैं। यह घटना मूल कथावस्तु से सम्बन्धि त नहीं है कवि ने राम के प्रति हनुमान की निष्ठा सिद्ध करने के लिए उत्पाध की रचना की है–

" बज्रागं तेजघन बना पवन को, महाकाश
पहुंचा, एकादशा रूद्र क्षुब्ध कर अट्‌टाहास। "[1]

विभीषण का इससे पूर्व शरणागत मित्र के रूप में चित्रण किया गया है किन्तु निराला ने विभीषण को राभक्त मानते हुये भी उसके अन्दर के अवसरवादी व्यक्ति को रेखांकित किया है जो परम्परा को तोड़कर प्रस्तुत हुआ

है–" मैं बना किन्तु लंकापति, धिक राधव धिक –धिक !"[2]

(पप) 'अंधायुग' में धर्मवीर जी ने महाभारत के अट्ठारहवें दिन की संध्या से लेकर प्रभास–तीर्थ में श्री कृष्ण की मृत्यु के क्षण तक को कथावस्तु का आधार बनायरा है।कवि ने इसके लिए प्रस्तुत कथावस्तु चुनी है उसमें कुछ तत्व उत्पाध है। निर्देश में भारती जी ने उठाया गया है उनके सपल निर्वाह के लिए महाभारत के उत्त्तार्द्ध की घटनाओं का आश्रय ग्रहण किया गया है। अधिकतर कथावस्तु प्रख्यत है केवल कुछ ही तत्व उत्पाध है–" यद्यपि अंधायुग के अधकांश पात्र प्रख्यात पात्रों के व्यक्तित्व विश्लेषण और अर्न्तद्वन्द्व को प्रस्तुत करके आधुनिक रूप सामने आया है। वृद्ध याचक का आधा रूप प्रख्यात है और आधा रूप उत्पाध है गूंगे सैनिकों (जो आगे चलकर भिक्षुक के रूप में सामने आता है) और प्रहरियों के व्यक्तित्व कवि कल्पना का चमत्कार है किन्तु यह आधुनिक संवेदना को उजागर करने में सफल हैं–

"जय हो दुर्योधन की–
अब भी मैं कहता हूं
वृद्ध हूं
थका हूं
पर जाकर कहूंगा मैं
नहीं है परजय यह दुर्योधन
इसको तुम मानों नये सत्य की उदय–बेला।"4

अंत में कवि ने याचक को 'जरा' नामक संज्ञा से विभूषित किया है जो भागवत की रेखाओं से साम्य रखता हैं। इसी प्रकार प्रहरियों के व्यक्तित्व को देख सकते हैं–

"इन सबसे तो हम दोनों
काफी अच्छे है
हमने नहीं झेला शोक
जाना नहीं कोई दर्द
जैसे हम पहले थे
वैसे ही अब भी।"5

+ + + +

"विदुर –कहता है 'जय हो धृतराष्ट की ?
जिहवा कटी है महाराज !
गूंगा है।"[6]

(iii) संशय की एक रात में नरेश मेहता युगीन समस्याओं को सुलझाने के लिए प्रख्यात कथावस्तु को लेकर चले है।कृति में राम, लक्ष्मण, हनुमान, नील, जामवन्त, सुग्रीव, विभीषण आदि सभी पौराणिक पात्र है। रामेश्वर तट , वानर सैनिकों का एकत्रित होना, रावण से सन्धि वार्ता के प्रयास आदि प्रख्यात ही हैं–

" प्रतिबार
रावण –द्वार से
शान्ति के सब दूत
लौटे हार "[7]

\+ + +

" जब से किया है
रामेश्वर –शिविर वास
देखता हूं प्रिय हुआ है आपको
एकान्वास !"[8]

उत्पाध की दृष्टि से 'संशय' की एक रात' में मेहता जी ने मनोयोग पूर्वक उनकी परिकल्पना की है। सर्वप्रथम हम राम के चरित्र को देखते है कि सामायण अथवा रामायण की कथावस्तु पर आधारित किसी भी रचना में राम को युद्ध विषय को लेकर संशय राम के रूप में चित्रित नहीं किया गया। कृति संशय राम का चरित्र कृति का उत्पाद अंश है–

"यह चेतना
यह बोध–
आस्था में
आत्मा में ही विभाजन कर रहे हैं।"9

राम के अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित करने के लिए कवि ने प्रेतात्मा की है–

"कौन हो तुम?
ठहरो
ओ छलने !
कौन से प्रयोजन के लिए
घूम रही बुर्जों पर ?"10

इसके अतिरिक्त वन्य जातियों में स्वातन्त्रय –भावना का वर्चस्त स्थापित करना तथा विभीषण द्वारा रावण को उपनिवेश विरोधी बताना आदि कवि के महत्वपूर्ण उत्पाध हैं।

(पअ) 'एक कंठ विषपायी' की कथावस्तु में कुछ उत्पाध अंश को छोड़कर अध्कितर प्रख्यात ही हैं। दुष्यंत कुमार ने एक कंठ विषपायी की रचना श्रीमद् भागवत पुराण के चतुर्थ स्कन्द के दूसरे से सातवें अध्याय को आधार बनाकर रचना की है। श्रीमदभगवत् पुराण की कथानुसार दक्ष अपने दमाद से मान–मर्यादा न मिलने से रूष्ठ होकर क्रोधोन्माद की स्थिति से विवश हो उन्हें शापित कर देते हैं। शंकर के मौन रहने पर नन्दी सम्पूर्ण ब्रह्मणों को शाप की रेखाओं से बाँध देते हैं दूसरी ओर यही मार्ग भृगु शंकर के भक्तों के लिए अपनाते है। ब्रह्मा द्वारा प्रजापतियों का नृप घेषित होने के बाद दक्ष यज्ञ की संयोजना करते हैं एवं यज्ञ आयोजन में शंकर और सती

को आमन्त्रित नहीं करते। पार्वती के यज्ञ शाला में एकाकी पहुँचने पर अपमान के व्यंग्यात्मक स्वर उसके स्वाभिमान और सम्मान को अस्थिर करने का प्रयास करते हैं, असहनीय अपमान की तपन को सहने में असमर्थ पार्वती अग्नि के गर्भ में समा जाने को विवश को जाती है। पार्वती के अग्नि में कूदने के पश्चात शिव का क्रोधोन्मादी रूप प्रकट होता है और वीरभद्र आदि के नेतृत्व में शिव सैन्य बल संहार की ताण्डव लीला का अह्वान करते हैं दूसरी ओर ब्रह्मा शंकर के क्रोध को शान्त कर उन्हें प्रसन्न करने का प्रयास करते हैं। यज्ञ की पूर्ति के लिए दक्ष के सिर पर बकरे का सिर लगा दिया जाता है। पौराणिक प्रसंगों का आश्रय लेकर कवि ने कृति के धरातल को नूतन भाव–बोध से अभिव्यक्त करके प्रस्तुत किया है। समस्या का प्रतिपादन यथार्थ के साफ सुथरे धरातल पर अपनी भाव –धारा को सशक्तता से प्रतिपादित किया है। नाटकीय तत्वों में काव्य का मिश्रण कर कवि ने आधुनिक बोध को गहराया है। दक्ष, वीरिणी, शंकर, ब्रह्मा, इन्द्र, कुबेर, वरुण, सती आदि पौराणिक पात्र हैं। उत्पाद्य अंश सर्वहत, द्वारपाल उदघोषक और नागरिक से सम्बन्धित है–

"आँखों का सारा आकाश खो गया।
अब अँधियारे में टटोलते फिरते हैं हम
–ओ मेरी जिन्दगी कहाँ है तू ?
ओ मेरी जिन्दगी कहाँ तू ?" 11

\+ + + +

" क्योंकि यह
विधाता के नियमों की विडम्बना है।
चाहें न चाहें
किन्तु
शासक की भूलों का उत्तर दायित्व
प्रजा को वहन करना पड़ता है,
उसे गलित मूल्यों का दण्ड भरना पड़ता है।
और मैं मनुष्य ही नही हूँ
मैं प्रजा भी हूँ "[12]

कथावस्तु के प्रख्यात अंश के उदाहरण दृष्टव्य हैं–

" लेकिन स्वामी
नर–नारी के सम्बन्धों में
इससे भी ज्यादा अनहोनी घटनाएँ
घटती रहती हैं।
परिणय नारी की परिणति है।"[13]

\+ + + +

"दण्ड

और महादेव शंकर को !

आह !

कितना कृतघ्न समय होता है।

किस हद तक अकृतज्ञन ! "[14]

(V) 'अँधेरे में' कविता किसी कथावस्तु पर आधारित नहीं है बल्कि एक ऐसी नयी कविता है जो स्वयं सामाजिक आदर्शों से कथा बुनती है। यह एक सूत्रित कथा न होकर खण्ड कथा है। कविता मूल स्वर मानवतावादी है किन्तु परिवेशगत सामाजिक अँधकार को हम प्रख्यात के रूप में देख सकते हैं जिसे सम्पूर्ण मानव जगत भुगत रहा है। कवि सामाजिक यथार्थ के अनेक संक्रान्त और जटिल सम्बन्धों को सरलता के साथ प्रस्तुत करते है–

" बौद्धिक वर्ग है क्रीतदास

किराये के विचारों का उद्भास। "[15]

कविता का उत्पाद्य अंश रहस्यमय आकृति, रक्तालोक स्नात पुरुष, प्रोसेशन, पागल व्यक्ति आदि हैं–

" किन्तु आज इस रात बात अजीब है।

वही जो सिर–फिरा पागल कतई था

आज एकाएक वह

जागरिक बुद्धि है, प्रज्वलत्–धी है। "[16]

\+ + + +

" जिन्दगी के....

कमरों के अँधेरे

कोई एक लगातार

लगाता है चक्कर"[17]

(Vi) 'असाध्यवीणा' की आधार कथा जापानी है। " यह कथा अकोकुरा की पुस्तक 'दि बुक आफ टी' से संगृहीत है। इस कथा का नाम है– टेमिंग आफ दि हार्प। इस पुस्तक में वर्णित है की किरी नामक एक विशाल पवित्र वृक्ष से एक जादूगर ने एक वीणा बनायी। चीन के सम्राट ने उस वाध यन्त्र को संभाल कर रखा था और वह चाहता था कि कोई उसे बजायें परन्तु कोई उसे बजा न सका। अन्त में वीणाकारों के राजकुमार पीवो ने अपनी साधना द्वारा बजाया। सम्राट ने उससे वीणा बजाने का रहस्य पूछा तो उसने उत्तर दिया कि औरों को वीणा बजाने में सफलता इसलिए नहीं मिली कि वे सभी अपनी बात करते थे। मैंने वीणा में सोते हुये संगीत को जगाया अपने आपको भूलकर। मैं स्वयं नहीं जान सका कि मैं वाधयन्त्र हूँ या वाद्ययन्त्र मैं।"18

कृति में आने वाले पात्रों के नाम भारतीय है– वज्रकीर्ति एवं केशकम्बली।" सम्भवतः वज्रकीर्ति महायानी दार्शनिका धर्मकीर्ति के अनुकरण पर तथा प्रियंवद केशकम्बली अजित केशकम्बली के अनुकरण पर मदा हुआ नाम है।"19

उदाहरण प्रस्तुत हैं–

" किन्तु सुना है
वज्रकीर्ति ने मन्त्रपूत जिस
अति प्राचीन किरीटी से इसे गढ़ा था–
उसके कानों में हिम–शिखर रहस्य कहा करते थे अपने " 20

\+ + + + रु

" केशकम्बली गुफा गेह ने खोला कम्बल।
धरती पर चुपचाप बिछाया।
करके प्रणाम
अस्पर्श छुअन से हुए तार।"[21]

(vii) ' पटकथा', 'मुक्तिप्रसंग', 'नाटक जारी है' की कथावस्तु आजादी के बाद की विसंगतिपूर्ण स्थिति एवं भारत पाक युद्ध, भारत–चीन युद्ध, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, लोकतन्त्र के प्रति अनास्था, जन–सामान्य की समस्याओं तथा राजनेताओं के श्वेतवसन अपराधों से मिलकर बनी है, यही प्रस्तुत कृतियों की प्रख्यात कथावस्तु है।

'पटकथा' के कवि धूमिल ने भारतवर्ष को एक पात्र के रूप में खड़ा करके उत्पाद्य अंश की संयोजना की है–

"तुमने पहचाना नहीं–मै हिन्दुस्तान हूँ
हाँ– मैं हिन्दुस्तान हूँ,
वह हँसता है– ऐसी हँसी कि दिल
दहल जाता है" [22]

'मुक्तिप्रसंग' में कवि ने अनाज उत्पादन की आत्म निर्भरता की आवश्यकता को रेखाकिंत किया है–

"आदमी वर्ल्ड–बैंक से तीस करोड़ डालर ले आए
मगर भीड़ अब खाने के लिए गेहूँ
और सो जाने के लिए किसी गन्दे बिस्तरें के सिवा कोई
बात नहीं कहती है।"[23]

' नाटक ज़ारी है' में कवि ने अपनी सम –सामयिक अन्तर्दृष्टि का लेखा–जोखा प्रस्तुत किया है–

" आजादी जब अँधेरे के लेन–देन में आकार लेती है
तो वह व्यक्तिगत फायदों के बावत सार्वजनिक सेवा में
लघु कार्यक्रम के बहाने एक डकैती है" [24]

(स)– स्वकल्पित पात्र और स्वकल्पित घटनाएँ–

आलोच्य कृतियों में प्राप्त स्वकल्पित पात्र और स्वकल्पित घटनाओं का विवरण निम्नलिखित है–

(i) 'राम की शक्ति पूजा' में कवि ने स्वकल्पित पात्र एवं स्वकल्पित घटनाओं का आश्रय लिया है। शक्ति की कल्पना, हरित पार्वत्य प्रदेश, पार्वती, गर्जन करता हुआ सिंह तथा नील–नभ में मंगलकारी शिव की कल्पना की गयी है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि रचना का मूल भाव दैवी पात्रों की रचना कर आसुरी शक्तियों को

श्रीहत करना है। वर्णित पात्रों निम्न पंक्तियों में रेखाकिंत किया गया है–

" देखो, बन्धुवर सामने स्थित जो यह भूधर
शोभित शत–हरित– गुल्म–तृण से श्यामल सुन्दर,
पार्वती कल्पना है इसकी मकरन्द– विन्दु,
गरजता चरण–प्रान्त पर सिंह वह, नहीं सिन्धु,
दशदिक–समस्त हैं हस्त, और देखो ऊपर,
अम्बर में हुये दिगम्बर अर्चित शशि–शेखर,
लख महाभाव–मंगल पदतल धँस रहा गर्व–
मानव के मन का असुर मंद, हो रहा खर्व।"[25]

महावीर हनुमान द्वारा सप्ताकाश में आक्रमण की घटना स्वकल्पित घटना है, जिसे कवि ने अपने कल्पना
"करने को ग्रस्त समस्त व्योम कपि बढ़ा अटल,लख महानाश शिव अचल हुए छण–भर चंचल"26

कवि ने अपनी कल्पना के माध्यम से सीता जी को राम की प्रेरणादायिनी शक्ति के रूप में चित्रित किया है। राम के हताश ह्दय में सीता की मधुर स्मृतियों से अदम्य शक्ति का संचार हो उठना, बाणों पर पुनः विश्वास होन ा, विश्व– विजय की भावना एवं लंका युद्ध में विजय के प्रति आश्वस्त हो उठना आदि को कवि ने अपनी सूझ–बूझ से कथावस्तु में जोड़ा है–

" फूली स्मिृति सीता–ध्यान–लीन राम के अधर,
फिर विश्व–विजय–भावना ह्दय में आयी भर।"[27]

कवि ने राम की निसहाय एवं विवश स्थिति को निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया है–

"भावित नयनों से सजल गिरे दो मुक्तादल।"[28]

(ii) 'अंधायुग' में वृद्ध याचक, गूंगे सैनिक परिवर्तित रूप में भिक्षुक सैनिक एवं वृद्ध प्रेतात्मा स्वकल्पित पात्र हैं । वृद्ध याचक के माध्यम से कवि ने अपने जीवन –दर्शन को प्रस्तुत किया है अतः वृद्ध याचक का कृति में विशिष्ट योगदान है–

"नियति नहीं है पूर्व निर्धारित–
उसको हर क्षण मानव–निर्णय बनाता–मिटाता है।"[29]

प्रहरी युग्म को कवि ने क्रियाशील पात्रों के रूप में चित्रित न करके तटस्थ दृष्टा के रूप में समग्र घटना क्रम को अपनी अनुभूतियों के साथ बड़ी गंभीरता से गूंथा है–

" सूने गलियारे– सा सूना यह जीवन भी बीत गया।
क्योंकि हम दास थे
केवल वहन करते थे आज्ञाएँ हम अन्धे राजा की।"[30]

अपंग गूँगा सैनिक युद्ध की विभीषिका को अभिशाप के रूप में प्रस्तुत करता है–

"गूँगों के सिवा आज

और कौन बोलेगा मेरी जय।"[31]

'अंधायुग' में प्रथम स्वकल्पित घटना याचक की है। जिसने ज्योतिषीय गणित के आधार पर कौरव पक्ष की विजय को सुनिश्चित घोषित कर दिया था किन्तु परिणाम इसके विपरीत आए। ज्योतिषीय गणित पर गांधारी को गहन आस्था थी जिसे नक्षत्रों की गति से अधिक शक्तिशाली स्थिति ने झूँठा सिद्ध कर दिया–

" मैं वह भविष्य हूँ
जो झूँठा सिद्ध हुआ आज
कौरव नगरी में। "[32]

वही गूँगा सैनिक आगे चलकर वृद्ध भिक्षुक के रूप में सामने आता है, जो युयुत्सु को पत्थर फेंक कर मारता है और वीभत्स हँसी हँसता है तथा पाशविक संकेत चिह्न से कहता है कि युद्ध में इसने मेरे पांव तोड दिये मैं इससे प्रतिशोध क्यों न लूँ। इस स्वकल्पित घटना के माध्यम से कवि ने युद्धोत्तर परिणामों को रेखाकिंत किया है–

" प्रहरी, इस भिक्षुक को
किसने यहाँ आने दिया ?"[33]

' संशय की एक रात' में नरेश मेहता ने दशरथ की प्रेतात्मा की परिकल्पना छाया के रूप में की है–

" ओ रात्रि की प्रेतात्मा
ठहरो
उत्तर दो
दाशरथी राम को उत्तर दो "[34]

आगे कवि ने दशरथ की गोद में बैठे जटायु की कल्पना की है। जटायु पक्षी था इसलिए कवि ने उसकी प्रेतात्मा को भी पक्षी के रूप में परिकल्पित किया है–

"मृतकों से प्रश्न नहीं करते
पुत्र!
औ यह पाखी ?
मेरे मित्र जटायु की आत्मा है
तुम्हारे अग्निदाह से
हम दोनों तुष्ट हैं। "[35]

कवि ने विख्यात त्रासदी को चित्रित करने के लिए प्रेतात्मा की सहायता ली है और राम के अन्तर्द्वन्द्वों के उद्घाटन का प्रयत्न किया है। इन सब नये प्रसगों के संयोजन से कथा में मौलिकता का समावेश हुआ है। पाठक पहले ऐसे राम से परिचित होता है जिसके आगे अँधेरा ही अँधेरा घिरा हुआ है। शव में चुभे बाण के टूटे फलक –सा जिसे जीवन व्यर्थ दिखाई देता है और जो अपने को भटके हुये सार्थ का टूटा हुआ संदर्भ समझता है। सीता हरण को व्यक्तिगत समस्या कह कर रावण जैसे अनाचारी से युद्ध न करने के लिए प्रस्तुत हैं–

" कितनी बार कुचला

बालुओं को

स्वयं के पद चिह्नों से

\+ \+ \+

क्या हो

क्या न हो के प्रश्न ने

थका डाली मुट्ठियाँ।"[36]

(iv)– 'एक कंठ विषपायी' में दुष्यंत कुमार ने कुछ मौलिक परिवर्तन किये हैं जिनका संकेत भी कवि ने अभार कथा शीर्षक से कर दिया है– "राज्यलिप्सा और युद्धमनोवृत्ति के मारे हुये आधुनिक प्रजा के प्रतीक एक पात्र रचा गया है जिसका नामकरण 'सर्वहत' किया गया है। "[37] कवि द्वारा इस पात्र को गढ़ा जाना रचनाकार की मौलिकता को सूचित करता है और यह भी निष्कर्ष निकलता है कि रचना का मूल भाव जन– सामान्य की प्रतिष्ठा है–

(i) जन–सामान्य निर्दोष होते हुये भी शासन की भूलों का उत्तरदायित्व वहन कर लेता है।

(पप) 'एक कंठ विषपायी' में दूसरा मौलिक चिंतन जो कथावस्तु के क्षेत्र में किया गया है वो प्रजातान्त्रिक मूल्यों के प्रति कवि की निष्ठा।

इसी प्रजातान्त्रिक मूल्य निष्ठा के लिए कवि ने इस कथावस्तु में सर्वहत के अतिरिक्त वरुण, शेष आदि प्रजा के प्रतिनिधियों को ब्रह्मा द्वारा विचार– विमर्श के लिए बुलाना भी इस बात का सूचक है कि कवि जनतान्त्रिक परम्परा को बढ़ावा देना चाहते है। इस प्रकार सामान्य जन की प्रतिष्ठा का उद्देश्य भी इस कृति के रचना विध ाान में अपेक्षित रूप में दिखाई पड़ता है।

कृति में सर्वहत जनता का प्रतीक है। उसके माध्यम से आधुनिक जनता की विसंगितियों, जीवनगत विकृ तियों को अभिव्यक्त किया गया है। शासक चले जाते हैं प्रजा पद के नीचे रौंदी जाती है और कराहती है, प्रजा पिसती और शासक आनन्द मनाते हैं यही उसकी विवशता है। एक कुण्ठित मनः स्थिति वाले पात्र की क्या स्थिति होती है यह सर्वहत के माध्यम से जाना जाय सकता है–

"क्योंकि यह

विधाता के नियमों की विडम्बना है।

चाहे न चाहे

किन्तु

शासक की भूलों का उत्तरदयित्व

प्रजा को वहन करना पड़ता है,

उसे गलित मूल्यों का दण्ड भरना पड़ता है।

और मैं मनुष्य ही नहीं हूँ

मैं प्रजा भी हूँ "[38]

वस्तुतः भूख आज की प्रमुख समस्या है, आदमी उससे निरन्तर जूझ रहा है। सर्वहत, ब्रह्मा और विष्णु से रोटी माँगता तथा भूख की तीव्रता से व्याकुल होकर इन महाशक्तियों को उल–जलूल बकता है। सर्वहत यह अनुभव करता है कि दुनिया में सब भूखे है किसी का पेट भरा हुआ नहीं है। वह यह भी स्पष्ट करता है कि अधिकाँश लोग आशकिंत और त्रस्त हैं, कोई पेट की भूख से पीड़ित है कोई अधिकार लिप्सा की भूख से किन्तु बहुत कम लोगों में जीवन की भूख दिखाई पड़ती है–

"सब भूखे.....

–कोई अधिकार और लिप्सा का

–कोई प्रतिष्ठा का,

–कोई आदर्शों का,

और कोई धन का भूखा होता है......."[39]

युद्धजन्य विनाश की परिस्थितियों के दंश को सहता हुआ सर्वहत पीड़ा का जीवन्त प्रतिरूप बन जाता है। कवि ने उसके माध्यम से शासकों की क्रूरता, नृशंसता और साधारण जनों की उपेक्षा आदि अनेक वर्तमान जीवन की विसंगतियों की ओर संकेत किया है। सर्वहत के माध्यम से कवि ने युद्ध की समस्या एवं युद्ध के ही प्रसंग को उठाया है। आज के वैज्ञानिक विश्व युग में हम सोचते विचारते और जीवित रहते हैं, शक्तिशाली देशों से छोटे देश त्रस्त रहते है। सर्वहत के माध्यम से इस ओर कवि ने प्रतिकात्मक संकेत दिये हैं जो कवि की प्रेषणीयता के नये आधार प्रस्तुत करता है और कथा वस्तु को एक नव्य आधार प्रदान करता है।

द्वारपाल, उदघोषक और नागरिक आदि काल्पनिक पात्र है। द्वारपाल ने सती के अग्निदाह को सजीव चित्र में बाँधा है–

" भगवती सती के पास

विद्युत–सी कौंध कई।

भस्म हो गया उसमें

–सुन्दर सर्वागं चन्द्र–गौर वण "[40]

शंकर स्तुति के स्त्रोत के ऊपर एक अन्य उद्‌घोषक हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करता है–

" हे रुद्र, हे भास्कर, हे अमित तेजस्वी

आपको प्रणाम है।"41

दो नागरिकों की रचना करके कवि ने युद्धोत्तर स्थितियों को उकेरा है–

"इन सब हत्यारों ने हमको

रक्षा का आवश्वासन देकर लूट लिया।

+ + + +

आह न जाने

कैसे का पुरुषों का संरक्षण पाया है ? "[42]

(अ) 'अंधेरे में' कविता में सामाजिक अव्यवस्था, कवि मानस पर छायी अमूर्त छायाएँ, व्यक्तित्व पर बिछी स्याह पर्व आदि को व्यक्त करने के लिए कवि ने कल्पना और स्वप्न का सहारा लिया है। घटना यथार्थ से जुड़ी हुयी है जिसमें रहस्मय आकृति की घटना स्वकल्पित ही है, इसी प्रकार कुछ पात्र भी कवि ने स्वकल्पित ही चुने है जैसे रक्तालोक स्नात पुरुष, पागल व्यक्ति–

"वह नहीं दीखता....नहीं ही दीखता,
किन्तु, वह रहा घूम
तिलस्मी खोल में गिरफ्तार कोई एक "[43]

\+ + + +

" अन्तराल–विवर के तम में
लाल–लाल कुहरा,
कुहरे में, सामने, रक्तालोक–स्नात पुरुष एक
रहस्य साक्षात।"[44]

\+ + +

" ओ मेरे आदर्शवादी मन,
ओ मेरे सिद्धान्तवादी मन,
अब तक क्या किया ?
जीवन क्या जिया !!"[45]

(v) 'असाध्यवीणा' में केशकम्बली पूरी तरह से स्वकल्पित पात्र है क्योंकि ऐतिहासिक केशकम्बली के विपरीत वह एक महायानी दार्शनिक के अनुयायी के रूप में हमारे सामने आता है। प्रस्तुत कविता का चरित्र यथार्थ न होकर कवि की कल्पना सृष्टि ही है –

"आ गये प्रियंवद ! केशकम्बली ! गुफा– गेह !
राजा ने आसन दिया। कहा :
कृतकृत्य हुआ मैं तात ! पधारे आप
भरोसा है अब मुझको
साध आज मेरे जीवन की पूरी होगी।"[46]

(vii) 'पटकथा' के कवि धूमिल ने स्वप्न के माध्यम से भारतवर्ष को अमूर्त पात्र के रूप में रेखाकिंत किया है। आजादी के बाद की विसंगतियों को एक–एक कर सामने लाता है, जिनसे जन–सामान्य युद्धरत है–

" सुनों
आज मैं तुम्हें एक सत्य बतलाता हूँ
जिसके आगे हर सच्चाई
छोटी है। इस दुनिया में
भूखे आदमी का सबसे बड़ा तर्क

रोटी है।"[47]

आलोच्य कृति 'मुक्तिप्रसंग' एवं 'नाटक जारी है' में वर्तमान व्यवस्था का यथार्थ चित्रण किया गया है। अतः स्वकल्पित पात्र एवं स्वकल्पित घटनाओं का कवियों ने आश्रय ग्रहण नहीं किया।

(द)—कथानक के चयन एवं संयोजन की प्रक्रिया—

किसी भी राष्ट्र के कुछ राष्ट्रीय प्रतीक होते हैं जिनका चुनाव उनकी सार्थकता को ध्यान में रखकर किया जाता है, जैसे—विभिन्न पुष्पों के बीच से किसी एक पुष्प का चुनाव, विभिन्न रंगों के बीच से किसी उपयोगी रंग का चयन , पशु—पक्षियों के बीच से किसी विशेष पशु—पक्षी का चयन, किसी देश की राजधानी का चयन आदि। इसी प्रकार हम अपने दैनिक जीवन में उपयुक्त एवं सार्थक तत्वों का ही चयन करते हैं।

साहित्य के परिप्रेक्ष्य में जब चयन का प्रश्न आता है तो हम लेखक अथवा कवि की रचनाधर्मिता को ही देखते हैं। जब कोई साहित्यकार किसी विषय पर रचना करता है तो सर्वप्रथम किसी विषय का चुनाव करता है, यह विषय सोद्देश्य एवं योजनाबद्ध तरीके से ग्रहण किया जाता है। कवि कभी किसी एक विषय अथवा एक से अधिक या फिर किसी अंश को ग्रहण करके अपने उद्देश्य की पूर्ति करता है। यह विषय 'रामायण', 'महाभारत ', या फिर अन्य समसामयिक घटनाओं को लेकर शुरू करता है। साहित्यकार के समक्ष अनेक घटनाएँ उपस्थित होती हैं किन्तु वह अपने कथानक के अनुरूप ही किसी विषय अथवा अंश को ग्रहण करता है, जिससे वह समाज को सुडौल आकृति में नयी भावधारा को जोडने वाली कृति प्रदान कर सके।

'राम की शक्ति पूजा' में निराला ने रामायण के एक अंश का चयन किया है, वह अंश राम रावण का युद्ध है। इसके माध्यम से युद्ध का वर्णन करते हुये युद्ध विषयक गोष्ठी से देवी—दर्शन प्राप्त कर विजय के प्रति आश्वस्त दिखाया गया है। इस कृति का मूल्य भाव दैवी भावों की स्थापना एवं आसुरी वृत्तियों से देश का भार उतारना है।

'अंधायुग' की कथा का चुनाव भारती जी ने महाभारत के उत्तरार्द्ध (अट्ठारहवें दिन की संध्या से कृष्ण की मृत्यु के क्षण तक) की घटनाओं की पृष्ठभूमि पर आज के नये विकलांग और कुरूप युग की हासोन्मुख संस्कृत का चित्र खीचा है। विनाशकारी दो महायुद्धों का जो प्रभाव विश्व के आन्तरिक एवं बाहय जीवन पर पड़ा उसे व्यक्ति करने के लिए कवि ने इस अंश को ग्रहण किया है—

"युद्धोपरान्त,
यह अंधायुग अवतरित हुआ
जिसमें स्थितियाँ, मनोवृत्तियाँ, आत्माएँ सब विकृत हैं "48

'संशय की एक रात' में कवि का उद्देश्य 'युद्ध और शान्ति' की समस्या को प्रस्तुत करना हैं। कवि ने अपने इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए 'रामायण' के कथानक पर आधारित 'रामेश्वर तट' का चयन किया है। इस स्थल पर 'युद्ध और शान्ति' की समस्या को संशय राम द्वारा व्यक्ति किया है—

"हनुमत वीर !
युद्ध क़ी अनिवार्यता को जानता हूँ
\+ \+ \+ \+

किन्तु

इस युद्ध के उपरान्त

होगी शान्ति

इसका तो नहीं विश्वास। ''49

'एक कंठ पिषपायी' की कथावस्तु का आधार 'श्रीमदभागवत् पुराण' की प्रसिद्ध अंश महाराज दक्ष के यज्ञ आयोजन से ग्रहण किया गया है। युद्ध के महौल को 1962 के भारत–चीन युद्ध की सम्पूर्ण गति विधियों को चित्रित करने के उद्देश्य से कवि ने इस घटना का चयन किया–

''शंकर

देवलोक की सीमाओं पर घुस आए हैं.....''50

'अंधेरे में' लम्बी कविता का चयन कवि ने जन सामान्य की गतिविधियां राजनीतिक परिस्थतियां एवं मानव चरित्रों की आत्मा केइतिहास का यथार्थ चित्रण से किया है जिसके माध्यम से आधुनिक मानव की ज्वलंत समस्या अस्मिता की खोज को नाटकीय रूप में प्रस्तुत किया है 'असाध्यवीणा' की घटना का चयन जापानी कथा से किया गया है जो प्रतीकात्मक होने के कारण लौकिक और अलौकिक दोनों स्तरों पर चरित्रार्थ होती है।' पटकथा' 'मुक्तिप्रसंग' नाटक जारी है' कृतियों में कवियों ने समकालीन घटनाओं का चयन करके समाज एवं राष्ट्र की यथार्थ स्थिति से परिचित कराना है।

चयन के पश्चात कवि के समक्ष संयोजन की प्रक्रिया आती है जिसमें कवि अपनी रचना के माध्यम से इतिहास, मनोविज्ञान, एवं आधुनिक समाज की जरूरतों को पूरा करता है। वह इतिहास का इतिहासिक या समाज का समाज शास्त्रीय अध्ययपन प्रस्तुत नहीं करता बल्कि अपनी रचना में प्रभावोत्पादक वातावरण बनाने के लिए इनका संयोजन करता है। कवि किस वर्ग के लिए ? किस समस्या के लिए ? रचना कर रहा है, बौद्धिक वर्ग के लिए या सामान्य वर्ग के लिए, वह उसी के अनुरूप कथासूत्रों का संयोजन करता है जिसके लिए रचना सम्प्रेषणीय हो। आलोच्य कृति में कथानक के संयोजन की प्रक्रिया इस प्रकार है–

' राम की शक्ति पूजा' मूल कथांश राम, हनुमान,विभीषण, जामवान, महाशक्ति आदि पात्रों से सम्बन्धित है। इसके मुख्य कथासूत्र वानर वाहिनी एवं राक्षस वाहिनी के बीच युद्ध, राम के प्रतिनिधित्व में वानर सेना की युद्ध विषयक, गोष्ठी सीता की स्मृति से राम के हताश ह्रदय में शक्ति का संचार, हनुमान द्वारा महाशक्ति के विनाश का निश्चय, महाशक्ति द्वारा हनुमान को ज्ञानापदेश, विभीषण प्रसंग, जाम्बवान द्वारा महाशक्ति की उपासना का परामर्श, दुर्गा पूजा का चित्रण आदि है। यह सभी कथा सूत्र परस्पर एक दूसरे से जुड़े हुये है कहीं भी कथा वस्तु विश्रखलित नहीं प्रतीत होती, मूलतः एकाचिति सूत्र में युक्ति है। कविता में मुख्य कथा के साथ अवान्तर कथा नियोजित हैं जो विस्तार की दृष्टि से उपयुक्त जान पड़ती है। कथावस्तु में मौलिकता, स्वाभाविकता, एवं राचकता विद्यमान है–

'' रावण अशुद्ध होकर भी यदि कर सका त्रस्त

तो निश्चय तुम ही सिद्ध करोगे उसे ध्वस्त,''51

'अंधायुग' की वर्णित कथा में धृतराष्ट्र, गांधारी, विदुर, प्रहरी युग्म, याचक, संजय, कृतवर्मा, अश्वथामा, कृपाचार्य

युयुत्सु, व्यास, युधिष्ठिर, गूंगा सैनिक आदि प्रमुख पात्र हैं। इसके मुख्य कथा सूत्रों में वाध्य घटनाओं के चमत्कारपूर्ण संयोजन न होकर यथार्थ भाव स्थितियों का उद्घाटन किया गया हैं। प्रहरी युग्म की वार्ता, धृताराष्ट विदुर प्रसंग,गांधारी –याचक प्रसंग, संजय–कृतवर्मा प्रसंग, अश्वत्थामा कृपाचार्य एवं कृतवर्मा प्रसंग युयुत्सु सम्बन्ध ी, अश्वथामा व्यास प्रसंग, गांधारी –कृष्ण प्रसंग सुकधष्ठिर सम्बन्धी प्रसंग आदि हैं। कथा –सूत्रों से स्पष्ट हो जाता है कि कथानक परस्पर एक –दूसरे से जुडा हुआ है वर्णित पात्रों को लेकर विकस्ति होनी वाला कथानक मलतः एकान्विति के सूत्र से गुन्फित है। कथा विस्तार की दृष्टि से भी उपयुक्त है। मौलिकता स्वभाविकता एवं रोचकता का चित्रण जीवन्त रूप में मिलता है–

" मैं हूँ वही
आज मेरा विज्ञान सब मिथ्या ही सिद्ध हुआ।"52

'संशय की एक रात' का संयोजन कवि ने राम लक्ष्मण, सुग्रीव, दशरथ, और जटायु की प्रेतात्मा, विभीषण, हनुमान, नील आदि पात्रों का कथावस्तु से जोड़ा है। उसके प्रमुख कथा सूत्र राम–लक्ष्मण प्रसंग, लख्मण–हनुमान प्रसंग, राम एवं छाया प्रसंग, आदि हैं। पाँच प्रमुख कथा सूत्रों का विवरण दिया जा रहा है जो परस्पर कथानह से जुड़े हुये हैं। इन पात्रों एवं कथासूत्रों को लेकर चलने वाला कथानक अंशतः विश्रखलित प्रतीतहोते हुये भी मूलतः एकान्नित सूत्र से जुड़े हुये है। छाया की अवांतर कथा का नियोजन विस्तार की दृष्टि से उपयुक्त प्रतीत होता है। कथावस्तु का संयोजन कवि ने बड़ी सूझ–बूझ के साथ किया है–

" मुझसे कल का युद्ध
आज ही संभावित हो चुका।
रक्त सने हो गये आज ही
हाथ–माथ ये।"53

'एक कंठ विषपायी' का संयोजन कवि ने पौराणिक कथानक को आधार बनाकर वर्तमान युग संदर्भ को रेखाकिंत किया है। कविता का मूल कथानक महाराज दक्ष, वीरिणी, अनुचर, सर्वहत, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, कुबेर, बरुण, आदि पात्रों से सम्बद्ध है। इसके मुख्य कथा सूत्र महाराज दक्ष, द्वारा यज्ञ आयोजन, सती कुंअग्नि दाह से सम्बन्धित प्रसंग, सर्वहत का प्रसंग,ब्रह्मा, इन्द्र प्रसंग, वरुण कुबेर प्रसंग, तथा विष्णु प्रसंग आदि से जुड़े हुये हैं। कथानक में कहीं भी विश्रखंलता नहीं प्रतीत होती तथा एकान्विति की दृष्टि भी यह कृति सफल है। कृति में प्रमुख, मौन और प्रासागिंक कथा–सूत्रों को एक लड़ी रूप में पिरोया गया हैजिससे कथावस्तु में मौलिकता, रोचकता, स्वाभाविता तथा यथार्थ धटनाओं को जीवन्त रूप मिला है–

" निश्चय ही
बहुत बड़ा यज्ञ हो चुका है यहाँ......
बहुत बड़ी आहुतियाँ
उसमें हुई हैं। "54

'अंधेरे में' कविता को कवि ने आठ ख्ण्डों में संयोजित किया है। कृति में दो पात्र हैं एक है काव्य नायक 'मैं' और 'वह' जो 'मैं' का ही प्रतिरूप है। 'मैं' और 'वह' का संयोजन कवि ने स्वप्न शैली एवं फैण्टेसी के माध

यम से किया है जो अंशतः विश्रंखलित होने के साथ भी नियोजित हैं। 'मैं' के माध्यम से 'वह' को जोड़कर कवि ने जो विस्तार दिया है वह संयोजन की उपयुक्तता सिद्ध करते हैं। कवि ने देश की वर्तमान हासोन्मुख सभ्यता का जो संयोजन कथा में किया है वह मौलिक एवं स्वाभाविक है–

" जीने से उतरा,
एकाएक विद्रूप रूपों से घिर गया सहसा
भयानक आकार घेरते हैं मुझको,
मैं आततायी सत्ता के सम्मुख। "55

'असाध्यवीणा' की मूल कथा प्रियवंद केशकम्बली, राजा एवं वज्रकीर्ति से सम्बन्धित है। इस छोटी सी कथा को कवि ने प्रत्यालोकन पद्धति के माध्यम से अतीत को वर्तमान के साथ जोड़ा है। कवि ने किरीटी–तरु की कथा वर्णनात्मक शैली में व्यक्त की है किन्तु कथा सूत्र परस्पर एक दूसरे जुड़े हुये है। कथा का वस्तु संगठन स्पष्ट है–

" मुझे स्मरण है
और चित्र प्रत्येक
स्तब्ध, विजड़ित करता है मुझको।"56

'पटकथा' में कवि ने देश की भयावह एवं विसंगति पूर्ण स्थिति के बीच अधिकार, न्याय, सत्य की सुरक्षा आदि विषयों का बड़ी कुशलता के साथ संयोजन किया है। आजादी के बाद देश की दुर्दशा को कवि ने स्वप्न शैली के माध्यम से हिन्दुस्तान को पात्र के रूप में संयोजित करके व्यक्त किया है–

" जो अपना हाथ
मैला होने से डरता है
वह एक नहीं ग्यारह कायरों की
मौत करता है" 57

'मुक्ति–प्रसंग में कवि स्वयं कविता का केन्द्र बिन्दु है। वह अपनी संकटापन्न स्थिति के साथ–साथ देश और समाज को संकटों से घिरा होने की सफल संयोजना करता है। कवि ने समसामयिक प्रश्नों और समस्यों को उठाया है। जिसे हम देखते हैं कि कवि ने राजकमल चौधरी की गाथा होते हुये भी हमारे समाज और देश की गाथा बन गयी है। यह सब कवि के संयोजन प्रक्रिया के परिणाम हैं–

" अवकाश स्वाधीनता विच्छिन्न रहने की
सुविधा
कभी पायेगा या नहीं तुम मुझे बताओं राजकमल
चौधरी मुझे बताओ" 58

'नाटक जारी है' में आजादी के बाद देश–रूपी रंगमंच पर होने वाली विसंगतियों एवं विद्धयताओं के माध्यम से कथावस्तु को बढ़ाते हुये सामान्य –जन को इनसे परिचित कराने की सफल संयोजना की है, यही कवि का उद्देश्य है।कवि ने कथावस्तु को संयोजना इस प्रकार की है कि देश की घटना नाटकीय दृश्यों का प्रतीक

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1– अनामिका से उद्धृत राम की शक्ति पूजा–निराला–पृ. 112–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
2– पूर्वोक्त–पृ. 113
3– अंधायुग–धर्मवीर भारती–निर्देश से–संस्करण 1992–किताब महल इलाहाबाद
4– पूर्वोक्त–पृ. 35
5– पूर्वोक्त–पृ. 91
6– पूर्वोक्त–पृ. 40
7– संशय की एक रात–नरेश मेहता–पृ. 5–6–संस्करण 1999–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
8– पूर्वोक्त–पृ. 12
9– पूर्वोक्त–पृ. 22
10– पूर्वोक्त–पृ. 38
11– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार–पृ. 117–संस्करण 1997–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
12– पूर्वोक्त–पृ. 52
13– पूर्वोक्त–पृ. 18
14– पूर्वोक्त–पृ. 63
15– अंतस्तल का विप्लव अँधेरे में–संपा. निर्मला जैन–पृ. 149–संस्करण 1994–राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
16– पूर्वोक्त– पृ. 125
17– पूर्वोक्त–पृ. 111
18– आधुनिक हिन्दी कविता सर्जनात्मक सन्दर्भ–डॉ. रामदरश मिश्र–पृ. 198–संस्करण 1986–इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन दिल्ली
19– असाध्यवीणा–मूल्यांकन–विनोद कुमार मंगलम–पृ. 48–संस्करण 2000–सुमित प्रकाशन इलाहाबाद
20– असाध्यवीणा और अज्ञेय–संपा. रमेश चन्द्र शाह पृ. 34–संस्करण 2001–नेशनल पब्लिश्गि हाउस दिल्ली
21– पूर्वोक्त–पृ. 35
22– संसद से सड़क तक से उद्धृत–पटकथा–धूमिल–पृ. 111–संस्करण 1990–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
23– मुक्ति प्रसंग–राजकमल चौधरी–पृ. 21–संस्करण 1988–वाणी प्रकाशन दिल्ली
24– नाटक जारी है–लीलाधर जगूड़ी–पृ. 85–संस्करण 1994–किताब घर दिल्ली
25– राम की शक्ति पूजा–निराला–पृ. 115–16–अनामिका से उद्धृत–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
26– पूर्वोक्त–पृ. 112
27– पूर्वोक्त–पृ. 111
28– पूर्वोक्त–पृ. 111
29– अंधायुग–धर्मवीर भारती–पृ. 21–संस्करण 1992–किताब महल इलाहाबाद
30– पूर्वोक्त–पृ. 23
31– पूर्वोक्त–पृ. 40
32– पूर्वोक्त–पृ. 20
33– पूर्वोक्त–पृ. 84
34– संशय की एक रात–नरेश मेहता–पृ. 39–संस्करण 1999–लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
35– पूर्वोक्त–पृ. 42
36– पूर्वोक्त–पृ. 3–4
37– 'एक कंठ विषपायी'–दुष्यंत कुमार–आभार कथा से–संस्करण 1997–लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
38– पूर्वोक्त–पृ. 52
39– पूर्वोक्त–पृ. 70
40– पूर्वोक्त–पृ. 38–39
41– पूर्वोक्त–पृ. 80
42– पूर्वोक्त–पृ. 117
43– अंतस्तल का पूरा विप्लन अंधेरे में–संपा निर्मला जैन–पृ. 111–संस्करण 1994–राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
44– पूर्वोक्त–पृ. 112–13
45– पूर्वोक्त–पृ. 125–26
46– असाध्यवीणा और अज्ञेय–संपा रमेश चन्द्र शाह–पृ. 33–संस्करण 2001–नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
47– पटकथा–धूमिल–पृ. 114–संसद से सड़क तक से उद्धृत–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
48– अंधायुग–धर्मवीर भारती–स्थापना से–संस्करण 1992–किताब महल प्रकाशन
49– संशय की एक रात–नरेश मेहता–पृ. 66–संस्करण 1999–लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
50– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार–पृ. 116–संस्करण 1997–लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
51– राम की शक्ति पूजा–निराला–पृ. 115–अनामिका से उद्धृत–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
52– अंधायुग–धर्मवीर भारती–पृ. 21–संस्करण 1992–किताब महल इलाहाबाद
53– संशय की एक रात–नरेश मेहता–पृ. 87–संस्करण 1999–लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
54– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार–पृ. 48–संस्करण 1997–लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
55– अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में–संपा. निर्मला जैन–पृष्ठ 140–संस्करण 1994–राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
56– असाध्यवीण और अज्ञेय–संपा. रमेश चन्द्र शाह–पृ. 41–संस्करण 2001–नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
57– पटकथा–धूमिल–संसद से सड़क तक से उद्धृत–पृ. 114–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
58– मुक्तिप्रसंग–राजकमल चौधरी–पृ. 26–संस्करण 1988–वाणी प्रकाशन दिल्ली
59– नाटक जारी है–लीलाधर जगूड़ी–पृ. 81–82–संस्करण 1994–किताब घर दिल्ली

पंचम परिवर्त्त

आलोच्य युद्ध प्रधान काव्यों में द्वन्द्व एवं संघर्ष का स्वरूप

अ- आक्रोश-निराशा
ब- आस्था-अनास्था
स- कुण्ठा-विक्षोभ
द- अस्तित्व बोध
य- विद्रोह-क्रान्ति
र- संकल्प-विकल्प
ल- संशय और स्थिरता

बनकर आयी है। कवि ने एक से सैंतीस कथा –सूत्रों को एक पिरोकर एक माला के रूप में प्रस्तुत किया है। इस दृष्टि से कृति में देश की समस्याओं का बाहुल्य होते हुये भी कवि एक माला में सफल हुआ है–

" संकट सिर्फ शैलियाँ बदल रहा है

अब निरंतर अपने ही भीतर सुन रहा हूँ खुट–खुट

भाषा को जो एक आघात पहुँच रहा है

मेरी मरम्मत के बुहाने

यह एक विषय है"59

उपर्युक्त कृतियों में कथानक के चयन एवं संयोजन की प्रक्रिया का कवियों से सफलता पूर्वक निर्वाह किया है जो कविताओं की भावभूमि को और संशक्त बनाते हैं।

पंचम परिवर्त्त

आलोच्य युद्ध प्रधान काव्यों में द्वन्द्व एवं संघर्ष का स्वरूप–

जब किसी व्यक्ति के समझ अपनी इच्छाओं और रुचियों के प्रतिकूल स्थितियों या विरोधी शक्तियों का सामना होता है, ऐसी सिथति में उसके मन में संघर्ष या छन्द उत्पन्न हो जाता है। व्यक्ति में एक या दो या इससे अधिक इच्छायें किसी एक व्यक्ति में एक साथ संन्तुष्टि हेतु प्रमाण करते है तब ऐसी दशा को हम संघर्ष या छन्द कहते हैं। ऐसी स्थिति में प्रतिद्वन्दियों एवं प्रतिस्पार्धियों का ध्यान अपने लक्ष्य से हटकर विपाक्षी स्पधि ायों पर केन्द्रित हो जाता है, तो यही प्रतिस्पर्धा संघर्ष के यप में परिवर्तित हो जाती है। संघर्ष से तात्पर्य इसी सामाजिक प्रक्रिया से है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति या समूह अपने उद्देश्य प्राप्ति हेतु अपने प्रतिद्वन्दी के के समक्ष द्वोष, घ्रणा, वैमनस्य हिंसा आदि का प्रदर्शन करते हैं। मिलिन और मिलिन ने संघर्ष को इस प्रकार परिभाषित किया है–" संघर्ष वह सामाजिक प्रकृिया है जिसमें व्यक्ति या समूह अपने उददेश्य की प्राप्ति अपने विरोधी को हिंसा की धमकी देकर करते हैं। "[1]

ए0 डब्लू ग्रीन के अनुसार–" संघर्ष दूसरों की इच्छा के विरुद्ध प्रतिकार या बलपूर्वक रोकने के विचार पूर्वक प्रयत्न को कहते हैं।"[2] मेकाइवर और पेध ने संघर्ष को इस व्यूह परिभाषित किया है– " सामाजिक कार्य में वे समस्त क्रियायें सम्मिलित हैं जिनके द्वारा मनुष्य किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये एक दूसरे के विरूद कार्य करते हैं।"[3] पार्क एवं वर्गेश ने लिखा है कि 'संघर्ष अति तीव्र संवेग और अत्यधिक शक्तिशाली उत्तेजन को जाग्रत कर देता है एवं प्रयत्न को अत्यधिक एकाग्रचित कर देता है।"[4]

संघर्ष से समाज में अव्यवस्था फैली है और विकसित जातियां पतन के गर्त में समाजती है। मनुष्येन्तर प्राणियों की किसी ही बलिष्ट एवं समर्थ जातियां इसलिये विलुप्त हो गई कि उपमें मरने–मारने की हिंसामूक प्रवृत्ति अपने चरम पर पहुंच गई और इस प्रकार अपने अस्तित्व को ही समाप्त कर लिया। शक्ति एवं सामर्थ्य से युक्त लगातार दो पक्ष आपसी संघर्ष करते हुये जीवित नहीं रह सकते। यदि मनुष्य नें जीवन में संघर्ष को अधिक महत्व देना शुरू किया तो मानव जीवन लड़ मर कर ही समाप्त हो जाएगा। यह सत्य है कि प्रत्येक प्राणी मजबूत एवं सामर्थ्यवान बने, किन्तु अपनी दृढ़ता एवं सामर्थ्य शक्ति को विपरीत परिस्थितियों के प्रयोग में लाए न कि अपनी शक्ति सम्पन्नता का प्रयोग असमर्थ प्राणियों के विनाश में लगा दे। युद्ध से निपटने के लिए संघर्ष

का रास्ता अपनाना पड़ता है ऐसी स्थिति में यह आवश्यक औरउचित हो सकता है, यह भी सर्वविदित है कि आपत्तिकालीन परिस्थितियों में ही संघर्ष का सहारा लेना पड़ता है। परिस्थितियां यदि अनुकूल न हों तो व्यक्ति सतत् युद्ध से ही जूझता रहता है, किन्तु यह युद्ध परिस्थिति को अनुकुल बनाने के लिए होता है, यदि ऐसा न हो तो समाज में 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली कहावत चरितार्थ होगी। यह सत्य है कि युद्ध जैसी त्रासदी से निपटने के लिए संर्ष सफलता का आधार है।

युद्ध परक काव्य में कई ऐसी स्थितियां आती हैं जो मन के अनुसार ठीक नहीं लगती और वह युद्ध से जुड़े हुए लोगों को पीड़ा पहुंचाती हैं। अन्य वह स्थितियां जो सामान्य विचारों और सिद्धान्तों के विरुद्ध होती हैं, ऐसी हालत में व्यक्ति में द्वन्द उत्पन्न हो जाता है। द्वन्द की धारणा को हम सेना नायक की स्थिति में डालकर देखें, तो किसी भी पक्ष का सेनानायक विजय की आकांक्षा लिए होता है, युद्ध में भी नैतिक शिक्षा एवं युद्धोत्तर परिणामों के भय से पैदा होने वाली विरोधी प्रवृत्तियां उसे विपरीत दिशाओं में खींचती हैं। ऐसी स्थिति में मनुष्य किसी भी कार्य को पूरी आजादी के साथ परिणाम नहीं दे पाता, उसमें एक कष्टदायी संवेगात्मक तनाव की हालत उत्पन्न होती है। नार्मन ए. केमरान के अनुसार– ''दो या दो से अधिक प्रतिद्वन्दी (परस्पर विरोधी अथवा केवल भिन्न) प्रतिक्रियाओं के ऐसे परस्पर हस्तक्षेप को द्वन्द कहते हैं जो विकसित होते रहने वाले गतिशील प्रेरित व्यवहार की उपर्युक्त प्रगति क्रम, विस्तार, सिद्धि अथवा पूर्णता को बाधित करता या रोकता है।''[5] आर.एस. वुडवर्थ के अनुसार– ''परस्पर विरोधी संवेगों या इच्छाओं के बीच के विरोध को द्वन्द कहते हैं, जिसका परिणाम आमतौर पर यह होता है कि मनुष्य के मन में संवेगात्मक तनाव पैदा हो जो कि अक्सर अप्रिय होता है और मजबूरन दो में से एक का दमन करना पड़ता है।''[6] राबर्ट एस. वुडवर्थ द्वन्द को इस प्रकार समझाया है– ''मानसिक द्वन्द परस्पर विरोधी प्रेरणाओं के बीच होता है और उसकी मुख्यतः दो आवश्यकताएं होती हैं– एक है निश्चय हीनता अर्थात असमंजस की और दूसरी है निश्चय की प्रक्रिया।''[7]

उपर्युक्त दृष्टिकोण में मौलिक समानता है। युद्ध के प्रारम्भ होते ही दोनों पक्ष की सेनाएं आमने–सामने होती हैं ऐसी ऐसी स्थिति देखकर किसी भी पक्ष में दो भिन्न–भिन्न भावना ग्रन्थियां कार्य करती हैं, एक ओर उसकी दृढ़ इच्छा युद्ध में विजय प्राप्त करने की होती है तो दूसरी ओर उसका सामाजिक उत्तरदायित्व युद्ध जैसे विभत्सकारी एवं विध्वंसक परिणामों से दूर रहने की कोशिश भी करता है, परिणामतः वह युद्ध के पास पहुंचता है और कभी उससे दूर हटना चाहता है यह दोनों भाव एक साथ आते हैं, किन्तु कोई भी भाव व्यावहारिक रूप में नहीं आ पाते, ऐसी मानसिक अवस्था द्वन्द कहलाती है। युद्ध परक काव्यों में द्वन्द के भाव होना स्वाभाविक ही है क्योंकि मनुष्य अस्तित्व के लिए लड़ता रहा है और युद्ध के दुःखद परिणाम देखता रहा है अतः युद्ध जैसे सत्य का सामना करने पर द्वन्द के भावों का जागना अनिवार्य सा लगता है, ऐसे भाव से घिरा व्यक्ति अपने चिन्तन को लेकर कठिनाई से घिर जाता है।

संघर्ष एवं द्वन्द में प्रतिद्वन्दियों को एक–दूसरे की चेतना बनी रहती है किसी भी तरह वे एक–दूसरे को हानि पहुंचाकर अपने उद्देश्य को पूरा करना चाहते हैं। यह स्थिति इतनी तीव्र होती है कि वे सदैव एक–दूसरे के प्रति सतर्क रहते हैं। इसमें विरोधी तत्व एक–दूसरे को दबाने, हानि पहुंचाने का प्रयास करते हैं वे अपने लक्ष्य से दूर द्वन्द एवं संघर्ष को केन्द्र बनाते हैं यह कभी अति तीव्र, अति शिथिल एवं पूर्णतया रुक भी जाते हैं। इसी

के अनुसार प्रतिद्वन्दियों के कार्य में उतार–चढ़ाव आता रहता है। यह समूह, समाज एवं राष्ट्र में किसी न किसी रूप में अवश्य चलता रहता है जब इसका स्वरूप विकराल रूप धारण करता है तो उसे हम युद्ध कहते हैं। युद्ध प्रधान रचनाओं में संघर्ष एवं द्वन्द के स्वरूप को आधुनिक कवियों ने चित्रित किया है जिसका विश्लेषण निम्नलिखित है–

'राम की शक्ति पूजा' में राम परम्ब्रह्म न होकर मानव राम है जो नित–निरन्तर संघर्षों से जूझते हैं उनका जीवन सुख–दुःख, आशा–निराशा, घात–प्रतिघात से सम्बद्ध हैं, परिस्थितियों की विषमता उन्हें घेरे नहीं रह सकी, वह रावण रूपी बाधा पर विजय प्राप्त कर लेते हैं अतः राम के संघर्षशील रूप को ही अधिक महत्ता मिली है। राम के संघर्ष का चित्र ही अधिक प्रभावशाली है क्योंकि कवि के जीवन में संघर्ष ही सत्य रूप में आया है, निम्न पंक्तियों में अवसाद से भरे राम मानसिक अन्तर्द्वन्द से ग्रस्त है, जबकि वह स्वभाव से स्थिर एवं शान्त होने पर भी युद्ध के परिणामों के प्रति चिन्ता युक्त दिखाई दे रहे हैं, कवि के शब्दों में–

"स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर–फिर संशय,
रह–रह उठता जग–जीवन रावण जय–भय,
जो नहीं हुआ आज तक हृदय रिपुदम्य–श्रान्त,
एक भी, अयुत–लक्ष में रहा जो दुराकान्त,
कल लड़ने को हो रहा विकल वह बार–बार,
असमर्थ मानता मन उद्यत हो हार–हार।"[8]

जय पराजय का द्वन्द युद्ध विषयक रचनाओं में बड़ी विलक्षणता के साथ मिलते हैं। श्री हनुमान के रौद्र रूप ध ारण करने पर प्रकृति में जो उद्वेलन होता है वह अत्यन्त प्रभावकारी है निम्न पंक्तियों में श्री हनुमान का अन्तर्द्वन्द दृष्टव्य है–

"तुमने रवि को जब लिया निगल,
तब नहीं बोध था तुम्हें; रहे बालक केवल;
यह वही भाव कर रहा तुम्हें व्याकुल रह–रह
यह लज्जा की है बात कि माँ रहती सह–सह,
यह महाकाश, है जहाँ वास शिव का निर्मल–
पूजते जिन्हें श्रीराम उसे ग्रसने को चल,
क्या नहीं कर रहे तुम अनर्थ? सोंचो मन में,
क्या दी आज्ञा ऐसी कुछ रघुनन्दन ने,
तुम सेवक हो, छोड़कर धर्म कर रहे कार्य–
क्या असम्भाव्य हो यह राघव के लिए धार्य?"[9]

'अंधायुग' के कवि ने प्रहरियों की निरर्थकता से परिचालित अन्तर्द्वन्द्व को वाणी दी है–

"अंधे राजा की प्रजा कहां तक देखे?"
हमको अनास्था ने कभी नहीं झकझोरा,

क्योंकि नहीं थी अपनी कोई भी गहन आस्था।

सूने गलियारे सा सूना यह जीवन भी बीत गया।"[10]

'संशय की एक रात' में राम का आन्तरिक संघर्ष मानवीय संघर्ष ही है जो युद्ध और शान्ति को लेकर है। लंका के आक्रमण अभियान को वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थ अनुभव करते हैं। इसकी प्रतीति ही उनमें संघर्श भाव जगा देती है, यह संघर्ष प्रत्येक उद्‌बुद एवं जागरूक चेतना में होता है। आधुनिक युद्धपरक कृतियों के पात्रों में संघर्ष भात की तीव्रता दिखाई देती है यही संघर्ष राम के भीतर भी है। कवि के शब्दों में–

"अन्य प्रायश्चित करें मेरे लिए,

दुःख भोगे,

वनों में भटके अकारण ही,

बिना वनवास की आज्ञा मिले?

पिता की मृत्यु,

विधवा जननियाँ,

कौन है इनका निमित्त?"[11]

राम में मानसिक अन्तर्द्वन्द्व उत्पन्न है वह दो भागों में विभाजित है, युद्ध हो या न हो? शान्ति का मार्ग उचित है या शान्ति द्वारा अभीष्ठ की सिद्धि सम्भव है यह दो विरोधी विचार द्वन्द्व को तीव्र करते रहते हैं। कवि के शब्दों में–

"दो सत्य

दो संकल्प

दो–दो आस्थाएं

व्यक्ति में ही

अप्रमाणिक व्यक्ति पैदा हो रहा है,

क्या हो

क्या न हो कि बालू में

किसी पाखीपंख से टूटे हुए

सन्दर्भ खण्डित

निष्प्रयोजित!!"12

विभीषण गहरे अन्तर्द्वन्द्व के शिकार हैं वह इस बात को समझ नहीं पाते कि मनुष्य के अच्छे बुरे कर्मों की चरम स्थिति युद्ध ही है। वह इस बात से चिन्तित हैं कि भावी इतिहास उन्हें राष्ट्रद्रोही के रूप में स्मरण करेगा। कवि के शब्दों में–

"मेरी आत्मा में भी यही द्वन्द्व है,

क्या युद्ध;

नियति है,

हमारे सारे शुभाशुभ कर्म की?'' 13

निम्नलिखित पंक्ति में राम का तीव्र अन्तर्द्वन्द्व प्रकट हो रहा है–

''सम्मुख अब केवल युद्ध

अवैतरिक सिन्धु

युद्ध की विभीषिका

गर्जन–तर्जन युत्

कृत्या!!''14

'एक कंठ विषपाई' की कथा वस्तु वाह्य की अपेक्षा आन्तरिक अधिक है, कृति के मुख्य पात्र शंकर, ब्रह्म एवं सर्वहत् आन्तरिक मनोभावों पर अधिक बल देते हैं। सभी पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व एवं संघर्ष के साथ महाराज दक्ष के आन्तरिक संघर्ष को सशक्त रूप में प्रस्तुत किया गया है। कृति के प्रारम्भ में ही दक्ष के अन्तर्द्वन्द्व एवं मानसिक संघर्ष की शुरुआत होती है राजकीय अभिमान से अभिभूत अपनी पुत्री के स्वच्छन्द एवं स्वतन्त्र आचरण का विरोध करते हैं, यहीं से यह संघर्ष अपने विस्तृत रूप में परिवर्तित हो जाता है कवि के शब्दों में–

''जमाता?

मैं तो उसको सम्बन्धी कहने में,

खुद को अपमानित अनुभव करता हूं।

शंकर के मोह में सगे ने अपने अथवा अपने पति के दुर्भाग्यों को उकसाया है।''15

मानसिक संघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व के बीच पिता के हृदय में भावनाओं की झन्कार भी सुनाई देती है, किन्तु आत्म संघर्ष से प्राप्त राजकीय गौरव की सशक्त भावना उसे पंगु बना देती है। अन्तर्द्वन्द्व एवं आत्म संघर्ष की स्थिति में परिवर्तन होता है इसे हम महाराज दक्ष के चरित्र में देखते हैं–

''अब तुम विश्वास रखो प्रिये

शिव के प्रति मेरा आक्रोश,

कभी

सती पर न उतरेगा।

राजकीय गौरव के योग्य

सती

भाग–भाग पाएगी

यज्ञ मं रहेगी वह।''16

कुछ ही क्षणों बाद सती का यह आग्रह कि शंकर का स्थान सर्वोपरि आसन के समीप होना चाहिए, यह सुनते ही दक्ष की मनःस्थिति संघर्ष और द्वन्द्व से अलग हो दृढ़ निश्चय में परिवर्तन हो जाता है, कवि के शब्दों में–

''ऐसा असम्भव है।

उसके चुप होने को अगर यही शर्त है

तो यह असम्भव है

कह देना

मेरे आयोजन में

शंकर का कोई स्थान नहीं हो सकता।''[17]

दक्ष की ऐसी घोषणा सुनकर महारानी वीरिणी मानसिक संघर्ष के घात–प्रतिघात से जूझती है क्योंकि अशुभ कार्य होने से पहले मनुष्य की प्रज्ञा शक्ति क्षीण हो जाती है–

''आह!

दुर्दिन जब आते हैं

तो पहले

व्यक्ति का स्वतन्त्र बोध

चिन्तन

और प्रज्ञा हर लेते हैं।''[18]

शंकर के व्यक्तित्व में अन्तर्द्वन्द्व और मानसिक संघर्ष की जटिल स्थितियां इतनी बुरी तरह उलझ जाती है कि अधैर्य एवं अशान्ति से अस्थिर मन कभी जड़ मूल से समाप्त करना चाहता है तो कभी अपने आपको दोषी मानने लगता है। द्वन्द्व एवं संघर्ष की विजय पराजय की तीव्रता एक निर्णय के निश्चित बिन्दु पर समर्पण कर देती हैं–

''सम्प्रति वश प्रतिकार

देव ऋषि–दानव सबसे।

आह! तीसरा नेत्र

रक्त का प्यासा कब से।''[19]

वर्तमान परिप्रेक्ष्य को देखते हुए शंकर खोखले और जड़ आदर्शों से संघर्ष करने के साथ ही उन्हें त्यागने के लिए संकल्प लेते हैं–

''जिन आदर्शों ने

मुझे छला है कई बार

मेरा सुख लूटा है

अब उनसे लड़ना है।''[20]

मुक्ति बोध की कविता मं द्वन्द्वात्मक स्थितियाँ विभिन्न स्तरों पर परिलक्षित होती है। द्वन्द्व इनके काव्य की केन्द्रीय प्रवृत्ति के रूप में मिलता है इस स्थिति का निरूपण निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है–

''मानो मेरे कारण ही लग गया

मार्शल–लॉ वह,

मानो मेरी निष्क्रिय संज्ञा ने संकट बुलाया

मानो मेरे कारण ही दुर्घट

हुई यह घटना।''[21]

जैसे बाहरी क्रियाओं एवं घटनाओं में तीव्र द्वन्द्व व्याप्त है उसी प्रकार मेरी भीतरी दुनिया में तीव्र द्वन्द्व का भाव

व्याप्त हो चुका है चिन्ता ही चिन्ता का चक्र मुझे चतुर्दिक घेरे हुए है। कवि की अस्मिता उसे विवश करती है कि वह उसे पहचान कर उसकी इच्छानुसार भावों एवं कृत्यों में संलग्न हो क्योंकि यह भाव विचार समाज में व्याप्त असमानता पर आधारित शासक शोषण वर्ग पर आघात करती है अतः कवि का अन्तर्द्वन्द्व तीव्र हो उठता है–

''भीतर से उभरती है सहसा
शलिल के तम–श्याम शीशे में कोई श्वेत आकृष्टि
कहरीला कोई बड़ा चेहरा फैल जाता है,
और मुस्काता है
पहचान बनाता है,
किन्तु है हतप्रभ,
नहीं वह समझ में आता।''[22]

कवि पूंजीवादी और साम्यवादी विचारों में सामंजस्य स्थापित करने का कवि पक्षधर है इस प्रयत्न में लगा वह मानसिक द्वन्द्व से जूझता है–

उठने दो अंधेरे में ध्वनियों के बुलबुले
वह धन........वैसे ही
आप चला जाएगा आया था जैसा।
विवेक–विक्षोभ महान उसका
तम–अन्तराल में (सह नहीं सकता)
अंधियारे मुझमें द्युति–आकृति–सा
भविष्य का नक्शा दिया हुआ उसका
सह नहीं सकता।।
नहीं नहीं, उसको मैं छोड़ नहीं सकूंगा
सहना पड़े मुझे चाहे जो भले ही।''[23]

कवि तिलस्मी खोह में रक्ता लोक स्नात पुरुष को देखता है, वह पुरुष, अन्धकार पूर्ण रात्रि में कवि के हृदय द्वार पर सांकल खट–खटाता है अनिश्चय की स्थिति में कृषि के अन्दर अस्तित्व और चेतना का भयंकर संघर्ष होता है–

''आत्मा में, भीषण
सत् चित् वेदना जल उठी, दहकी।
विचार हो गए विचरण–सहचर।
बढ़ता हूं आगे,
चलता हूं संभल–संभल कर,
द्वार टटोलता,
जंग–खाई, जमी हुई, जबरन

सिटकनी हिलाकर

जोर लगा, दरवाज खोलता

झांकता हूं बाहर..........।''[24]

'पटकथा' की मुख्य कथा कवि के मानसिक अर्न्द्वन्द्व से ही शुरू होती है, कवि को आजाद देश की आजाद स्थिति कहीं दिखाई नहीं देती, मात्र विसंगतियां उत्पन्न करने वाली विचार धाराओं की दुहाई दी जा रही है।

'जो कल तक एक शब्दा था;

खून के अन्धेरे में

दवा की शीशी का ट्रेडमार्क

बन गया था।''[25]

वर्तमान में आजाद देश के भीतर जीवन निर्वाह के लिए भयंकर संघर्ष चल रहा है वह किसी एक व्यक्ति का नहीं वरन् पूरी पीढ़ी का संघर्ष बन गया है। चुनाव एवं राजनेताओं के खोखले बयान की बर्बरता से वह संघर्ष करता रहा और अब सोच रहा है–

''मैं अक्सर अपने–आपसे सवाल,

करता हूं जिसका मेरे पास,

कोई उत्तर नहीं है

आज आज तक–

नींद और नींद के बीच का जंगल काटते हुए

मैंने कई रातें जागकर

गुज़ार दी हैं।''[26]

मुक्ति बोध में 'ब्रह्म राक्षस' की कथा में प्रकाश और अंधकार के द्वन्द्व को अभिव्यक्ति किया है इसी प्रकार 'लकड़ी का रावण' में रावण पौराणिक पात्र न होकर शोषक और शोषित के संघर्ष को महत्व देता है। यही द्वन्द्व एवं संघर्ष असाध्य वीणा में भी प्रकट हुआ है। परशुराम की प्रतीक्षा में कवि ने नई व्यवस्था के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा दी है–

''वैराग्य छोड़ बाहों की विभा संभालो,

चट्टानों की छाती से दूध निकालो।

है रुकी जहां भी धार, शिलाएं तोड़ो,

पीयूष चन्द्रमाओं को पकड़ निचोड़ो।''[27]

लीलाधर जगूड़ी का चिन्तन तर्क शक्ति पर आधारित है। अतः वह काल्पनिकता के स्थान पर संघर्ष को स्थान देते हैं। ईश्वरीय शक्ति के प्रति चित्रित होने वाली व्यवस्था के गलत रवैये के विरुद्ध अपनी संघर्ष की भावना को कमजोर करते हैं, ईश्वरी शक्ति माध्यम, नहीं बनती और समाधान पर आश्रित व्यक्ति खुद पर अनवरत् अत्याचारों को ढोता है। ऐसे में अमानुषिक कर्म से उपजा अन्धकार सर्वत्र फैल जाता है कवि के शब्दों में–

''सरिया और साहित्य के बीच, भाषा के संवत्सर में

मेघ से थोड़ा सबकी गर्दन. ऊपर रखने के लिए,
ईश्वर किसी के बारे में दुःखी नहीं है,
उसकी परवाह,
इस अंधेरे को और गाढ़ा कर रही है,
ऐसे में कुशलता लोकोक्ति के बाहर की चीज है,
फर्नीचर की दुकान या वहां बैठने वाला एक चेहरा नहीं।''[28]

वैज्ञानिक प्रगति मानव की संहारक क्षमता से युक्त है इसने हमें ऐसे अस्त्र–शस्त्र दिए हैं जो हमारे प्रगति को प्रस्तुत करते हैं। समाज में ऐसी स्थितियां उत्पन्न हो जाती हैं जिनको लेकर संघर्ष होते रहते हैं– इनका प्रयोग दो राष्ट्रों, दो व्यक्तियों, दो धर्मों के बीच हमेशा से चलता रहा है। 'कुरुक्षेत्र' में युद्ध और शान्ति, हिंसा और अहिंसा की समस्या का द्वन्द्व पूर्ण विचारात्मक चित्रण मिलता है। इसमें कवि ने मानव की द्वन्द्वात्मक मनःस्थिति का समाधान मनोविज्ञान से पुष्टि किया है, इस ग्रन्थ की समाप्ति पर जीवन के उदात्त आदर्शों को प्राप्त करने का सन्देश दिया है। शब्दों में–

''और शिखाओं भोगवाद की, यही रीति जन–जन को।
करें विलीन देह को मन में, नहीं देह में मन को।।''[29]

उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक हिन्दी कवियों ने विशेष रूप से युद्ध प्रधान काव्यों में संघर्ष एवं द्वन्द्व को प्रमुख रूप से दर्शाया है। संघर्ष की प्रतिक्रिया रचनाकार ने युद्धमय वातावरण में आपत्तिकालीन परिस्थितियों को व्यक्त करने तथा द्वन्द्व जैसे मनोभाव को युद्ध और शान्ति, हिंसा और अहिंसा, सत्य औ असत्य, व्यवस्था और अव्यवस्था, नैतिकता और विवेक आदि के माध्यम से व्यक्त करते हैं। मनोवैज्ञानिक चिन्तन के अनुसार संघर्ष एवं द्वन्द्व का प्रयोग स्वाभाविक प्रतीत होता है, किन्तु यहां कवियों ने संघर्ष को जीवन का दर्शन नहीं बनाया क्योंकि ''संघर्ष के जीवन दर्शनबन जाने पर कौन मां निरीह बच्चों का, कौन पिता अनाथ सदस्यों का पालन–पोषण करेंगे? बच्चे की सुरक्षा के लिए अपनी जान की बाजी लगा देने वाली मां क्योंकर यह उदात्य त्याग करेगी? बच्चों के हितों के लिए अपने सुखों पर लात मारने वाला पिता कभी भी त्याग, बलिदान से भरा कष्ट साध्य जीवन स्वीकार न करेगा। क्रूरता मानवीय भाव संवेदनाओं की सेवा, दया, करुणा की प्रवृत्तियों को रौंदती हुई चली जाएगी। स्थूल परिप्रेक्ष्य में जीवन–संघर्ष को सृष्टि का अनिवार्य नियम मान लेने पर तो हृदय विदारक स्थिति ही प्रस्तुत होगी।'' इससे यह स्पष्ट है कि कवियों की दृष्टि में युद्धमय वातावरण में संघर्ष का महत्व है, किन्तु मानव जाति को सुरक्षित रखने के लिए, संघर्ष के साथ–साथ सहयोग एवं सहकार की स्थिति को नकारना उसका उद्देश्य नहीं है। इसके अभाव में समाज की प्रगति असम्भव है रचनाकारों ने युद्ध की कशमकश को द्वन्द्व के द्वारा तथा युद्ध की अनिवार्यता को संघर्ष के माध्यम से अपनी कविताओं में व्यक्त किया है।

आक्रोश–निराशा–

आक्रोश एवं निराशा मूलतः एक मनोवृत्ति है। योधन (pugnacity) नामक मूल प्रवृत्ति क्रोध नामक संवेग से सम्बन्धित है। एक मत के अनुसार ''मनुष्य के संघर्ष की प्रवृत्ति उसके दुःखी एवं असुरक्षित व्यक्तित्व के कारण

उत्पन्न होती है।"30 दूसरा मत यह है कि आक्रामक प्रवृत्ति ऐसे समूह के व्यक्तियों के प्रति घृणा के रूप में उत्पन्न होती है जिन्हें यह प्रत्यक्षतः स्वीकार नहीं करता।[31] मूल किसी न किसी प्रकार की निराशा में निहित रहता है।"[32] मनुष्य की आक्रामक प्रवृत्ति का मूल उसकी आत्म रक्षा की प्रवृत्ति में निहित होता है। दूसरे शब्दों में व्यक्ति स्वकीय सुरखा के लिए भी संघर्ष करता है।[33]

आधुनिक काव्य के समीक्षक के शब्दों में–

"आज की कविता में आक्रोश का स्वर इसलिए आया कि कवि पहली बार उपेक्षित समस्याओं और अपनी जरूरतों के सामने खड़ा हुआ। समस्याएं पहले भी थीं, लेकिन उनके बाहर थीं या तो कवि से उनका सामना करने का साहस नहीं था या फिर खतरा था। खतरा भोग लेने की अपेक्षा सुविधा का भोग करना उनके निस्वत ज्यादा मुफीद था वे समस्याओं को झेलते थे और सत्य का भोग लगाते थे। आज की कविता का आक्रोश ईमानदार और क्रिया परक है।"[34]

निराशा से घिर जाने पर जीवन रथ के दो मुख्य घोड़े आशा और उत्साह लुप्त हो जाते हैं मनुष्य को यह संसार अंधकारमय माया से युक्त भयातुर लगता है। जीवन की विरक्ति से निराशा और फलीभूत होती है। युद्ध के दौरान प्रमुख सेनानायक और अन्य सैनिक जब अपने को सही दिशा नही दे पाते अपनी दिक्कतों एवं जरूरतों के लिए किसी दूसरे की मदद लेना निराशा के कारण है। वह यह स्वीकार कर लेता है कि उसे इसी परिस्थिति में जीना है और यह भी मानने लगता है कि मुझमें बहुत कुछ करने की क्षमता नहीं है, किन्तु कहीं–कहीं ऐसे प्रसंग भी आते हैं जहां निराशा व्यक्ति में क्रोध का संचार कर देती है। "निराशा हमारी आशा आकांक्षाओं पर तुषारापात कर देती है हमारे सभी अच्छे संकल्प भी निराशा की बलि बेड़ी पर चढ़ जाते हैं हमारे मन और शक्ति का सम्बन्ध ा अटूट है। यदि किसी पर भी निराशा का प्रभाव पड़ा तो प्रभावित दोनों ही पक्ष होंगे।"[35]

आधुनिक युद्ध परक काव्य में आक्रोश एवं निराशा का स्वर सर्वाधिक प्रखर रूप में उभरा है। काव्य में आक्रोश एवं निराशा उदभूत करने वाली परिस्थितियां और परिवेश गति स्थितियां भिन्न–भिन्न हो सकती हैं। काव्य में आक्रोश एवं निराशा की भावात्मक प्रणीत एवं बोध में अद्भुत साम्य है, किन्तु युगीन वातावरण में अभाव आर्थिक विषमता विज्ञान की विध्वंसक उपलब्धियां, युद्धोत्तर परिस्थितियां, सामाजिक सम्बन्धों की तनाव पूर्ण स्थितियां आदि प्रतिक्षण विघटित होने वाले कारक हैं। आधुनिक युग में युद्ध का वातावरण कवि को इन परिस्थितियों के अनुचिन्तन के लिए प्रेरित करता है और उसी का परिणाम युद्ध परक काव्यों में निराशा एवं आक्रोश की अभिव्यक्ति है।

निम्नलिखित आधुनिक युद्धपरक काव्य रचनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त आक्रोश एवं निराशा के युद्ध परक सन्दर्भों को सोदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है जो सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन की प्रेरणाओं से युक्त है। 'राम की शक्ति पूजा' में पराजित सेवा की मंत्रणा सभा का चित्रण है जिसमें विकराल वातावरण की पृष्ठभूमि से श्रीराम का नैराग्य भाव ही दृष्टिगोचर होता है जो उनकी चिन्ता एवं गम्भीरता का सृजन कर रहे हैं।"

"है अमानिशा; उगलता गगन घन अंधकार;

खो रहा दिशा का ज्ञान; स्तब्ध है पवन–चार;

अप्रतिहत गरज रहा, पीछे अम्बुधि विशाल;

भूधर ज्यों ध्यान–मग्न; केवल जलती मशाल।''[36]

राम के मन में निराशा की भावना का उदय होता है, वह रावण के समक्ष अपने आपको अक्षम समझने लगे; जबकि युद्ध निर्णायक दौर पर चल रहा है, वह पंचवटी से लंका युद्ध तक के श्रम को व्यर्थ न कर दें। अतः विभीषण राम को युद्ध के लिए उत्साहित करते हैं, किन्तु विभीषण के ओजमय वक्तव्य नितान्त निष्प्रभावी होते हैं। प्रत्युत्तर में श्रीराम अपनी निराशा का कारण स्पष्ट करते हैं कवि के शब्दों में–

''कुछ क्षण तक रहकर यौन सहज, निज कोमल स्वर,

बोले मधुमणि– मित्रवर; विजय होगी न समर;

यह नहीं रहा नर–वानर का राक्षस से रण,

उतरी पा महाशक्ति रावण से आमंत्रण।''[37]

राम के इस नैराश्यपूर्ण वक्तव्य से लक्ष्मण अपने प्रचण्ड तेज से चमक उठे, श्री हनुमान लज्जा के वशीभू4त हो जमीन में धंस गए और जामवंत स्तब्ध रह गए, सुग्रीव व्याकुल सिर्फ विभीषण कर्म को निश्चितता प्रदान करते प्रतीत हुए। सेना प्रमुख की ऐसी मनःस्थिति में सम्पूर्ण सेना का आत्मपीड़ित एवं व्यथित होना स्वाभाविक ही है। यह सत्य है कि धर्म के लिए, न्याय के लिए, अधिकार के लिए युद्ध अनिवार्य हो जाता है और भारतीय संस्कृति इस युद्ध में राम के साथ सत्य, न्याय एवं अधिकार के लिए युद्ध भूमि में पूरी शक्ति के साथ युद्धरत हैं, किन्तु उनकी शक्तियाँ शक्तिहीन होती दिखाई देती हैं ऐसी स्थिति में किसी भी सैनिक पक्ष के नेता का निराश हो जाना अस्वाभाविक स्थिति नहीं है। कुछ क्षण पश्चात श्रीराम पुनः अपनी निराशा के कारण को स्पष्ट करते हैं, कवि के शब्दों में–

''आया न समझ में यह दैवी विधान;

रावण, अधर्मनत भी अपना, मैं हुआ अमर–

जो हुए प्रजापतियों के संयम से रक्षित,

वे शर हो गए आज रण में श्रीहत् खण्डित!

देखा है महाशक्ति रावण को लिए अंग''[38]

'संशय की एक रात' में राम निशारा के शिकार हैं क्योंकि विघटित मानव मूल्यों में आस्था और उत्साह का स्थान नहीं होता। श्रीराम भटके हुए सार्थ के टूटे हुए सन्दर्भ हैं एवं मरुस्थल की गर्म जलती हवाओं की भांति असत्कारित है। वह इतिहास बनने से कहीं अच्छा समझते हैं कि अंधेरों में यात्रा करते हुए कीं खो जाएं क्योंकि नियति खोना ही है। श्रीराम लक्ष्मण से कहते हैं तुम अपने को मत छलो समस्त शिखरों की नींव में अन्धकार ही अन्धकार है तुम मेरे अन्धेरे को मत जलाओ राम वैयक्तिक धरातल पर चित्रित है इसलिए इनके चिन्तन और कथन में आध ुनिक युग की स्पष्ट छाप मिलती है कवि के शब्दों में–

''सौ चुभे बाण के टूटे फलक से,

अधिक अपनी पात्रता,

क्या है?

यदि यह पात्रता है

बन्धु।"[39]

जब दो सेनाएं युद्ध के लिए तत्पर होती हैं तो दोनों ही पक्षों में यह कामना बनी रहती है कि प्रतिपक्ष के गलत निर्णय ने हमें युद्ध के मार्ग में ढकेला है। यहां राम इस बात से चिन्तित हैं कि इतिहास उन्हें शान्ति का आकांक्षी न मानकर युद्ध–प्रिय घोषित न कर दे वह युद्ध की उपादेयता पर अपने संशय और शान्ति प्रिय तर्क को भविष्य के लिए सुरक्षित रखने की बलवती इच्छा एवं परिस्थिति की अनिवार्यता के आगेवह निराशा से भरे हुए है। कवि के शब्दों में–

"अब मैं निर्णय हूं,

सबका

अपना नहीं।

मुझसे मत प्रश्न करो

ओ मेरे विवेक!

मुझसे मत प्रश्न करो।"[40]

मुक्ति प्रसंग में वर्तमान व्यवस्था के प्रति आक्रोश को कवि ने इस प्रकार व्यक्त किया है– "फ्री स्कूल स्ट्रीट अथवा पार्लियामेण्ट स्ट्रीट में मूर्तिवान स्थापित करना,

करने लायक और क्या बच गया है कर्म,

धारण करने लायक और क्या रह गया है अपना धर्म।

आकण्ठ डूब गए हैं।

जितने भी थे प्राचीन सत्कर्म राजनीतिक सती

विधवाओं की संस्कारी।

लोक–संग्रहकारी आत्म हत्याओं में।

शव दाह के लिए उपयुक्त हैं निजी सेक्टर के नृसिंहों की।

स्थान, काल, पात्र सब न्यायिक नैयायिकों के

एक्ट बिल बजट में।

सिमट आए हैं दूषित दुर्गन्धित।"[41]

पूंजीवाद के अनियमित विकास में सामाजिक जीवन ने विषमता को जन्म दिया है जिसके कारण वर्तमान सामाजिक जीवन अभिशप्त बनकर रह गया है कवि पूंजीवादी व्यवस्था के प्रति अपने आक्रोश को प्रकट करते हुए कहते हैं–

"पूंजी से जुड़ा हुआ हृदय बदल नहीं सकता,

स्वातन्त्र व्यक्ति का वादी,

छल नहीं सकता मुक्ति के मन को,

जन को।"[42]

समकालीन सामाजिक चेतना के गतिशील स्तरों के समक्ष युद्ध का मोह अवरोध के रूप में उपस्थित होता है

जब तक जर्जित रूढ़ियों, परम्पराओं, आस्थाओं संकल्पहीन निष्ठाओं के मूल्यगत बोध से युग जीवन मुक्त नहीं होता तब तक परिवर्तन को लेकर उथल–पुथल चलती रहेगी। इस गत्यावरोध के प्रतीक शंकर जो सती के शव को अपने संवेदन से लगाए हुए जर्जित रूढ़ियों की परम्परा का निर्वाह करने के लिए युद्ध को अनिवार्य बना देते हैं ऐसी रूढ़ि परम्पराओं से कवि मुक्ति चाहता है। कवि के शब्दों में–

''उसका अस्तित्व,
एक जर्जर परम्परा के,
पोषण के यत्नों में लगा हुआ,
टूट गया।
पर क्या अब शंकर ने
जो परम्पराओं के भंजक रहे हैं।''[43]

इसी क्रम में कवि की पंक्तियां भी दृष्टव्य हैं जिनमें प्रवेश की विदुप्ताओं को आक्रोश मूलक स्वर में उभारा गया है जो सीमित दायरे से बढ़कर सामाजिक जीवन को संतृप्त करने की क्षमता से युक्त है–

''यह दुर्गन्ध,
जिसे शंकर ने ओढ़ रखा है,
जिसको हमने पल भर भोगा,
कितनी कटु है।
कितनी विषमय।।
सारे युग में फैल गई यदि,
तो क्या होगा?''[44]

'पटकथा' के कवि 'धूमिल' स्वतन्त्रता के बाद प्रजातन्त्र शासन प्रणाली की अकर्मण्यता तथा राज नेताओं के योजना बद्ध विकास के नाम पर जन चेतना से खिलवाड़ करते दिखाया गया है। ऐसी व्यवस्था के प्रति प्रबुद्ध कवि के मन में आक्रोश की उद्भावना सहज स्वाभाविक है कवि के शब्दों में–

''मैंने देखा कि इस जनतांत्रिक जंगल में,
हर तरफ हत्याओं के नीचे से निकलते हैं,
हरे–हरे हाथ और पेड़ों पर
पत्तों की जुबान बनकर लटक जाते हैं,
वे ऐसी भाषा बोलते हैं जिसे सुनकर
नागरिकता की गोधूली में,
घर लौटते हुए मुसाफिर
अपना रास्ता भटक जाते हैं।''[45]

आज चारों ओर प्रगति और विकास के स्वर युद्ध स्तर पर सुनाई देते हैं, किन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात प्रगति और विकास के इस दुर्धर दौर में जन सामान्य कितना उपेक्षित है समानता के आदर्श भावों की खिल्ली उड़ाते हुए

आक्रोश की मुद्रा में कवि कहता है–

"इस तरह जो था उसे मैंने,

जी भरकर प्यार किया,

और जो नहीं था,

उसका इन्तजार किया।

मैंने इन्तजार किया–

अब कोई बच्चा

भूखा रहकर स्कूल नहीं जाएगा,

अब कोई छत बारिश में,

नहीं टपकेगी।"[46]

'नाटक जारी है' में कवि राजनीतिज्ञों के प्रति अपना आक्रोश प्रगट करते हुए कहता है कि मैं तुम लोगों के जीवन से अभावों को सदा–सदा के लिए समाप्त करने के तहत सरकारी नीतियों के उन पहलुओं से संघर्ष करता रहूंगा जो तुम सबके लिए कष्टदायी है यदि इस संघर्ष में मेरी मृत्यु हो जाए और विपक्षी राजनीतिक दल मेरे मृत्यु देह को उठाने आएं और मेरी मृत्यु देह के सहारे अपनी राजनीति को खरी करने का प्रयास करें, तो तुम लोग कुछ न कर सको तो इतना अवश्य करना कि समाचार पत्रों को अपनी आवाज देकर, उसके माध्यम से इन राजनीतिज्ञों से कहना कि मुर्दों के साथ राजनीति का खेल–खेलकर सत्ता पाने की चाहत छोड़ दो वो तो मर गया मरे के पीछे उसे उठझने क्यों भाग रहे हो अरे जो जिन्दा है उनकी फिक्र करो। अपनी राजनीति का ढिंढोरा पीटना है तो हमारे जीवन के दु:ख–दर्द को अपने कंधों पर उठझकर राजनीति करो आज के राजनीतिज्ञों के क्रिया–कलापों को देखकर अपने आक्रोश को रोक नहीं पाया। कवि के शब्दों में–

"इस बीच अगर वक्त आए, और मुझे इस जगह से उठाए,

तो आप लोग जरूर एक अखबार से पुकारें,

कि तुम क्यों मुर्दों की राजनीति करते हो

हमको पीछे छोड़ते हुए,

सीढ़ियों की तरह

हमारी उम्र से उतरते हो उन्नीस सौ बहात्तर में।"[47]

'जयभारत' में द्रोपदी के प्रति दु:शासन द्वारा अनुचित व्यवहार केश पकड़कर राजभवन में लाना एवं वस्त्र हरण का प्रसंग होने पर द्रोपदी राज सभा में उपस्थित सभी सदस्यों को एवं राज सभा को निकृष्ट दृष्टि से देखती है इस घटना से उसके अन्दर आक्रोश का भाव प्रकट होता है। कवि के शब्दों में–

"राजाश्रय यज्ञ में मंत्रों के जल से जो अभिशक्ति हुए।

उसके रक्त बिना न बंधेंगे, जिससे ये अविरिक्त हुए?

बल से जीत न सके जिन्हें खल–दल ने चले उन्हें छल से?

किन्तु कहां तक काम चलेगा ऐसे कलुषित कौशल से?"[48]

'सैरन्ध्री' काव्य में द्रोपदी अपने मनोबल और धीरता के व्यवहार से कीचक को भयभीत करती है वह कीचक को चेतावनी देती है–

"सावधान हे वीर, न ऐसे वचन को तुम।
मन को रोको और संयमी बने रहो तुम।
49है मेरा भी धर्म उसे क्या खो सकती हूं?
अबला हूं मैं किन्तु कुलटा न हो सकती हूं।
मैं दीना–हीना हूं सही, किन्तु लोभलीना नहीं।
करके कुकर्म सांसार में, मुझको है जीना नहीं।"

दिनकर के काव्य में उद्‌बोधन की प्रधानता रहती है दिल्ली आनन्द एवं वैभव में डूबी हुई थी और हिन्दुस्तान की धरती पर कुठाराघात हो रहा था कवि ने यह व्यक्त कि कि जन चेतना को दिल्ली के प्रति आक्रोश है अतः अपने विद्रोही विचारों को निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत करते हैं–

"दहक रही मिट्‌टी स्वदेश की।
खौल रहा गंगा का पानी।
प्राचीरों में गरज रही है
जंजीरों से कसी जवानी।"[50]

"अन्धा युग" में आक्रोश से परिचािलित गांधारी श्रीकृष्ण को समस्त वंश के उन्मूलन का कटुश्राप देती है कवि के शब्दों–

"तुमने किया है प्रभुता का दुरुपयोग
यदि मेरी सेवा में बल है
संचित तप में धर्म है
तो सुनो कृष्ण!
प्रभु हो या परत्पर हो
कुछ भी हो
सारा तुम्हारा वंश
इसी तरह पागल कुत्तों की तरह
एक–दूसरे को परस्पर फाड़ खाएगा
तुम खुद उनका विनाश करके कई वर्षों बाद
किसी घने जंगल में
साधारण व्याघ्र के हाथों मारे जाओगे
प्रभु हो
पर मारे जाओगे पशुओं की तरह।"[51]

<u>आस्था–अनास्था</u>

वर्तमान युग के तीव्र परिवर्तन में आस्था एवं अनास्था जैसे मूल्य भी बदल रहे हैं, इस परिवर्तन को व्यक्ति समाज राष्ट्र एवं विश्व स्तर पर देख सकते हैं। आज का परिवेश इतना नैराश्यपूर्ण, संघर्षशील, संशय युक्त एवं प्रतिक्रियावादी हो गया है कि एक ही रचना में आस्था और अनास्था के मिश्रित स्वरों की अभिव्यक्ति मिलती है जो आश्चर्यजनक नहीं लगती। युद्ध परक काव्यों में कवियों ने युद्ध की स्थापना अतीत की प्रेरणा, परम्परित युद्ध के आदर्श, विजयोंल्लास से भरा जीवन, परिस्थिति जन्य सन्त्रास के प्रति आस्था एवं अनास्था दोनों विरोधी विचारों को एक साथ अभिव्यक्त किया है, किन्तु नाना विरोधों एवं अज्ञात भविष्य के प्रति वह आस्थावान दिखई पड़ते हैं, आस्था पर दृष्टिपात करते हुए कहा गया है कि– इस दशक में जहां एक ओर विषाद, निराशा, वेदना, अभिव्यक्त हुए है दूसरी ओर कतिपय व्यक्तियों का जीवन के प्रति आस्था और विश्वास, प्रेम से पुष्ट तथा पोषित है बाध ाा और उलझनों के क्षणों में भी आशा का दीप जलाएं, सपफलता के अभियान में पूरा विश्वास लिए हुए है।''52
विश्व भवन में युद्ध सदा से मानव जाति को यातना, घुटन और अन्धकार प्रदान करता है, किन्तु मानव मूल्यों में आस्थारखने वाला व्यक्ति युद्ध की अनिवार्यता को टालने का प्रयत्न करता है, किन्तु युद्धोत्तर परिस्थितियां देखकर विजयोल्लास से उन्मत्त होने पर भी उसके अन्दर पीड़ा विषाद और आत्मग्लानि की भावना का अभ्युदय होता है, किन्तु फिर भी परिस्थितियां युद्ध के लिए विवश कर देती हैं और विकल्प अस्तित्वहीन हो जाते हैं।
'राम की शक्ति पूजा' में राम संशय, स्थिरता, निराशा, संकल्प, विकल्प आदि से मुक्त होते हैं क्योंकि उनके अन्दर आस्था का भाव जागता है यही कारण है कि युद्ध में विजय प्राप्त हेतु शंकाकुल राग अपने नेत्र को महाशक्ति के चरणों में अर्पित करने का संकल्प लेते हैं। इसके प्रभाव से उनकी विजय सुनिश्चित हो जाती है कवि के शब्दों में–

''होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन।
कह महाशक्ति राम के बदन में हुई लीन।''[53]

अन्धा युग में धृतराष्ट्र और विदुर आधुनिक समाज की विवेकहीनता और अंधी आस्था को प्रगट करते हैं। धृतराष्ट्र की नगरी आज के युग के समान ही अन्धों की नगरी है। जिसमें अधिकारों का अंधापन एवं पतित मर्यादाएं दिखाई पड़ती हैं जो असत्य को मूल रूप में ग्रहण कर सत्य का स्थान ग्रहण कर लेती हैं। कवि के शब्दों में–

''टुकड़े–टुकड़े हो बिखर चुकी मर्यादा
उसको दोनों ही पक्षों ने तोड़ा है
पाण्डव ने कुछ कम कौरव ने कुछ ज्यादा
अंधों से शोभित था युग का सिंहासन
दोनों ही पक्षों में विवेक ही हारा
दोनों ही पक्षों में जीता अंधापन।''[54]

विदुर कृष्ण के प्रति अंधी आस्था से अनुप्राणित है। कवि ने सर्वत्र विदुर द्वारा यह सिद्ध किया है कि प्रभु ही सब कुछ है और उनके अलावा जो है वह आस्था है। वह आस्था और अनास्था दोनों ही प्रभु को मानता है। जब गांध ारी ने प्रभु की भर्त्सना की है उस पर विदुर प्रभु से क्षमा याचना करते हैं। कवि के शब्दों में–

''क्षमा करो प्रभु!

यह कटु अनास्था भी अपने
चरणों में स्वीकार करो!
आस्था तुम लेते हो
लेगा अनास्था कौन?
क्षमा करो प्रभु!
पुत्र शोक से जर्जर है माता गांधारी।"[55]

प्रहरी, संजय और युयुत्स अर्थहीन आस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं। युयुत्सु धृतराष्ट्र का पुत्र है जो पाण्डवों की ओर सतपक्ष का वरण कर युद्ध करता है। युद्ध समाप्ति पर वह मां–बाप के पास लौटता है, अतः कौरव दल द्वारा अपमानित होता है उसकी आत्मा भी उसे फटकारती है। गांधारी के कटु व्यवहार से दुःखी हो वह विदुर से कहता है–

"अब यह मां की कटुता
घृणा प्रजाओं की
क्या मुझको अन्दर से बल देगी?
अन्तिम परिणति में
दोनों जर्जर करते हैं
पक्ष चाहे सत्य का हो
अथवा असत्य का।"[56]

युयुत्सु कौरव वंश में उत्पन्न हुआ इसलिए भीम उसका निरादर करते हैं, क्योंकि कौरव उनके जन्मजात शत्रु है। कवि युयुत्सु के चरित्र के दो पक्ष प्रस्तुत करते हैं पहला यह कि मनुष्यता का सम्बन्ध मानवता से बड़ा होता है। अतः उसे भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य एवं अन्य कौरवों द्वारा पोषित महारथियों की तरह अपने मनुष्यता के असद् मार्ग को अपनाना चाहिए था, दूसरा यह है कि उनकी शत्रुता जन्मजात थी जिसे धृतराष्ट्र ने पालापोसा था। अतः उसे भोगना ही पड़ता है। कृष्ण के पख में हो जाना उसका एक निरर्थक भ्रम था। कवि के शब्दों में–

"मैं हूं युयुत्सु
मैं उस पहिए की तरह हूं
जो पूरे युद्ध के दौरान रथ में लगा था
पर जिसे अब लगता है कि वह गलत धुरी में लगा था
और मैं अपनी उस धुरी से उतर गया हूं।"[57]

संजय अर्थहीन आस्था में जीता है। इस युद्ध से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है फिर भी वह इससे अलग नहीं रह सका। कवि के शब्दों में–

"मैं संजय हूं
जो कर्मलोक से बहिष्कृत है
मैं दो बड़े पहियों के बीच लगा हुआ

एक छोटा निरर्थक शोभा–चक्र हूं
जो बड़े पहियों के साथ घूमता है
पर रथ को आगे नहीं बढ़ाता
और न धरती ही छू जाता है।
और जिसके जीवन का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है
कि वह धुरी से उतर भी नहीं सकता।''[58]

अश्वत्थामा गांधारी एवं व्याघ्र अनास्था से आस्था को ग्रहण कर लेते हैं। गांधारी सौ बच्चों की मांग है जिसके एक–एक कर सभी बच्चे इस विनाशकारी युद्ध में काल के गाल में समा गए हैं, कुछ धर्म से कुछ अधर्म से। इसका मूल कारण वह कृष्ण को मानती है, वह उन्हें किसी तरह भी क्षमा नहीं कर सकती इस परिस्थिति ने ही गांधारी को सशक्त मानवीय दृष्टि दी है, जो उसे मानवीय धर्म से जोड़ती है। कवि के शब्दों में–

''मैंने यह बाहर का वस्तु–जगत अच्छी तरह जाना था
धर्म, नीति, मर्यादा यह सब हैं केवल आडम्बर मात्र,
मैंने यह बार–बार देखा था।
नैतिकता, मर्यादा, अनाशक्ति, कृष्णार्पण
यह सब है अंधी प्रवृत्तियों की पोशाकें
जिनमें कटे कपड़ों की आंखें सिली रहती हैं''[59]

वह परम्पराओं और अंधी आस्था को पास नहीं आने देना चाहती, उसे उस जगत से, इसकी कुरुपता से प्रभुत्व सम्पन्न लोगों के प्रति अनास्था है। कृष्ण अति स्वेच्छाचारी हो गए जिसके कारण वह गांधारी के द्वारा श्रापग्रस्त होते हैं। कवि के शब्दों में–

''प्रभु हो या परात्पर हो
कुछ भी हो
सारा तुम्हारा वश
इसी तरह पागल कुत्तों की तरह
एक–दूसरे को परस्पर फाड़ खाएगा
तुम खुद उनका विनाश करके कई वर्षों बाद
किसी घने जंगल में
साधारण व्याघ्र के हाथों मारे जाओगे
प्रभु हो
पर मारे जाओगे पशुओं की तरह।''[60]

अश्वत्थामा का चरित्र झूठी आस्था पर केन्द्रित था कृष्ण के पैर पर बाण द्वारा हुए रक्त स्राव को देखकर जेसे अश्वत्थामा अपने घावों को सही कर रहे हों कवि के शब्दों में–

''सुनो, मेरे शत्रु, कृष्ण सुनो!

मरते समय क्या तुमने इस नर पशु अश्वत्थामा को
अपने ही चरणों में धारण किया
अपने ही शोणित से मुझको अभिव्यक्त किया?
जैसे सड़ा रक्त निकल जाने से
फोड़े की टीम पटा जाती है
वैसे ही मैं अनुभव करता हूं विगत शोक
यह जो अनुभूति मिली है
क्या यह आस्था है?
यह जो अनुभूति मिली है
क्या है आस्था है?''[61]

द्रोणाचार्य को युधिष्ठिर के सत्य के प्रति अंधी आस्था थी जिससे उन्हें रणभूमि में शस्त्र रखने पड़े थे, अंध आस्था किसी के भी नहीं प्रति होनी चाहिए। इसी प्रकार का जीवन अंधी आस्था से जुड़ा है वह ज्योतिषी था, उसे कौरवों की जीत असम्भावी लग रही थी, परन्तु परिणाम इसके विपरीत आए। पाण्डवों की विजय और कौरवों की पराजय। इस पर व्याघ्र कहता है–

''सहसा एक व्यक्ति
ऐसा आया जो सारे
नक्षत्रों की गति से भी ज्यादा शक्तिशाली था।
पता नहीं प्रभु हैं या नहीं
किन्तु, उस दिन यह सिद्ध हुआ
जब कोई भी मनुष्य
अनाशक्त होकर चुनौती देता है इतिहास को,
उस दिन नक्षत्रों की दिशा बदल जाती है।
नियति नहीं है पूर्व निर्धारित–
उसको हरक्षण मानव निर्णय बनाता–मिटाता है।''[62]

'अन्धा युग' की शुरुआत तो अनास्था से हुई, किन्तु उसकी परिणति आस्था में मिलती है। पाण्डवों द्वारा प्राप्त विजय की व्याख्या युधिष्ठिर निम्न पंक्तियों के माध्यम से करते हैं–

''और विजय क्या है?
एक लम्बा और धीमा
और तिल–तिल कर फलीभूत
होने वाला आत्मघात
और पथ कोई भी शेष
नहीं अब मेरे आगे।''[63]

'संशय की एक रात' में दो आस्थाएं हैं एक युद्ध विषयक दूसरी शान्ति विषयक। हनुमान में न्याय एवं अधिकार प्राप्त करने के लिए, युद्ध के प्रति आस्था है कवि के शब्दों में–

"क्षमा करें महाराज
सम्भव है
हमारे कारण ही
अनागत युद्धों की नींव पड़े
पर
इस डर से
क्या हम न्याय और अधिकार छोड़ दें।"[64]

लक्ष्मण की कर्म के प्रति अटूट आस्था है वह राम के अवसादग्रस्त वातावरण को अपनी आस्था की किरणों से चीरते हुए कहते हैं–

"ब्रह्मलेख को भी मैं
बाणों की चुनौती ही देता
यदि वह राम के माथे पर बनता
चिन्ता की रेखा।"[65]

राम युद्ध से भयभीत नहीं है, किन्तु यह प्रिय भी नहीं है उनके सामने ऐसी स्थिति आ गई जहां युद्ध के अतिरिक्त दूसरा मार्ग भी नहीं है। कवि के शब्दों में–

"यह अंतरीप
मन का
स्थल का।"[66]

इसी प्रकार युद्ध की अनिवार्यता का अनुभव विभीषण भी करते हैं। कवि के शब्दों में

"ठीक है
शेष लोगों से
हमें यह तोड़ देती है।
ऐसा नितांती एकत्व दुःख देता है
स्वयं को
शेष को भी।"[67]

अनास्था समाज में मनुष्य को अकेला बना देती है। इसलिए परिस्थितियों को स्वीकार करना ही श्रेयष्कर है। इस भाव को हम विभीषण के कथन में देख सकते हैं। कवि के शब्दों में–

"क्या करोगे मित्र।
यहां सब अनिवार्यता है।
युद्ध भी।"[68]

'एक कंठ विषपायी' में शंकर, सती के भस्म हो जाने से देवलोक को भस्म करने के लिए, ताण्डव हेतु उद्धत होते हैं, वह त्रिशूल की टेक लेकर, एक टांग से खड़े होकर, डमरू बजाते हैं वह अपार आस्था के साथ डमरू तब तक बजाना चाहते हैं जब तक सती जीवित न हो उठे। कवि के शब्दों में–

''डमरू–डमरू बजने दो डमरू
जब तक शक्ति विकास न पाए
जब तक मेरी मृतक प्रिया के
शव में वापस सांस न आए''[69]

ब्रह्म युद्ध के विरोधी हैं वह युद्ध को आत्मघात मानकर युद्ध के प्रति अपनी अनास्था प्रकट करते है–

''हां, आत्मघात,
वह भी सामूहिक।
मेरे अपने ज्ञानकोष में
युद्ध शब्द का यही अर्थ है।''[70]

''पर यदि मुझसे करो अपेक्षा
तो मैं अपने मुंह से
सेना को आदेश नहीं दे सकता।
मैं पहले ही बता चुका हूं
यह सामूहकि आत्मघात है।
इसके पीछे कोई जीवन–दृष्टि नहीं,
केवल आग्रह है।''[71]

इन्द्र युद्ध के प्रति आस्था रखते हैं वह युद्ध को शासक वर्ग का धर्म मानते हैं कवि के शब्दों–

''मात्र एक व्यक्ति की ही नहीं प्रभु,
यह शासन की मर्यादा है।
प्रभु शत्रु के समक्ष शस्त्र से
यदि मैं आज न उत्तर दूंगा,
तो त्रिलोक में
मैं कायरता के अपयश का भागी हूंगा?''[72]

'अन्धेरे में' कविता में जनशक्ति के प्रति कवि की श्रद्धा और आस्था दिखाई देती है, कवि के शब्दों में–

''किसी एक बलवान तन श्याम, लुहार ने बनाया
कण्डों का वर्तुल ज्वलन्त मण्डल।
स्वर्णिम कमलों की पांखुरी–जैसी ही
ज्वालाएं उठती हैं उससे,
और उस गोल–गोल ज्वलंत रेखा में रक्खा

लोहे का चक्का।''[73]

कवि को बन्दी बनाया जाता है, तथा उसे दारूण यातनाएं दी जाती हैं क्योंकि वह शोषकों के प्रति अपने विरोधी विचार, शोषित जनता के पक्ष में प्रस्तुत करता है, उसकी आस्था को खण्डित करने का उपक्रम करते हैं, किन्तु कवि इससे हारता नही है कवि के शब्दों में–

''हम कहां नहीं हैं सभी जगह हम।''[74]

'असाध्यवीणा' में राजा एवं समस्त प्रज्ञा केशकम्बली के द्वारा असाध्यवीणा के ध्वनित होने के प्रति आस्थावान है कवि के शब्दों में–

''लघु संकेत समझ राजा का गण दौड़।
लाए असाध्यवीणा,
साधक के आगे रख उसको, हट गए।
सभा की उत्सुक आंखें
एक बार वीणा को लख, टिक गईं
प्रियम्बद के चेहरे पर।''[75]

प्रियंवद अपने को वीणा पर समर्पित कर चुका है वह किरीटी तरु के ध्वनित होने के लिए उसका आवाहन करता है उसकी आस्था निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है–

''मेरे गूंगेपन को तेरे सोये स्वर–सागर का ज्वार डुबा ले!
आ, मुझे भुला,
तू उतर बीन के तारों में
अपने से गा
अपने को गा–''[76]

केशकम्बली अलौकिक सत्ता के प्रति आस्थावान या वीणा का सहसा बज उठना उसकी अपार आस्था को प्रकट करता है कवि के शब्दों में– ''अवतरित हुआ संगीत
स्वयम्भू
जिसमें सोता है अखण्ड
ब्रह्मा का मौन
अशेष प्रभामय।''[77]

'पटकथा' में आजादी के परिवेश का आस्थामूलक स्वर जो सामाजिक जीवन के उत्थान की ओर इशारा कर रहा है। निम्न पंक्तियों के माध्यम से प्रस्तुत है–

''मैंने कुछ आ–जा–दी,
और दौड़ता हुआ खेतों की ओर गया।
वहां कतार के कतार
अनाज के अंकुश फूट रहे थे।''

आजादी के उत्साह से भरा कवि अपने आस–पास की उपेक्षित वस्तुओं के प्रति आस्थावान होकर अपने समाज एवं देश की समृद्धि के लिए कार्य करता है उसमें जीवन के प्रति मुस्कान, लोक–मंगल की कामना एवं भविष्य के प्रति आस्था है कवि के शब्दों–

''घर लौटकर
मैंने सारी बत्तियां जला दीं
पुरानी तस्वीरों को दीवार से
उतारकर
उन्हें फिर उन्हें दीवार पर (उसी जगह)
टांग दिया।
मैंने दरवाजे के बाहर
एक पौधा लगाया।''[79]

'पटकथा' के प्रारम्भ के कवि काफी उत्साह में है क्योंकि वह भविष्य के प्रति आस्थावान है वह बुद्धिजीवियों एवं राजनेताओं के द्वारा किए गए वादों पर विश्वास रखता है, किन्तु वह जल्दी ही झूठे वादों की सच्चाई से रूबरू हो जाता है कवि की अनास्था निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है–

''जनतन्त्र, त्याग, स्वतन्त्रता......।
संस्कृति, शान्ति, मनुष्यता.......।
ये सारे शब्द थे
सुनहरे वादे थे
खुशफहम इरादे थे......
सुन्दर थे
मौलिक थे''[80]

आज मनुष्य के अन्दर परोपकार या मदद करने की भावना का अभाव दिखाई देता है, इसकी जगह स्वाथान्धिता एवं मौका परस्ती ने ले ली है कवि का अनास्था मूलक चिन्तन निम्नलिखित है–

''अब ऐसा वक्त आ गया है जब कोई
किसी का झुलसा हुआ चेहरा नहीं देखता है
अब न तो कोई किसी का खाली पेट
देखता है, न थरथराती हुई टांगें
और न ढला हुआ 'सूर्यहीन कंधा' देखता है
हर आदमी, सिर्फ, अपना धंधा देखता है
सबने भाईचारा भुला दिया है
आत्मा की सरलता को मारकर
मतलब के अन्धेरे में (एक राष्ट्रीय मुहावरे की बगल में)

सुला दिया है।"[81]

जनतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था के प्रति कवि में अनास्था का भाव दिखाई देता है क्योंकि वह समझ गया है कि राजनीति का अर्थ केवल सत्ता में काबिज रहना ही है, सत्ता में बने रहने के लिए वह छद्मवेशी बनकर मूल्यहीनता का आचरण अपनाते हैं। सौमित्र मोहन की बहुचर्चित कविता 'लुकमान अली' में राजनीति के प्रति अनास्था का भाव मिलता है कवि के शब्दों में–

"लुकमान अली के लिए स्वतन्त्रता उसके कद से केवल तीन इंच बढ़ी है।
वह बनियान की जगह तिरंगा पहनकर कला बाजियां खाता है। वह चाहता है पांचवें आम चुनाव में बौनों का प्रतिनिधित्व करें। उन्हें टाफियां बांटे।
जाति और भाषा की कसमें खिलाएं
वह जानता है कि चुनाव
लोगों की राय का प्रतीक नहीं, धन और धमकी का अंगारा है
जिसे लोग
अपने कपड़ों में छिपाए पानी
के लिए सदैव दौड़ते हैं।"[82]

'मुक्ति प्रसंग' में कवि अपने आप पर ही आस्था रखते हुए कहता है कि वर्तमान समय में मेरा रोगग्रस्त शरीर है जो अपना है किन्तु यह लाश के समान है जिसके भार को मैं ढोये जा रहा हूं क्योंकि इस शरीर को एक दिन मृत्यु का सामना करना है। यह शरीर जीवन–मरण के बीच में फंसा हुआ है, मैं अपने ही शरीर पर निर्भर हूं और मेरा यह शरीर मुझ पर निर्भश्र है। इसलिए संसार में मुझे किसी पर भी आस्था नहीं है मैं सिर्फ अपने शरीर के प्रति आस्थावान हूं कवि के शब्दों में–

"वर्तमान के अग्नि जर्जर शव को अपने कंधो–
पर, मैं शिव की तरह धारण करता हूं।
मैं इस शव के गर्भ में हूं,
और यह शव मेरे कंधों पर है।"[83]

जिन लोगों ने अपने जीवन को बलिदान कर इस देश को पराधीनता से मुक्त 'नाटक जारी है' में कवि कहता है मेरी आस्था किसी पर नहीं थी, परन्तु आज मेरे अन्दर आस्था उत्पन्न हो रही है ऐसा मैं प्रतीत करने लगा हूं क्योंकि सत्य है आस्था उसी पर केन्द्रित होती है, इसलिए आज मेरी आस्था पूरी तौर पर संत कबीरदास के प्रति अडिग हो चुकी है। जिसने मुझे सामाजिक जीवन की सत्यता की अनुभूति कराई, मुझे सही दिशा दी और अग्रसारित किया। आज मैं ऐसा अनुभव करता हूं कि कबीरदास जी मेरे अन्दर के जोड़–जोउ़ में रस–बस गए हैं मेरी आस्था की मूर्ति बन गए हैं, कवि के शब्दों में–

"आज मैं भी महसूस कर रहा हूं
कि मेरे शरीर में
जिन पर मैं खड़ा होता हूं

कबीर अब उन जोड़ों के पास है।"[85]

कवि चिन्तन करता है कि देश का हर बच्चा कल इस देश का नेता होगा, उसी के कंधे पर,देश को आगे ले जाने का भार होगा, परन्तु आज के नेता शासनकर्ता उन्हें सत्य इतिहास से दूर रखने का कुचक्र चला रहे हैं जिस इतिहास ने हमें स्वतन्त्र जीवन जीने का अधिकार दिया। देश के बच्चों को सत्य से दूर कर जैसी शिक्षा दी जा रही है, उसके कारण आने वाले समय पर ये बच्चे यह भूल जाएंगे कि हमारे देश का पूर्व इतिहास क्या है, हमारा देश कितना गौरवशाली था, हमारे देश की संस्कृति का स्वरूप क्या था? उन्हें बस इतना याद रहेगा कि यह हमारा देश है और इस छोर से उस छोर तक अपने इस देश की सीमा है इस देश का विस्तार है, शेष देश के अन्दर क्या–क्या विनाश भरा है क्या नहीं भरना, आदि बातों को भूल जाएंगे क्योंकि देश की पूरी तस्वीर की उन्हें जानकारी नहीं होगी। शिक्षा के गिरे हुए स्तर के कारण आने वाले समय पर यही अनास्था प्रकट होगी। कवि के शब्दों में–

"लेकिन इस देश का हर बच्चा नेता है
इतने नेता जब चाहें तब
इस देश के नक्शे से उतार लेंगे
अपनी कापी पर और फिर भूल जाएंगे"[86]

उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक हिन्दी कवियों ने युद्ध सम्बन्धी कविताएं लिखकर आस्था और अनास्था जैसे मनोभावों को प्रमुख रूप से प्रस्तुत किया है। एक ओर राष्ट्रीय उन्माद में आकर युद्ध के लिए प्रोत्साहित करते हैं, तो दूसरी ओर मानवीय संवेदनाओं से युक्त हो युद्ध के प्रश्नों पर विचार करते हैं–
युद्ध को अनिवार्य बना देने वाली परिस्थितियां, समाज द्वन्द्वात्मक सम्बन्ध एवं मानव की यातना को अभिव्यक्त करते हैं। आस्था और अनास्था के चिन्तन की अनुभूति को, मानवतावादी, सत्य दृष्टि के साथ, युद्ध परक काव्यों में चित्रित किया गया है।

कुण्ठा–विक्षोभ

युद्ध काव्यों में कुण्ठता एवं विक्षोभ जैसे मनोभावों का चित्रण किया गया है। युद्धमय वातावरण में एक पक्ष को सफलता मिलना तथा दूसरे को असफलता, जिसके फलस्वरूप हतोत्साह, घबराहट, निराशा के क्षण कुण्ठा एवं सत्य पर असत्य की जय, न्याय पर अन्याय की विजय आदि देखते हुए धर्ममय आचरण करने वाले पात्र मे विक्षोभ की भावना का अभ्युदय होते देखा गया है। ऐसा इसलिए होता है कि अविजित पक्ष अपनी कार्य प्रणाली से आत्म सन्तुष्टि नहीं पाता तथा अपना लक्ष्य भी खोने लगता है। युद्ध में प्रमुख रूप से भौगोलिक परिस्थितियों एवं जलवायु का प्रभाव पड़ता है यह परिस्थितियां किसी एक पक्ष के लिए सुविधादायक हो सकती है तो दूसरे के लिए समस्या, अपनी इन प्राकृतिक सुविधाओं के अभाव को जब वह पक्ष सफल नहीं हो पाता तो वह निराश हो जाता है और कुण्ठा ग्रस्त होने की सम्भावना बढ़ जाती है जैसे 'संशय की एक रात' में वानर सेना द्वारा पुल का निर्माण राम को कुण्ठाग्रस्त होने से बचा लेताहै। 'पटकथा' में कवि धूमिल ने भारत के लिए आजाद देश की सर्वोत्कृष्ट व्यवस्था का स्वप्न देखा था जब इस व्यवस्था का खोखलापन उसे दिखाई दिया तो सम्पूर्ण व्यवस्था को सही रूप दे पाने में वह अकेले सक्षम नहीं होता। अतः उसके अन्दर कुण्ठा उत्पन्न हो जाती है। युद्धमय

वातावरण में साधन हीनता विक्षोभ का कारण बन जाता है, क्योंकि ऐसे वातावरण में आर्थिक अभावों से युद्ध कर्ताओं को जूझना पड़ता है। किसी व्यक्ति विशेष की शारीरिक अथवा मानसिक खामियां भी व्यक्ति के स्वरूप को प्रभावित करती है। युद्धमय वातावरण में जब एक प्रतिद्वन्द्वी को उसके जैसा उच्चकोटि का प्रतिद्वन्द्वी न मिले तो वह अपने आपको अति सामान्य लोगों के बीच पाकर अपनी शारीरिक क्षमताओं का प्रदर्शन न कर पाने के कारण कुण्ठाग्रस्त हो जाता है, योग्यता के अनुकूल लक्ष्य का निर्धारण न कर पाना, विजित तथा अविजित दोनों सेनाओं के लिए कुण्ठा का कारण बन जाता है। जब एक पक्ष अपने कुछ नैतिक आदर्शों को लेकर चलता है, नैतिक स्तर बहुत अच्छा होने के कारण उसे निराश होना पड़ता है किन्तु युद्ध में अनैतिकता का वरण करतेदेखा जाता है ऐसे कई स्थल आए हैं जहां अनैतिक राह पर चलकर नैतिकता पर विजय पाई है। व्यक्ति अपनी इस उलझनों को अपने अन्तर में ही दबाकर रखता है किन्तु जब इन दबी हुई इच्छाओं को अवसर मिलता है तो वह उसे प्रेरित करती हुई, असामाजिक कार्य की ओर ले जाती है। 'माइर' के अनुसार– ''कुण्ठित व्यक्ति के तन–मन के संस्थान में तनाव बढ़ते ही चले और उनके प्रशमन के मार्ग अपर्याप्त हों तो जीवधारी का व्यवहार 'प्रकोप' या फिट अथवा 'वेपथु' का रूप ले सकता है, जिसमें उसका सम्पूर्ण शरीर विचलित हो उठता है।''[87] युद्ध कुण्ठा का ही परिणाम है साम्प्रदायिक दंगे, जातीय घृणा, वर्ग संघर्ष भी कुण्ठता का ही परिणाम है। ''जब किसी लक्ष्य को पहुंचने में रुकावटें पैदा होती हैं और अन्तरीय अवस्था में अनसुलझा अनुभव होता है यह अवस्था कुण्ठा कहलाती है।''[88] ''मानव व्यवहार में लगाए गए सामाजिक नियमों के बन्धन, बाह्य कुण्ठाओं के महत्वपूर्ण स्रोत हैं इस सम्बन्ध में वर्ग वैषम्य और झूठे नैतिक मानों का भी उल्लेख किया जा सकता है। कभी–कभी युद्ध, बाढ़, भूचाल, आर्थिक विपन्नता, राजनीतिक उपद्रव तथा अन्य घटनाएं भी मानव की श्रेष्ठ योजनाओं को अस्त–व्यस्त कर देती हैं।''[89] विक्षोभ में नाश की प्रवृत्ति व्याप्त हो जाती है, किन्तु जब कोई व्यक्ति कुछ करना चाहता है तोउसका आक्रोश और क्षुब्धता उसे करने और न करने से रोकता है।

जब दोनों ओर की सेनाएं युद्ध भूमि में आमने–सामने होती हैं तब एक सेना दूसरी सेना को पराजित करके एवं अपने को उससे अधिक शक्तिशाली साबित करने की चाह ही सैनिकों में युद्ध जैसी हिंसात्मक कार्यवाही के लिए प्रेरित करती है। जब किसी कारणवश एक सेनापक्ष अपने को कमजोर मानने लगता है तथा सैनिक अपने को दूसरे पख के समक्ष निकम्मा महसूस करने लगते हैं अतः कुण्ठाग्रस्त होकर अपने लिए युद्ध जैसे रास्ते की तलाश करते हैं जिसमें अपनी व्यक्तिगत एवं सामाजिक जरूरतों को सही अंजाम दे पाते हैं। युद्धमय वातावरा से प्रभावित कुण्ठाग्रस्त व्यक्ति न केवल दूसरों पर शारीरिक हमला करता है, बल्कि मानसिक अत्याचार की ओर भी बढ़ता है जैसे एक–दूसरे को अपमानजनक शब्द कहना, अपने मनोबल को बढ़ाना तथा प्रतिपक्षी के मनोबल को गिराना, व्यंग्य बाणों का प्रहार आदि ऐसी स्थिति में कुछ संवेदनशील सैनिक जो अपनी सेना को विजय दिलापाने में अपने को असमर्थ मानने लगते हैं वह आत्महत्या तक कर लेते हैं। ऐसा भी देखा गया है जो सैनिक अपने पक्ष को विजय नहीं दिला पाते वह उस पक्ष को छोड़कर कुण्ठित हो जाने के कारण दूसरे पक्ष में शामिल हो जाते हैं, वह उनकी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए उनकी मानसिकता को भी स्वीकार करते हैं और उसकी महत्वाकांक्षा को पूरी करने में मदद भी करते हैं। इस प्रकार वह दूसरों को अपने प्रभाव में लेना चाहता है, इस इच्छा को पूरा हुआ देख वे सुखी होते हैं और हिंसात्मक व्यवहार की ओर बढ़ते हैं। यदि सैनिकों का सर्वेक्षण

किया जाए तो पता चलता है कि कुछ सैनिक जो विध्वंसकारी प्रवृत्तियों की ओर शान्त वातावरण में भी उन्मुख रहते हैं वे युद्ध के परिणामों को सोंचकर ही कुण्ठाग्रस्त बन जाते हैं। यह ऐसे लोगों की तलाश करते हैं, जिनके साथ इनका तालमेल बैठ सके यह नियमों के पालन के लिएब ाध्य नहीं होते, बल्कि नियमों को तोड़ना इनके लिए एक रोमांचकारी घटना होती है। सच तो यही है कि युद्ध के पश्चात सैनिकों की मनोवृत्ति उनके द्वारा किए गए, श्रेष्ठ कार्य से सम्मान की आशा करती है ऐसा न होने पर वे कुण्ठित होकर क्रोधित बने रहते हैं। अतः विरोध ी भावनाओं का जन्म होता है और हिंसात्मक रवैया छोड़ नहीं पाते।

आज युद्ध कर्म अपने पूर्वकालीन रूप में नहीं है उसका रूप विकृत हो गया है। युद्ध प्रधान काव्य रचनाओं में कुण्ठा एवं विक्षोभ की छाप प्राप्त होती है, इन्हीं सन्दर्भों को चयनित युद्ध काव्यों के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है। कुण्ठा और विक्षोभ के भाव को व्यक्त करने के लिए सबसे पहले सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला कल 'राम की शक्ति पूजा' को लेते हैं।

'राम की शक्ति पूजा' में हनुमान श्रीराम आदि विक्षोभ की स्थिति को व्यक्त करते हैं। श्री हनुमान जी रावण को संरक्षण प्रदायिनी महाशक्ति को नष्ट करने के लिए क्षुब्ध हो महाकाश को निगल जाने का संकल्प लेते हैं। कवि के शब्दों में–

''बज्रांग तेत घन बना पवन को, महाकाश
पहुंचा, एकादश रुद्र क्षुब्ध कर अट्टाहास।
रावण–महिमा श्यामा विभावरी अंधकार,
यह रुद्र राम–पूजन–प्रताप ते; प्रसार;
इस ओर शक्ति शिव की जो दशकन्ध पूजित,
इस ओर रुद्र वन्दन जो रघुनन्दन–कूजित;
करने को ग्रस्त समस्त व्योमकपि बढ़ा अटल,''[90]

विभीषण और जामवंत द्वारा युद्ध के लिए उत्प्रेरित किए जाने पर भी महाशक्ति से अपनी विफलता के कारण जो विक्षोभ है वह कम नहीं होता, क्योंकि राम ने जिन शस्त्रों का प्रयोग रावण के ऊपर किया वह श्रीहत और खण्डित हो गए। रावण को महाशक्ति अपने अंग में बैठाए हुए थी कवि के शब्दों में–

''देखा, है महाशक्ति रावण को लिए अंग
लांछन को ले जैसे शशांक नभ में अशंक''[91]

'अन्धा युग' में युद्ध के पश्चात धृतराष्ट्र ने जो पश्चाताप व्यक्त किया कि जीवन भर बाह्य और अन्तर अन्धता से घिरे रनहे जीवन–सत्य को न पहुंच सके। आज वह विक्षोभ भाव से भरे हुए अपेन जीवन को समाप्त कर देना चाहते हैं, अग्नि उन्हें ज्ञान–ज्योति जैसी प्रतीत होती है। कवि के शब्दों में–

''अब सब प्रयत्न व्यर्थ हैं।
छोड़ दो तुम मुझे यहीं,
जीवन भर मैं
अन्धेपन के अंधियारे में भटका हूं

अग्नि है नहीं, यह है ज्योतिवृत्त

देखकर नहीं यह सत्य ग्रहण कर सका तो आज

मैं अपनी वृद्ध अस्थियों पर

सत्य धारण करूंगा

अग्निमाला–सा।''[92]

अश्वत्थामा की कृति में कुण्ठित चरित्र मिलता है क्योंकि वह भाव और खण्डित योद्धा के रूप में हमारे सामने उपस्थित होता है। पिता की क्रूर और छलयुक्त हत्या, दुर्योधन की खिन्न स्थिति आदि से विक्षोभ भाव का उदय होता है। कवि के शब्दों में–

''वध मेरे लिए नहीं रही नीति

वह है अब मेरे लिए मनोग्रन्थि

किसको पा जाऊं

मरोड़ूं मैं।

मैं क्या करूं?

मैंने तो अपना धनुष भी मरोड़ दिया।''[93]

गांधारी के चरित्र में कुण्ठा, जिद और कठोर भावनाओं का निवास है, उसकी कामना मात्र कौरवों की विजय है। उनका अवचेतन मन चेतन पर इस प्रकार हावी है कि वे दुर्योधन का कंकाल देखकर कुण्ठित हो जाती है। कवि के शब्दों में–

''नहीं!नहीं!नहीं!

देख नहीं पाऊंगी

किसी भी तरह मैं

मरणोन्मुख दुर्योधन को

रहने दो संजय

यह पट्टी बंधी है बंधी रहने दो

संजय मेरी पट्टी उतार दो

देखूंगी मैं अश्वत्थामा को

बज्र बना दूंगी उसके तन को।''[94]

'संशय की एक रात' में राम कुण्ठा से ग्रस्त है वह समस्या से जूझ रहे हैं तथा विजय पाने की शक्ति से युक्त हैं।''

आक्रमण के लिए पूरी तरह तैयार हो जाने पर भी उनमें युद्ध रोकने की आकांक्षा महान हो उठती है, किन्तु सह–सेनानायक युद्ध के लिए निरन्तर प्रेरित करते हैं। इस स्थिति से निपटने की सामर्थ्य के अभाव में अपने को कुण्ठित अनुभव करते हैं। कवि के शब्दों में–

''लक्ष्मण!

जैसा उचित समझो
बात कर लो,
तुम्ही मेरी इन्द्रियां हो।''[95]

कुण्ठा हमारे युग की प्रधान समस्या बन गई है कि फिर युद्ध जैसी कार्यवाही में कुण्ठित चरित्रों का अंकन स्वाभाविक है। यहां विभीषण अपने राष्ट्र की दुर्दशा के कारण तो खोजते हैं, किन्तु वह अपने को आकांक्षा स्तर और वास्तवित व्यवहार से निर्धारित लक्ष्य को साधने में असमर्थ पाते हैं, इसलिए कुण्ठाग्रस्त हैं। कवि के शब्दों में–

''प्रत्येक क्षण
मेरा सोचना
यहीं पर टूट जाता है
अपने देश की दुर्दशा का
कौन कारण है?''[96]

प्रमुख सेना नायक राम की युद्ध के प्रति उदासीनता देखकर लक्ष्मण प्रयत्नपूर्वक युद्ध की अनिवार्यता एवं कर्मचिन्तन के तर्क देते हुए युद्ध के लिए प्रेरित करते हैं, किन्तु राम की युद्ध करने की विमुखता एवं उनके तर्क लक्ष्मण के विक्षोभ के कारण बनते हैं। कवि के शब्दों में–

''शपथ है बन्धु!
मुझको मेरे ही बाण की
आज की भाद्रपदी सांझ की,
आज्ञा करें राम
देखें फिर पौरुष इस बन्धु का।
दूसरी बार होगा
सागर का मंथन अब।
यदि यह बाधा है सिंधु
अगस्त्य के आचमन–सा
सीखेंगे।
महाकाल देखें अब,
साक्षी रहे इतिहास।''[97]

'एक कण्ठ विषपायी में' युद्ध के परिवेश से प्रदत्त बाधाएं स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है, युद्ध से ग्रस्त लोगों को खाने के बिना भी गुजारा करना पड़ता है। आहार की अनुपस्थिति में उनकी भूख सम्बन्धी आवश्यकताएं कुंठित होती हैं; दुष्यंत कुमार ने सर्वहत को भूख से घिरा दिखाया, क्योंकि युद्ध की परिस्थितियों में भूख मिटाना उसके प्रयास से बहुत दूर था। कवि के शब्दों में–

''हम सब मर जाएंगे एक रोज

पेट को बजाते
और भूख–भूख चिल्लाते
हम सब मर जाएंगे एक रोज.......
........ठूंठे रह जाएंगी
सांसों के पत्ते झर जाएंगे एक रोज........''[98]

सती के प्रतिकार हेतु कैलाशपति शंकर जी युद्ध की ओर प्रवृत्त होते हैं। इस समस्या से निपटने के लिए ब्रह्मा जी समुचित उपाय न खोज पाने की अवस्था में वह शंकर की जरूरतों और प्रेरकों की पूर्ति हेतु अपने चिन्तन को सही दिशा नहीं दे पाते। कवि के शब्दों में–

''आह बंधु!
शंकर की पीड़ा पर
मर भर–भर आता है।
क्यों आखिर!
क्यों आखिर?
मेरा कुण्ठित विवेक सोच नहीं पाता है?''[99]

शंकर सती के शव से वार्ता करते हैं तथा इस स्थिति को अपनी पराजय के रूप में देखते हैं। सती के मुख को सामने करते हैं तथा उसे देखकर अपने प्रति कुपित होते हैं, और विक्षोभ की स्थिति में अपने भाव निम्न शब्दों के माध्यम से व्यक्त करते है।–

''धिक मेरा देवत्व!
कि जिसकी कायर गाथा,
धिक मेरी सामर्थ्य!
कि जिसने टेका गाथा,
धिक मेरा पुंसत्व!
कि जिसका बोध अधूरा,
धिक मेरा जीवन!
जिसका प्रति शोध अधूरा।''[100]

महाराज दस शंकर को अपना जमाता स्वीकार नहीं कर पाते क्योंकि उन्हें शंकर अपमान के कारण के रूप में दिखाई देते हैं। शंकर के कृत्य से उनके प्रति विक्षोभ उत्पन्न होता है तथा अपने से भी क्षुब्ध दिखाई देते हैं। कवि के शब्दों में–

''शंकर!
शंकर!!
वह जिसने घर की परम्परा तोड़ी है,
वह जिसने मेरे यश में कालिख पोती है,

जिसके कारण
मेरा माथा नीचा है, सारे समाज में,
मेरे ही घर अतिथि रूप में आए?
यह तुम क्या कहती हो?''[101]

जीवन संघर्ष के आयाम अति विस्तृत है अतः इस विस्तार में व्यक्ति की चेतना कुण्ठा से ग्रस्त हो गई है। जिन परिस्थितियों से आज हम गुजर रहे हैं उनमें संवेदनाओं का समग्रतः हनन ही दिखाई देता है। कवि ऐसी दशा को अमानवीय कहकर इस प्रकार व्यक्त करता है–

''जिन्दा छातियों पर चेहरों पर
कदम रखकर चले हैं पैर
ब्रबाहत पैर को लेकर
भयानक नाचता हूं, शून्य
मन के टीन छत पर गरम
हर पर चीखता हूं शोर करता हूं
कि वैसी चीखती कविता बनाने में लगाता हूं।''[102]
मेरे देश भारत से
पुरानी हाय में से
किस तरह से आग भभकेगी
उड़ेगी किस तरह झकसे
हमारे वक्ष पर लेटी हुई विकराल चट्टानें व इस पूरी क्रिया में से
उभरकर भव्य होंगे, कौन मानव गुण।''[103]

'अन्धेरे में' रहस्यमय व्यक्ति द्वारा की गई संसार की समीक्षा दृष्टिगोचर होती है। कवि इसके विवेक और विक्षोभ को सहन नहीं कर पाता, किन्तु वह आलोक पुरुष का साथ कदापि नहीं छोड़ सकता। कवि के शब्दों में–

''इस तम शून्य में तैरती है जगत समीक्षा
की हुई उसकी
(सह नहीं सकता)
विवेक विक्षोभ महान उसका
तम अन्तराल में (सह नहीं सकता)''[104]

आज मनुष्य के जीवन में स्वतन्त्रता का कोई मूल्य नहीं है, किन्तु युद्ध में स्वतन्त्रता का विशेष महत्व होता है। तन और मन से वह कुण्ठित दिखाई देता है, क्योंकि व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध प्रश्नवाचक हो गया है। ऐसे विषम वातावरण में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की बात हास्यास्पद लगती है। कवि के शब्दों में–

''आव्यक्तिगत स्वतन्त्रता का ढिंढोरा
पीटने वाले मेरे देश के रहवरों

समाज और व्यक्ति में उलझे हुए
सम्बन्धों को नहीं समझती
पर एक सीधी–सी बात पूछती है
जिन्हें तुमने व्यक्ति बनने का मौका ही नहीं दिया
कि उन सबके लिए तुम्हारी इस व्यक्तिगत
स्वतन्त्रता का क्या मतलब।''[105]

काम की असुरक्षा, बेरोजगारी, मालिकों एवं अधिकारियों द्वारा अपमानजनक व्यवहार, मनोरंजन एवं सामाजिक सम्पर्क, शासन प्रणाली, नेताओं की कथनी और करनी में अन्तर आदि से युद्ध करना आधुनिक समाज में बड़ी तीव्र और विस्तृत कुण्ठाओं के स्रोत हैं। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता जब कुण्ठित हो,तो स्वतन्त्रता का अस्तित्व धराशायी हो जाता है। कवि ने देश के राजनीतिक कर्णधारों की नब्ज को पहचाना है, जो स्वतन्त्रता का राग अलापते हैं, किन्तु मानवीय मूल्यों को नहीं समझते कवि ने 'पटकथा' शीर्षक कविता में राजनीतिक परिवेश के वास्तविक रूप को उजागर किया है। कवि के शब्दों में–

''हां, यह सही है कि इन दिनों
मंत्री जब प्रजा के सामने आता है
तो पहले से
कुछ ज्यादा मुस्कुराता है
नए–नए वादे करता है
और यह सब सिर्फ घास के
सामने होने की मजबूरी है।''[106]

नेता लक्ष्य सिद्धि के लिए चुनाव के अवसर पर ही कल्याण कार्यों का सहारा लेकर जन सामान्य के समक्ष नाटकीय प्रदर्शन करते हैं। कवि ने इस छद्म वृत्ति के प्रति अपने विक्षोभ को व्यक्त किया है। सत्ता के मद में अंधे और निरंकुश राजनीतिज्ञों की कार्य प्रणाली ने जन चेतना को नितान्त कुण्ठित अवस्था में पहुंचा दिया है। कवि के शब्दों में–

''मैं रोज देखता हूं कि व्यवस्था की मशीन का
एक पुर्जा गर्म होकर
अलग छिटक गया है और
ठण्डा होते ही
फिर कुर्सी से चिपक गया है
उसमें न हया है
न दया है
न ही– अपना कोई हमदर्द
यहां नहीं है। मैंने एक–एक को परख लिया है।''[107]

'मुक्ति प्रसंग' में कवि विकास के नाम पर विदेशी कर्ज लिए जाने की स्थिति के प्रति अपने विक्षोभ भाव को प्रकट करता है कि आज भी हमारे जीवनदाता अमेरिका, रूस और इंग्लैण्ड बने हुए हैं। हम उनके सामने आज भी भिखारियों की भांति बेशर्मी लादकर उनके सामने हाथ पसारने को तत्परता से हर समय तैयार खड़े रहते हैं। देश के क्षेत्रीय विकास के नाम पर विदेशी कर्ज लेना और उसके कर्ज से आम आदमी को दबादेना, यह पीड़ा कवि को सहन नहीं होती। कवि के विक्षोभ भाव को निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं–

''हमारे भाग्य–विधाता डॉलर रूबल, पौंड

क्षेत्रों की भिक्षारण–यात्राओं में क्रमशः–

निर्लज्ज पारंगत होते

जा रे हैं साहसी।''[108]

कवि आगे कहता है कि देश के रुपए पर देश के प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू की तस्वीर छपी है उस रुपए का विश्व बाजार में मूल्य मात्र 36.5 प्रतिशत से कम है। इससे बड़ी शर्म की और क्या बात हो सकती है, जबकि अमेरिका और यूरोप अपने रुपए के मूल्य वृद्धि करते जा रहे हैं। आज हम यदि विदेशी कर्ज से दबे नहीं होते तो हमारे रुपए की कीमत विश्व में अमेरिका यूरोप की भांति बढ़ी होती। इसमें दोष हमारा ही है। हम भारतीय संस्कृति की नीति का ढिंढोरा पीट रहे हैं। देश की उन्नति के गीत गा रहे है। जबकि विदेशी कर्जा लेने की व विदेशी धन के सहारे जीने की आदत डाल चुके हैं। इससे सम्बन्धित नीति बना चुके हैं इसी का फायदा उठाकर विदेशी विश्व बैंक हमारे ऊपर अतिक्रमण किए हुए अपने रुपए की मूल्य वृद्धि करते जा रहे हैं, और हमारे रुपए का प्रतिशत घटता जा रहा है फिर भी हम इस कुचक्र को जानते हुए भी अनभिज्ञ होकर अपने राग में अपनी धुन में मस्त हैं और देश की प्रगति का स्वर एक स्वर में अलाप रहे हैं। इस पर विक्षोभ भरे स्वर में कवि कहता है–

''हिन्दुस्तानी रुपए पर छपी हुई है जवाहर लाल नेहरू की तस्वीर

और इस तस्वीर की कीमत अभी तक

कुल 36.5 प्रतिशत नीचे गिरी है हमें धन्यवाद करना

चाहिए देशी सिंडीकेट

और विदेशी बैंक को।''[109]

कवि साम्राज्य शाही अमेरिका की ओर इशारा करते हुए अपनी कुण्ठा को व्यक्त करते हैं–

''और गुलाम–शहरों का एक मात्र बच गया है लोक नायक अब 007 जेम्स बॉन्ड''110

'नाटक जारी है' में कवि अपने विक्षोभ को प्रकट करता है कि आज राजनीति जन कल्याण कारक नहीं, निज हितार्थ की भावना से प्रेरित हो गई है, इसीलिए आम आदमी अभावों के बोझ से दबा हुआ है। राजनीतिक बजट जो आम आदमी के हितार्थ बनाए जाते हैं, किन्तु ये बजट राजनीतिज्ञों के हितार्थ जहां खड़े होते हैं वहीं आम आदमी के जीवन में सिर्फ नर्क–सा दृश्य प्रस्तुत करते हैं। विकास के नाम पर, जनता की खुशहाली के नाम पर। जब बजट बनाने जाते हैं, तब जनता कहती है कि ये बजट जनता के हहतार्थ है इससे आम जनता को राहत मिलेगी। जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति होगी, लेकिन यही सत्य इस समय अचम्भित कर देता है जब बजट

से कुहरे की धुंध घटकर संसद के गलियारे में गुम हो जाती है और जनता नर्क–सा जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य हो जाती है। यह जनहित के बजट का चक्र पांच वर्ष तक चलता रहता है और संसद में गुम होता रहता है। जनता के हाथ कुछ भी नहीं लगता, सिर्फ लुभावने वादे और नरकीय जीवन, कवि के शब्दों में–

''पृथ्वी के हाशिये पर बजट के कोहरे से निकलकर जबकि बहुत कुछ आप कहते हैं साफ हो गया है और बादल उठकर पांचवीं बार संसद की ओर चले गए हैं

रोज सीढ़ियां उतरता हूं, मगर नरक खतम नहीं होता।''111

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि युद्ध परक आधुनिक काव्य में सैनिक एवं असैनिक पात्रों में कुण्ठा एवं विक्षोभ का विस्तृत चित्रण किया गया है। सैनिकों के बीच शक्ति की असमानता, मनोबल का कमजोर होना, अपनी शक्ति का प्रदर्शन न कर पाना, बिगड़ी हुई व्यवस्था से असन्तुष्टि आदि अनेक परिस्थितियों में पात्र कुण्ठा से ग्रस्त और विक्षोभ से भरे हुए दिखाए गए हैं।

'द'

अस्तित्व बोध– अस्तित्ववाद आधुनिक युग की सर्वाधिक प्रतिष्ठित दार्शनिक चिन्तन धारा है। युद्ध परक आध ुनिक काव्य में अस्तित्ववादी चिन्तन की अभिव्यक्ति मिलती है। इस विचार धारा का प्रादुर्भाव द्वितीय विश्व युद्ध के फलस्वरूप मानव हृदय में भयंकर निराशा एवं अनास्था जैसी विघटनशील मानवीय मूल्यों एवं अणुयुद्ध की विनाशकारी सम्भावनाओं से हुआ। ज्यांपाल सार्त्र, कीर्के गार्द, कक्फा, कामू आदि अस्तित्ववादी, विचारक है, अस्तित्व बोध इसी चिन्तन धारा का तात्विक विश्लेषण हैं जो युद्ध परक रचनाओं में भी व्यक्त हुई है। अस्तित्व बोध को अभिव्यक्ति करने वाली रचनाओं में व्यक्तित्व की विघटनकारी धारणाओं का विरोध, अणुयुग की भयावह सम्भावनाओं से उत्पन्न संकट से मानव जीवन की संरक्षा, संघर्षमय वातावरण में मानवीय अस्तित्व की सुरक्षा एवं चेतना द्वारा आन्तरिक विकास आदि प्रवृत्तियों पर बल दिया गया है। कीर्केगार्द की परिभाषा में हम देख सकते हैं कि– ''अस्तित्व शब्द का प्रयोग इस दावे पर जोर देने के लिए किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति की इकाई अपने आपमें स्वयं जैसी है और अध्यात्मिक या वैज्ञानिक प्रक्रिया के सन्दर्भ में अविश्लेषणीय है।''[112] ज्यांपाल सार्त्र के शब्दों में– ''अस्तित्ववाद उस प्रयास से अधिक कुछ नहीं है जिसके द्वारा सौन्दर्यमूलक स्थितियों की परिणितियों को रूपार्यत किया जा सकता है।''[113] वास्तव में अस्तित्व बोध के द्वारा आधुनिक युद्धपरक काव्यों में समकालीन संकट की तथ्य परक व्याख्या प्रस्तुत है। वस्तुतः अस्तित्व का संघर्ष मानवीय संघर्ष है क्योंकि भौतिकवादी चिन्तन हमें विश्व युद्ध की ओर घसीटती ले जा रही है। असुरक्षा के बीच में हमारा अस्तित्व संकटग्रस्त है, इस विषाक्त स्थिति से बाहर निकलने के लिए अपनी अन्तर्दृष्टि जागृत करके युद्धोत्तर परिस्थितियों पर विचार करना होगा, उससे रास्ता निकालना होगा जिससे हमारा अस्तित्व और हम जीवित रह सके। युद्ध की विनाशलीला की अंधी दौड़ से हमें अलग, शान्ति की दिशा में मुड़ना होगा, जिसमें मानव, मानवेत्तर जीवन जी सके। डार्विन ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि–

''प्राणियों का अस्तित्व परस्पर एक–दूसरे के ऊपर निर्भरहै।''114 यदि हम विश्व के इतिहास को देखें तो सबल राष्ट्र निर्बल राष्ट्रों को सदैव पद्दलित करते रहे हैं वर्तमान भी इस स्थिति से अछूता नहीं है। प्रत्येक शक्ति सम्पन्न राष्ट्र अपने से कमजोर राष्ट्र अथवा पक्ष को अपने अधीन करने के लिए युद्ध जैसी कार्यवाही चलते रहते हैं। ईराक

ने कुवैत को अपनी शक्ति सम्पन्नता के कारण हथिया लिया तथा अमेरिका के वर्चस्व ने ईराक के घुटने टिकवा दिए, अपने अस्तित्व रक्षा के लिए प्रत्येक पक्ष शक्ति सम्पन्न बनकर ही दृढ़ता के साथ अपने को प्रतिष्ठित करता है, इसे हम भारत के सन्दर्भ में देखें कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद पाकिस्तान से चार बार तथा चीन से एक बार युद्ध करने के लिए विवश होना पड़ा, सशक्त सैन्य शक्ति से लैस भारत ने पाकिस्तान को हर बार करारा जवाब दिया, किन्तु चीन के समक्ष उसकी शक्ति सम्पन्नता अपेक्षाकृत कम थी जिसके कारण चीन ने कई सौ वर्ग किलोमीटर भूमि अपने को मिला ली और हम उसे छुड़ा नहीं सके, इससे स्पष्ट है कि शक्ति सम्पन्नता युक्त होने पर हम अपने अस्तित्व कोबनाए रख सकते हैं। आधुनिक युद्ध परक काव्य में अस्तित्व बोध की सशक्त अभिव्यक्ति पात्रों एवं स्थितियों के माध्यम से प्रस्तुत की गई है जो क्रमशः निम्न लिखित है।

'राम की शक्ति पूजा' में हनुमान सुग्रीव एवं जामवंत आदि सभी अपने–अपने विचार प्रस्तुत करके वानरों के अस्तित्व का बोध कराने हेतु युद्ध में बड़े–बड़े मोर्चे सम्भालने के लिए आगे बढ़ते हैं एवं अपने अस्तित्व को स्थापित करते हुए राम के मन में विजय भावना के दृष्टिकोण को दृढ़ता के साथ व्यक्त करते हैं। राम सांस्कृतिक नेता है, जो वर्तमान परिस्थितियों के प्रति विद्रोही व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत है यह मात्र पौराणिक पात्र ही नहीं है। अपितु संशय और पराजय के भाव के कारण अपने अस्तित्व बोध को उकेरना भी चाहते हैं। कवि के शब्दों में–"स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर–फिर संशय,

रह–रह उठता जग–जीवन में रावण–जय–जय; जो नहीं हुआ आज तक हृदय रिपुन्दम्यश्रान्त एक भी अयुतलक्ष्य में रहा जो दुराक्रान्त, कल लड़ने को हो रहा विकल वह बार–बार, असमर्थ मानता मन उत हो हार–हार;।"115 वर्तमान युग में व्यक्तित्व की अवहेलना एवं अस्तित्व के प्रति सन्देह स्वाभाविक परिणति है। इस प्रकार की आत्मघाती परिस्थितियों से जूझना अस्तित्ववादी चिन्तन को प्रस्तुत करती हैं। 'अन्धा युग' में अश्वत्थामा अपने नपुंसक और खण्डित अस्तित्व से क्षुब्ध होकर आत्मघाती प्रक्रिया के बारे में सोचता है– कवि के शब्दों में–

"आत्मघात कर लूं?

इस नपुंसक अस्तित्व से

छुटकारा पाकर

यदि मुझे

पिघली नरकाग्नि में उबलना पड़े

तो भी शायद

इतनी यातना नहीं होगी!"[116]

कवि ने 'अन्धा युग' में सद्वृत्तियों की स्थापना की है तथा व्यावहारिक बनाने के लिए अस्तित्ववाद का समन्वय कहते हैं वृद्ध याचक के व्यक्तिगत में अस्तित्व बोध की प्रेरणा हम निम्न पंक्तियों में देखते हैं। कवि के शब्दों में–

"उठाओ शस्त्र

विगत ज्वर युद्ध करो

आचरण में ही

मानव–अस्तित्व की सार्थकता है।"[117]

आज मानव अपने अस्तित्व के लिए पूर्ण सचेष्ट दिखाई पड़ता है, अन्धा युग में प्रहरियों के माध्यम से कि रक्षा कार्य में नियुक्त हमारे लिए रक्षणीय कुछ बचा ही नहीं। अतः हमारा अस्तित्व ही निरर्थक है क्योंकि जब मनुष्य किसी कार्य को अपने हाथ में लेकर सफलता पूर्वक पूर्ण कर लेता है तभी समाज में उसके अस्तित्व का बोध होता है, किन्तु यह अपने अस्तित्व की निरर्थकता से पीड़ित हैं इन प्रहरियों के अस्तित्व के निमित्त किया गया चिन्तन इन पात्रों को आधुनिक मानव के बीच खड़ा दिखाई देता है। कवि के शब्दों में–

"मेहनत हमारी निरर्थक थी

आस्था का,

साहस का,

श्रम का

अस्तित्व का हमारे

कुछ अर्थ नहीं था, कुछ भी अर्थ नहीं था।"[118]

'संशय की एक रात' में नरेश मेहता ने लक्ष्मण के द्वारा राम के सम्मुख कर्म एवं पौरुष का उत्साह वर्धक पक्ष प्रस्तुत किया है, जिसमें हम कितने ही लघु क्यों न हो, किन्तु हमारी सार्थक सत्ता है। किन्तु राम अपने आपमें दुखी संशयग्रस्त एवं विवश दिखाई देते हैं। अतः लक्ष्मण अपने पक्ष के अस्तित्व से परिचित कराते हैं कि कर्म ही इनके अस्तित्व को महत्ता प्रदान करेगा, उनका यही छोटा रूप बड़ी शक्तियों के बीच अपने को स्थापित करके महत्ता का स्वरूप ग्रहण करता है। लक्ष्मण राम के सम्मुख अपने दृढ़ निश्चय का स्मरण कराते हैं कि सीता के अपहरण से जो अपयश मिला है उसका प्रतिकार वह क्रोध से जलती हुई आंखों में, रोष के कारण दांतों के तले दबे हुए ओंठ अपार साहस से भरी मुट्ठियां, यात्रा करने वाले पैरों की दृढ़ चेतना आदि युद्ध के लिए प्रतिज्ञारत हैं। अतः हम अपने उद्देश्य के प्रति समर्पित होकर अपने अस्तित्व को समाज को स्वीकार करने के लिए बाध्य कर देंगे। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जीवन–मूल्यों के अस्तित्व के संकट को व्यक्त किया है राम के द्वारा सत्य के मूल्य की व्यंजना की गई है। कवि के शब्दों में–

"मैं सत्य चाहता हूं

युद्ध से नहीं,

खड्ग से भी नहीं

मानव का मानव से सत्य चाहता हूं।"[119]

"कितने ही लघु हों

इससे क्या?

सार्थक हैं।

स्वत्व है हमारा"[120]

राम द्वारा सीता हरण को व्यक्तिगत समस्या मानकर, लंका पर आक्रमण न करने का, निश्चय करते हैं। श्री हनुमान जी श्रीराम के तर्क का खण्डन करते हुए कहते हैं कि सीता का अपहरण होना उनकी निजी समस्या नहीं है यदि यह उनकी व्यक्तिगत समस्या होती तो विशाल वानर–सेना रामेश्वर तट पर एकत्रित न होती, सेतु

बांधने का कठिन कार्य भी सम्पन्न न हो, श्री हनुमान सीता जी को करोड़ों दीन–दुःखियों की छीनी गई स्वतन्त्रता को प्रतीक रूप में मानते हैं। अतः यह राम की समस्या नहीं बल्कि समस्त पीड़ित मानवता की सामूहिक समस्या है। यहां हनुमान जी श्रीराम से तर्क करके अपने श्रेष्ठ चिन्तन के द्वारा वानर सेना द्वारा युद्ध के लिए किए गए कार्यों के बल पर वानरों के अस्तित्व का बोध कराते हैं। कवि के शब्दों में–

'रामेश्वर तट

एकत्र न होते ये नग्न देह के

कोटि–कोटि

साधारण जन''[121]

आधुनिक समाज व्यवस्था में अपने व्यक्तित्व को सुरक्षित रखना अत्यन्त दुष्कर कार्य है क्योंकि समाज में जाने कितने शासक और नियन्ता हैं, जो अपने अधिकार के मद में डूबे हुए सामान्य जन के अस्तित्व को नकारते हैं। 'एक कण्ठ विषपायी' में सर्वहत इन शासकों की निष्ठुरता एवं हृदयहीनता को व्यक्त कर अपने अस्तित्व रक्षा हेतु संघर्षशील है। समाज में बढ़ती हुई स्वार्थान्धता को कवि ने प्रस्तुत किया है क्योंकि व्यक्ति–व्यक्ति आपस में बंटा हुआ है यही विकृति समाज को पतन की राह में ढकेल रही हैं, कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की सुरक्षा हेतु संघर्ष प्रक्रिया से अलग न्याय की राह का अनुगमन नहीं करता। महाराज दक्ष यज्ञ आयोजन में, महादेव शंकर जी एवं सती को आमन्त्रित नहीं करते, सती अनाहूत यज्ञ मण्डप में पहुंचती है वहां पति की अवज्ञा पर क्षुब्ध आमन्त्रित अतिथियों एवं महाराज दक्ष के प्रति अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करती है। इससे पूर्व वीरिणी एवं महाराज दक्ष के वार्तालाप में महाराज दक्ष ने नारी के अस्तित्व को नकारा है। अतः सती ने महादेव शंकर जी के आसन को लेकर दृढ़ता पूर्वक विरोध करके उस सभा, देव लोक एवं दक्ष लोक तक अपने इस अपमान का विरोध करके अपने अस्तित्व को बनाए रखा है, कवि के शब्दों में–

''मेरा घर है यह

मेरा क्या,

मैं तो प्रजा में खड़ी होकर भी

दर्शक की तरह यज्ञ देखूं तो

मेरी मर्यादा नहीं घटती।

पर मेरे महादेव शंकर का स्थान

वहां

सर्वोपरि आसन के निकट रहे।''[122]

'सर्वहत' एक सामान्य पात्र है इसके कथन में अस्तित्व बोध की पीड़ा का स्वर विद्यमान है जो देवलोक एवं दक्ष लोक के समता के सिद्धान्त पर प्रश्नचिन्ह लगाता है। यदि यह ज्ञात होता कि यहां भी सामान्य लोगों के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार नहीं होता तो अपनी रक्तपान की इच्छा बहुत पहले ही त्याग देता किन्तु इन्द्र सर्वहत के इस आरोप को निराधार कहते हैं, सर्वहत निडर भाव से शंकर का उदाहरण देकर साधारण जन के अस्तित्व का देवलोक में बोध कराता है। कवि के शब्दों में–

"क्यों?
क्या आपने महादेव शंकर के साथ
इन्हीं लोगों ने
किया नहीं पक्षपात?
सीमा पर उनके लिए
रक्त की नदियां खुलवा दीं
और मुझसे कहते हैं–
'यहां रक्त नहीं मिल सकता
यहां रक्त है अमूल्य।'
यही न कि मैं तो सर्वहत हूं
साधारण हूं
और वो विशिष्ट देवता हैं, शिवशंकर हैं।
किन्तु प्यास दोनों की एक–सी है।"[123]

'अन्धेरे में' कविता में रहस्यमय आकृति के अस्तित्व को कवि स्वीकार करता है तथा उस रहस्यमय आकृति को जानने के लिए उत्सुक होता है तथा अपने अस्तित्व का उद्घोष करता है। कवि के शब्दों में–

"जिन्दगी के.........
कमरों में अन्धेरे।
कोई एक लगातार; लगाता है चक्कर
आवाज पैरों की देती है सुनाई
बार–बार........बार–बार
वह नहीं दीखता........नहीं ही दीखता,
किन्तु, वह रहा घूम
तिलस्मी खोह में गिरफ्तार कोई एक,
भीत–पार आती हुई पास से,
गहन रहस्यमय अन्धकार ध्वनि–सा
अस्तित्व जनाता
अनिवार कोई एक,
और मेरे हृदय की धक–धक
पूछती है वह कौन
सुनाई जो देता, पर नहीं देता दिखाई।"[124]

मुक्तिबोध देश के अस्तित्व के लिए चिन्तित एवं व्यग्र दिखाई पड़ते हैं क्योंकि अतीत के जो महान मूल्य हैं, उनकी स्थिति दयनीय एवं चिन्ता जनक है। अतः देश के निर्धन एवं असहाय वर्ग के प्रति अपनी संवेदनाएं व्यक्त करते

हैं और परिस्थितियों के निवारण का रास्ता भी दिखाते हैं। यह स्थिति हमने स्वयं उत्पन्न की है क्योंकि देश की सम्पदा को आवश्यकता से अधिक उपयोग में लाया गया है, परिणाम स्वरूप पूरे देश का अस्तित्व ही डगमगाने लगा, इस भाव को हम निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं–

''अब तक क्या किया,

जीवन क्या जिया! बहुत–बहुत ज्यादा लिया, दिया बहुत–बहुत कम; मर गया देश अरे–जीवित रह गए तुम!!''[125]

'असाध्यवीणा' लौकिक स्तर पर समष्टि का प्रती है एवं व्यक्ति के भौतिक अस्तित्व का बोध कराती है उसे वही संगीतबद्ध कर सकता है जो संगीत का सृष्टा हो एवं उसमें पूर्ण समर्पित हो प्रियवंद कहता है–

''कलावत हूं नहीं, शिष्य साधक हूं–

जीवन के अनकहे सत्य का साक्षी।''[126]

साधना द्वारा उत्पन्न परम संगीत इतना प्रभावशाली है कि समस्त प्राणियों को एक साथ प्रभावित कर लेता है और वह अपने–अपने संस्कार के अनुरूप उसके प्रभाव को ग्रहण करते हैं। केश कांबली अपने निजी अस्तित्व को वीणा साधने के लिए, उसमें संगीत के स्वर झंकृत करने के लिए अपने को जीवन की विराटता में समर्पित कर देता है वह अपने आपको भूल जाता है और समष्टिमें असाध्यवीणा के अस्तित्व का बोध कराता है। कवि के शब्दों में–

''मैं नहीं, नहीं! मै। कहीं नहीं!

ओ अरे, तरु! ओ वन!

ओ स्वर–संभार

नादमय संसृति!

ओ रस प्लावन!

मुझे क्षमा कर भूल अकिंचनता को मेरी–

मुझे ओट दे–ढक ले'छाले–

ओ शख्य!''[127]

विराटता में समर्पित हो जाने के बाद भी जो यश का फल व्याप्त होता है वह केशकंबली को मिलता है अंततः वीणा को झंकृत करके केशकंबली अपने अस्तित्व को ही प्रमाणित करता है उसका बोध कराता है तथा वीणा कोस्वर देकर उसे सार्थक बनाता है। यदि हमारेदेश का अस्तित्व ही संकट में आ जाएं तो हम जीवित रहकर क्या करेंगे अपने आपको अस्तित्वहीन करके ही जीवित कैसे रह सकते हैं। देश का संरक्षण किए बिना हम अपने अस्तित्व को स्थापित नहीं कर सकते, क्योंकि अस्तित्व के कारण ही एक देश दूसरे देश को स्वीकारकरता है। 'पटकथा' में कवि स्वप्न में हिन्दुस्तान को देखता है जो आम चुनाव प्रक्रिया से गुजर रहा है, जिसमें राजनेता सामान्य जनता के बीच अपने आपको स्थापित करने के लिए तरह–तरह के आदर्श वादे निभाने की कवायद छेड़ते हैं जिसमें देशहित, देशभक्ति, शासन, सुरक्षा, रोजगार की बातें बनाकर अपना स्वार्थ पूरा करते हैं और अपने आपको स्वच्छ छवि के साथ समाज में स्थापित कर लेते हैं अपने अस्तित्व को तो वह बना लेते हैं किन्तु देश को अस्तित्वहीन करने की कोई कसर नहीं छोड़ते। कवि के शब्दों में–

''शासन, सुरक्षा, रोजगार शिक्षा......

राष्ट्र धर्म देशहित हिंसा अहिंसा......
सैन्य शक्ति, देशभक्ति आजादी बीसा......
वाद–बिरादरी, भूख, भीख, भाषा......
शान्ति, क्रान्ति शीत युद्ध एटमबम सीमा.......
एकता सीढ़ियां साहित्यिक पीढ़ियां निराशा......
झांय–झांय, खांय–खांय, हाय–हाय, सांय–सांय.......।''[128]

हिन्दुस्तान अपनी स्थिति को स्वीकार करता है कि जब मैंने सही राह दिखाई है मैं अपमानित हुआ हूं, किन्तु समय साक्षी है कि मेरी इस बेचैनी से भी कोई न कोई राह ही निकलती है यहां मनुष्य को वह आग्रह से भरा भूख जानवर के रूप मं जानता है, किन्तु स्वीकार करता है कि वह अपने हैं एवं भविश्य के सुन्दर सपने हैं, किन्तु मैं अपनी शापित अवस्था में भी भयभीत नहीं हूं। इस प्रकार अपने आपको हर परिस्थिति में प्रस्तुत करके अपने अस्तित्व का बोध कराता है। कवि के शब्दों में–

''तुम मेरी चिन्ता मत करो
मैं हर वक्त सिर्फ एक चेहरा नही हूं
जहां वर्तमान
अपने शिकारी कुत्ते उतारता है
अक्सर मैं मिट्टी का हरकत करता हुआ
वह टुकड़ा हूं
जो आदमी की शिराओं में
बहते हुए खून को
उसके सही नाम से पुकारता है
इसलिए मैं कहता हूं, जाओ, और
देखो कि वे लोग.......''[129]

'मुक्ति प्रसंग' में राजकमल चौधरी रोगग्रस्त होते हुए अपने अस्तित्व को संकट ग्रस्त अवस्था में देखते हैं अपने अस्तित्व के संकट के सामने सारेदेश का अस्तित्व भी संकटग्रस्त नजर आता है, कवि के शब्दों में–

''मेरा अस्तित्व
अपनी अलौकिक नग्नता में डूब गया है
संज्ञा विहीन–ज्ञानहीन
समय अब मेरे लिए केवल नीलापन है केवल नीलापन शून्य है
शून्य है स्थान काल और पात्र गतिहीन आकार हीन''[130]

कवि जीवन चक्र के विचार सागर में डूबा हुआ अनुभव करता है कि बीमार अवस्था में जीवन की आशा को त्याग कर अस्पताल में इलाज के लिए एक दफा नहीं, बल्कि सप्ताह के प्रत्येक शनिवार को आता जाता रहा, लगभग छः माह तक जब कवि चेतना–हीन होकर अस्पताल में आया, यहां उसे जीवन जीने की प्रेरणा मेम साहब एवं

चन्द्रमौलि उपाध्याय के सहानुभूति पूर्ण व्यवहार से प्राप्त हुई। कवि के शब्दों में– "मेरा अवचेतन और अब इसी इतिहास पुस्तक की तरह इस ऑपरेशन टेबुल पर रोशनी के प्रज्ज्वलित गोलाम्बर में खुला पड़ा हुआ मेरा अस्तित्व एक बुझा हुआ लैम्प पोस्ट मेरी दो आंखों में"[131] 'नाटक जारी है' में कवि अपनी उपस्थिति दर्शाते हुए कहता है किम जब मैं सरकार का मुलाजिम (1961–62 सेना में सिपाही) था उस समय मेरा अस्तित्व था मेरे कर्तव्य परायणता से प्रसन्न होकर 'अशोक चक्र' जैसे राष्ट्रीय प्रतीक हो मेरा सम्मान किया गया और जब मैं आज सरकारी मुलाजिम नहीं रहा तो उपेक्षित है। जिस प्रकार से काम निकल जाने पर जूतों को उतारकर एक कोने में फेंक दिया जाता है। ठीक उसी तरह परन्तु मैंने इस उपेक्षा से समझौता इसलिए कर लिया क्योंकि मुझे अपने अस्तित्व बोध या कि मैं सरकारी मुलाजिम न सही जनता के साथ तो हूं। प्रत्येक नागरिक के समान में भी देश का नागरिक तो हूं मेरा अस्तित्व अभी भी जनता के साथ कायम है। कवि के शब्दों में–

"अशोक चक्र से मारा हुआ। मैं कहीं सरकार में दाखिल हूं
पैरों की आत्मीयता के करीब से। जूते की तरह उतारा हुआ
सुलह का सालान प्रयास लेकर। कहीं जनता का दायर हूं।"[132]

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि युद्धपरक रचनाओं में अस्तित्व बोध की अभिव्यक्ति मिलती है। युद्धपरक काव्य में अस्तित्व बोध के अनेक सन्दर्भ हैं, जिन्हें पात्रों एवं परिस्थितियों के आधार पर सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं नैतिक, मूल्यगत संक्रमणशीलता के रूप में चित्रित किया गया है, इसी प्रकार पर अस्तित्व बोध का विश्लेषण किया गया है।

विद्रोह–क्रान्ति–अभिशप्त जीवन ही विद्रोह की भावना को जन्म देता है, युद्ध परक काव्य में विद्रोह एवं क्रान्ति को बेचैन कर देने वाली आवाज में प्रस्तुत किया गया है, किन्तु यह दृष्टि सामाजिक होने के साथ–साथ विचारा प्रधान होती है उत्तेजनापरक नहीं। यह दृष्टि ध्वंस एवं निर्माण के अन्तर को भली–भांति जानती है तथा परिस्थिति के अनुकूल अपनी शक्ति का प्रयोग करती है। भावुकता के साथ ही यह यथार्थ स्थिति की सही पहचान कराती है, किन्तु युद्ध परक काव्यों में चिन्तन धारा भावुकता के प्रवाह में दबी हुई है; विद्रोह सृजन शीलता को सार्थक बनाता है। काव्य में विद्रोह की स्थिति स्पष्ट करते हुए डा. प्रेम शंकर ने लिखा है– "विद्रोह केवल 'स्व का प्रकाशन' अथवा 'अहं का विस्फोट' मात्र नहीं है और न उसका सम्बन्ध कुछ वक्तव्यों से है। उसे अराजकता का पर्याय भी नहीं बनाया जा सकता। काव्य में विद्रोह भावना मूलतः स्वयं को नए यथार्थ के निकट लाने की प्रक्रिया से प्रारम्भ होती है और उसे सार्थक अभिव्यक्ति देने के लिए नए माध्यमों की तलाश में सक्रिय होती है। यही कवि और रचनाकार परम्परा में एक नई अगली कड़ी जोड़ते हैं, जो देखने पर विगत का निषेध मालुम देती है पर वास्तव परम्परा के जीवत्त तत्वों का ही निकास है।"133 श्रीमाधव हाड़ा ने विद्रोह को इस प्रकार व्यक्त किया है– "विद्रोह एक सनातन एवं निरन्तर रहने वाली मनोदशा या आत्मस्थिति है क्योंकि मानव विरोधी अथवा प्राणी–विरोधी (प्रकृति विरोधी भी) कार्यों घटनाओं या सामाजिक व्यवस्थाओं का विरोध विद्रोही की शाश्वत या स्थायी नियति है।"[134]

क्रान्ति से अभिप्राय सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन से है जो उग्ररूप एवं प्रयत्नपूर्वक होता है। (क्रान्ति का आविर्भाव उस समय होता है जब किसी राज्य अथवा राष्ट्र में लोगों की मूलभूत इच्छाओं का दमन होता है) पुराने

सत्तारूढ़ दल व पुरानी शासन प्रणाली का स्थान नया दल व प्रणाली ले लेते हैं यह परिवर्तन कभी हिंसक औरकभी अहिंसक भी होता है। मिस्र में नासिर ने जब सत्ता हथियाई, पाकिस्तान में सिकन्दर मिर्जा तत्पश्चात अयूब खां ने तब एक भी गोली न चली, किन्तु रूस को बोलेशेविक दल व स्पेन में फ्रैंकों को खून की नदियों से गुजरना पड़ा। इस प्रकार नई प्रणालियां, नए कानून तथा सैनिक शक्ति के बल पर राजनीतिक नियन्त्रण ने नया रूप ले लिया। भारत में स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गांधी, स्वामी दयानन्द सरस्वती, विनोबा भावे तथा राजाराम मोहन राय जैसे महापुरुषों ने सामाजिक संस्थाओं की स्थापना की और लोगों की अभिवृत्तियों एवं विचारों में आमूल परिवर्तन कर महान सामाजिक क्रान्तियों को जन्म दिया। बोगार्डस ने क्रान्ति अशुद्ध भावना व रक्तपात की कीमत पर शक्तिशाली विप्लव या उथल–पुथल की सृष्टि तथा अच्छे–बुरे दोनों ही प्रकार के मूल्यों को उखाड़ फेंक सकती है साथ ही साथ विस्तृत सामाजिक पुनर्संगठन की मांग करती है।''[135] श्री किर्नल यंग के अनुसार– ''राष्ट्र–राज्य विशेष के अन्दर ही राज्य शक्ति का नए प्रकार की शक्ति या सत्ता द्वारा हथिया लिया जाना ही क्रान्ति है।''[136] लेनिन का विचार है कि– क्रान्ति की गति और समय के विषय में भविष्य वाणी करना असम्भव है। यह स्वयं अपने नियमों से शासित होती है, किन्तु जब यह फूटती है तो सब धाराओं को ठुकराती चली जाती है।''

हम क्रान्ति को आकस्मिक सामाजिक सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिवर्तन से लगाते हैं, किन्तु हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि क्रान्ति में किसी न किसी प्रकार का राजनैतिक परिवर्तन अवश्य जुड़ा रहता है। उदाहरणार्थ गांध
ी जी के प्रयासों के परिणाम स्वरूप हरिजनों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में जो परिवर्तन हुआ उसे क्रान्ति ही कहा जाएगा, किन्तु इसके मूल में अंग्रेजों से राजनैतिक सत्ता हथियाने का एक उपक्रम था।

विद्रोह और क्रान्ति की भावनाएं कवियों में स्वतः ही पाई जाती है, क्योंकि मूलतः कवि क्रान्तिदृष्टा होता है उसका मूल स्वर विद्रोह ही होता है। क्रान्ति के द्वारा वह सामाजिक परिवर्तन चाहता और विद्रोह के द्वारा जनान्दोलन को उत्प्रेरित करना चाहता है। संत साहित्य से लेकर आधुनिक काल तक यह भावना प्रबल रही है। आधुनिक काल तो क्रान्ति और विद्रोह का ही काल कहा जाता है। आधुनिक कवियों ने अपनी लेखनी इस ओर चलाई है। 'राम की शक्ति पूजा' में अवसाद और निराशा सेराम को बाहर निकालते हुए, समस्त वानर सैनिक रावण के विरुद्ध युद्ध में क्रान्ति का आवाहन करते हैं। यह क्रान्ति एक चिन्गारी से भयंकर लपट का रूप धारण करते हुए सर्वत्र फैल जाती है। कवि ने इस स्थिति का अंकन निम्न लिखित पंक्तियों में किया है–

''मित्रवर, विजय होगी न समर।''

दुष्ट प्रवृत्ति वाले व्यक्तियों के नाश के लिए युद्ध आवश्यक हो जाता है राम रावण युद्ध के पीछे राम की सम्राट बनने या काव्य लिप्सा की भावना नहीं थी वह जन हितार्थ युद्ध करते हैं। कुछ क्षणों के लिए रामएवं राम की सेना अवसद में जरूर रही, किन्तु उसका समाधान ढूंढकर धर्म स्थापित करते हैं।

'अन्धा युग' में अश्वत्थामा के चरित्र को विद्रोह एवं क्रान्ति भाव से युक्त दिखाया गया है जो उसे धीरे–धीरे भयावह और खोखला मानव बना देती है इस तरह वह ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों का वाहक बन जाता है। कवि के शब्दों में–

''भस्म हो जाने दो

आने दो प्रलय व्यास!

देखूं मैं रक्षण–शक्ति कृष्ण की?

मैं अशक्य हूं,
मुझको है ज्ञात रीति केवल आक्रमण की
पीछे हटना मुझको या मेरे अस्त्रों को
मेरे पिता ने सिखाया नहीं।''

अश्वत्थामा मर्यादा को इसलिए नकारता है क्योंकि युद्ध के दौरान किसी भी व्यक्ति में मर्यादा का पालन नहीं किया। द्रोणाचार्य का वध अधर्म से हुआ, दुर्योधन छल से मारा गया, युधिष्ठिर ने भी सत्य से मुख मोड़ लिया फिर अश्वत्थामा ही मर्यादावादी क्यों बनता? अतः अश्वत्थामा धर्म और नैतिकता के प्रति विद्रोह कर देता है। कवि के शब्दों में–

''सत्य मिल गया। बर्बर अश्वत्थामा को।
जैसे युधिष्ठिर का अर्द्धसत्य। घायल और कटा हुआ।
मैं केवल पदाघावों से चूर करूंगा धृष्टद्युम्न को।
पागल कुंजर से कुचवी कमल कली की भांति छोडूंगा नहीं उत्तरा को भी। जिसमें गर्भित है। अभिमन्यु–पुत्र।''

'संशय की एक रात' में शोषक राष्ट्र की जघन्य वृत्तियों को देखकर राम के सेवक एवं युद्ध के लिए तत्पर हनुमत वीर का विद्रोही हृदय राम को समझा रहा है कि समुद्र में पुल का निर्माण मनुष्य के विद्रोह की पताका है। कवि के शब्दों में–

''वह महासेतु
जो कि प्रथम आश्चर्य सृष्टि का,
मानव के विद्रोह भाव का,
प्रथम
किन्तु अद्भुत प्रतीक है।''

राम मानव मूल्यों के प्रति विद्रोह को पौराणिक धरातल के माध्यम से, युगीन चेतना को व्यंजित करते हैं। क्रान्ति में विभीषण अपने द्वारा लिए गए निर्णय की युद्धोत्तर स्थिति में, अपने एकत्व भाव को, महत्व देता है। आज का मानव संकटापन स्थिति में भी अपनी अस्मिता के लिए जी रहा है, उसे व्यष्टि चिन्तन सर्वोपरि दिखाई देता है। कवि के शब्दों में–

''जब हमारे तर्क तक मर जाएंगे
तब हमें क्या कहकर पुकारा जाएगा? कि
राष्ट्र संकट के समय
मैं आक्रमण के साथ था
राज्य पाने के लिए?

'संशय की एक रात' ने सामूहिक संशय क्रान्ति के रूप में परिवर्तित हो जाता है काम का संशय शान्त हो जाता है, उनके अन्तस में ज्वालामुखी के समान वेगमयी हिंसक प्रवृत्तियों का अभ्युदय हो चुका हैं ऐसा लगता है कि मानव मार्ग से विमुख हो जाने पर भयंकर सर्प हो, समय कवच से सुसज्जित हो, सबके भीतर ओजस्वी रूप में

दिखाई दे रहा है। कवि के शब्दों में–

"मध्य रात्रि के इस निर्णय ने।

ज्वालामुखियों को जगा दिया।

मणि खोए सांप सा।

समय–

कावचित

युद्ध के लिए ललकार रहा

भीतर

अपने ही भीतर

सबके भीतर ललकार रहा।"

'एक कंठ विषपायी' में महाराज दक्ष में शंकर के प्रति विद्रोह की परिणति इसलिए होती है क्योंकि शंकर परम्परा के विद्रोही हैं। वह सती शंकर के विवाह कोसती के अबोध मन को बहला कर किया गया। अपहरण मानते हैं। अतः शंकर उनके लिए घृणा एवं अनिच्छा के कारक बनते हैं। कवि के शब्दों में–

"अपीन अवहेलना देखकर

शंकर का देवत्व स्वयं ही झुलस उठेगा।

इतनी बड़ी उपेक्षा

और अवज्ञा

उसको सिद्धत न होगी।

उसको अपनी महा शक्ति का बड़ा दर्प है।

मेरी कूटनीति भी देखें.........।"

दुःख में निमग्न शंकर के क्रोध शान्त करने हेतु वरुण और कुबेर उनकी स्तुति करते हैं तत्पश्चात वार्तालाप होती

है। कुबेर मित्रता की दुहाई देते हैं जिस पर शंकर का विद्रोही स्वर मिलता पर व्यंग्य करता है। कवि के शब्दों में–

''मित्र अगर होते तुम,
मेरा अपयश या अपमान न होता
या तो यज्ञ न होता
अथवा ऐसा कल्कि विधान न होता।
मित्र अगर होते तुम
मेरी आत्मा यों विद्रोह न करती,
भरी सभा में मेरी प्रिया
निराद्रत होती और न मरती।''

वरुण और कुबेर जाकर उनकी शान्ति के लिए प्रार्थना करते हैं, किन्तु शान्त नहीं होते ताण्डव नृत्य करने का संकल्प लेते हैं अर्थात देवताओं के खिलाफ अपना विद्रोह प्रदर्शित करने का मन बना लेते हैं। कवि के शब्दों में–

''हां, कह देना विष्णु और ब्रह्मा से,
संध्या तक
सती में न आई यदि चेतना
तो मेरा क्रोध देव भोगेंगे!
रुधिर वमन करेंगी दिशाएं दस,
आवर्ती पवन आग उबालेंगे,
चूर्ण–चूर्ण होंगी गिरि–मालाएं,
सिन्धु सूख जाएंगे।
कुछ देना–
होगा दिग्दाह रुधिर वर्षण के साथ–साथ
पूरा ब्रह्माण्ड भस्म कर दूंगा।''

शंकर की देवलोक में आक्रमणात्मक कार्यवाही के विरोध में इन्द्र, वरुण और कुबेर ब्रह्मा जी युद्ध का दृढ़ता के साथ विरोध करते है। अतः सामूहिक भीड़ शासन तंत्र के खिलाफ क्रान्ति का आवाहन करती है–

''ब्रह्मा यह सिंहासन छोड़ो,
इस कायर शासन को तोड़ो।''

कवि दिनकर के काव्य में विद्रोह और क्रान्ति का स्वर निर्भीकता से व्यक्त होता रहा है। दिनकर की काव्य चेतना का मूल स्वर देश की गौरव गरिमा एवं उसकी अस्मिता है, जब कभी भी इस पर संकट आया है। दिनकर जी का स्वाभिमानी व्यक्तित्व उद्दीप्त क्रान्तिकारी के ही रूप में आया है। विद्रोह एवं क्रान्ति उनकी कविता का प्रमुख विषय है जिसने कवि को राष्ट्रीय काव्य धारा की प्रमुख श्रेणी में लाकर कपड़ा कर दिया है। 'हुंकार' में दिनकर की यह धारणा स्पष्ट होती है कि क्रान्ति जब भी आती है चारों दिशाओं में अपनी प्रतीत अवश्य करा देती है कवि

के शब्दों में–

"मैं निस्तेजो का तेज, युगों के मूक मौन की बानी हूं,

दिल–जले शासितों के दिल की मैं, जलती हुई कहानी हूं।

सदियों की जब्ती तोड़ जगी, मैं उस ज्वाला की रानी हूं,

मैं जहर उगलती फिरती हूं, मैं विष से भरी जवानी हूं,

भूखी बाधिन की घात क्रूर, आहत भुजंगिनी का दंशन!"

विनोद चन्द्र पाण्डेय की काव्य कृति 'क्रान्ति दूत सुभाष' ऐसे वीर चरित उसके नायक है जिनका सम्पूर्ण जीवन शौर्य एवं स्वतन्त्रता संग्राम के लिए समर्पित रहा। 'सुभाष' जो क्रान्ति के विचार को आवश्यक माना है उसके न रहने पर मनुष्य पशु के समान है। जन्म भूमि के संकट के समय जिस व्यक्ति के अन्दर कुछ भी न करने का संकल्प है वह मृतवत है। कवि के शब्दों में–

"सत्याग्रह में अब गति नवीन लानी है।

नौक्रान्ति लहर घर–घर तक पहुंचानी है।।"

नागार्जुन सामाजिक यथार्थ के चितेरे है, उनके काव्य का महत्वपूर्ण स्वर विद्रोह और क्रान्ति का है व्यंग्य परक भाषा में कवि अन्याय और अत्याचार का विरोध करता है। विद्रोह और क्रानित की शैली में कवि लिखते हैं–

"देश हमारा भूखा नंगा घायल है बेकारी से,

मिले न रोटी–रोजी भटके दर–दर बने भिखारी से!

स्वाभिमान सम्मान कहां है होली है इंसान की,

बदला सत्य, अहिंसा बदली, लाठी, गोली, डण्डे हैं।

कानूनों की सड़ी लाश पर, प्रजातंत्र के झण्डे हैं।

निश्चय राज्य बदलना होगा शासक नेता शाही का।

पदलोलुपता दलबन्दी का भ्रष्टाचार तबाही का ।"

मुक्ति बोध की रचनाओं में क्रान्ति भावना दिखाई पड़ती है इनकी रचनाओं का मूल स्वर ही विद्रोह है यह विद्रोह मनुष्य से लेकर सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था में दिखाई पड़ता है, सुख और शान्ति को खोजने के प्रयास में उन्हें द्वन्द्व ही मिला है जिसे 'अंधेरे में' की निम्न पंक्तियों में देखा जा सकता है–

"इसलिए मैं हर गली में

और हर सड़क पर

झांक–झांक कर देखता हूं हर एक चेहरा,

प्रत्येक गति विधि,

प्रत्येक चरित्र।"

भारत भूषण अग्रवाल विद्रोह को आत्म शक्ति एवं नियति की चुनौती के रूप में स्वीकार करते हैं–

"मैं छोड़कर पूजा,

क्यों की पूजा है पराजय का विनत स्वीकार–

बांधकर मुट्ठी तुझे ललकारता हूं,
सुन रही है तू?
मैं खड़ा तुमको यहां ललकारता हूं।''

शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने एशिया में फैली हुई क्रान्ति को अक्षम बताते हुए निम्न स्वर दिए हैं–

''इसे बुझाने आसमान में काले मेघ बहुत मंडराए।
रावण, अहिरावण, दुःशासन नीरो, जार बहुत से आए।
हिटलर, तोजो, मुसोलिनी ने अंजुलि भरकर रक्त उलीचा।
पर न बुझी यह,
पर न बुझी यह,
स्वयं बुझे वे जिन हाथों ने,
मानवता का हृदय चीरकर इसको सींचा।''

'अन्धेरे में' कवि शोषितों के प्रति क्रान्ति के प्रबल पक्षधर हैं। अतः क्रान्ति युग में युवाओं में आई नई चेतना का वर्णन करते हैं, जिसमें वेदना की नदियां बह रही हैं और उसमें मजदूरों का दुःख समाया हुआ है। शोषितों के दुःख के साथ–साथ इनके हितैषियों की पीड़ा और आंसू भी गहराई से समाए हुए हैं जो इनकी दशा सुधारने में सदियों से लगे रहे। इससे प्रेरणा लेते हुए युवा वर्ग के व्यक्तित्व में भारी परिवर्तन हुआ है। कवि के शब्दों में–

''वह जल पीकर
मेरे युवकों में होता जाता व्यक्तित्वान्तर
विभिन्न क्षेत्रों में कई तरह से करते हैं सेमर,
मानव की ज्वाला पंखुड़ियों से घिरे हुए वे सब
अग्नि के शत दल कोष में बैठे।''

शोषकों के प्रति शोषितों में क्रान्ति का ज्वाला फूट चुका है उसमें अपने अधिकारों की प्राप्ति हेतु दृढ़ इच्छा जाग चुकी है; हमारेदेश की जनतांत्रिक शासन प्रणाली की विडम्बनाओं के प्रति कवि में विद्रोह का भाव प्रकट हुआ है। जनतंत्र के अभिशप्त परिणामों से आहत वह इस व्यवस्था के प्रति अपना विद्रोह व्यक्त करते हैं–

'सुनो!
तुम चाहे जिसे चुनो
मगर इसे नहीं, इसे बदलो
मुझे लगा आवाज
जैसे किसी जलते हुए कुएं से
आ रही है।''

नेतृत्व वर्ग की अवसरवादिता और झूठे आश्वासनों के प्रति जन–मन में असन्तोष है क्योंकि उसके लिए जन–मन के सपनों का कोई औचित्य नहीं, आजादी का कोई अर्थ नहीं, यह भाव वह सिर्फ अपने तक सीमित रखता है। इसीलिए प्रबुद्ध रचनाकार के मन ने विद्रोह है। कवि के शब्दों में–

'तुम जो हर चीज
अपने दांतों के नीचे
खाने के आदी हो।
चाहे वह सपना हो अथवा आजादी हो
भयानक, इस तरह, क्यों चुक गए हो''

अपने देश में राजनीतिक दृष्टि से जनतांत्रिक व्यवस्था को अंगीकार किया गया है, जनतंत्र में लोकमान्य आदर्श केवल नारों की ध्वनियां बनकर गूंज रहे हैं जो एक तिलस्म की तरह है इस जादू को उतारने के लिए कवि विद्रोह कर देता है। कवि के शब्दों में–

''इस तिलस्म का जादू उतारने में
उनकी मदद करो और साबित करो
कि वे सारी चीजें अंधी हो गई हैं
जिनमें तुम शरीक नहीं हो.......।''

सर्वत्र अव्यवस्था और विशृंखलता को देखकर मानव मन अशान्त हो उठता है समाज एवं राजनीति में सर्वत्र क्रान्ति का स्वर सुनाई देता है। राज्य में अब नेताओं के प्रति मनुष्य की आस्था समाप्त प्रायः हो चुकी है। इसीलिए कवि कहते हैं–

''इससे पहले कि वे,
गलत हाथों के हथियार हों
इससे पहले कि वे नारों और इश्तिहारों से,
काले बाजार हों।
उनसे मिलो। उन्हें बदलो।''

मुक्ति प्रसंग में कवि कहता है यह कैसा लोकतंत्र है जहां आदमी आदमी को मारे डाल रहा है जिन्दा जला रहा है, चारों तरफ अत्याचार, हर दरवाजे पर मृत्यु खड़ी हुई है, ऐसे लोकतंत्र के बीच रहने का क्या मतलब। मर–मर कर हरवक्त मृत्यु के भय के बीच जीने से तो अच्छाहै कि हमें भीख मांगनेवालों की, गांजा–अफीम सेवन करने वालों की वेश्याओं के समाज में शामिल हो जाना चाहिए, जहां पर दुनियादारी से मुक्त निश्चिन्त जीवन जीने का सुख व्याप्त है। कवि के शब्दों में–

''आदमी को इस लोकतंत्री संसार से अलग हो जाना चाहिए
चले जाना चाहिए कस्साबों गांजाखोर साधुओं
भिखमंगे अफीमची रंडियों की काली और अंधी दुनिया में मसानों में
अधजली लाशें नोचकर
खाते रहना श्रेयस्कर है जीवित पड़ोसियों को खा जाने से
हम लोगों को अब शामिल नहीं रहना है।
इस धरती से आदमी को हमेशा के लिए खत्म कर देने की

साजिश में''

'नाटक जारी है' में कवि जीवन ने खुशहाली के लिए युवाओं को कड़ी मेहनत करने की प्रेरणा देता है अमानुषिक जीवन से हटकर मानुषिक जीवन जीने की ओर ले चलने का प्रयास संगठित तौर से करता है। कवि युवाओं से कहता है कि देश की दुर्दशा को अकेले नहीं बचाया जा सकता है इसके लिए सबको एक साथ एक पंक्ति से एकत्र होकर खड़ा होना होगा। इसलिए कवि युवाओं से सम्पर्क स्थापित करता है सबको संगठित कर देश को बदहाली की दहलीज तक ले जाने वालों की जड़ें काटने पर बल देता है। इसमें कवि की विद्रोही भावना उजागर होती है। कवि के शब्दों में–

''हरे जंगल के गले में
युवा धूप की पट्टी बांधता हुआ
बादल क्षितिज पर
रिक्शे से बदलकर रेल की तरह खड़ा हुआ
और मैं लगभग चार रोज
सम्बन्धों के हाशिये पर टहलता हुआ
गड़ासे को आदत को विरुद्ध स्वास्थ्य के हिसाब से
एक–एक चीज की गर्दन पर टोलता रहा।''

कवि कहते हैं कि आज का समय अभी का समय है और अर्थ उपार्जित करने के लिए एक राह पकड़कर चलना वर्तमान समय के अनुसार उचित नहीं है। यह समय भाग–दौड़ का है, हाथ बढ़ाकर धन एकत्र करने का है तभी जीवन से अभावों का अन्धेरा दूर होगा और सुख से भरा सवेरा जीवन को खुशियों से भर देगा। कवि अपने जीवन में क्रान्ति लाना चाहता है जिससे वह अपनी झोली में ऊप अपार सम्पदा भरकर अपने जीवन के अभाव एवं अन्ध ाकार को दूरकर सुख, समृद्धि के साथ जी सके। इसीलिए वह धन उपार्जन के प्रत्येक मार्ग पर तूफान की भांति क्रान्तिकारी बनकर भाग–दौड़ करके अर्थोपार्जन में व्यस्त है। वह चाहता है कि मेरे द्वारा उठाया गया यह क्रान्तिकारी कदम प्रत्येक परिश्रम करने वाले व्यक्ति का प्रेरणास्रोत बने और लोग मेहनत करके स्वयं तथा राष्ट्र को सुख और समृद्धि से मुक्त बनाएं। कवि के शब्दों में–

''दरअसल मैं अपने अन्धकार को,
कई तरह से उगाना चाहता था।
मैं उसे दो आंखें देने के अतिरिक्त,
एक नाम देना चाहता था जैसे कि घोड़ा।''

उपर्युक्त उद्धरणों से

संकल्प विकल्प–

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार संकल्प की प्रक्रिया एक अद्वितीय मानसिक प्रक्रिया है जो हमारी प्रकृति में गहरे जमे हुए मानसिक आधार पर अब लम्बित होती है। इस शक्ति में ज्ञानात्मक एवं क्रियात्मक दोनों शक्तियों का योगदान रहता है। संकल्प शक्ति की व्याख्या करते हुए डा. चौबे अपने विचार इस प्रकार व्यक्त करते हैं कि– ''संकल्प

सम्पूर्ण व्यक्तित्व की गत्यात्मक शक्ति की ओर संकेत करता है। यह हमारे प्रमुख चरित्र एवं रुचियों पर प्रकाश डालता है। व्यक्ति का संकल्प हमें उसके व्यक्तित्व के एकीकरण का आभास देता है, संकल्प से एक प्रकार की इच्छा का बोध होता है और यह इच्छा शक्ति व्यक्ति में तब तक विद्यमान रहती है जब तक कि इच्छित ध्येय की प्राप्ति नहीं हो जाती।'' प्रोफेसर स्टाउल ने संकल्प की परिभाषा इस प्रकार दी है–

''संकल्प निर्णय से मर्यादित एवं परिभाषित एक इच्छा होती है वह जब तक हमारे अन्दर रहती है, हम इच्छित लक्ष्यों की प्राप्ति में ला सकते हैं।'' गिन्सबर्ग के शब्दों में-- ''संकल्प सक्रिय करने की शक्ति से शून्य एक विचार मात्र नहीं है, अपितु हमारे समक्ष चेष्टात्मक स्वभाव का संश्लिष्ट रूप एकता है यह अनिवार्य एवं संगठन का ही तत्व है, सामंजस्य की दिशा में किया जाने वाला प्रयास है जो चेष्टात्मक एवं भावात्मक रुचियों के जटिल संगठनों के बीच और उनके द्वारा काम करता है और इसकी जो शक्ति है वह हमारे सम्पूर्ण व्यक्तित्व की शक्ति है।'' संकल्प उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक प्रयासों को क्रियान्वित करने की शक्ति प्रदान करता है। मानवीय चेतना की सबसे अद्भुत एवं प्रचण्ड शक्ति के रूप में संकल्प शक्ति को प्रतिष्ठा प्राप्त है। विश्व स्तर पर जितने भी महान कार्य सम्पादित हुए हैं उनमें संकल्प शक्ति के योगदान को नकारा नहीं जा सकता; किसी भी बड़े प्रयोजन की सिद्धि दृढ़ संकल्प शक्ति पर ही निर्भर करती है। अनेकानेक ऐसे उदाहरण हैं जो इस शक्ति का सदुप्रयोग करके स्वयं के विकास के साथ–साथ राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के विकास में भी योगदान देने में समर्थ हो सके हैं। पारिभाषिक शब्दावली में संकल्प शक्ति को इस प्रकार उद्भाषित किया गया है– ''विवेक पूर्वक किए गए सुनियोजित निश्चय जब प्रतिज्ञा पूर्वक कार्यान्वित किए जाने की मनःस्थिति का रूप धारण करते हैं तो उन्हें संकल्प कहते हैं।'' संकल्प शक्ति के उदय होने पर मनुष्य की सारी शक्ति उसके लक्ष्य पर केन्द्रित हो जाती है और अवरोधक स्थितियां स्वतः ही मिटती रहती हैं क्योंकि संकल्प वश व्यक्ति को उसके पक्ष से अलग करने की क्षमता उनमें नहीं होती। इस तथ्य को हम इतिहास के पन्नों में देख सकते हैं कि अपने संकल्प बल को कल्पना एवं आकांक्षा तक सीमित नहीं रखा क्योंकि मालुम था कि आदमी का संकल्प बल ही प्रत्येक स्थिति में उसे महान बनाता है।

संकल्प शक्ति के साथ निरर्थक कल्पनाएं एवं कामनाएं विकल्प का रूप धारा कर सामने आती है। विकल्प वह मानवीय चेतना है, जिसमें निरन्तर संदेह की गुंजायश बनी रहती है। मानव चेतन में अनेक शक्तियों के अभ्युदय होने पर किसी एक शक्ति की महत्ता को स्वीकार करना तथा उसके अनुरूप अपने कार्य को दिशा देना विकल्प है। विकल्प में वह शक्ति निहित होती है जो नव निर्माण के आधारभूत क्षमता का प्रदर्शन करती हैं। श्रेष्ठ विकल्प का चयन व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी क्षमता को सिद्ध कर चुका है जिसे इतिहास के पन्नों पर स्वर्णाक्षरों में लिखा हुआ पाया जाता है। पारिभाषिक शब्दावली में विकल्प को इस प्रकार स्पष्ट किया गया है– ''शब्द ज्ञान के पीछे चलने वाली वस्तु से शून्य, सत्ता रहित वृत्ति विकल्प कहलाती है। जैसे सुख, शान्ति, आनन्द, मोक्ष नाम की कोई चीज नहीं है। ये हमारे चित्त की अनुभूति का परिणाम है। पर इसे पदार्थ समाज में पाने के लिए बाहर भटकते फिरते हैं। अथवा जैसे कोई कहे 'आकाश के फूल' 'खरगोश का सींग' 'बांझ का लड़का' ये वस्तु शून्य कल्पित ज्ञान है यही विकल्प वृत्ति है।''

आधुनिक युद्ध परक काव्य में संकल्प एवं विकल्प को उभारने वाली परिस्थितियां, प्रवृत्तियों एवं प्रेरणाओं को युद्ध

परक काव्य के प्रणेता कवियों ने व्यक्त किया है, जो निम्न लिखित है– 'राम की शक्ति पूजा' में हनुमान जी जब यह समझ लेते हैं कि राम की चित्तों का कारण महाशक्ति है तो वह महाशक्ति के विनाश का संकल्प लेते हैं। युद्ध में विफलता के सभी कारणों कोप्रधान सेनानायक एवं सैनिक दूर करने का प्रयास करते हैं यदि ऐसा न किया जाए तो व्यक्ति युद्ध से पहले ही हार जाएगा। हनुमान इसतथ्य को जानते हुए इसका समाधान खोज लेते हैं। कवि के शब्दों में–

"ये अश्रु राम के आते ही मन में विचार,
उद्वेल हो उठा शक्ति–खेल सागर अपार;
हो श्वसित पवन–उन–चास पिता–पक्ष से तुमुल
एकत्र वक्ष पर बहा वाष्प को उड़ा अतुल
शलवायु–वेग–बल, डुबा अतल में देश–भाव,
जल राशि विपुलमथ मिला अनिल में महाराव।"

जाम्बवान श्रीराम को संयत प्राणों से महाशक्ति की
सात्विकी सिद्धि हेतु परामर्श देते हैं तत्पश्चात राम महाशक्ति को सम्बोधित करते हुए अपना शक्ति पूजा का संकल्प सुनाते हैं। युद्ध में यह आवश्यक होता है कि प्रधान सेनापति युत्र्रू में विजय प्राप्ति हेतु सतर्कता से निर्णय ले, इसलिए श्रीराम महाशक्ति को अपने पक्ष में करके विजय सुनिश्चित करना चाहते हैं। कवि के शब्दों में–

"खिल गई सभा। उत्तम निश्चय यह भल्ल नाथ!
कह दिया वृद्ध को मान राम ने झुका माय।
हो गए ध्यान में लीन पुनः करते विचार,
देखते सकल–तन पुलकित होता बार–बार।"

महाशक्ति के जप में राम द्वारा अन्तिम इन्दीवर अर्पण
के समय इन्दीवर का विलुप्त हो जाना राम को हताश
कर देती है, किन्तु इन्दीवर सम्बन्धी समस्या का समाधान
निष्ठावान राम द्वारा अपने नेत्रों को ही इन्दीवर के
स्थान पर अर्पित करने का विकल्प सूझता है। कवि के शब्दों में– "कहती थी माता मुझे सदा राजीव नयन!
दो नील–कमल हैं शेष अभी, यह पुरश्चरण
पूरा करता हूं देकर मातः एक नयन।"

'अन्धा युग' में धृतराष्ट्र ने जिस नीति कानिर्धारण किया वह ममत्व द्वारा निर्मित थी तथा दुर्योधन को अन्तर्भाव से राज सिंहासन पर बैठने के लिए संकल्प धारण किए रहे, जिसका परिणाम भयंकर विध्वंस के रूप में सामने आया। कवि के शब्दों में–

"समझ नहीं सकते हो
विदुर तुम।
मैं था जन्मान्ध।

कैसे कर सकता था।
ग्रहण मैं
बाहरी यथार्थ या सामाजिक मर्यादा को?
युधिष्ठिर सत्यवादी हो किन्तु युद्ध में अपनी विजय सुनिश्चित करने के लिए अर्द्धसत्य को विकल्प के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। कवि के शब्दों में–
"ऐसे भयानक महायुद्ध को
अर्द्धसत्य, रक्तपात, हिंसा से जीतकर
अपने को बिल्कुल हारा हुआ अनुभव कर
यह भी यातना ही है।"
'संशय की एक रात' में राम पश्चाताप की ज्वाला में जल रहे हैं क्योंकि वह सीता की रक्षा के लिए संकल्पबद्ध थे। वह सोचते हैं कि मैं स्वर्ण मृग को प्राप्त करने के लिए क्यों चल पड़ा तथा लक्ष्मण रेखा भी सीता को वचक रावण की धृष्टता से बचा न सकी आज मेरा यह संकल्प खण्डित हो चूर–चूर हो गया। कवि के शब्दों में–
"ओ अशोको की छांह वाली
जानकी!
जानते भी क्यों गए हम
स्वर्ण मृग हित?
क्यों गए पथ भूल?
उस वंचक के पदों में
सर्प बन सौमित्र–रेखा
क्यों नहीं लिपटी?
यह परिताप।"
राम का संकल्प ओजस्वी रूप में प्रकट होता है वह मानव से मानव का सत्य पाना चाहते हैं,यदि यह सम्भव नहीं, तो वह वर्षा में भीगे महाकाल को, धनुष, बाण, तलवार एवं शिरस्त्राष समर्पित करते हैं। मैं ऐसी विजय का वरण नहीं कर सकता जो मानव वेश में खून से रंगी हो आज तक की प्रगति को एक ही क्षण में ध्वंस कर दे, बाण से बिघे विवश पक्षी जैसा मुझे साम्राज्य नहीं चाहिए, मनुज के रक्त पर पैर रखकर आती हुई सीता भी मुझे नहीं चाहिए। अभी तक मैं कुल विनाश का कारण था, किन्तु अब जन विनाश काकारण नहीं बनूंगा। कवि के शब्दों में–
"मुझे ऐसी जय नहीं चाहिए,
बाण बिद्ध पाखी–सा विवश
साम्राज्य नहीं चाहिए,
मानव के रक्त पर पग धरती आती

सीता भी नहीं चाहिए,

सीता भी नहीं।''

चिन्तन के अबाध क्रम में राम यह संकल्प धारण करते हैं कि आत्महत्या से अच्छा वह कर्म करते हुए सागर को पार कर जाएं या फिर खड्ग से पाताल तक विजय प्राप्त कर लें। कवि के शब्दों में–

''आत्म हनन से कहीं अच्छा है

ज्वारों को भेंटते हुए

खड्ग से पाताल चीर दें।''

राम युद्ध को लेकर भारी दुविधा में दिखाई देते हैं। लक्ष्मण कहते हैं युद्ध के समक्ष ऐसा कौन सा विकल्प है जिसकी उपब्धि को आप अकेले खोजना चाहते हैं और इतने व्यग्र हैं। कवि के शब्दों में–

''लक्ष्मण!

इतने प्रश्न

शंका और कुशंकाएं

मुझे घेरे हुए हैं।

इन उपकार के बदले

कृतज्ञित हूं

किन्तु अपनी दृष्टि में ही

मैं अपात्री लग रहा हूं।''

'एक कंठ विषपायी' में महाराज दख का अहं भाव शंकर के साथ सती के परिणाम को लेकर चोटें खा जाता है। शंकर के सामने वह सामर्थ्यवान होते हुए भी अपमानित अनुभव करते हैं तथा राजकीय गौरव को प्रतिष्ठित करने के लिए प्रतिशोध भाव से वृद्ध यज्ञ आयोजन कर सती और शंकर को अपमानित करने का संकल्प लेते हैं। कवि के शब्दों–

''उन दोनों ने केवल मेरी

बाह्य प्रतिष्ठा खण्डित की है

उनकी आत्म–प्रतिष्ठा का भ्रम तोडूंगा मैं।

यह यज्ञायोजन विराट

उनके अभाव का श्री गणेश है।''

सती के दुःख में निमग्न शंकर जी युद्ध को अनिवार्य बनाते हैं उन्हें शान्त करने के लिए वरुण कुबेर उनकी स्तुति कर मनोभाव परिवर्तित करना चाहते हैं। वह उत्तेजना में कुबेर के लिए कहते हैं कि मैंने अनजाने में तुम्हें जीवन दान दे दिया उनके प्रति आक्रामक प्रहार को उनकी संकल्प शक्ति के समक्ष अभय दान का विकल्प प्रस्तुत करती है। कवि के शब्दों में–

''मन में अविनिश्चित संकल्प ठान,

जाने किस क्षण से प्रेरित अजान,

अभय दे दिया था तुमको मैंने।

तुम अब तक गए नहीं?

मेरे प्रति सहानुभूति चुकी नहीं''

शंकर इस बात से क्षुब्ध है कि दक्ष के यज्ञ आयोजन में सभी देवता पहुंचे, किन्तु उस समय किसी ने भी मेरी उपेक्षा का ध्यान नहीं रखा, देवत्व और आदर्शों से मुझे क्या मिला? वह आदर्शों से जूझने का संकल्प करते हैं। कवि के शब्दों में–

''मैं ऊब चुका हूं

इस महिला–मण्डित छल से,

अब मुझे स्वयं का

वास्तव–सत्य पकड़ना है,

जिन आदर्शों ने

मुझे ढलाहै कई बार

मेरा सुख लूटा है

अब उनसे लड़ना है।''

ब्रह्मा जी युद्ध की अनिवार्यता का विरोध करते हैं क्योंकि वे युद्ध को सत्य की संज्ञान देकर उसे आत्म समर्पण एवं सामूहिक आत्मघात मानते हैं। वह अन्त तक संकल्पबद्ध है कि युद्ध विरोधी चिन्तन से युद्ध का कोई समाध ाान ढूंढा जाए। कवि के शब्दों में– ''प्रज्ञा की रक्षा करें युद्ध के द्वारा?

और प्रजा का रक्त बहाएं.......''

'अन्धेरे में' कविता में कवि मानवतावादी दृष्टिकोण से मानव–मुक्ति का संकल्प लेकर ही चलता है। कवि की इच्छा, अभिव्यक्ति या अस्मिता को पुनः प्राप्त करने की है, जिसके लिए वह संकल्पबद्ध है। कवि के शब्दों में–

''खोजता हूं पठार.....पहाड़......समुन्दर

जहां मिल सके मुझे

मेरी वह खोई हुई

परम अभिव्यक्ति अनिवार

आत्म–सम्भवा।''

वह शोषक वर्ग से जूझने के लिए संकल्प लेता है क्योंकि कवि के विचार शोषक वर्ग के लिए खतरनाक एवं शोषियों के लिए कल्याणकारी हैं वह समय को पश्चाताप और सोच में गंवाना नहीं चाहता। कवि के शब्दों में–

''हाय, हाय! मैंने उन्हें गुहस्वास दे दिया

लोक–हित क्षेत्र से कर दिया वंचित

जनोपयोग से वर्जित किया और

निषिद्ध कर दिया
खोह में डाल दिया!!
वे खतरनाक थे
(बच्चे भीख मांगते) खैर.....
यह न समय है,
जूझना ही तैं है।''

भ्रम में पड़ा कवि इस बात से व्याकुल है कि वह अपनी विचार शृंखलाओं का समाधान कैसे करें, किससे कहूं या कहां जाएं, उसे विकल्प रूप में दिल्ली या उज्जैन दिखाई पड़ता है– ''क्या करूं, किससे कहूं, कहां जाऊं, दिल्ली या उज्जैन?''

किसी भी कार्य को सही दिशा देने के लिए सतर्क योजना एवं संकल्पवृत्ति आवश्यक होती है। केशकंबली वीणा बजाने के लिए संकल्प लेता है, किन्तु वह दम्भ से युक्त नहीं है क्योंकि अहंकार एवं दम्भ के समक्ष व्यक्ति की संकल्प शक्ति क्षीण होने लगती है। युद्ध के मैदान में अहंकार एवं दम्भ शत्रु की तरह होते हैं यहां सिद्धि प्राप्त करने के लिए अपनी संकल्प शक्ति को अंजाम देना होता है। प्रियवंद संकल्पित है वीणा बजाने के लिए। कवि के शब्दों में–

''मौन प्रियवंद साध रहा था वीणा
नहीं, स्वयं अपने को शोध रहा था।
सघन निविड़ में वह अपने को
सौंप रहा था उसी किरीटी–तरु को।
कौन प्रियवंद है कि दम्भ कर
इस अभिमन्त्रित कारुवाद्य के सम्मुख आवे?''

'असाध्यवीणा' को साध्य बनाने के विकल्प के रूप में राजा के समक्ष केशकंबली उपस्थित होता है उसे पूरा भरोसा है कि प्रियवंद ही उसकी असाध्य इच्छा को पूरी करने में समर्थ है। युद्ध में जब कोई सैनिक किसी विशेष कार्य को करने के लिए नियुक्त किया जाता है तो उससे यह अपेक्षा बनी रहती है कि उसमें ही वह शक्ति है जो विशेष कार्य को पूर्ण करेगा। यहां वीणा को बजाने व न बजाने के संकट का प्रश्न है। कवि के शब्दों में– ''आ गए प्रियवंद! केशकंबली! गुफा–मेह!
राजा ने आसन दिया। कहा:
''कृतकृत्य हुआ मैं तात! पधारे आप।
भरोसा है अब मुझको
साध आज मेरे जीवन की पूरी होगी।''

कवि 'धूमिल' कहते हैं कि जब मेरा देश आजाद हुआ उस समय यह संकल्प लिया गया कि नागरिकों की भलाई के लिए व्यापक दृष्टि बनाना है, किन्तु आज वही आबादी अभावों में जीवन–यापन करने को मजबूर हैं। हमारा

शासन और प्रशासन बड़ी मजबूती के साथ देश को निर्धन और दरिद्र बनाने में लगा है, आजादी का उत्साह काफूर हो चुका है वह सर्वत्र इसको ढूंढता फिरता है। कवि के शब्दों में–

"मैं सोचता रहा
और घूमता रहा
टूटे हुए पुलों के नीचे
वीरान सड़कों पर। आंखों के
अंधे रेगिस्तानों में
फटे हुए पालों की
अधूरी जल–यात्राओं में
टूटी हुई चीजों के ढेर में
मैं खोई हुई आजादी का अर्थ
ढूंढता रहा।"

प्रजातंत्र शासन प्रणाली में समाज व्यवस्था ठीक रखने के लिए चुनाव ही अन्तिम विकल्प होता है, किन्तु यह प्रक्रिया भी अब अपराधियों की गिरफ्त से बाहर नहीं है। सभी अपराधी तत्व अपने छल, बल एवं धन से जनता के समक्ष अपना दावा पेश करते हैं। जनता के पास दूसरा कोई विकल्प नहीं है। अतः इन्हीं अपराधियों के बीच से अपना प्रतिनिध चुनना पड़ता है। यह विधायक और सांसद बनकरचोर, उचक्के, लम्पट नेता हमारे ऊपर शासन करते हैं। कवि के शब्दों में–

"चुनाव ही सही इलाज है
क्योंकि बुरे और बुरे के बीच से
किसी हद तक 'कम से कम बुरे को' चुनते हुए
न उन्हें मलाल है न भय है
न लाज है"

मुक्ति प्रसंग में कवि कहता है कि ज्ञानी, ध्यानी, विद्वान सभी इस मृत–संसार में फैली वासना की निधियों को बटोरने में लगा हुआ, अपने सुख के साधन संचित करने में व्यस्त है। किसी को भी इस संसार के उन प्राणियों की चिन्ता नहीं है जो दुःख से भरे अभावों के अन्धकार में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं यदि संसार ने दबे–कुचले लोगों के जीवन से अभावों के अन्धेरे को दूर करने की किसी सामर्थ्यवान को चिन्ता नहीं है तो न रहे, लेकिन इस कार्य को करने का मैं संकल्प लेता हूं, उनके जीवन के अभावों को मिटाने के लिए उजाले की झोली अभाग्रस्त मानव को दूंगा जिससे सुख–सम्पन्नता का जीवन व्यतीत कर सकें। कवि के शब्दों में–

"मुझको ही मार्कण्डेय–मुनि
मृत सागर में वटवृक्ष के नीचे पत्ते पर सोया हुआ
वह आदि शिशु

मैं ही उसे बाहों में उठाकर लाऊँगा।
पृथ्वी पर.........''

कवि कहते हैं कि जिस देश में इतनी जनसंख्या बढ़ चुकी है और पल–पल बढ़ती जा रही है जिसके कारण अभावों का चक्र समाप्त नहीं हो सकता। भूख शान्त करने के लिए चाहे जितने बजट बनाए जाएं उससे प्रश्न हल होने वाला नहीं उसके लिए जनसंख्या पर नियन्त्रण आवश्यक है। कवि के शब्दों में–

''अपनी हरी–लाल–पीली–सफेद–काली छतरी के बदले अब से
लूप–छतरी या एटम–छतरी इस्तेमाल करें''

'नाटक जारी है' के इस दृश्य में कवि कहते हैं कि अपनी सारी शक्ति लगाकर मैं रात–दिन मेहनत करता हूं फिर भी अपनी भूख की आग को शान्त नहीं कर पा रहा। आज के समय दो जून की रोटी का बन्दोबस्त करना लोहे के चने चबाने के समान हो गया है, मेरा जीवन आंतों की भूख मिटाने के प्रयास में व्यतीत होता जा रहा है मुझे ऐसा लग रहा है कि इस प्रयास को सफल करते–करते मर जाऊँगा। कवि कहते हैं कि यदि मैं इस जन्म में अपने पेट की भूख को नहीं शान्त कर सका तो मेरा यह संकल्प है कि मैं अगले जन्म में फिर इस ध ारती पर जन्म लूंगा और आप सभी के बीच रहकर फिर अपनी भूखी आत्माकी भूख शान्त करने का प्रयास करूंगा।–

''मेरा समूचना बल। आंतों की अग्नियात्रा में
लोहे के संकरे पाइप से गुजर रहा हूं
मरकर मैं एक बार। फिर आप से मिलूंगा।''

समाज में जिस व्यक्ति की मान, सम्मान एवं प्रतिष्ठा बरकरार है उसी व्यक्ति का जीवन मूल्यवान होता है, इसे बनाए रखना परम् आवश्यक है। ऐसे व्यक्ति जिसने मान,सम्मान एवं प्रतिष्ठा को खो दिया है, उस व्यक्ति का जीवन राख के समान है, इसलिए व्यक्ति के जीवन का एक यही विकल्प है कि वह अपने जीवन में मान, सम्मान एवं प्रतिष्ठा को जीवन्त बनाकर चलें। कवि के शब्दों में–

''यह टांग अगर ढकी हुई है। तो शब्द के मुताबिक लाख है
और कहीं खुली हुई है। मुहावरे की तर्ज में तो हिदायत की खाक है।''

उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक हिन्दी कवियों में युद्धपरक काव्यों में संकल्प एवं विकल्प को अपनी कृतियों में प्रमुख स्थान दिया है। संकल्प शक्ति का वर्णन युद्ध की अनिवार्यता, विजय की आकांक्षा एवं अस्तित्व रक्षा हेतु वर्णित है, तो विकल्प शक्ति का वर्णन युद्ध की वीभत्सकारी परिणामों एवं सामाजिक, राजनीतिक व्यवस्था को लेकर है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संकल्प एवं विकल्प का चयन स्वाभाविक प्रतीत होता है क्योंकि जब कोई कवि किसी व्यवस्था के पक्ष में नहीं होता तो उसके प्रतिपक्ष की ओर अपनी वैचारिक सहमति प्रदान करना है। एक ओर कवि संकल्प शक्ति के द्वारा युद्ध हेतु प्रेरित करता है वही आगे चलकर विकल्प शक्ति के द्वारा युद्ध रोकने के उपाय भी सुझाता है जिसमें नैतिकता एवं विवेक के आश्रय की प्रतिष्ठा करते है। कवि ने इस महान शक्ति को युद्धपरक काव्य में स्तर पर सामाजिक उत्थान किया है। आज मनुष्य इस शक्ति की

महत्ता को स्वीकार कर इसका सदुपयोग कर युद्ध जैसी भयावह स्थ्ज्ञिति से दूर रहने का संकल्प एवं विकल्प कर सकेगा।

संशय–स्थिरता–

संशय से तात्पर्य सन्देह एवं अनिश्चितता से है। संशय की स्थिति में व्यक्ति सही और गलत का निर्णय नहीं ले पाता, किन्तु जिज्ञासुवृत्ति एवं सत्य की खोज का भाव बना रहता है। एक ओर जिज्ञासा सत्य के अन्वेषण में लगी रहती है वही संशय की स्थिति मनुष्य को शंकालु, कण्ठाग्रस्त, अविश्वास एवं अनिर्णय की स्थिति में पहुंचा देती है। संशय जैसी द्वन्द्वात्मक स्थिति मानव जाति के लिए श्रेयस्कर नहीं है, बल्कि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से एक प्रकार को मनोविकार है। भारतीय मतानुसार संशयी व्यक्ति की आत्मा कभी सुखी नहीं रह सकती। वर्तमान युग वैज्ञानिक युग है इसलिए प्रत्येक वस्तु की सत्यता का ठोस प्रमाण होना आवश्यक है, अतः व्यक्ति पाप–पुण्य, निर्णय–अनिर्णय, आस्था–अनास्था, क्रान्ति–विद्रोह, संकल–विकल्प की दोहरी स्थिति में जीता है। संशय ग्रस्त व्यक्ति कुछ सोच नहीं पाता, उसके निर्णय निरर्थक होने लगते हैं। अतः प्रगति अवरुद्ध हो जाती है इसका सुझाव लौट जाने का ही होता है संशयात्मक व्यक्ति में निश्चयात्मकता समाप्त हो जाती है और वे कभी अपने निर्णय से सन्तुष्ट नहीं होते। संशय करोड़ों व्यक्तियों को अपना निश्चय छोड़ देने के लिए, कार्य को अन्जाम देने से पहले ही छोड़ देना तथा प्रयत्न न करने की स्थिति में पहुंचा देता है। पारिभाषिक शब्दावली में–

''संशय रूपी बला जब मन में घर कर ाती है तो मनुष्य किसी काम का नहीं रहता। वह किसी निश्चित मत पर पहुंच ही नहीं पाता। क्या करूं क्या न करूं के विचार मन में लिए वह कुछ भी करने में असमर्थ रहता है।'' किसी बात को न समझने में जो सन्देह उत्पन्न होता है अथवा समझने पर भी स्वभाववश जो अनिर्णय की स्थिति बनी रहती है उससे भय उत्पन्न होता है। जब मन संकालु हो जाता है तो छोटी वस्तु भी बड़ी लगती है परछाई में भी भूत दिखाई पड़ता है। संदेह से भ्रम और भ्रम से निराशा उत्पन्न होती है।

स्थिरता एक प्रकार की मनो वैज्ञानिक धारणा है जिसमें किसी रुचि अथवा दृष्टिकोण का अविकसित होना अथवा स्थिर हो जाता है। विषय के अनुसार इसके अर्थ में परिवर्तन होता रहता है, किन्तु सार एक ही है। इसका प्रयोग तीन अर्थों में होता है प्रथम दृष्टि की स्थिरता– इसके अन्तर्गत किसी एक वस्तु अथवा बिन्दु पर दृष्टि को स्थिर करना होता है उससमय कोई अन्य विषय–वस्तु दृष्टिगोचन न हो सके यानी पूरी तरह से एक ही दृश्य अंकित हो जाए। द्वितीय सीखने की क्रिया भी स्थिरता पर केन्द्रित रहती है इसके लिए एक ही प्रक्रिया को कई बार प्रयोग में लाते हैं। तृतीय अर्थ के अन्तर्गत रुचि तथा दृष्टिकोण स्थिर होते हैं। व्यक्तित्व में स्थिरता के आ जाने से उसकी रुचियां और दृष्टिकोण अविकसित रह जाते हैं कई रुचि अथवा दृष्टिकोण बनाने तथा अनुकूल व्यवस्था को ग्रहण करने के लिए अपने आपसे संघर्ष करना पड़ता है स्थिरता का परिणाम यह भी होता है कि मनुष्य भविष्य की योजनाओं को नही, बल्कि अतीत के क्रिया–कलापों को देखता है। स्थिरता की स्थिति में व्यक्ति अपने आपको असहाय, अपूर्ण एवं दूसरों से अपने आपको हीन समझने लगता है, अथवा अपनी वास्तविक खामियों को पार करने का प्रयास करता है। स्थिरता भी एक स्थाई भाव है जिसका आशय मन के किसी विचार का स्थिर रूप आना, ये प्रायः निश्चयात्मक स्थिति है। इसमें निश्चय और अनिश्चय का द्वन्द्व नहीं रहता, बल्कि निश्चयात्मक

बुद्धि लगातार एक ही स्थिति में बनी रहती है। ये गुण श्रेष्ठ मानवीय गुण माना जाता है तथा अपने विचारों की दृढ़ता के लिए जो व्यक्ति चित्त–प्रवृत्तियों को स्थिर करते हैं वे प्रायः श्रेष्ठ प्रकृति के पुरुष एवं नारी पात्र होते हैं। इस प्रकार स्थिर चित्त अथवा स्थिर बुद्धि अथवा स्थिर मनीषा भारतीय संस्कृति में श्रेष्ठ सदाचार का भी अंग है।

युद्ध काव्य में भी ऐसे पात्र मिलते हैं जो स्थिर बुद्धि वाले दृढ़संकल्प वाले एवं निश्चयात्मक निर्णय लेकर कार्य करते हैं और ऐसे पात्र प्रायः नायक या नेता की कोटि में भी परिगणित होते हैं। युद्ध प्रधान रचनाओं में संशय एवं स्थिरता का बहुआयामी विवेचन प्रस्तुत है। 'राम की शक्ति पूजा' में राम के संशय का प्रारम्भ निम्नलिखित पंक्तियों से होता है–

''श्लथ धनु–गुण है, कटिबन्ध स्त्रस्त–तूणीर–धरण
दृढ़ जटा–मुकुट हो पिपर्यस्तु प्रतिपल से खुल
फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर, विपुल''

क्योंकि रावण के युद्धोन्माद से पराजित राम की सेना उदास एवं हताश थी। राम को विजय प्राप्ति हेतु सन्देह व्याप्त हो गया था। अतः उनके धनुष की प्रत्यंचा शिथिल, कटिबन्ध खिसका हुआ और कसकर बंधा हुआ जटा मुकुट अस्त–व्यस्त होकर बिखर गया। पर्वत, आकाश, दिशाएं, सागर, मशाल की तरह जलती हुई संशय को उद्दीप्त करने वाले कारक हैं जो सत्य की प्रायभिज्ञा में नया रूप धारण करती हैं। कवि के शब्दों में–

''देखो, बन्धुवर, सामने स्थित जो यह भूधर शोभित–शत–हरित–गुल्म–तृण से श्यामल सुन्दर,
पार्वती कल्पना हैं इसकी, मकरन्द, बिन्दु;
गरजता चरण–प्रान्त पर सिंह वह, वही सिंधु;
लख महाभाव–मंगल पद–तल धंस रहा गर्व–
मानव के मन का असुर मन्द, हो रहा खबी''

अन्तिम इन्दीवर के अपहरण हो जाने पर राम गहरे दुख में डूब जाते हैं कि मैं जीवन भर विरोधों का सामना ही करता रहा मुझे धिक्कार है उनके मन में युद्ध में विजय हेतु स्थिरता व्याप्त थी, किन्तु इस घटना ने उन्हें चंचल बना दिया जिसमें वह श्री जानकी जी का ध्यान करते हैं। कवि के शब्दों में–

''धिक जीवन को पाता ही आया विरोध,
धिक साधन, जिसके लिए सदा ही किया शोध!
जानकी! हाय, उद्धार प्रिया का न हो सका।''

'अन्धा युग' में विदुर संशय को पाप की संज्ञा देता है और यह पाप वह करना नहीं चाहता अतः युग की असाध ारण परिस्थितियों में भी अपनी पूर्व निश्चित नैतिकता को नहीं त्यागता और नैतिकता मानदण्डों के प्रति वह स्थिर रहता है। कवि के शब्दों में–

''आशंका?
आपको जो व्यापी है आज

वह वर्षों पहले हिला गई थी सबको
इसी अंतःपुर में आकर, कृष्ण ने कहा था–
मर्यादा मत तोड़ों, तोड़ी हुई मर्यादा, कुचले हुए अजगर–सी, गुंजलिका के कौरव–वंश को लपेटकर, सूखी लकड़ी–सा तोड़ डालेगी।''

संशय का चिन्तन अन्तर्मुखी और आत्म केन्द्रित है। अतः संशय ग्रस्त है। वह सत्य कहते हैं, किन्तु अपने आप ही अपने मन में प्रश्न भी करते हैं कि क्या मेरा प्रयोजन मात्र इतना ही है कवि के शब्दों में–

''मैं संजय हूं
जो कर्मलोक से बहिष्कृत है।''

'संशय की एक रात' में चित्रित संशय युद्ध एवं शान्ति को लेकर है। सीता के उद्धार हेतु युद्ध का अवलम्बन लिया जाए अथवा शान्ति पथ का अनुशरण, राम के सम्मुख यह प्रधान समस्या है। वह निश्चय नहीं कर पा रहे कि लंका के विरुद्ध युद्ध अभियान छेड़ा जाए या शान्ति की सम्भावनाओं को तलाशें, यह इस कृति की केन्द्रीय समस्या है, जिसके साथ अन्य समस्याएं भी फलती–फूलती दिखाई दी हैं। राम के मानस की उद्विग्नता निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है–

''क्या हो
क्या न हो के प्रश्न ने
थका डाली मुट्ठियां।
किन्तु प्रतिबार
संशय
अनिश्चय ही
हमें भटकाता रहा।''

राम के सामने दूसरी महत्वपूर्ण चिन्ता है मनुष्य के भीतर प्रतिष्ठित श्रेष्ठ एवं शुभ प्रवृत्तियां जो मानव हिंसा में खण्ड–खण्ड होकर बिखर जाएंगी। सीता उद्धार हेतु लंका पर आक्रमण किया जा सकता है, किन्तु राम में संशय उत्पन्न हो जाता है कि यह तो मेरी व्यक्तिगत समस्या है। कवि के शब्दों में–

''व्यक्ति का वनवास
परिजन और पुरजन के लिए
अभिशाप क्यों बन जाए?
व्यक्तिगत मेरी समस्याएं
क्यों ऐतिहासिक कारणों को जन्म दें?''

राम के मन में युद्ध एवं शान्ति के प्रश्न, आध्यात्मिक संकट उत्पन्न कर देते हैं वह अनिश्चय की स्थिति में हैं जिसमें वह निर्णय नहीं कर पाते कि युद्ध का मार्ग चुनें अथवा शान्ति का। युद्ध से सम्बन्धित पुरानी निष्ठा के स्थान पर शान्ति से सम्बन्धित निष्ठा का उनके मन में उदय हुआ है किन्तु उसकी उपयुक्तता अभी सिद्ध नही

हो पाई। राम के कथनानुसार–

"दो सत्य
दो संकल्प
दो–दो आस्थाएं
व्यक्ति में ही अप्रमाणिक व्यक्ति पैदा हो रहा है"

व्यक्ति के रूप में राम संशय से आक्रान्त दिखाई देते हैं। कवि के शब्दों में–

"नहीं पिता!
मानव नियति का संशय है
यदि सारे शुभाशुभ
युद्धों से ही प्रतिपादित होने हैं
तब वे सत्य तो नहीं
अन्तिम भी नही।"

वर्तमान परिस्थितियों में युद्ध अनिवार्य बन गया है क्योंकि रावण द्वारा शान्ति प्रस्तावों की अवहेलना की गई है। राम का संशय युद्ध की आवश्यकता के विषय में हूबहू है उनका विवेक आधा युद्ध में और आधा शान्ति में लगा हुआ है। मन सन्देहग्रस्त एवं विरोधों से घिरा हुआ है, ऊषा काल के होते–होते संदिग्ध मन वाले राम ने युद्ध का निश्चय कर लिया है यद्यपि यह निर्णय पूरे मन से नहीं लिया गया। अतः संशय की ध्वनि काव्य में अन्त तक विद्यमान है। कवि के शब्दों में–

"ओ मेरे आधे व्यक्तित्व के
अधूरे मन!
अधूरी शंकाओं
बहरे प्रश्नों का क्या होगा?"

'एक कंठ विषपायी' में कवि के मानस पटल पर आज के संत्रास और भयमुक्त वातावरण तथा युगीन परिस्थितियों की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। कवि समाज का ही अंग है। अतः युगीन दारुण परिस्थितियों से जूझता हुआ कटु अनुभवों से परिचित होता है। युद्ध की विभीषिका से उत्पन्न संत्रास का वातारण टूटे हुए सामाजिक नैतिक मूल्य, जन–सामान्य की पीड़ित चेतना, परम्पराओं की सड़ान्ध आदि ऐसे ज्वलन्त प्रश्न हैं जो एक विवेक शील मानव पर निरन्तर कुठाराघात करते रहे हैं। इन सब प्रश्नों से जूझते इनसे मुक्त होने की कामना तथा युद्धोत्त हासोन्मुखी स्थितियां की एक माला बनाने की आकांक्षा जिससे विच्छिन्न हुए सामाजिक, नैतिक–मूल्यों में स्थिरता आ जाए तथा विघटनकारी स्थितियां अपना सिर न उठा सकें। कवि ने क्रोध के बहाने कराहते हैं!

उन्हें किसी सत्य से जुड़े रहने
और टूट जाने का
दुविधायुक्त भ्रम है।

कहते हैं कुछ

किन्तु कुछ करना चाहते हैं।

अपनी प्रिया के सन्दर्भों में

दुहरा जीवन जीते हैं शिव–शंकर।''

महाशोक से ग्रस्त शंकर सती के न होने पर उनकी रिक्तता का अनुभव करते हैं तथा उसी स्थिति में अपनी को स्थिर कर लेते हैं। कवि के शब्दों में–

''सारे सन्दर्भ व्यर्थ,

जीवन का कुछ न अर्थ,

अब ऐसा एक नहीं

जो मेरे भाव ग्रहण करने में

हो समर्थ।

क्यों मुझसे

मुझको ही मांग लिया?

........फिर मेरा हाथ छोड़

अधबरमें साथ छोड़

चली गई.......''

'अन्धेरे में' संशय ही संशय है। कवि बरगद के वृक्ष के नीचे पागल कहे जाने वाले व्यक्ति के आत्मोद्‌गार को स्पष्ट करता है कि जिस प्रकार कोई व्यक्ति तमगे अर्थात बैज, मैडल आदि लटकाए रहता है उसी प्रकार तुम दुःखों को निरन्तर अपने जीवन से जोड़े हुए हो उसके समाधान के लिए सक्रिय कदम नहीं उठाया, तुम दुःख के साथ स्थिर हो गए हो–

''दुःखों के छागों को तमगो–सा पहना,

अपने ही ख्यालों में दिन–रात रहना,

असंग बुद्धि व अकेले में सहना,

जिन्दगी निष्क्रिय बन गई तलघर,

अब तक क्या किया,

जीवन क्या जिया!!''

कवि अपनी कमजोरियों से लगाव रखने के कारण रहस्यमय प्रिय पुरुष की बातें सुनने से कतराता है, उससे भयभीत है क्योंकि रहस्यमय पुरुष उसे विचार रूपी पर्वत के उतुंग शिखर पर बैठा देता है और जीवन––मृत्यु के बीच की संशयात्मक स्थिति में छोड़ देता है–

''वह बिठा देता है तुंग शिखर के

खतरनाक, खुरदुरे कगार–तट पर

शोचनीय स्थिति में ही छोड़ देता है मुझको।"

कवि सशंकित होता है कि उसे तत्क्षण जवाबभी मिल जाता है–

"एकाएक हृदय धड़क कर रुक गया क्या हुआ!!

नगर से भयानक धुआं उठ रहा है,

कहीं आग लग गई, कहीं गोली चल गई।"

'असाध्यवीणा' में केशकंबली अपने परिवेश को विस्मरण कर एकाग्रचित्त हो उस वीणा पर खुद को समर्पित कर देता है। वीणा के तारों पर झुका हुआ मस्तक देख राज्य सभा में मौजूद सदस्यों के मन में प्रियंवद द्वारा वीणा साध लेने पर संशय उत्पन्न होता है। कवि के शब्दों में–

"अरे, प्रियंवद क्या सोता है?

केशकंबली अथवा होकर पराभूत

झुक गया वाद्य पर?

वीणा सचमुच क्या है असाध्य?"

राजा के मन में वीणा को साधने को लेकर जो उद्विग्नता थी वह प्रियंवद के आ जाने से स्थिर हो चुकी है उसे पूरा भरोसा है कि सबकी इच्छाओं को पूरा करने की शक्ति तुमसे है–

'प्रियंवद! लो, यह सम्मुख रही तुम्हारे

वज्रकीर्ति की वीणा,

यह मैं, यह रानी, भरी सभा यह

सब उदग्र, पर्युत्सुक

जन–मात्र प्रतीक्षा माण!"

केशकंबली किरीटी तक के सन्दर्भ में गोद भरा बालक है और तरु को टाट के रूप में सम्बोधित करता है वह अपने को पूरी तरह असाध्य वीणा पर अर्पित कर ध्वनित करने के लिए स्थिर हो जाता है। कवि के शब्दों में–

"मैं सुनूं

गुनूं

विस्मय से भर आंकूं

तेरे दोलन की लोरी पर झूमूं मैं तन्मय–

गा तूः

तेरी लय पर मेरी सांसें

भरे, दुरें, रीतें, विश्रातिपाये।"

'पटकथा' में जनतांत्रिक व्यवस्था में पनपने वाले राजनेताओं की स्वार्थवृत्ति के कारण अथवा प्रलोभन वश उनमें देश–भक्ति से कोई सरोकार नही है। राष्ट्र भक्ति जैसे मानवीय मूल्य को भी पद–दलित करते हैं, इस देश में देश–भक्ति में सिर्फ वही लोग अपनी स्थिरता दिखा रहे हैं जो मूर्ख हैं अथवा गरीब। कवि के शब्दों में–

"हर तरफ कुआं है
हर तरफ खाई है
यहां सिर्फ, वह आदमी, देश के करीब है
जो या तो मूर्ख है
या फिर गरीब है"

हमने राष्ट्र प्रेम एवं दृढ़ संकल्प शक्ति के द्वारा आजादी को प्राप्त विद्या किन्तु वर्तमान स्वरूप देखकर मन क्रुद्ध होउठा आजादी के प्रति आस्था और निष्ठा औपचारिकता में लिपटकर रह गई है। कवि के शब्दों में–

"टूटे हुए पुलों के नीचे
वीरान सड़कों पर। आंखों के
अन्धे रेगिस्तानों में
फटे हुए पालों की
अधूरी जल–यात्राओं में
टूटी हुई चीजों के ढेर में
मैं खोई हुई आजादी का अर्थ
ढूंढता रहा।"

राजनीतिक व्यवस्था कुछऐसी बन गई है कि सत्ताधारी अपनी मनमानी में व्यस्त रहते हैं आत्मीयता की खाद में अपराध जैसे घृणित कार्य ही उनके अस्तित्व को स्थिरता प्रदान करते हैं। कवि के शब्दों में–

"अपराध
अपने यहां एक ऐसा सदाबहार फूल है
जो आत्मीयता की खाद पर
लाल–भड़क फूलता है"

समानता और स्वतन्त्रता की प्रतीक संसद पर मेरी आस्था स्थिर हो गई है, किन्तु मैं यह देखता हूं कि यहां भी फरेब ही फरेब है–

"अपने यहां संसद–
तेली की वह छानी है
जिसमें आधा तेल है
और आधा पानी है"

सामाजिक व्यवस्था के गिरते हुए मूल्यों एवं स्थापना के बीच कवि संशय ग्रस्त है। कवि के शब्दों में–

"मेरे सामने वही चिरपरिचित अंधकार है
संशय की अनिश्चय ग्रस्त ठण्डी मुद्राएं हैं
हर तरफ"

'मुक्ति' प्रसंग में कवि कहता है कि व्यक्ति अपने कर्तव्य निर्वाह करके अपने को मुक्त समझने लगता है, किन्तु जब तक जीवन है तब तक उसका कर्तव्य से मुक्त हो पाना एक संशय का विषय है। कवि के दो शब्दों में–"मुक्त हो जाना कविता से पहले और मृत्यु से पहले हो जाना असम्भव है"

कवि का उपचार करने वाला डाक्टर उपाध्याय, जीवन से निराश होते देखकर उसे चिन्ता मुक्त करने के लिए जीवन के प्रति आश्वस्त करता है कि तुम स्वस्थ होकर पुनः विजय प्राप्त करोगे। डाक्टर की इस सान्त्वना से कवि में जीवन जीने के प्रति स्थिरता व्याप्त हो जाती कवि के शब्दों में– " उपाध्याय कहता है कुछ नही होगा वापस चले आओगे तुम

नदी के किनारे से वापस चले आना तुम्हारी नियति है हर बार प्रत्यागमन

वह आदि वर्ण वह नीलापन

तुम नहीं पाओगे अपराजिता कभी नहीं"

'नाटक जारी हैं में कवि कहते हैं कि आप लोग इस वर्तमान समय में जो भी घटना होते हुए देख रहे हैं उस घटना का अन्त ऐसा होगा जो कभी आपके जीवन में सुख सुविधा देने के नाम पर चली आ रही है, क्या वास्तव में इस होते हुए कार्य से आपके जीवन में खुशियां आएंगी क्योकि आज तक तो आई नहीं बस आज तक प्रतीक्षा करते चले आ रहे हैं कि हमारे जीवन में सुख सब आया, उसके निष्कर्ष को ताकतें रहिये और शंका ग्रस्त बने रोहिये। कवि के शब्दों में–

"थाने जो कुछ देखा, उसका निष्कर्ष

हर क्षण आपको लगेगा, अब निकल रहा है

अब निकल रहा है।"

कवि आम आदमी को वास्तविकता कराते हुए कहते है कि जैसे मैं अपने अधिकार को पाने के लिए निरन्तर संघर्ष करता जा रहा हूँ और कैसे अपने अधिकार को समाज में स्थापित कर इसका कई दृष्टिकोण से अभ्यास करता जा रहा हूँ उसी प्रकार आप लोग भी अपने अधिकार को पाने के निरन्तर संघर्षरत बने रहिये मैंने तो तय कर लिया कि यदि आप अपने जीवन के अधिकार पाने पाने के संघर्ष में पीछे हट जाएंगे तो कोई बात नहीं यदि मेरा साथ भी देंगे तो भी बात नहीं। मै अकेला ही इस संघर्ष में स्थिर रहकर संघर्ष तब तक करता रहूंगा जब तक अपने जीवन जीने का समुचित नहीं प्राप्त कर लूंगा। कवि के शब्दों में–" अधिकार और आक्रमण के बीच

रिहर्सल करता हुआ

मैं ही रह गया हूँ– शेष भाग"

उपर्युक्त उ(रणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि संशय एवं स्थिरता के मनोभाव यु(काव्य में पूरे वातावरण को प्रभावित करते हुए दिखाई पड़ते हैं और व्यक्ति की मनः स्थिति को भी रेखांकित करते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1— सामाजिक मनोविज्ञान—रामबाबू गुप्त—पृ0 545—संस्करण 1976—सामाजिक विज्ञान प्रकाशन कानपुर
2— पूर्वोक्त—पृ0 545
3— पूर्वोक्त—पृ0 546
4— पूर्वोक्त—पृ0 546
5— नार्मन ए. केमरान—विहेवियर्स डिसआर्डसपृ0 131—32
6— डिक्शनरी ऑफ साइकोलॉजी
7— आर.एस. वुडवर्थ—साइकोलॉजी ए. स्टडी मेण्टल लाइफ पृ0 392—93
8— राम की शक्ति पूजा—सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' —पृ0 110—अनामिका से उद्धृत—संस्करण 1992—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
9— पूर्वोक्त—पृष्ठ 112
10— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 13—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद
11— संशय की एक रात—श्री नरेश मेहता—पृष्ठ—संस्करण 1999
12— पूर्वोक्त—पृष्ठ 23
13— पूर्वोक्त—पृष्ठ 75
14— पूर्वोक्त—पृष्ठ45
15— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ12—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
16— पूर्वोक्त—पृष्ठ 15
17— पूर्वोक्त—पृष्ठ 32
18— पूर्वोक्त—पृ0 34
19— पूर्वोक्त—पृ0 36—37
20— पूर्वोक्त—पृ0 78
21— पूर्वोक्त—पृ0 84
22— अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में—द्वारा संपादित निर्मला जैन—संस्करण 1994—राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
23— पूर्वोक्त—पृ0 128
24— पूर्वोक्त—पृ0 112
25— पूर्वोक्त—पृ0 116
26— पूर्वोक्त—पृ0 117
27— संसद से सड़क से उद्धृत—'पटकथा'—धूमिल—पृष्ठ 98—संस्करण 1990—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
28— पूर्वोक्त—पृ0 128
29— परशुराम की प्रतीक्षा—रामधारी सिंह 'दिनकर'—पृष्ठ 23—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाश इलाहाबाद
30— नाटक जारी है—लीलाधर जगूड़ी—पृष्ठ 83—संस्करण 1994—किताब घर दिल्ली
31— कुरुक्षेत्र—रामधारी सिंह दिनकर—पृष्ठ 105—संस्करण 2000—राजपाल एण्ड संस दिल्ली
32— अखण्ड ज्योति—संपा. भगवती देवी शर्मा—पृष्ठ 13—संस्करण अगस्त 1981
33— थ्योरी एण्ड मैथेड इन द सोशय साइंस—ए.एम. रोज—पृष्ठ 141
34— पूर्वोक्त—पृष्ठ 143
35— वार एण्ड एग्रीसिवनेस ए. सर्वे ऑफ सोशल एटीट्यूट स्टडीज—एच.टी.आईसेन्स—पृष्ठ 50
36— फ्रस्टेशन एण्ड एग्रीसिव साइकोलॉजी फैक्टर ऑफ पीस एण्ड वार—व्हील्ड एच.एम. मेलविट—पृष्ठ 161
37— आलोचनात्मक त्रैमासिक वर्ष 18 नवांक 6—पृष्ठ 96—जुलाई—सितम्बर 1968
38— जब तुम जागो तभी सवेरा—स्वेट मार्डन रूपां.—वेद प्रकाश सोनी—पृष्ठ 109—संस्करण 2001
39— अनामिका से उद्धृत—राम की शक्ति पूजा—निराला—पृष्ठ 110—संस्करण 1992—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
40— पूर्वोक्त—पृ0 114
41— पूर्वोक्त—पृ0 114
42— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृष्ठ 10—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
43— पूर्वोक्त—पृ0 88—89
44— मुक्तिप्रसंग—राजकमल चौधरी—पृष्ठ 19—संस्करण 1988—वाणी प्रकाशन दिल्ली
45— अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में—संपा. निर्मला जैन—पृष्ठ 142—संस्करण 1994—राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
46— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 57—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
47— पूर्वोक्त—पृ0 91—92
48— संसद से सड़क तक से उद्धृत—पटकथा—धूमिल—पृष्ठ 109—संस्करण 1990—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
49— पूर्वोक्त—पृ0 100—101
50— नाटक जारी है—लीलाधर जगूड़ी—पृष्ठ 110—संस्करण 1994—किताब घर दिल्ली
51— जय भारत—मैथिलीशरण गुप्त—पृष्ठ 137
52— सैरन्ध्री—मैथिलीशरण गुप्त—पृष्ठ 6
53— हुंकार—रामधारी सिंह दिनकर—पृष्ठ 20
54— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 3—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद
55— हिन्दी काव्य पिछला दशक—गोविन्द रजनीश—पृष्ठ 70
56— अनामिका से उद्धृत—राम की शक्ति पूजा—सूर्य कान्त निराला—पृष्ठ 118—संस्करण 1992—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
57— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 11—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद
58— पूर्वोक्त—पृष्ठ 19—20

59— पूर्वोक्त—पृष्ठ 46
60— पूर्वोक्त—पृष्ठ 58
61— पूर्वोक्त—पृष्ठ 58
62— पूर्वोक्त—पृष्ठ 19
63— पूर्वोक्त—पृष्ठ 78
64— पूर्वोक्त—पृष्ठ 95
65— पूर्वोक्त—पृष्ठ 21
66 पूर्वोक्त—पृष्ठ 90
67— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृष्ठ 69—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
68— पूर्वोक्त—पृष्ठ 18
69— पूर्वोक्त—पृष्ठ 44
70— पूर्वोक्त—पृष्ठ 77
71— पूर्वोक्त—पृष्ठ 78
72— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 99—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाश इलाहाबाद
73— पूर्वोक्त—पृष्ठ 106
74— पूर्वोक्त—पृष्ठ 114
75— पूर्वोक्त—पृष्ठ 104
76— अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में—से उद्धृत मुक्तिबोध—द्वारा संपादित निर्मला जैन—पृष्ठ 151—संस्करण 1994—राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
77— पूर्वोक्त—पृष्ठ 143
78— असाध्यवीणा और अज्ञेय—संपा. रमेश चन्द्र शाह—से उद्धृत—पृष्ठ 33—संस्करण 2001—नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
79— पूर्वोक्त—पृष्ठ 42
80— पूर्वोक्त—पृष्ठ 43
81— संसद से सड़क तक से उद्धृत—पटकथा—धूमिल—पृष्ठ 105—संस्करण 1990—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
82— पूर्वोक्त—पृष्ठ 99
83— पूर्वोक्त—पृष्ठ 99—100
84— पूर्वोक्त—पृष्ठ 101
85— पूर्वोक्त—पृष्ठ 108
86— कविता का पूरा दृश्य—माधव हाड़ा—से उद्धृत लुकमान अली—सौमित्र मोहन—पृष्ठ44—45—संस्करण 1992—वाग्देवी प्रकाशन बीकानेर
87— मुक्ति प्रसंग—पृष्ठ 10
88— पूर्वोक्त—पृष्ठ 18
89— नाटक जारी है—लीलाधर जगूड़ी—पृष्ठ 87—संस्करण 1994—किताब घर दिल्ली
90— पूर्वोक्त—पृष्ठ 99
91— चिन्ता—डॉ. हरद्वारी लाल शर्मा—पृष्ठ 76—संस्करण 1965
92— समाज मनोविज्ञान—हंसराज भाटिया—पृष्ठ 91—संस्करण 1980
93— असामान्य मनोविज्ञान—हंस राज भाटिया—पृष्ठ 57
94— राम की शक्ति पूजा—अनामिका से उद्धृत—निराला—पृष्ठ 112—संस्करण 1992—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
95— पूर्वोक्त—पृष्ठ 114
96— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 87—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद
97— पूर्वोक्त—पृष्ठ 32—33
98— पूर्वोक्त—पृष्ठ 66—67
99— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृष्ठ 8—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
100— पूर्वोक्त—पृष्ठ 74
101— पूर्वोक्त—पृष्ठ 70
102— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 69—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
103— पूर्वोक्त—पृष्ठ 69
104— पूर्वोक्त—पृष्ठ 18
105— पूर्वोक्त—पृष्ठ 11
106— चांद का मुंह टेढ़ा है—मुक्ति बोध—पृष्ठ 149
107— पूर्वोक्त—पृष्ठ 160
108— अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में—से उद्धृत मुक्तिबोध—द्वारा संपादित निर्मला जैन—पृष्ठ 116—संस्करण 1994—राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
109— नई कविता के आक्रोश—पुष्पा भार्गव से उद्धृत (ये सपने ये प्रेत)—डॉ. रणजीत—पृष्ठ 55—संस्करण 1981—विवेक पब्लिशिंग हाउस जयपुर
110— संसद से सड़क तक से उद्धृत—पटकथा—धूमिल—पृष्ठ 124—संस्करण 1990—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
111— पूर्वोक्त—पृष्ठ 125—126
112— मुक्तिप्रसंग—पृष्ठ 24—संस्करण 1988—वाणी प्रकाशन दिल्ली
113— पूर्वोक्त—पृष्ठ 24
114— मुक्तिप्रसंग—पृष्ठ 23—संस्करण 1988—वाणी प्रकाशन दिल्ली
115— नाटक जारी है—लीलाधर जगूड़ी—पृष्ठ 81—संस्करण 1994—किताब घर दिल्ली

116– इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका–भाग 8–पृष्ठ 169
117– रेजीस्टेन्सियलिस्म इज नथिंग ऐज एन अटैम्पटटू ड्रा आल द कान्सक्युन्सेस ऑफ ए कालकेन्ट–ज्याँ पाल सार्त्र–पृष्ठ 61
118– अखण्ड ज्योति–संपा. भगवती देवी शर्मा–पृष्ठ 11–संस्करण अगस्त 1981–प्रकाशन अखण्ड ज्योति संस्थान मथुरा
119– राम की शक्ति पूजा–निराला–अनामिका से उद्धृत–पृष्ठ 110–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
120– अंधायुग–भारती–पृष्ठ 30–संस्करण 1992–किताब महल इलाहाबाद
121– पूर्वोक्त–पृष्ठ 34
122– पूर्वोक्त–पृष्ठ 13
123– संशय की एक रात–नरेश मेहता–पृष्ठ 31–संस्करण 1999–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
124– पूर्वोक्त–पृष्ठ 14
125– पूर्वोक्त–पृष्ठ 60
126– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार–पृष्ठ 33–34–संस्करण 1997–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
127– पूर्वोक्त–पृष्ठ 125–126
128– अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में–से उद्धृत मुक्तिबोध–द्वारा संपादित निर्मला जैन–पृष्ठ 111–संस्करण 1994–राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
129– पूर्वोक्त–पृष्ठ 126
130– असाध्यवीणा और अज्ञेय–संपा. रमेश चन्द्र शाह–पृष्ठ 35–संस्करण 2001–नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
131– पूर्वोक्त–पृष्ठ 42
132– संसद से सड़क तक से उद्धृत–पटकथा–धूमिल–पृष्ठ 117–संस्करण 1990–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
133– पूर्वोक्त–पृष्ठ 122
134– मुक्ति प्रसंग–राजकमल चौधरी–पृष्ठ 28–संस्करण 1988–वाणी प्रकाशन दिल्ली
135– पूर्वोक्त–पृष्ठ 14
136– नाटक जारी है–लीलाधर जगूड़ी–पृष्ठ 81–संस्करण 1994–किताब घर दिल्ली
137– अभय राष्ट्र–डॉ. प्रेम शंकर–पृष्ठ 42–संस्करण सितम्बर–अक्टूबर 1968
138– कविता का पूरा दृश्य–माधव हाड़ा–से उद्धृत–पृष्ठ 40–संस्करण 1992–वाग्देवी प्रकाशन बीकानेर
139– सामाजिक मनोविज्ञान–रामबाबू गुप्त–पृष्ठ 446–संस्करण 1976–सामाजिक विज्ञान प्रकाश कानपुर
140– पूर्वोक्त–पृष्ठ 446
141– अनमोल वचन–महापुरुषों की अमृतवाणी–प्रो. सुधाकर–पृष्ठ 37–किताब घर दिल्ली
142– राम की शक्ति पूजा–अनामिका से उद्धृत–निराला–पृष्ठ 114–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
143– अंधायुग–धर्मवीर भारती–पृष्ठ 73–संस्करण 1992–किताब महल इलाहाबाद
144– पूर्वोक्त–पृष्ठ 74
145– संशय की एक रात–नरेश मेहता–पृष्ठ 62–संस्करण 1999–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
146– पूर्वोक्त–पृष्ठ 75–76
147– पूर्वोक्त–पृष्ठ 90–91
148– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार–पृष्ठ 15–16–संस्करण 1947–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
149– पूर्वोक्त–पृष्ठ 86–87
150– पूर्वोक्त–पृष्ठ 98
151– पूर्वोक्त–पृष्ठ 114
152– हुंकार–त्रिपथगा–रामधारी सिंह 'दिनकर'–पृष्ठ 74
153– क्रान्तिदूत सुभाष–विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद'–पृष्ठ 58–संस्करण 1995–साहित्य प्रकाशन दिल्ली
154– नए प्रतिनिधि कवि–हरि चरण शर्मा–पृष्ठ 29–संस्करण 1984–पंचशील प्रकाशन जयपुर
155– अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में–से उद्धृत मुक्तिबोध–द्वारा संपादित निर्मला जैन–पृष्ठ 154–संस्करण 1994–राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
156– ओ अप्रस्तुत मन–भारत भूषण अग्रवाल–पृष्ठ 15
157– विश्वास बढ़ता ही गया–शिवमंगल सिंह 'सुमन'–पृष्ठ 27–संस्करण 1994–आत्माराम एण्ड संस दिल्ली
158– अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में–से उद्धृत मुक्तिबोध–द्वारा संपादित निर्मला जैन–पृष्ठ 152–संस्करण 1994–राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
159– संसद से सड़क तक से उद्धृत–पटकथा–धूमिल–पृष्ठ 112–संस्करण 1990–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
160– पूर्वोक्त–पृष्ठ 112–13
161– पूर्वोक्त–पृष्ठ 115
162– पूर्वोक्त–पृष्ठ 122
163– मुक्ति प्रसंग–राजकमल चौधरी–पृष्ठ 32–संस्करण 1988–वाणी प्रकाशन दिल्ली
164– नाटक जारी है–लीलाधर जगूड़ी–पृष्ठ 98–संस्करण 1994–किताब घर दिल्ली
165– पूर्वोक्त–पृष्ठ 104
166– सामाजिक मनोविज्ञान–रामबाबू गुप्त–पृष्ठ 165–66–संस्करण 1976–सामाजिक विज्ञान प्रकाशन कानपुर
167– पूर्वोक्त–पृष्ठ 166
168– पूर्वोक्त–पृष्ठ 166
169– अखण्ड ज्योति–संपा. भगवती देवी शर्मा–पृष्ठ 53–अप्रैल 1978
170– ओम वरेण्यम्–हरवंश लाल सहगल 'साधक'–पृष्ठ 193–संस्करण 1987–एच.एल. सहगल चैरिटेबल ट्रस्ट दिल्ली
171– राम की शक्ति पूजा–अनामिका से उद्धृत–निराला–पृष्ठ 112–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
172– पूर्वोक्त–पृष्ठ 115

173– पूर्वोक्त–पृष्ठ 117
174– अंधायुग–धर्मवीर भारती–पृष्ठ 16–संस्करण 1992–किताब महल इलाहाबाद
175– पूर्वोक्त–पृष्ठ 81
176– संशय की एक रात–नरेश मेहता–पृष्ठ 6–संस्करण 1999–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
177– पूर्वोक्त–पृष्ठ 32
178– पूर्वोक्त–पृष्ठ 90
179– पूर्वोक्त–पृष्ठ 20–21
180– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार–पृष्ठ 15–संस्करण 1997–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
181– पूर्वोक्त–पृष्ठ 97
182– पूर्वोक्त–पृष्ठ 84
183– पूर्वोक्त–पृष्ठ 104
184– अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में–से उद्धृत मुक्तिबोध–द्वारा संपादित निर्मला जैन–पृष्ठ 155–संस्करण 1994–राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
185– पूर्वोक्त–पृष्ठ 130–31
186– पूर्वोक्त–पृष्ठ 127
187– असाध्यवीणा और अज्ञेय–संपा. रमेश चन्द्र शाह–पृष्ठ 36–संस्करण 2001–नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
188– पूर्वोक्त–पृष्ठ 33
189– संसद से सड़क तक से उद्धृत–पटकथा–धूमिल–पृष्ठ 106–संस्करण 1990–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
190– पूर्वोक्त–पृष्ठ 119
191– मुक्ति प्रसंग–राजकमल चौधरी–पृष्ठ 14–संस्करण 1988–वाणी प्रकाशन दिल्ली
192– पूर्वोक्त–पृष्ठ 13
193– नाटक जारी है–लीलाधर जगूड़ी–पृष्ठ 110–संस्करण 1994–किताब घर दिल्ली
194– पूर्वोक्त–पृष्ठ 89
195– जब तुम जागो तभी सवेरा–स्वेट मार्डन–रूपां.–वेद प्रकाश सोनी–पृष्ठ 116
196– राम की शक्ति पूजा–अनामिका से उद्धृत–निराला–पृष्ठ 109–110–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
197– पूर्वोक्त–पृष्ठ 115–16
198– पूर्वोक्त–पृष्ठ 117
199– अंधायुग–धर्मवीर भारती–पृष्ठ 15–16–संस्करण 1992–किताब महल इलाहाबाद
200– पूर्वोक्त–पृष्ठ 58
201– संशय की एक रात–नरेश मेहता–पृष्ठ 4–संस्करण 1999–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
202– पूर्वोक्त–पृष्ठ 20
203– पूर्वोक्त–पृष्ठ 30
204– पूर्वोक्त–पृष्ठ 50
205– पूर्वोक्त–पृष्ठ 83–84
206– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार–पृष्ठ 65–संस्करण 1947–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
207– पूर्वोक्त–पृष्ठ 95
208– अंतस्तल का पूरा विप्लव अंधेरे में–से उद्धृत मुक्तिबोध–द्वारा संपादित निर्मला जैन–पृष्ठ 126–संस्करण 1994–राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
209– पूर्वोक्त–पृष्ठ 115
210– पूर्वोक्त–पृष्ठ 148–49
211– असाध्यवीणा और अज्ञेय–संपा. रमेश चन्द्र शाह–पृष्ठ 36–संस्करण 2001–नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
212– पूर्वोक्त–पृष्ठ 35
213– पूर्वोक्त–पृष्ठ 38
214– संसद से सड़क तक से उद्धृत–पटकथा–धूमिल–पृष्ठ 106–संस्करण 1990–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
215– पूर्वोक्त–पृष्ठ 106
216– पूर्वोक्त–पृष्ठ 109
217– पूर्वोक्त–पृष्ठ 127
218– पूर्वोक्त–पृष्ठ 128
219– मुक्ति प्रसंग–राजकमल चौधरी–पृष्ठ 21–संस्करण 1988–वाणी प्रकाशन दिल्ली
220– पूर्वोक्त–पृष्ठ 11
221– नाटक जारी है–लीलाधर जगूड़ी–पृष्ठ 103–संस्करण 1994–किताब घर दिल्ली
222– पूर्वोक्त–पृष्ठ 92

षष्टम परिवर्त्त

आलोच्य युद्ध परक कविता में चित्रित युद्धोत्तर समस्याएँ

अ- व्यवस्था की समस्या
ब- शान्ति की समस्या
स- वैधव्य की समस्या
द- विकलांग जीवन की समस्या
य- स्वतन्त्रता एवं सृजन की समस्या
र- प्रतिशोध की समस्या
ल- अन्य समस्याएँ

षष्टम् परिवर्त

आलोच्य प्रबन्ध कविता में विचित्र युद्धोत्तर समस्याएं

युगों–युगों की साधना और प्रयत्नों से मानव जिस सभ्यता–संस्कृति एवं उपयोगी साधनों प्रसाधनों का निर्माण करता है युद्ध का एक ही झटका उसको विनाश करके रख देता है। युद्ध मानवता के सभी उच्च मानव मूल्यों, सुख शझनत और समृद्धि की उपलब्धियों को क्षण भर में ही समापत कर सकता हैं उसके द्वारा जो विश्वास और तनाव का वातावरण बन जाया करता है वह फिर कभी चैन नहीं लेने देता। युद्ध की मूल समस्याओं की ओर से ध्यान हटा केवल युद्ध–विषयक तैयारियों में ही लीन कर देता है। मनुष्य की शक्ति, समय और साधना सभी कुछ उसी पर केन्द्रित होकर रह जाया करते हैं। प्रगति विकास की बातें सुख शान्ति की बातें, कला संस्कृत की बातें सभी भूली बिसरी यादों बनकर जाया करती है। जीवन–विभीषका, अस्थिर उन्मन बनकर रह जाता है। आज भारत ही नहीं सारा विश्व मंहगाई के जिस भीषण दोर से गुजर रहा है? सभी जानते है कि इसका प्रारम्भ विश्व युद्ध के अंतराल में हुआ दूसरे विश्व युद्ध ने उसे और भी दल दिया। आज जो पारस्परिक अविश्वास और निहित स्वार्थो के कारण चारों ओर युद्ध का सा वातावरण बना हुआ है। सभी जानते है कि विश्व की आय के स्रोतों का अधिकांश भाग इस वातावरण से बचाव के नाम पर बढ़ावा देने में ही खर्च हो रहा है। युद्ध हजारों–लाखों को अनाथ और वेसहारा बना दिया करते है, महामरियां, अकाल और भुखमरी का कारण बनते हैं। इन सबके कारण मात्र विनाश ही तो पल्ले पड़ता है। अतः युद्ध से होने वाली व्यापाक हानियाँ ही हानियाँ है।

"प्राचीन काल से ही युद्ध होते रहे हैं। कुछ इसे एक महामारी का रूप मानते हैं जिसका निवरण आवश्यक है कुछ लोग युद्ध को एक गल्ती मानते है जिसे दूर किया जाना चाहिए कुछ इसे अपराध मानते हैं। जिसके लिए दण्ड दिया जाना चाहिए। और कुछ के लिए यह समय की गणना में मूल मात्र है। जो किसी भी उद्देश्य की पूर्ति नहीं करता। इसके विपरीत कुछ लोग युद्ध को साहसिक कार्य मानते है जो रुचिकर हो सकता है, लाभकारी उपकरण हो सकता है, वैध या उपयुक्त कार्य विधि हो सकता है अथवा अस्तित्व की एक दया है। जिसके लिए मनुष्य को तैयार रहना चाहिए।[1]

युद्ध के बाद हमारे सामने दो तरह की समस्याएं सामने आती हैं– 1–सरकार की समस्या 2. जन सामान्य की समस्या।

"प्रत्येक देश अपनी सुरक्षा हेतु सचेष्ट रहता है, इसके अन्तर्गत शस्त्रो की उन्नत प्रणाली को विकसित करता है किन्तु युद्ध काल में इनका प्रयोग बड़ा वीभत्स कारी होता है। इसे हम द्वितीय विश्व युद्ध के विनाश के रूप में देख सकते हैं।" 1 अगस्त 1945 को नागासाकी में 10,000 पौंड का अणु बम आग की फुहारे उड़ता है 3000 फुट तक की जीवन्तता को समूचा निगल गया। 75,000 हजार जाने गई। इतने ही घायल पड़े हुए कराहते रहे। दो तीन वर्ष पूर्व सोवियत रूप से अंतरिक्ष में अकुम्भ रखने और वहां बमबारी करने में समर्थ प्रणाली का जो विकास किया है उससे अमेरिका की संसद में मौजूद प्रक्षेपात्र विरोधी को सुदृढत्र करने के लिए दबाव पड़ने लगा हैं इसे सुदृढ़ करने के कार्यक्रम में अनुमानतः डा0 अरब डालर का खर्च आएगा और अमेरिका आधुनिक तन पुस्शास्त्रों की दौड़–होड में व्यस्त हैं। इधर एशियाई और अफ्रीकी देशों के देशों जीवन स्तर में निरस्तर गिरिवर आती जा रही है। अकाल, भूख, सूखा, गरीबी से ग्रस्त, पिचके पेट और सूखी हड्डियो के ढांचे वाले देश का मानव शास्त्रों

का निमार्ण में अरबों करोंड़ों वाले देशों द्वारा सरेआम उपहास किया जा रहा है।"[2]

आधुनिक काव्य युद्ध के सन्दर्भों से जुड़े हुये है तथा सम–सामायिक एवं ज्वलंत समस्याओं को उजागर करने में कवि की दृष्टि सचेष्ट रही है। युद्ध के चिन्तन को कभी पौराणिक पात्रों को प्रतीक रूप में चित्रित करके कभी सामाजिक सन्दर्भों को लेकर युग की युद्ध मूलक समस्या को चित्रित किया है।

6/(अ)–व्यवस्था की समस्या–

व्यवस्था के दो रूप सदैव विदमान रहते हैं पहला आंतरिक वाहय यह दोनों ढांचे प्रत्येक अवस्था में होते हैं। युद्ध में मनुष्य को मारता है एक पक्ष विजयी होता है तो दूसरा पक्ष पराजित किन्तु युद्ध के पश्चात बचे लोगों में अंतरिक भावना को सुदृढ़ करने की समस्या आती है। इस भावना को सबसे कठिन कार्य होता है यदि यह सुक्ष्म तत्व जो व जो बहुत व्यापक होता है, ओझल हो गया तो विश्व की कोई भी शक्ति किसी राष्ट्र के बिखरे पड़े बाहय स्वरूप को लोड नहीं सकता। आंतरिक भावना के अभाव में बाहय स्परूप का निमार्ण नहीं किया जा सकता युद्ध की त्रासदी को झेलते हुये लोगों में व्यवस्था निर्माण हेतु आंतरिक भावों को जगाया जाता है क्यों कि आंतरिक तत्व के प्रकट होने पर ही वाहय स्वरूप का निर्माण किया जा सकता है। इस विखरी व्यवस्था को कोई अकेला व्यक्ति नहीं बना सकता हैं इसके लिए मुख्य शक्ति का होना तत्पश्चात एक जुट होकर पूरे मानोयोग से कार्य करना पड़ता है, संसाधनों का आमरण जो पूर्णतः नष्ट हो गया है उसे प्राप्त करना कठिन होता है।

सैन्यवादी परम्परा प्रत्येक राष्ट्र में विद्यमान है जिस के दुष्यपरिणाम देखकर हम उस पर गर्व नहीं कर सकते। युद्ध के पश्चात सबसे पहली समस्या व्यवस्था के रूप में सामने आती है। हम ऐसे विध्वसंक अपराध कर वैध घोषित करना चाहते है। आवास, यातायात, संचार, भोजन, वस्त्र, स्वास्थ्य, सम्बन्धी सेवाए शिक्षा, रोजगार, बेकारी सैनिकों के आश्रितों की व्यव्सथा तथा शासन प्रणाली आदि को सिर से बनाने दुष्कर कार्य है। अल्प संसाधनों से संपूर्ण व्यवस्था को सही रूप देना साहसिक कदम होता है। तोपो और टैंको से विमानों और युद्ध पोतों से हम शत्रु को तो परास्त कर देते है किन्तु जीत कर भी व्यवस्था का अभाव पुनः उसे पूर्व रूप में खड़ा करना होता है। युद्ध के बाद शीघ्रता से विनाशमय वातावरण में अपने को ढालना पड़ता है। युद्ध की चकना–चूर व्यवस्था का आधुनिक युद्ध परक काव्य में विशद वर्णन मिलता हैं कही रोटी कपडा और मकान की समस्या, यातायात, संचार, स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, सैनिकों के आश्रितों की समस्या, शासन, प्रशासन की समस्याओं का वर्णन मिलता है क्योंकि प्रत्येक स्थापित व्यवस्था का चरित्र बहुत व्यापक हो जाता है अतः स्थापित व्यवस्था के प्रति हमारा झुकाव अधिक होता है। यह व्यवस्था हमारी सभी आवश्यकताएं पूरी करती है लेकिन युद्ध के परिणाम स्वरूप यह व्यवस्था तहस–नहस हो जाती है। आधुनिक कवियों को उभार कर सामने लाने का प्रयास किया है।

'अंधायुग' में प्रहरियों के मध्य शासन सम्बन्धी
वार्तालाप आधुनिक शासन व्यवस्था पर करता है–
" हम जैसे पहले थे वैसे ही अब भी हैं
शासक बदले

स्थितियाँ बिल्कुल वैसी हैं
इससे तो पहले के ही शासक अच्छे थे
अन्धे थे....लेकिन शासन तो करते थे "[3]
'अंधायुग' की अंधी शासन व्यवस्था को प्रहरी यंत्रवत होकर अभिशाप की तरह झेल रहे हैं।
कवि के शब्दों में–
"आसन्न पराजय इस नगरी में सब नष्ट हुई पद्धतियाँ धीमें–धीमें
\+ + + + +
जिनमें बूढ़ा भविष्य याचक–सा
है भटक रहा टुकड़ों को हाथ पर सारे "[4]

'संशय की रात' में राम युद्ध में होने वाले नर वध से चिंतत है, युद्ध में विजय प्राप्त होने के पश्चात शासक, शासन किस पर करें ! मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो हर सिथति में संभलकर अपनी सामाजिक व्यवस्था को बना सकता है उसमें मानव जीवन के लिए प्राण फूंक सकता है उसके जीवित न रहने पर व्यवस्था की बात करना हास्यास्पद होगा। युद्ध में होने वाले नर संहार के प्रति राम के मन में गहरा विरक्त के भाव हैं " कवि के शब्दों में–

" नर संहार के व्यामोह के प्रति
विदृष्णा से मर उठा हूँ। "[5]

विभीषण गलत व्यवस्था को अस्वीकार कर राम की शरण में आ गए हैं। लंका की पराजय को धत–सत्य मानकर युद्ध के पश्चात किसी देश की होने वाली दुर्दशा का दृश्य कल्पना चक्षुओं से देखकर नितांत दुःखी हैं। मातृभूमि जो जान से प्यारी होती है। उस राष्ट्र के अपमान पूर्ण दृश्य देखने को विवश होगा, जिससे राष्ट्र के संपूर्ण व्यवस्था को टूटतें–फूटते देखते है। कवि के शब्दों में–

" मेरे राष्ट्र की टूटी हुई
अपमानित पताकाएं
नग्न अंगों की शोभा यात्रा सी जा रही हैं।
जले और खण्डित भवन
जिहाहीन भिखमंगे सर्राखे
हाथ फैलाए खडे हैं।
राजपथ
बेहोस, ऐठीं देह से नंगे पडे हैं
टूटे हुए रथ चक्र में
अंधे अश्व हँसते जा रहे हैं
मेरी स्वर्ण लंका

पागल कोढियों–सी

वह वहाँ

उस सिंधुतट बैठी हुई

हड्डी– बांसुरी छेडे हुये है।

मेरे राष्ट्र

मेरे देश की जटामेरियाँ

गूँगी हो गई हैं।

बहरे लोग

हिचकियों के साथ मदिरा गा रहे हैं। नव जीवन के लिए प्राण फूँक सकता है। उसके जीवित

मेरा राष्ट्र

इस युद्ध में

रौंध डाला जाएगा कल राम ?"[6]

'एक कंठ विषपायी' में निम्न कथन कुबेर द्वारा देवलोक की सुरक्षात्मक नीति को ध्यान में रख कर कहा गया है किन्तु इससे ध्वनित यह हो रहा है कि युद्ध संपूर्ण व्यवस्था को तहस नहस कर देता है। युद्ध के पश्चात व्यवस्था की समस्या सबसे प्रमुख समस्या होती है इसका प्रभाव व्यक्ति के अस्तित्व पर पडता है दृष्टव्य है कि युद्ध में कण–कण नष्ट हो जाता है रक्षा हेतु कुछ बचाव ही नहीं ऐसी स्थिति में व्यवस्था को पुनः स्थापित करना बहुत कठिन होता है कवि के शब्दों में–

"कब जाओगे ?

तब,

जब ये प्रसाद धूल में मिल जायेगें ?

देवलोक का नाम –निशान न रह जाएगा ?

जब लड़ने को शेष न होगा कोई सैनिक

जब दक्ष के लिए न कुछ भी बच पाएगा।

तब जाएगें ? "[7]

महाराज दक्ष का कक्ष जो संदद सुखद सर्वापूर्ण व्यवस्था से युक्त था किन्तु सती के अग्निदाह के बाद उत्पन्न स्थिति यह है कि उसकी साज–सज्जा अस्त–व्यस्त है, सभी वस्तुएँ बिखरी पड़ी है। ऐसा वातावरण उपस्थित है जैसे वहाँ भीषण युद्ध हुआ है। ब्रह्मा और विष्णु वहाँ प्रवेश करते हैं तथा विष्णु के माध्यम से व्यवस्था की टूटन का चित्रण किया गया है, कवि के शब्दों में–

"जन संकुल राजमार्गः नीख

जनहीन नगर,

चिड़ियों के नोचे हुये पंखों–से

सारे घर,

सारा क्रम छिन्न –भिन्नः

पूरा परिवेश भग्नः

और ध्वस्त इन सारी स्थितियों पर

तनी हुई

वह आकृतिः क्रोध–मग्न ! "[8]

महाराज के नगर में संहार के पश्चात सर्वहत के कथन से यह भाव दिखाया गया है कि सम्पूर्ण मानव जाति का ही विनाश हो गया, ऐसी स्थिति में किसी राष्ट्र को पुनः व्यवस्थित करने की चेष्टा एवं प्रयत्न के बारे में कैसे सोंचा जाये ! क्योंकि नगर में फैला हुआ उष्ण रक्त, शत–विक्षत घायल रात जिन पर गिद्ध–चीले और कक्खियां मंडरा रही हैं। इन्द्र और ब्रह्मा गंभीर चिंतन में मग्न हैं, इन्द्र ब्रह्मा को अवगत कराते हैं कि शंकर के भृव्यों को शान्त कर समझाने–बुझाने पर भी नगर को शमशान बना दिया है, इस कृत्य पर ब्रह्मा दुःखी होते हैं कि शेष अब यहाँ अब यहाँ कुछ भी नहीं बचा, कुछ भी नहीं, इसका प्रत्युत्तर सर्वहत राष्ट्र की वीरानगी के द्वारा प्रस्तुत करता है सब कुछ है, कवि शब्दों में–

" कौन कहता है–

यहाँ कुछ भी नहीं है सब है शेष।

यहाँ शेष ही तो है सब कुछ......

देखो.........

सारे नगर में ताजा

जमा हुआ रक्त है

और सड़ी हूई लाशें हैं

मुड़ी हुई हड्डियाँ हैं

क्षत–विक्षत तन हैं

और उन पर भिन्नाते हुए

चीलों और गिद्धों के झुण्ड

और मखियाँ हैं।

सब कुछ तो है।

\+ + +

सिर्फ लोग नहीं है तो क्या हुआ ?

लोगों के होने न होने से

क्या कोई दृश्य की महत्ताकम होती है? "[9]

जीवनोपयोगी सभी वस्तुएँ समाप्त हो गयी है एक व्यक्ति स्वयं को तरह खपा कर भी व्यपस्था को संचालित नहीं

कर सकता। मानव की प्रमुख समस्या खान–पान की व्यवस्था है, वह तभी सोंच सकता है जब उसकी भूख मिटे, किन्तु युद्ध के बाद रसद–सामाग्री का अभाव उत्पन्न होता है जिसमें बचे हुये लोग भूंख से तड़प कर मर जाते मर जाते हैं। जहाँ भोजन की सामग्री नष्ट हो गयी हो, जो जीवन सुरक्षित साधन है, इसे व्यक्ति लाख प्रयास करके प्राप्त चाहे तो तत्काल उसे उस राष्ट्र में पैदा नहीं किया जा सकता, इसको तो सतत् प्रयास से ही पाया जा सकता है कवि के शब्दों–

"इन राजमहलों से मोह
अब तोड़ना पड़ेगा मुझे
अब शीघ्र अब
यह नगर छोड़ना पड़ेगा मुझे
वरना क्या खाऊँगा और क्या पियूँगा यहाँ ?"[10]

इन्द्र प्रजा की रक्षार्थ युद्ध को अनिवार्य मानते हैं किन्तु ब्रह्मा जी युद्धोत्तर परिणामें का हवाला देते हुये युद्ध के प्रति अनिच्छा व्यक्त करते है, कवि के शब्दों में–

"गायन–गुंजित नगर चीत्कारों से भर दें, "[11]

शंकर की आक्रमणात्क कार्यवाही से हो रहे विनाश से चिन्तित सैनिक देवराज को संबोधित करते हुये कहते हैं कि महादेव शंकर की सेनाएं अपनी सीमा के भीतर तक गई हैं जिससे अगणित घर उजड़ गये हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने युद्ध के पश्चात आवास की व्यवस्था पर दृष्टि डाली है क्योंकि युद्ध में घर तो घर, नगर के नगर उजड़ जाते हैं पुनः इनको बनाना यहाँ से दूसरी जगह स्थापित करना, की समाप्ति होने पर पुनः उसी स्थान पर बसाना जीविको पार्जन हेतु रोजगार को व्यवस्था करना बहुत व्यापक कार्य होता है कवि ने निम्न पंक्तियों में आवास की समस्या को चित्रित किया है–

"महादेव शंकर की सेनाएँ
सीमा में दूर तक चली आई।
अगणित घर उजड़ गए
धरती हो गई हो गई लाल। "[12]

इन्द्र के माध्यम से मानो कवि 1962 के भारत –चीन युद्ध का वर्णन कर रहा क्योंकि चीन ने भारत की कई सौ वर्ग किलोमीटर भू–भाग को अपने अधिकार क्षेत्र में ले लिया था। इसी प्रकार शंकर के आक्रमण से देवलोक में जन–हानि एवं भू–भाग से हाथ धोने पड़े, जब हमारे अधिकार क्षेत्र की भूमि किसी दूसरे राष्ट्र के कब्जे में चली जाती है, ऐसी स्थिति में उसे प्राप्त करना टेढ़ी खीर है युद्ध के पश्चात जन–मानस को बचे हुए अपने क्षेत्र को सुरक्षित रखने की सुदृढ़ व्यवस्था करनी पड़ती है अन्यथा क्षेत्रफल के अभाव में उस राष्ट्र का अस्तित्व विजयी राष्ट्र केनीचे दबकर रह जाता है। कवि के शब्दों में–

"खूब कहा प्रभु,
इतना रक्तपात होने पर,

इतनी भूमि निकल जाने पर,
आप अभी तक मेरा प्रश्न विचार रहे हैं।''[13]

आवास की समस्या युद्ध के साथ जुड़ी हुई है, इसे हम पौराणिक पात्रों के निवास–स्थान द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं कि आवास समस्त प्राणियों केलिए आवश्यक हैं।'' साक्षात विष्णु को ढंग का मकान न मिल सका। आखिर क्षीर–सागर में एक हाउस वोट किराए से लिया। ब्रह्मा जी की हालत उनसे भी ज्यादा खस्ता है। उसी हाउस वोट की दूसरी मंजिल पर बड़ी मुश्किल से बैठने को जगह मिली। शंकर जी इस विषय में खुश किस्मत है। जहां देखा कि मकान नहीं मिलता और छः–सात प्राणियों का बड़ा परिवार है,? पट से ससुराल पहुंच गए और ऐसे पहुंचे कि बस, घर जमाई बनकर ही टिक गए।''[14] 'क्रान्तिदूत सुभाष' में कवि ने युद्ध के पश्चात होने वाली आवास की समस्या को निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत किया है–

''नष्ट हो गए नगर सुविकसित, सर्वनाश का ही क्षण था।
महामृत्यु करती थी लीला, दृश्य बड़ा ही भीषण था।।
जहां कभी प्रासाद खड़े थे, वहां राख की ढेरी थी।
शान्ति वहां थी मरघट की चिर, जहां बजी रणभेरी थी।।''[15]

युद्ध में अधिकांश उपेक्षित, वंचित, आश्रयहीन एवं गृह विहीन हो जाते हैं ऐसे में उन्हें सर्वत्र अन्धकार ही अन्धकार दिखाई पड़ता है, उनके पास अब यही पूंजी बचती है। अत्याचारी शासन सत्ता से घिरा व्यक्ति बड़े–बड़े टावर गिरते व धंसते देखता है, घुंघराला–धुंआ, गेरुई ज्वाला नेत्रों के समक्ष दिखाई देती है हृदय में भगदड़ सी मचती है सामने उजाड़ बंजर टीलों पर अचानक कोई रो उठता है उसकी सहायता के लिए वहां अन्तर्तत्वों का प्रबन्ध
ा एवं व्यवस्था की जा रही है। कवि के शब्दों में–

''बंजर उजाड़ टीले पर सहसा
रो उठा कोई, रो रहा कोई
भागता कोई सहायता देने।
अन्तर्तत्वों का पुनः प्रबन्ध और पुनर्व्यवस्था
पुनर्गठन सा होता जा रहा।''[16]

स्वतन्त्रता संग्राम में हमारा देश जर्जर अवस्था में पहुंच गया आज कई वर्ष बीत जाने के बाद भी हमारा देश बहुत कमजोर है। 'पटकथा' में कवि मौलिक आवश्यकता की वस्तुएं रोटी, कपड़ा और मकान का अभाव दिखाकर, स्वतन्त्रता देश की आज तक बिखरी हुई व्यवस्था को प्रस्तुत करता है–

''वहां बंजर मैदान
कंकालों की नुमाइश कर रहे थे
गोदाम अनाज से भरे पड़े थे और लोग
भूखों मर रहे थे''[17]

स्वतन्त्रता के पश्चात देश की शासन–व्यवस्था सुदृढ़ होते–होते कई वर्ष बीत गए और आज देश के ही कर्णध

ाार राजनेताओं नेदेश की व्यवस्था को बिखरे कर रख दिया है। कवि के शब्दों में–

"उन्होंने किसी चीज को

सही जगह नहीं रहने दिया

न संज्ञा

न विशेषण

न सर्वनाम

एक समूचना और सही वाक्य

टूटकर

बिखर गया है"[18]

हमारे देश की सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था इतनी संक्रमण शील और विषाक्त हो गई है जिसमें नियम और व्यवस्था के नाम पर अव्यवस्था का बोलबाला है, कोई भी संवेदनशील व्यक्तित्व उससे आंखें नहीं चुरा सकता, उनसे उद्वेलित हुए बिना नहीं रह सकता। कवि ने व्यवस्था की समस्या को निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया–

"मैं बार–बार कहता हूं कि इस उलझी हुई

दुनिया में

आसानी से समझ में आने वाली चीज

सिर्फ दीवार है।

और यह दीवार अब तुम्हारी आदत का हिस्सा बन गई है"[19]

'नाटक जारीहै' में कवि ने स्वतन्त्रता संग्राम के बाद पनपी शासन–व्यवस्था के कुरुप–स्वरूप का चित्रण करके सरकर की समस्या को चित्रित किया है। आज की विसंगतिपूर्ण व्यवस्था के चलते मनुष्य भूखों मरने के लिए बाध्य हो रहा है, कड़ी मेहनत मजदूरी करने के उपरान्त दो जून की रोटी नसीब नहीं, आम आदमी इस पीड़ा को झेल रहा है। कवि के शब्दों में–

"इस नाटक में सहकारी आदमी उजाड़ता है देश

और धन्धा मिलता है

कृपया आप अपनी सुरक्षा कर लें

एक जगह मेरा कंधा हिलता है

क्योंकि मुझे चिन्ता है

बनिये के उधार होने की

कभी बुखार होने की

कभी कर्णाधार होने की"20

'मुक्ति प्रसंग' में कवि ने भारत के रुपए का मूल्य विश्व बाजार में लगातार गिरते हुए दिखाया है, भारतीय नोट पर प्रधानमंत्री की तस्वीर और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर गिरते हुए मूल्य इससे बढ़कर शासन के समक्ष और क्या

समस्या हो सकती है इस समस्या के लिए सिन्डीकेट व विश्वबैंक को धन्यवाद देना कितना उचित है? कवि के शब्दों में–

"बातें करती है कविता त्यागी

और हिन्दुस्तानी रुपए पर छपी हुई है जवाहर लाल नेहरू की तस्वीर

और इस तस्वीर की कीमत अभी तक

कुल 36.5 प्रतिशत नीचे गिरी है हमें धन्यवाद करना

चाहिए देशी सिन्डीकेट

और विदेशी विश्व बैंक को"[21]

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि आधुनिक युद्ध परक काव्य में कवियों की दृष्टि युद्धोत्तर व्यवस्था की समस्या पर व्यापक दृष्टि रही है जिसमें सरकार की समस्या एवं जनसामान्य की समस्या को प्रस्तुत किया गया है। मानवीय मूल्यों की स्थायी रूप से विनाश नहीं होता प्रत्येक प्राणी में एक छिपा हुआ ज्ञान होता है जिससे जीवन की एकता की अनुभूति होती है, जिसके बल पर मानव मन में यह विश्वास बना रहता है कि अच्छी व्यवस्था बनकर रहेगी।

6 / ब

(ब)– शान्ति की समस्या– शान्ति! शान्ति! शान्ति! का अलाप निरर्थक है क्योंकि कोई भी राष्ट्र नहीं चाहता कि वह किसी दूसरे से पीछे रहे, प्रथम विश्व युद्ध के बाद द्वितीय विश्व युद्ध, राष्ट्र संघ की स्थापना, नेहरू के पंचशील का सिद्धान्त शान्ति स्थापना के ही प्रयत्न है, किन्तु क्या आज किसी राष्ट्र में शान्ति स्थापित है? नहीं। क्योंकि सभी राष्ट्र शस्त्रीकरण को प्राथमिकता देते हैं। अहंवाद, व्यक्तिवाद, स्पर्धा के भाव तथा हीनता की जटिल भावना युद्ध के पश्चात शान्ति स्थापित करने में आड़े आती है, क्योंकि युद्ध के पश्चात मनुष्य की भावना, बुद्धि, मन, प्राण और शरीर क्रमशः अन्तर्द्वन्द्व, व्यामोह, असुख, निर्बलता, राग और रोग से घिर जाते हैं। ये स्वयं अशान्ति के पोषक है। विजय का गर्वोल्लास शान्ति स्थापना के बीच फड़फड़ाता नजर आता है युद्ध के पश्चात बचे हुए लोगों को संसार में रहने और अपनी भूमिका निभाने लायक कैसे बनाया जाए। शान्ति की समस्या उत्पन्न होती है जो एक देश या राष्ट्र की नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व में है अतः इसका सम्मान प्रत्येक राष्ट्र के लिए आवश्यक है। शान्ति की महत्ता पर रिचार्ड एन्ड्रियामजातो का विचार है– "वह मानवता की सर्वोच्च चेतना की अभिव्यक्ति है,वह सार्वजनीन मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा के लिए किए गए कार्यों में रूपायित होती है, प्रबुद्ध विश्लेषण और ऐसी सुसिंचित सक्रियता में वह अपनी समर्थ अभिव्यक्ति पाती है जो मानव जाति को विध्वंस से बचाती है और एक ऐसे समाज का प्रवर्तन करती है जो शोषण और दमन से मुक्त हो।"[22]

युद्ध के परिणाम स्वरूप शान्ति आन्दोलनों का प्रसार शुरू होता है। दुनिया के अधिकतर राष्ट्र यह सोचने पर मजबूर हैं कि वास्तव में युद्ध के पश्चात तत्कालीन समय में शान्ति की स्थापना आवश्यक हो जाती है। अतः अपनी समस्याओं को हल करने के लिए सैनिक और राजनीतिक गतिविधियों पर नियन्त्रण करते हैं तथा युद्ध के सर्वनाश को रोकने के लिए कृतसंकल्प हैं। युद्ध के पश्चात शान्ति स्थापना से अधिक महत्वपूर्ण कोई दूसरा नहीं हो

सकता। समस्या आती है कि अब कौन सी प्रणाली या पद्धति अपनाई जाए? युद्ध के पश्चात सैनिक, तकनीकी, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्रों में साथ ही साथ सामाजिक जीवन में भी शान्ति स्थापना के प्रयत्न किए जाते हैं। सर्वप्रथम युद्ध के पश्चात सम्पूर्ण मानव समाज में इस जागृति का होना जरूरी है कि युद्ध मानवता के सर्वनाश का कारण है, धन–हानि तो होती ही है शान्ति का भंग हो जाना और उसे पुनः उसी स्थिति में लाना सबसे दुष्कर कार्य होता है जिसके लिए पूरी प्रक्रिया ही बदलनी पड़ती है।

युद्ध के पश्चात राष्ट्र अथवा समाज में शान्ति कैसे स्थापित हो यह प्रश्न बड़ी तेजी से उठता है इसका उत्तर उतना ही गहन और क्लिष्ट भी है। शान्ति स्थापना के सारे उपक्रम विफल हो जाते हैं क्योंकि युद्धमय व्यवस्थित क्रियाएं और विचारशीलता उत्पन्न हो जाती है, यह क्रिया दृढ़ युद्ध नीति द्वारा उत्पन्न की जाती है। युद्ध के पश्चात यदिमनुष्य अपने नैतिक कर्तव्यों का पालन करने लगे तो शान्ति धीरे–धीरे स्वतः ही स्थापित हो जाएगी, किन्तु शान्त माहौल को किस प्रकार अशान्ति से बचाया जाए। विश्व का सन्तुलन आज भी इस बात पर कायम है कि मनुष्य नैतिकता के मार्ग कासहारा लेकर चल रहा है। इस परिप्रेक्ष्य में 'बायरन' का कथन विचारणीय है– ''खून की नदियां बहाना आसान है पर एक बूंद आंसू सुखाना बहुत मुश्किल है।''[23] शान्ति और मानवता की स्थापना युद्ध से पूर्व भी नियोजित की जाती है युद्ध के बाद भी करनी पड़ती है। अतः शान्ति की स्थापना एक अनादि समस्या है। द्वन्द्व एवं अशान्ति का परिणाम युद्ध है और युद्धोत्तर समस्या शान्ति और मानवता को प्रतिष्ठित करता है। युद्ध के बाद भी अनैतिकता, स्वार्थ एवं अशान्ति का वातावरण उत्पन्न होता है जिसमें विश्व शान्ति सुख–समृद्धि एवं अमनचैन स्थापित करना होता है। द्वितीय विश्व युद्ध में मुसोलिनी एवं हिटलर जैसे शास्त्रों ने अपीन व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं को अनियन्त्रित रखा जिससे समाज की शान्ति व्यवस्था छिन्न–भिन्न हो गई थी।'' मनुष्य यदि नैतिकता को चरम चिष्ठा तक बनाए रखना स्वीकार कर ले तो न केवल व्यक्तिगत जीवन को वरन् सारे समाज को शान्तिपूर्ण बना सकता है। ऐसे व्यक्तित्वों का बाहुल्य जिस दिन हो जाएगा जो नीति के मामले में अपनी किसी भी महत्वाकांक्षा को कुचल डालने से हिम्मत न हारेंगे तो इस धरती का दृश्य ही कुछ और रहेगा। उस दिन यहां सर्वत्र सुख ही सुख, शान्ति ही शान्ति होगी।''[24] युद्ध के पश्चात शान्ति स्थापित करने की समस्या को युद्ध परक काव्य में आधुनिक कवियों ने प्रस्तुत किया है जिसे निम्नलिखित उदाहरणों में देखा जाय सकता है–

युद्ध के पश्चात हम शान्ति चाहते हैं, इसे स्थापित करना चाहते हैं किन्तु असान्ति के कारण बराबर मौजूद रहते हैं। कवि दिनकर ने 'कुरुक्षेत्र' में यह व्यक्त किया कि सुख एवं शान्ति का अधिकार न्यायोंचित अधिकार है इसे लड़कर, समर को जीत कर या खुद मर कर प्राप्त कर लेना चाहिये तभी पृथ्वी में शान्ति स्थापित होगी कवि के शब्दों में–

'' न्योचित सुख सुलभ नहीं/जब तक मानव –मानव को जैन नहीं धरती पर तब तक शान्ति कहाँ।''[25]

मानवता का इतिहास युद्धों का इतिहास न होकर धर्म का इतिहास बनेगा तभी मानवता का श्रेय सन्निहत होगा स्नेह सिंचित न्याय पर आधारित नवीन विश्व का निर्माण ही मानव के लिए कल्याण प्रद है। मानव के प्रति विश्वास युद्ध और शोषण से रहित इतिहास की सृष्टि ही समाज का अभिष्ट है। और जहाँ सुधामय कोष सुलगते होगं

वहीं शान्ति का इतिहास बन सकेगा। 'संशय की एक रात में' राम शान्ति की समस्या पर चिंतन करते दिखाई देते हैं। जब सभी विवेक युक्त प्राणी जीवित है और असान्ति व्याप्त है। युद्ध के बाद मानव जाति का विनाश हो जाता है जो कुछ भी अच्छा होता है चुक सब चुक जाता है। ऐसी स्थिति में शान्ति स्थापित करने की समस्या बहुत कठिन होती है। यहाँ दबाव इस बात का है कि युद्ध द्वारा शान्ति स्थापित होगी किन्तु युद्ध के बाद बचे हुए लोगों को आपस में जोड़ना उनके मन में शान्ति के लिए आस्था पैदा करना तथा सम्पूर्ण व्यवस्था को शान्ति पूर्वक संचालित करने का बीड़ा उठाना कोई आसान कार्य नहीं हैं। कवि के शब्दों में–

" ओ अनास्थिति सूर्य स्तवाली
भाद्रप्रद की सांझ !
युद्ध के उपरान्त होगी शांति
उपलब्धियों की सिद्धि–
इस मिश्यात्व से
इस मरीचिका से
मुक्ति दो !!"[26]

राम पिता के साथ हुए संवाद में यह सिद्ध करते हैं कि एक युद्ध के बाद दूसरा युद्ध होता ही रहेगा। और शान्ति मनुष्य के लिए मृगतुष्णा के समान बनी रहेगी। युद्ध के बाद शान्ति की बाते करना आज निरर्थक सी लगती हैं क्योंकि प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध के बाद न जाने कितनी शान्ति वार्तायें चली किन्तु उसका परिणाम सामने है–युद्ध के रूप में। कवि के शब्दों में–

"ऐसी बल सिद्धता का
कोई अंत नहीं होगा पिता।"[27]

युद्ध के लिए कटिवद्ध हनुमान एवं उनके सहयोंगियों के समक्ष राम युद्ध को एक जिम्मेदारी के रूप में प्रस्तुत करते हैं वह इस बात से अधिक चिंतित हैं कि युद्ध के बाद चिर सुरक्षा एवं शान्ति कैसे स्थापित होगी संभव है हम सभी अपने अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लें। युद्ध से हम शान्ति चाहते हैं किन्तु उसकी आधारभूमि अनिश्चित है यह शान्ति कैसे स्थापित होगी और क्या हेगी यह एक विचारणीय प्रश्न है।

कवि के शब्दों में–

"संभव है
इस युद्ध में
हम सभी अपने को पा जाएँ
किन्तु
उसकी चिर सुरक्षा
शान्ति
+ + +

युद्ध ऐतिहासिक फेन है किन्तु
उसके बाद ? " [28]

युद्ध के दुष्परिणामों को देखकर सभी शांति का मार्ग अपनाने पर बल देते हैं किन्तु कथनी मात्र से शांति स्थापित नहीं हो सकती क्योंकि युद्ध पराजित दूसरा पक्ष हमेशा अशांत ही बना रहता है वह अपने देश की शांति स्थापित हेतु संघर्ष का मार्ग अपनाने लगता है। इसके लिए खुले वेंचारिक समझौतें कारगर होते हैं किन्तु कठिन यह है कि कौन सा पक्ष कब इनसे मुँह मोड़ले। कवि के शब्दों में– "बढ चुका बहुत आगे रथ अब
निर्माण का
बम्बों के दलदल से अवरूद्ध नहीं होगा
है शांत शहीदों का पडाव हर मंजिल पर
अब युद्ध नहीं होगा अब युद्ध नहीं होगा। "[29]

'बांग्ला विजय' में भारत के स्वतन्त्र हो जाने पर जिन्न द्वारा साम्प्रदायिकता की आग भड़क कर भारत –पाकिस्तान के विभाजन को मजबूत कर शान्त व्यवस्था को अशान्ति से भर दिया कवि ने शान्ति व्यवस्था को स्थापित करने की समस्या की ओर संकेत किया है–

"भारतीयता भाव मिट गया
राष्ट्रियता की बुझी उमंग
\+ + + + +
इस प्रकार अंग्रेजों की ही
कुटिल नीति फिर लाई रंग
भड़की साम्प्रदायिकता ज्वला
झुलसे भारत माँ के अंग "[30]

(स)–वैधव्य की समस्या–

विधवा शब्द से ही ऐसा प्रतीत होता है मानों नारी जीवन की समग्र व्यथा सिमटकर इसी एक शब्द में केन्द्रित हो गई है। नारी की सामाजिक स्थिति जितनी गिरती गई वैधव्य के नियम उतने ही कठोर और विधवा का जीवन करुण से करुणतम बनता गया धीरे–धीरे विधवा जीवन इतना तिरस्कृत बन गया कि उसे न किसी समारोह में भाग लेने का अधिकार रहा न किसी उत्सव में सम्मिलित होने की अनुमति। सामाजिक मान्यता नुसार उसके पति के मृत्यु का कारण भी उसके पूर्व कर्मो के साथ जोड़ दिया गया। विधवाओं के लिए अलग वेश भूषा निर्धारित की गई उसके लिए कठोर नियम बना दिये गए रो–रो कर अपना जीवन पार करने वाली नारी समाज का अनावश्यक अंग मात्र बन कर रह गई।

युद्ध जीवन की एक प्रमुख समस्या युद्ध में शहीद हो जाने वाले सैनिकों की पत्नियों की है। भारतीय समाज हो या कोई अन्य स्त्रियों की दशा पति अलग होकर बदतर हो जाती हैं। स्त्रियों का गौरव यौवन और प्रजनन की समता ही नहीं बल्कि उनके सौभाग्य पर आश्रित होता है। विधवाओं का समाज में वैसा सम्मान नहीं प्राप्त

। एक ओर तो पिता की सम्पत्ति में उसे हिस्सा नहीं दिया जाता दूसरी ओर विधवा हो जाने पर ससुराल में कष्ट प्रताडना एवं उपेक्षा का सामना करना पड़ता है। कहीं तो स्त्री जाति गौरव उसके सतीत्व एवं महत्व के मानने की परम्परा है। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में नारियाँ अपने मृत पति का अनुसरण करती हुई शमशान को वरण कर लेती हैं और अपने जीवन का अंत कर लेती हैं। भारतीय समाज में औरतों को मर्दों का गुलाम बना रखा है वह जैसा चाहे उनका इस्तेमाल करे इस प्रकार की धारणा ने भी उन्हें गुलाम बना दिया। फिर वैधव्य का जीवन हो जाने पर समानता, न्याय, एवं व्यक्तित्व की गरिमा को बनाए रखना औरतों के बारे में और कठिन है। वैधव्य जीवन नारी की दायण अवस्था है ऐसी अवस्था में वो पैरों की जूती बनकर न तो अपनी लड़ाई लड़ सकती है और न हीं समाज की।

विधवाओं का सर्वेक्षण करने से भी यह पता लगाया जा सकता है कि उनके साथ कितना भेदभाव और अत्याचार किया जा रहा है। अर्थ सामंती में पुरुष प्रधान होने के कारण भारतीय स्त्री या तो पुरुष के हाथ से बंधी रही या पूंजी से अथवा धर्म से। दूसरे शब्दों में इस प्रकार भी कह सकते हैं कि मानव समाज के जितने रूप है वे प्रकारान्तर से नारी का शोषण ही करतें हैं विशेष रूप से वैधव्य जीवन तो सामाजिक अभिशाप की भॉति होता हैं।

विधवा का जीवन तो करुण है ही किन्तु बाल विधवा का जीवन तो करुण का मूर्तिमान स्वरूप ही है। जिसमें वह अपनी क्षति से स्वयं ही अनभियज्ञ रहती है। जीवन के अवाकाल में ही वैधव्य से शापित हो जाने वाली यह बाल विधवा अपने भावी दुःख से भी अंजान रहती है।बाल विधवा हमारी युद्ध प्रियता की ही देन है कि युद्ध

में बच्चे भी सैनिक बन युद्ध भूमि में दिखाई देते हैं जिसका करुण दृश्य बाल विधवा के रूप में सामने आता है।इस अवस्था में अपने पति के काल कवलित हो जाने के कारण युवावस्था में पहाड़ जैसी जिंदगी जीने को मजबूर हो जाती हैं उन्हें समाज द्वारा निर्धारित भोग विमुख तपोत्याग मय संयमित रूप में जीवन जीना होता है। वह जिनका अबोध अवस्था में विवाह हुआ और अब वह विधवा है। जिससे वह किसी भी प्रकार के श्रृंगार अथवा भेग –विलास का अधिकार नहीं हैं इन विधवाओं को पति को खा जाने वाली के रूप में प्रताडित किया जाता है।

युद्ध से उत्पन्न प्रमुख समस्याओं में नारी की वैधव्य स्थिति भी हैं। इस सम्बन्ध में आधुनिक युद्ध परक काव्यों में आधुनिक कवियों ने उनका संकेत विभिन्न रूपों में किया है। साथ ही बालविधवाओं के करुण क्रंदन को भी काव्य में लिपि वद्ध किया गया हैं। वैधव्य से सम्बन्धित कतिपय दृष्टांत इस प्रकार है–

''अंधायुगों' में दूसरे प्रहरी ने कौरव वंश की जिन महारानियो को रत्न जड़ित फर्शों पर मंथर गति से सुगन्धित पवन तरंगों सी देखा था आज वे उनके विधवा पन को देख रहे हैं–

''जिसके इनरत्ना जटित फर्शों पर
कौरव –वधुएं
मंथर–मंथर गति से
सुरमित पवन –तरंगों–सी चलती थी
आज वे विधवा हैं !''[31]

इस युद्ध में गांधारी के एक–एक करके सभी पुत्र मारे गए जिसकी वेदना से मरी गांधारी विदुर के पास माता शब्द का संबोधन सुनकर कहती है कि कृष्ण भी माता ही कहता था जो मेरे पुत्रों की मृत्यु का कारण है। इस लिए यह शब्द मुझे जलते हुए लोहे की सलाखों सा मेरी पसलियों में घसता है। वह कहती है कि मैने अपनी पुत्र बधुओं के सौभाग्य की प्रतीक चूड़ियों तथा सिंदूर को अपने हांथों से उतारा हैं। और वैधव्य को स्वीकारना गांधारी के लिए असहाय था।–

''मेरे सब पुत्र एक–एक कर मारे गये
अपने इन हांथों से
मैने उन फूल–सी–बधुओं की कलाइयों से चूड़ियाँ उतारी हैं
अपनी इस आँचल से
सेंदूर की रेखाएँ पोंछी हैं। ''[32]

महायुद्ध का आयेजन अनेक समस्याओं को जन्म देता हैं। युद्ध भूमि में सैनिकों के हताहत होने की लागत किस प्रकार लगायी जा सकती है, क्योंकि इस त्रासदी का प्रतीक विधवाओं के रूप में दिखाई पड़ता है। 'कुरुक्षेत्र' में हुए भीषण युद्ध में जो हानि हो रही थी उसकी पूर्ति किसी भी तरह नहीं की जा सकती। कवि के शब्दों में – ''बुझने लगी सिंदूरी आग–
बिंदी की अरुबाई।
लगे झुलसने ममता–मंदिर

मलिन हुई तरुणाई।''[33]

एक व्यक्ति से जुड़े भावनात्मक रिश्ते युद्ध में किस तरह आहत होते हैं जिसकी पीड़ा को जीवन भर भुलाया नहीं जा सकता कवि के शब्दों में –'' पुत्र मृत्यु के लिए पिता रोने को,

माँ धुनने को सीस, वत्स आँसू पीने को,

लुटने को सिंदूर,

उत्वराएँ विधवा होने को।''[34]

युद्ध के विनाशक दृश्यों से गांधारी की मार्मिक दशा दिखाई गई है वह विधवाओं की करण पुकारे सुन–सुन कर आहत हो रहीं हैं निम्नपंक्तियों में कवि ने विधवाओं की वेश भूषा एवं वन्दना को चित्रित किया है।

'' ये सैकडों मग्न युग्म सारसी –सी स्त्रियां,

सब प्रिय मृत्यु से दशित होकर,

करती हैं कैसी आर्त्त पुकारें?

जैसे कभी ये नहीं शांत होगी !

और आधी दबी उसांसे निकल रहीं हैं,

मानों धरित्री सिसकियाँ ले रही है। ''[35]

गांधारी अपनी पुत्री दुःशाला के वैधव्य को देखकर उसके हृदय विदारक रोदन को सह नहीं कर पा रही, जहाँ उसका पति जयद्रथ निष्प्राण लेटा है कवि के शब्दों में–

''यह दुःशला, मेरी आत्मजा का

हृदय विदारक रूदन

निष्प्राण जयद्रथ के लिये।''[36]

भानुमति जिसने अपनी पति एवं पुत्र दोनों को युद्ध में खो दिया पहले अपने पुत्रवों को फिर अपने पति को खोकर उसके साहचर्य में गुजरे दिनों का स्मरण करे तथा उसके वृद्ध माता–पिता के प्रति उत्तरदायित्व निर्वाह के प्रश्न को भी उठाती है तथा अपने विस्मरण की भी चर्चा करती है। कवि के शब्दों में–

'' होकर गदा विमुख, सोने वाले हे नाथ,

हे युद्ध प्रिय, संगिनी को भुला दिया क्या ?

परिधि बाहुओं में समाती थी प्रतिदिन

वहां है आज रंगराती कोई दयिता।

\+ + + +

जिसको में सुख से पंखा झेलती थी,

उसको व्यंजन कर रहे विहंगपंख नभ से।

लक्ष्मण के प्रति

प्रणय की रीति यह कैसी दिखाई,

हे प्रिय पुत्र के अनुगामी होकर।

भूल गए क्या, वृद्ध जनक की क्या होगी स्थिति आप स्वर्ग जाने पर ?

भुला दिया इस दासी को ?"[37]

देश रक्षार्थ युद्ध में शहीद हुए सैनिकों की विधवाओं के संदर्भ में संवेदनापरक उद्‌गार निम्नलिखित हैं–

"मंदिर की प्रतिभा है या करूणा की कविता

किसी दिवंगत सैनिक की वह विधवा जाया। "[38]

गांधारी महाभारत के हुये घोर विनाशक युद्ध के परिणाम स्वरूप जब वहाँ पहुँचती है तो हस्तिनापुर की अनागनत स्त्रियों के बिलाप की आवाजें सुनाई देती है–

"किसकी जय के लिए प्रिये

न्योछावर कर दी काया ?

\+ + + + +

कहाँ है हाथ वह नृप धर्म राजा

वह धर्मिष्टता कहाँ गई आपकी

कि हुई ऐसी दशा हमारी ?"[39]

'प्राचीन' के कवि उमाशंकर जोशी नें उत्तर।

एवं अभिमन्यु के पौराणिक चतित्र के द्वारा समाज में व्याप्त बाल विधवों की समस्या को चित्रित किया है। उत्तर ा के विलाफ को हम निम्न पंक्तियों में देखे कि कैसे वह विशिप्त अवस्था में अपने पति के शव से प्रश्न करती है किन्तु उत्तर न मिल पाने पर उसके द्वारा किये गए पूर्व व्यवहार का स्मरण भी करती जाती है। कवि के शब्दों में–

"प्राण, हे प्रणय वीर, प्रीतम

ऐसा मूक लेकर सोता है क्योंकि ?

पूंछ रही है नववधू सुह्रदयवर !

उत्तरा को नहीं देगा क्या ?

अभी तो दूर भी नहीं हुई थकान भी वेसी की

इतने में ही वल्लम तूने कहाँ किया न प्रयाण?

अभी तो दहसे उपर सातवां मास है यह !

उत्तरा को उत्तर नहीं देगा क्या ?

यो ही हंस–हंस कर तू आता था?

मन को खूब भाता था

बिना पूंछ ही प्रियपति मधुर बोलता था।

उत्तरा को देगा नहीं क्या ?''[40]

वैधव्य जीवन की समस्या सामने आई है उसे देखकर युधिष्ठिर कहते हैं कि क्या हम सहस्त्र अनाथ विधवाओं के अजस्त्रधार आंसुओं को देखने के लिए बचें हैं। हाय द्रौपदी के सौभाग्य को बचाने के लिए करोड़ों ललनाओं का सिंदूर पोंछ दिया गया।

कारगिल युद्ध के दौरान हजारों सैनिक शहीद हो गये जिसमें वैधव्य की समस्या आई, इसे कवयित्री सौभाग्य को प्रतीक चूडियों एवं माँग के सिंदूर को पोछते हुये व्यक्त कर रही है–

''माँग का सिंदूर खन–खन चूड़ियों की मिट गई,

देह माटी की बनी थी, वह उसी में मिल गई।

सर्वस्व अर्पण करने उन जवानों को नमम,

खूनी आँखों को नमन रिस्ते जख्मों को नमन।। ''[42]

जयद्रथ वध एवं 'युद्ध' नामक काव्यों में अर्जुन की पुत्रवधु एवं अभिमन्यु की नवोढ़ा पत्नी का चित्रण है। अभिमन्यु वध पर उत्तरा करुण विलाप करती है, उसकी यह अवस्था इतनी बढ़ जाती है कि वह प्रलाप करने लगती है। वह जानती है कि अभिमन्यु मृत्यु की गोद में सो गये हैं निम्न पंक्तियों में दयनीय स्थिति देखी जा सकती है–कवि के शब्दों में–

'' मैं हूँ वही जिसका हुआ था ग्रंथि–बन्धन साथ में,

मैं हूँ वही जिसका लिया था हाथ अपने हाथ में,

मैं हूँ वही जिसका किया था विधिविहित अर्द्धागिंनी

भूलों न मुझको नाथ हूँ मैं अनुपरी चिरसंगिनी।''41

युद्ध की कूरता का उपहास करता हुआ नारी का यह करूण रूप आधुनिक में अनेक रूपों में अंकित हुआ है। विधवा के करुण कंदन को कवियों में विविध प्रकार से वाणी देने का प्रयास किया है।

(द)–विकलांग जीवन की समस्या–

शरीर के किसी अंग का न होना या अपंग हो जाना ऐसी स्थिति है कि जिसमें साधारण जीवन विताना बहुत कठिन होता है। ऐसी समस्या से ग्रस्त व्यक्ति आमतौर पर दूसरों की कृपा पर आश्रित होकर या भिक्षावृत्ति द्वारा अपने जीवन का निर्वाह करते देखे जाते हैं। उन्हें शारीरिक विकलांगता के कारण जितनी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है, उससे कहीं अधिक मानसिक अपंगता से उठानी पड़ती है। समाज उन्हें दया का पात्र, अभागा, बेचारा, दैवीय प्रकोप से प्रताडित एवं भिक्षुक के रूप में स्वीकार करता है। समाज की ऐसी चिंतन पद्धति के साथ उसका विश्वास अपने बारे में दृढ़ हो जाता है कि मैं अभागा हूँ दुर्भाग्य ग्रस्त ही जन्मा हूँ, मुझमें कुछ भी कर सकने की सामर्थ्य नहीं। अतः दूसरों पर आश्रित होकर जीने की बात सोचता है। नकारात्मक प्रश्नों के

बाद में वह उलझकर रह जाता है और अपने पैरों में खड़े होने का मनोबल भी समाप्त हो जाता है। युद्ध में सैनिकों के अंगों की टूट–फूट रूप सामान्य जन का प्रभावित होना बहुत बड़ा दुर्भाग्य है। क्योंकि ऐसी स्थिति में उनका मनोबल खो जाने असामान्य बात नहीं है। युद्ध की भयकरता के विध्वंसकारी परिणामों का इतना गहरा अघात पहुंचा है। कि विकलांगता से ग्रस्त समूह में मनोबल का जगाना दुष्कर कार्य होता है युद्ध के पश्चात विकलांगता का जीवन जी रहे सैनिक एवं सामान्य जन अपने दुर्भाग्य पर रोते हैं। हम विकलांगों के प्रति दया और सहानुभूति के भाव तो दिखातें हैं किन्तु उन्हें अधिकारों से वंचित रखते हैं, जो समाज के अन्य व्यक्तियों को प्राप्त हैं। समाज का यह द्विमुखी व्यवहार विकलांगों को समाज की मुख्य धारा से मार देता है। और उसके मनमें हीन भावना कर देती है तथा समाज का अमर्यादित व्यवहार उसे असत्य लगता है।

यह समस्या विश्व व्यापी समस्या है क्योंकि युद्ध होते ही रहतें हैं। वर्तमान में युद्ध आधुनिक हथियारों से लड़ा जाता है।उसकी भारक क्षमता अधिक होने के कारण बड़ी संख्या में लोग मारे जाते हैं किन्तु घायल लोगों की संख्या इससे कहीं अधिक रहती है। युद्ध में पौरान एवं उसके बाद तबाही ही तबाही दिखाई देती है। मनमाना मूल्य वृद्धि होती है। गरीब लोग भुखमरी की समस्या से जूझतें है, अनेकानेक बीमारी एवं महामारियों हथियारों के प्रभाव एवं सड़ती हुई लाशों की गंध से पैदा होती है, राष्ट्रीय की प्रतिरोधक समता का ह्रास होता है। एक जगह से दूसरे जगह स्थापित होने के बीच भी विकलांगता के शिकार होते लोग मिलते हैं। तथा सामाजिक विकलांगता से रूबरू होते हैं। द्वितीय महायुद्ध में तमाम देशों के सैनिक भारी तदात में घायल और (विकलांग) हुए, विकलांगता का सबसे विकराल रूप हमने इस युद्ध में देख लिया था किन्तु युद्ध थमें नहीं और यह समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। विकलांग सैनिकों एवं युद्ध से प्रभावित जन समान्य में सामाजिक दृष्टि कोण बहुतटनीय है।– यह शारीरिक, मानसिक, एवं आर्थिक कष्ट भोगते हुए भूख से मर रहें है जो सेना में स्वाभिमान से जाते हैं वे युद्ध के बाद भीख मांगने को मजबूर हो जाते है, जहाँ न भीख देने वाला होता है न ही कोई पदार्थ जिससे वह अपने जीवन की रक्षा कर सके। विकलांग को अपने जीवन में अपार पीड़ाएं सहन करनी पड़ती है। अपने जीविकों पार्जन के लिए जब वह किसी उद्दम को करने की सोचते है तो समाज उन्हें अविश्वासनीय एवं गैर जिम्मेंदारी की दृष्टि से देखकर अनदेखा कर देते हैं नेत्रहीन एवं श्रवणहीन व्यक्ति कल्पना एवं एकाग्रता की कमी को देखतें है, कभी संक्रामक मानकर अपने से अलग कर देते है, विकलांगों की बौद्धिक समता की अनदेखी करते है, उनकी यौन क्षमता को भी विकृत मान लिया जाता है। समाज में रहने के लिए विकलांग व्यक्ति को संघर्ष से जूझना पड़ता है अन्यथा संघर्ष के अभाव में उसका भविष्य अंधकार मय बन कर रह जाता है।'' युद्ध की गति विधियों में ऐतिहासिक पात्र 'रांणा सांगा' ने एक आँख, एक हाथ और एक पैर खो कर अपना जीवन व्यतीत किया। इसी प्रकार 'तैमूर लंग' को ले सकते हैं जो युद्ध में घायल होकर विकलांग का जीवन जीने को मजबूर हो गया। अमीर खुसरों ने एक रात तैमूर के खेमें में घुसकर लड़ाई प्रारम्भ कर दी। तैमूर व उसके वीर साथी बहादुरी से लड़े, इसलिए तुर्की दुश्मनों ने उपहास करने के लिए उसका नाम तैमूर लंग रख दिया, जिससे उसे आगे विकालांग के रूप में जीना पड़ा। 'अलैक्सेई मरैक्सेव' रूस का पायलट था जो द्वितीय विश्व युद्ध में चार जर्मन विमानों से घिर गया था, विमान युद्ध में उसकी चमड़ी जल गई तथा टूटी हुई टाँगों को लेकर अठारह

दिनों तक भूखा–प्यासा जंगल में घसिटता रहा। बाद में रूसी सैनिकों की मदद से अस्पताल पहुँचाया गया जहाँ वरिष्ट डाक्टरों ने बताया कि इसके दोनों पैर में कम्पाइडं फ्रेक्चर है। ''43

आधुनिक युद्ध–परक कव्यों में भी युद्ध के बाद विकलांगता की त्रासदी का चित्रण किया गया है। महायुद्ध की भयंकरता के परिणाम स्वरूप विकलांग जीवन की समस्या आती है। जिसे आधुनिक युद्ध परक काव्यों में व्यक्त किया गया है।

आधुनिक युग के कवियों में धर्मवीर भारती ने 'अंधायुग' में युद्ध से उत्पन्न विकलांग समस्या का रेखांकन अपने शब्द चित्रों के मध्यम से किया है। अंधायुग के तुतीय अंक से एक उदाहरण दृष्टव्य है, एक पंगु गूँगा सैनिक घिसता हुआ आता है विदुर के पाँव पकड़कर उन्हें अपनी ओर आकर्षित कर है। चिल्लू से संकेत कर पानी मांगता है विदुर उसे देखकर आह मात्र करते है और उसके लिए प्रहरी से जललाने को कहतें हैं धृतराष्ट्र पूछते हैं, कौन है विदुर, वह कहते है, प्यासा सैनिक है जो गूँगा है जाने क्या–क्या कहता है धृतराष्ट्र पूछते हैं ये क्या कह रहा हैं। विदुर कहते हैं महाराज की जय बोल रहा है, गूंगा है जिह्वा कटी है। इस प्रकार विदुर धृतराष्ट्र के युद्धोपरान्त की सही स्थिति का बोध कराते हैं। कवि के शब्दों में–

''जय हो धृतरा्र की?
जिह्वा कटी है महाराज!
गूंगा है।
गूंगों के सिवा आज
और कौन बोलेगा मेरी जय।''[44]

यही गूंगा सैनिक युयुत्सु कोदेखकर गहरी पीड़ा से भ्ज्ञर जाता है, जिसे देखकर विदुर को उसके दम तोड़ने का भ्रम होता है, युयुत्सु भी उसकी सेवा–सुश्रुषा हेतु पहुंचते हैं, किन्तु जैसे ही वह गूंगा आंखें खोलता है सहसा चीखता हुआ गिरता, पड़ता, घिसलता भागता है। प्रहरी उसके इस व्यवहार को देखकर हतप्रभ रह जाते हैं, तब युयुत्सु इसके व्यवहार परिवर्तन के कारण को स्पष्ट करते हैं। कवि के शब्दों में–

''मैं ही अपराधी हूं
यह था एक अश्वारोही कौरव–सेना का
मेरे अग्निबाणों से
झुलस गए थे घुटने इसके
नष्ट किया है खुद मैंने
जिसका जीवन
वह कैसे अब
मेरी ही करुणा स्वीकार करे।''[45]

प्रहरियों के वार्तालाप से मानसिक विकलांगता का चित्र भी सामने आता है। कवि के शब्दों में–

''कोई विक्षिपत हुआ

को शाप ग्रस्त हुआ''[46]

धृतराष्ट्र जो जन्मान्ध है वह भी आज विकलांग सैनिकों को छूकर अनुभव कर पा रहे हैं कि कटा हुआ हाथ उन्हें अपने सिंहासन का हत्था जैसा लग रहा है, यह त्रासद घटना भी उनके सिंहासन के इर्द–गिर्द ही घूमती है। कवि के शब्दों में–

''देख नहीं सकता हूं
पर मैंने छूकर
अंग–भंग सैनिकों को
देखने की कोशिश की
बांह के पास से
हाथ जब कट जाता है।
लगता है वैसा जैसा मेरे सिंहासन का
हत्था है।''[47]

आज युधिष्ठिर के राज्य में बच्चे भी विकलांग होकर घूम रहे हैं। कवि के शब्दों में–

''........लंगड़े, लूले, गन्दे बच्चों की
एक बड़ी भीड़ उस पर ताने कसती
पीछे–पीछे चली आती है।''[48]

युद्ध में हजारों की संख्या में सैनिक विकलांग हो जाते हैं, असैनिक क्षेत्र के लोगों पर भी इसके दूरगामी परिणाम दिखाई देते हैं। कवि में विकलांगों की समस्या दिखाकर उनके दुःख दर्द की दास्तान निम्न पंक्तियों में की है–

''हो विकलांग कोटि नर नारी
अति दारुण दुःख पाए थे।''[49]

कवि शील ने मनुष्य के स्नायुतन्त्र पर पड़ने वाले प्रभाव को चित्रित किया है इससे मानव की सोचने समझने की शक्ति ह्रास होता है और वह मानसिक विक्षिप्त सा हो जाता है। कवि के शब्दों में–

''मनुज की ज्ञान शिखा बेकार हुई,''[50]

युद्ध में तन्त्रिका–तन्त्र को प्रभावित करने वाले ऐसे–ऐसे रसायनों का प्रयोग किया जाता है जो अपने प्रभाव से मानसिक विकृति उत्पन्न करने, केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र की .चेष्टाओं को दबाने व रोकने तथा उनमें आवश्यकता से अधिक वृद्धि कर देते हैं। इन रसायनों के प्रयोग से सैनिकों में अन्धापन व बहरापन भी उत्पन्न हो जाता है जिससे सैनिकों की कार्यक्षमता प्रभावित होती है। दृष्टिदोष, घ्राण क्षमता, सिर में चक्कर आना, मांस–पेशियों में ऐंठन, श्वसन में कठिनाई, खुजलाहट, चर्म पर फफोले, उल्टी बुखार आदि विकृतियां भी देखी जाती हैं।

युद्ध में विकलांग होकर शहीदहो जानेवाले सैनिकों के परिजनों को अपार कष्ट झेलने पड़ते हैं किसी का धड़ अलग हो चुका है,तो किसी की बांह, जिन्हें शव से भरे मैदानों में ढूंठना, विकलांग होकर जीवन समाप्त हो जाने के कष्ट से कम नहीं होता। इससमस्या को हम 'प्राचीना' काव्य कृति के माध्यम से देख सकते हैं–

"चलो, हटो, यह तो धड़ है मेरे ही स्वामी का प्रतापी इन हाथों को पहुंचा नहीं हूं,
देखो, यह उनका सिर उसके साथ
मानों बरगद के श्रृंग पर मयंक।"[51]

गांधारी इन कातर ध्वनियों को सुनकर अपार पीड़ा को सहने करती है जबकि यह देखा औरसुनना दोनों ही उसके लिए असहाय है–

"ढूंढने में असफल कोई अपने पति का हाथ,
कोई पहचान नहीं सकती सिर,
झगड़ पड़ती हैं किसी एक धड़ के लिए
दो सखियां
कोई अंगना स्वामी की देह से
दूर उड़ा नहीं पाती गीधों के समूह को।
और कोई व्याकुल, कहीं भी
पति का एक भी अंग नहीं पा रही।"[52]

'अन्धायुग' में संजय, गांधारी को अश्त्थामा द्वारा धृष्टद्युम्न पर किए गए प्रहार को इस प्रकार चित्रित करते हैं–

"आंखों के कटोरे से दोनों साबित गोले
कच्चे आमों की गुठली–जेसे उछल गए
खाली गड्ढों में काल लहू उमड़ पड़ा।"[53]

6/य

(य)– स्वतन्त्रता एवं सृजन की समस्या–

स्वतन्त्रता मानव का मूल अधिकार माना गया है,आधुनिक युग में स्वतन्त्रता को जीवन का सबसे बड़ा मूल्य माना है। सामन्तवादी युगों में स्वतन्त्रता को भले ही मूल्य के रूप में न स्वीकार किया गया हो, किन्तु आधुनिकता तो स्वतन्त्रता धारित है। स्वतन्त्र विचार, स्वतन्त्र गणराज्य, स्वतन्त्र चिन्तन आदि गुटनिरपेक्षता के आधारभूत सिद्धान्त हैं अतः आधुनिक हिन्दी कविता में इस स्वाधीन भावना को विशेष महत्व दिया गया है। "हमें प्रत्येक मानव–प्राणा को उसकी अपनी आत्मा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करने देना होगा और प्रत्येक राष्ट्र को चाहे कम अशक्त होया सशक्त, छोटा हो या बड़ा, जीव और परीक्षण की स्वतन्त्रता का अधिकार देना होगा।"54 आधुनिक कवि के शब्दों में– "गम्भीरतम परम्परा को लाभ के लिए बुराइयों पर विजय प्राप्त की जा सकती है। मनुष्य अभी इतिहास के आरम्भ पर ही है अन्त पर नहीं, वह प्रेम और भक्ति का, सत्य और सृजनशीलता का एक संसार रचने के लिए प्रयत्नशील है; एक ऐसा संसार, जो सही अर्थों में अभी उत्पन्न नहीं हुआ है।"55

स्वाधीनता के लिए आधुनिक कालखण्ड में राष्ट्रीय कवियों का योगदान उल्लोनीय है मैथिलीशरण गुप्त, रामधारी सिंह 'दिनकर' बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सोहनलाल द्विवेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान आदिनेस्वाधीन भारत के लिए अपनी सर्जनात्मक चेतना काप्रयोग किया। इसी परम्परा का अगला चरण आधुनिक हिन्दी कविता में युद्धपरक

कविताओं में भी दिखाई पड़ता है, एक राष्ट्र दूसरे से विचार, सिद्धान्त आदि सभी में अपना पृथक अस्तित्व रखना चाहता है यही स्वतन्त्र सत्ता का प्रश्न चिन्ह आवश्यक है।

किसी भी राष्ट्र में जीवन की प्रक्रिया सतत् चलती रहती है, किन्तु युद्ध के दुष्परिणाम सृजन की समस्या उत्पन्न करदेते हैं। चलता फिरता जीवन कुछ ही क्षणों में विराम पा लेता है, मूक हो जाता है, ऐसे में सर्जनात्मक ऊंचाई को कैसे प्राप्त किया जाए? अपने अन्तर्मन को साधते हुए लम्बी आन्तरिक एवं बाह्य यात्रा से गुरजना पड़ता है तब कहीं जाकर सृजन का सुख प्राप्त होता है। युद्ध से पूर्व ही उसके सृजन की थकान पूरी नहीं हो पाती कि उसके समक्ष अनेक बाधाएं उपस्थित होती हैं जिन्हें कटकर वह पुनः सृजन कर्म करता है। सर्जना समर्पण मांगती है जो सतत् साधना से प्राप्त होती है और यह समर्पण मनुष्य ही कर सकता है। सृष्टि के नवीन, सुन्दर बिखरे हुए रूप को पुनः बनाने के लिए तल्लीन होकर कार्य करना पड़ता है। पृथ्वी पर उपलब्ध सारे सुख समाप्त हो जाते हैं। अतः वह निराशा के अन्धकार में डूबे स्वर्ग की नींव कैसे डाले। इसे पुनः स्वर्ग सा बनाने के लिए बहुत श्रम करना पड़ेगा, किन्तु मनुष्य इस श्रम शक्ति को कैसे प्राप्त करें! अपनी निराशा को आशा में कैसे परिवर्तित करे; युद्ध की विनाशलीला से मानो समय ही रुक जाता है, किन्तु धरती में सुख के फूल खिलाने का कार्य नए सिरे से करना है। इसके लिए उत्साह के साथ पूर्ण निष्ठा से कार्य करना चाहिए। यह सर्व विदित है कि युद्ध जैसे विध्वंसक कार्य से मनुष्य की जीवनी शक्ति अर्थात मनोबल खण्ड–खण्ड हो जाता है, वह क्या सोचकर सृजन कर्म में प्रवृत्त हो कि अब युद्ध जैसे महाविनाशक परिणाम नहीं, विनाश के अन्धकार के बाद वह नव–निर्माण के सूय्र को उदय होते कैसे देखे इसके लिएउसे बिखरी सृष्टि के निर्माण की योजना करना तथा उसे समृद्ध बनाना होगा।

सृजनके लिए जरूरी है कि मनुष्य की चेतना किसी वाद से ग्रस्त न हो कोई भी महान लेखक या रचनाकार वही होता है जो वादों के घेरे से युक्त होकर अपना सृजन कार्य करता है। दुर्भाग्य से हिन्दी साहित्य में सृजनात्मक स्वतन्त्रता को इतना महत्व नहीं दिया गया, यदि दिया गया होता तो वादों के आधार पर साहित्य का बंटवारा न किया गया होता किसी भी महान साहित्यकार या उसकी कृति को किसी संकीर्ण विचारधारा में नहीं बंधा होना चाहिए अथवा वह दलगत या पार्टी का साहित्य हो जाएगा। प्रेमचन्द्र प्रगतिशील रचनाकार है, किन्तु वह मार्क्सवाद के चौखटे में नहीं बांधे जा सकते। यही स्थिति फणीश्वर नाथ रेणु की भी है। आधुनिक हिन्दी कविता में अनेक वादों का प्रादुर्भाव हुआ फलस्वरूप आधुनिक हिन्दी कविता भी विभिन्न दलों एवं दलीय आयोजकों की शिकार हो गई, जबकि इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहन नहीं दिया जाना चाहिए।

सृजन की समस्या सृजन के सवाल को लेकर चिन्तकों के दो वर्ग हो गए एक वह जो किसी पक्ष से साहित्य को समबद्ध करके लिखना चाहता है,दूसरे वह जो उसको दल से मुक्त रखना चाहते हैं। हिन्दी युद्ध काव्यों में मार्क्सवादी कविता में प्रायः जनमोर्चों की चर्चा की है और यह पूंजीवाद के विरोध में आक्रामक तेवर रखते हैं, किन्तु ऐसे रचनाकार स्वयं पूंजीवादी व्यवस्था में जीवन जीते हैं। अतः व्यावहारिक स्तर पर सृजन की स्वतन्त्रता का एक मौलिक प्रश्न है। आधुनिक कविता के प्रसंगों से इस बिन्दु पर हम विचार करेंगा कि किन कवियों और रचनाकारों ने किस–किस रूप में सर्जनात्मक चेतना का विकास किया है क्योंकि सृजनऔर स्वतन्त्रता एकांगी

प्रक्रियाएं नहीं हैं उत्पत्ति और विनाश सदा साथ रहते हैं। जन्म के साथ ही मृत्यु की क्रिया आरम्भ हो जाती है। यह संसार अनादिकाल से सृजन और स्वतन्त्रता के लिए कार्य करता रहताहै। स्वतन्त्रता और सृजन का यह समन्वित रूप सतत् प्रगतिशील है। प्रत्येक क्षण सृजन एवं स्वतन्त्रता के उत्कर्ष एवं अपकर्ष का क्रम चलता रहता है। युद्ध के पश्चात स्वतन्त्रता और सृजन तो मिट्टी की फसल बनकररह जाते हैं। स्वतन्त्रता एवं सृजन की समस्या का विवेचन हम युद्धपरक कृतियों के माध्यम से करेंगे जो निम्नलिखित है।

युद्ध के बाद अपनी स्वतन्त्रता को बनाए रखना एवं बिखरी वस्तुओं को पुनः नए रूप में प्रस्तुत करना बहुत कठिन कार्य होता है। युद्ध के पूर्व का सुख एवं युद्ध के बाद की पीड़ाएं दूर भी नहीं हो पातीं कि अपने अस्तित्व के लिए स्वतन्त्रता एवं सृजन की समस्या से निपटना जरूरी हो जाता है। नए सत्य के साथ सृजन की व्यथा लिए मनुष्य इधर–उधर भटकता फिरता है। 'एक कंठ विषपायी' में शंकर सती का झुलसा हुआ मुख सीधा करके देखते हैं जिसको देखकर वरुण सिहर कट बोलते हैं। कवि के शब्दों में–

''आह

नहीं देखा जाता यह परिवर्तन

ऐसी विकृति!

झुलसे हुए रूप का ऐसा

कटु आकर्षण!

भगवती सती के

शव में प्राण–प्रतिष्ठा कर दें,

तो भी क्या यह रूप

भोगने योग्य रहेगा?''[56]

'अन्धा युग' में श्री कृष्ण के द्वारा पूर्व विध्वंस पर नूतन सृजन की प्रेरणा देते हैं। मेरा दायित्व मानवमन के उस घेरे में विद्यमान रहेगा जिसके आधार से मानव अपीन हर परिस्थिति को पराभूत कर विनाश पर अभिनव सृजन करेगा। मानव के मर्यादित आचरण में, प्रतिदिन के नवीन सृजन में, ऐसे क्षणों में जिनमें निर्भीकता, साहस और मानव–प्रेम की अभिव्यक्ति होगी, मैं बार–बार जीवित हो जाऊंगा और युग के संचालन में क्रियाशील हो उठूंगा। कवि के शब्दों में–

''लेकिन वे मेरा दायित्व लेंगे

बाकी सभी........

मेरा दायित्व वह स्थित रहेगा

हर मानव–मन के उस वृत्त में

जिसके सहारेवह

सभी परिस्थितियों का अतिक्रमण करते हुए

नूतन निर्माण करेगा पिछले ध्वंसों पर।

मर्यादायुक्त आचरण में

नित–नूतन सृजन में

निर्भयता के

साहस के

ममता के

रस के

क्षण में

जीवित और सक्रिय हो उठूंगा मैं बार–बार!''[57]

'परशुराम की प्रतीक्षा' में कवि ने स्वतन्त्रता को बाह्य नहीं अपितु आन्तरिक गुण माना है। स्वतन्त्र जीवन जीने के लिए मरण के मुख पर चरण रखने की प्रेरणा दी है। भारत–चीनयुद्ध के परिाम स्वरूप कवि ने स्वातन्त्र रक्षा हेतु ओज परक गीत गाकर जनमानस को स्वतन्त्रता को बनाए रखने के लिए जागृत किया है। कवि के शब्दों में–

''स्वातन्त्र जाति की लगन, व्यक्ति की धुन है,

बाहरी वस्तु यह नहीं, भीतरी गुण है।

नत हुए बिना जो अशनि–धात सहती है,

स्वाधीन जगत् में वही जाति रहती है।

स्वातन्त्र समस्या नहीं आज या कल की,

जागर्ति तीव्र वह घड़ी–घड़ी, पल–पल की।''[58]

'क्रान्तिदूत सुभाष' में स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु क्रान्ति के सृजन कोआवश्यक मानकर बार–बार क्रान्ति का सृजन करना चाहेंगे जब तक कि स्वतन्त्रता प्राप्त न हो जाए क्योंकि स्वतन्त्रता ही सभी कष्टों को दूर करने में सक्षम होती है। कवि के शब्दों में–

''इच्छा है जीवित रहकर मैं, पुनः क्रान्ति का सृजन करूं।

लड़ूं युद्ध स्वातन्त्र हेतु फिर, भारत मां के कष्ट हरूं।''[59]

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि युद्धोन्माद के शान्त हो जाने पर भी स्वतन्त्रता एवं सृजनशीलता की समस्या आती है किन्तु इसे मानवीय मूल्यों के आधार पर ही निर्मित किया जा सकता है।

6/2

(र)– प्रतिशोध की समस्या

प्रत्येक देश और समाज में कोई न कोई जाति सामाजिक शोषण और प्रताड़ना का शिकार रहती है, चाहे वे दक्षिण भारत के अब्राह्मण अर्था शूद्र हों या अमेरिका के गीग्रो अथवा अन्य क्षेत्रों में दीन–हीन बड़ी जातियां। जिस जाति का जितना दमन होता है उतना ही प्रबल इसका प्रतिशोध होता है। यद्यपि इन कुंठित जातियों के प्रतिशोधों और प्रतिहिंसाओं के परिणाम भयंकर निकले हैं दुर्बलों के प्रति सबलों के अत्याचार की कहानी संसार में बहुत पुरानी

है, इसलिए दुर्बलों के अन्दर सबलों के प्रति, प्रतिहिंसा के भाव युग–युग से संचित हैं। बदले की भावना मनुष्य में होना स्वाभाविक है क्योंकि जिस व्यक्ति या समाज से किसी को प्रेम या सद्व्यवहार प्राप्त होता है, बदले में वह भी उसे प्रतिदान स्वरूप प्रेम या सौहार्द प्रदान करता है। इसी प्रकार जब किसी व्यक्ति या समाज को किन्हीं कारणों से प्रताड़ित किया जाता है अथवा युद्ध आदि के उपक्रमों से द्वन्द्वित किया जाता है तो उसके मन में प्रतिपक्ष के प्रति शत्रुता का भाव पैदा हो जाता है और बदले में वह उस व्यक्ति समाज या राष्ट्र के प्रति आक्रामक रुख रखता है यही भावना प्रतिशोध की भावना कहलाती है।

प्रतिशोध की प्रवृत्ति किसी एक देश या काल को नहीं है हर काल खण्ड में ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनमें प्रतिशोध ा के कारण युद्ध हुए। आधुनिक काल में भी युद्धों का एक बहुत बड़ा कारण प्रतिशोध है प्रतिशोध भावना के कारण जो युद्ध हुए हैं उनका सन्दर्भ आधुनिक हिन्दी कविता में प्रतिफलित होता है जिसका आकलन हम यहां करेंगे–

'अन्धा युग' में अश्वत्थामा का चरित्र प्रतिशोध भाव को लेकर जीवन जीने का निर्णय लेता है, वह द्रोणाचार्य का एक मात्र पुत्र है जो अपने पिता की निर्मम हत्या का बदला लेना चाहता है एवं दुर्योधन की मित्रता को सही अंजाम देने के लिए प्रतिशोधी बन जाता है और पाण्डवों को अधर्म से मारने का निश्चय कर लेता है। कृपाचार्य उसे मर्यादित रहने को कहते हैं तो उसकी अन्तरात्मा कराह उठती है–

"सुनते हो पिता
मैं इस प्रतिहिंसा में
बिल्कुल अकेला हूं"[60]

वह सेनापति का पद प्राप्त करके अपने प्रतिशोध का पथ ढूंढना चाहता है। वहदुर्योधन को जो वचन देता है उसे निभाता है और प्रतिज्ञा करता है–

"सुनते हो कृत वर्मा
कल तक मैं लूंगा प्रतिशोध
सेना यदि छोड़ जाए
तब भी अकेला........"[61]

युधिष्ठिर के अर्द्धसत्य अश्वत्थामा प्रतिशोध की दारुण ज्वाला में सुलगता हुआ ध्वंस और संहार का जीवन सूत्र ग्रहण करता है बर्बर और अमानुषिक पशु बनकर अपना निर्णय देता है– "किन्तु नहीं जीवित रहूंगा अन्ध बर्बर पशु सा वध, केवल वध, केवल वध अन्तिम अर्थ बने मेरे इस अस्तित्व का।"[62] का प्रतिशोध वह कुंजर की भांति बनकर धृष्टद्युम्न को एवं पाण्डव कुल के भविष्य को समाप्त करके लेने का दृढ़ निश्चय करता है। कवि के शब्दों में–

"कुंजर की भांति
मैं केवल पदाघातों से
चूर करूंगा धृष्टद्युम्न को!
पागल कुंजर

से कुचली कमल–कली की भांति
छोड़ूंगा नहीं उत्तरा को भी
जिसमें गर्भित है
अभिमन्यु पुत्र
पाण्डव कुल का भविष्य।''[63]

दुर्योधन के सम्मुख वह धृष्टद्युम्न की हत्या को पिता के लिए लिया गया प्रतिशोध बताकर, मित्रता के लिए प्रतिशोध ा की भयंकर प्रतिज्ञा करता है। कवि के शब्दों में–

''मैंने प्रतिशोध ले लिया धृष्टद्युम्न से
पिता की पाप–हत्या का
किन्तु अब भी आपका प्रतिशोध नहीं ले पाया।
शेष है अभी भी,
सुरक्षित है उत्तरा
जन्म देगी जो पाण्डव उत्तराधिकारी को
किन्तु स्वामी
अपना कार्य पूरा करूंगा मैं।''[64]

जिह्वा कटा, लंगड़ा, भिखमंगा सैनिक, युयुत्सु पर पत्थर फेंककर वार करता है तथा वीभत्य हंसा हंसता है–

''प्रहरी, इस भिक्षुक को
किसने यहां आने दिया?
युयुत्सु! तुम मेरे साथ चलो।''[65]

वही भिमंगा सैनिक पाशविक संकेतों से कहता है कि युद्ध भूमि में इसने मेरे पांव तोड़कर मुझे विकलांग बना दिया अब मैं इससे प्रतिशोध क्यों न लूं। 'एक कंठ विषपायी' में महाराज दक्ष के मन में शंकर के प्रति प्रतिशोध की भावना तब जन्म लेती है जब सती अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति के बल पर शव को अपने पति के रूप में वरण करती है, किन्तु दक्ष अपने सम्मान की रक्षा के लिए इस कार्य को शिव की कूटनीति बताते हैं। इस कूटनीति का प्रारम्भ यज्ञ मे होता है वहाँ शंकर का आसन न बनाकर, कह शिव के स्वाभिमान एवं गौरव को नकार कर उनकी महत्ता की उपेक्षा करते हैं, सती पति की उपेक्षा से आहत होकर भस्म हो जाती है।सतीके अधझलसे शव को लेकर शंकर देवताओं के प्रति उनके मन में प्रतिरोध की भावना जन्म लेती है जो उन्हें देव लोक तक युद्ध करने के लिये विवश करती है। युद्ध के पश्चात अपनी मान–हानि का बदला लेने के उद्देश्य से उपेक्षित पात्रों में प्रतिरोध की भावना पुनः युद्ध की स्थिति तक पहुँचा सकती है कवि के शब्दों में–

''उमर–उमर बजने दो डमरू
होने दो ताण्डव त्रिलोक में
महादेव कीप्रतिहिंसा भी

देखे देव–समाज शोक में।''

रक्तपात एवं जनहानि के पीछे इन्द्र की युद्ध प्रियता जो शंकर की आक्रमणात्मक कार्यवाही के प्रतिशोध में धधकती रहती है युद्ध पूर्व के दुष्परिणाम देखकर ही सब भयंकर पीड़ा से जूझ रहे हैं, कवि के शब्दों में–

''मैंने– क्या सोंचा था ?
सचमुच– क्या सोंचा था।
मैं प्रतिहिंसा से पागलथा शायद।
शायद कुछ भी सोंच नहीं पाया उस क्षण।''

युद्ध का अंत युद्ध नहीं होता बल्कि युद्ध से एक नये युद्ध की शुरूआत होती है तथा प्रतिशोधों को लेकर युद्ध और प्रतियुद्ध चलता रहता है जो एक विकट समस्या है।

अम्बा के मन में भीष्मपितामह के प्रति प्रतिशोध कीभावना जन्म लेती हैकारण यह कि वह शल्व नरेश एवं भीष्मपितामह दोनों के द्वारा ग्रहण नहीं की जाती इसलिये वह भीष्मपितामह से इस जन्ममें क्या अगले जन्म तक प्रतिशोध लेने का दृढ़ निश्चय करती है कवि के शब्दों में–

'' अम्बा बोली परम पूज्य।
अब मैं वन में जाऊँगी।
कर कठोर–तप गंगा सुत।
के वध का वर पाऊँगी।।''[68]

राम–रावण का युद्ध प्रतिशोध कीभावना के कारण ही हुआ क्योंकि शूर्पणखा को लक्ष्मण द्वारा विरूपित बनाया गया, कुल–कन्या के सम्मान के लिये, अपने वंश एवं जाति की मान–मर्यादा बनायें रखने के लिये रावण ने भी सीता का हरण प्रतिशोध भाव से किया, प्रतिशोध के इस भाव को हम शिव बचन चौबे की काव्य–कृति 'त्रिजय' की निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं–

'' प्रतिशोध भावना से भरकर,
सीता को लाया था हर कर।
कर गया भयंकर पाप यहीं,
धर गया कुपथ पर लात यहीं।''[69]

'जयभारत' में द्रोणाचार्य के महान व्यक्तित्व में भी प्रतिशोध की भावना दृष्टिगोचर होती है, उनकी हरएक दृष्टि मान–अपमान की भावना से युक्त दिखाई पड़तीहै द्रुपद नरेश द्वारा एक बार उनका अपमान हो जाता है जिसका बदला लेने के लिये वे सदा प्रयत्नशील दिखाई देते हैं, उनके मनमें क्षोभ इतना बढ़ जाता है कि वे अपने शिष्य अर्जुन को इसका माध्यम बनाना चाहते हैं इसके सम्बन्ध में वे अर्जुन से कहते हैं–

''मेरी गुरू दक्षिणा नहीं रत्ना भरणों में
बाँध द्रुपद को शिष्य डाल दे इन चरणों में।''[70]

'युद्ध' काव्य एवं सैरन्ध्रीमें भीम के समक्ष युद्ध एवं संघर्ष के चित्र उपस्थित होते हैं जिसके फलस्वरूप प्रतिशोध

ा की भावना का जन्म होता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति की सहनशीलता समाप्त हो जाती हैऔर अपमानका बदला अपमान से ही लेने का निर्णय लेते है। दुर्योधन द्वारा किये गये दौपदी के साथ अपमान का बदला लेते हैं जिसमें दुर्योधन के साथ भीम का गदायुद्ध होते हैं जिसमें उसकी भयानकता निम्नपंक्तियों में दृष्टव्य है–

'' भीने जो आती हुई देखी कुछ क्लान्ति–सी,
करके स्मरण पुनः धूट–सभा काण्ड का,
कूद सिंहासन पर द्विगुणित वेग से,
वज्र सा प्रहार किया उर पर उसके,
गिर पड़ा योद्धा– 'धिक पापी। कहता हुआ।
'पापी मैं नहीं तू' यह कहकर भीम ने,
मारी एक लात और सिर पर उसके।
है है भी। बोल उठे कृष्ण–युधिष्ठिर भी,
अर्जुनादि का भी सिर नीचा हुआ लज्जा से।''[71]

'परशुराम की प्रतीक्षा' में रामधारी सिंह दिनकर
ने प्रतिशोध की भावनाको अनिवार्य माना
है इससे रहित मनुष्य को वह पापी की संज्ञा देते है, कवि के शब्दों में–

''जो चरम पाप है, हमें उसी की लत है,
दैहिक बल को कहता यह देश गलत है।
वह अघी, बाहुबल काप जो अपलापी है,
जिसकी ज्वाला बुझ गयी, वही पापी है।''[72]

कवि के ह्दय में प्रतिशोध की अग्नि प्रचण्ड़ थी क्योंकि भारत–चीन युद्ध में अपने देश की शान्ति नीति के कारण हीकई सों वर्ग मील भूमि से अलग हो पड़ा, कवि इस शान्ति नीति की भर्त्सना करता हुआ जनहा को प्रतिशोध लेने हेतु उत्प्रेरित करता है–

''गरजों, अम्बर को भरों रणोच्चारों से,
क्रोधान्ध रोह, हॉंकों से, हुंकारों से।
यह आग मात्र सीमा की नहीं लपट है,
मूढ़ों। स्वतन्त्रता पर ही यह संकट है।
कुत्सित कलंक का बोझ नहीं छोड़गें,
हम बिना लिये प्रतिशोध नहीं छोड़ेगें,
अरिका विरोध–अवरोध नहीं छोड़गें,
जब तक जीवित हैं, क्रोध नहीं छोड़ेगें ।''[73]

'कुरूक्षेत्र' में कवि ने युद्ध को अनिवार्य कर्त्तव्य एवं मानव धर्म के रूप में चित्रित किया है–

"चोट खा परन्तु, जब सिंह उठता है जाग,
उठता कराल प्रतिशोध हो प्रबुद्ध है;
पुष्प खिलता है चन्द्रहास की विभा में तब,
पौरूष की जागृति कहाती धर्म–युद्ध है।"[74]

'अग्नि संभवा' काव्य कृति में द्रोपदी के प्रतिशोध भाव का परिणाम ही महाभारत कायुद्ध है वह अपने प्रतिशोध के लिये शोध कररहीहै कवि के शब्दों में–

"है धूम रहा अन्तस्तल में
जागा नारी का स्वत्व–बोध
कोमल उर का अति कठिन क्रोध
प्रतिशोध शोध" [75]

(ल)– अन्य समस्याएं–

युद्ध की भयंकरता किसी भी क्षेत्र को अपने प्रभाव से दूर नहीं रखती, प्रमुख समस्याओं के अतिरिक्त अन्य समस्याओं की भी चर्चा की जारही है जो युद्ध के बाद मनुष्य के समक्ष सुरसा के मुख के भाँति खडी होती हैं। अन्य समस्याओं को मैं सूक्ष्म दृष्टि रखते हुये प्रस्तुत कर रहीं हूँ जो निम्नलिखित हैं–

1– शरणार्थियों की समस्या–

जब तक दुनिया भर के देश अपनी एक आम सहमति नहीं बनाते तब तक युद्ध होता ही रहेगा और उपजेगी शरणार्थियों की समस्या। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अमेरिका में शरण लेकर रहने वाले अफगानिस्तान के नागरिक बहुत बेचैन हैं। शरणार्थियों को इस बात का दर्द बेमतलब मारे जाएगें लेकिनदूसरीतरफ उम्मीद यह है कि अमेरिका तालिबान को हटा देगा और अफगानिस्तान में सिरि सरकार की स्थान होगी वे फिर से अपने वतन और अपने लोगों के पास लौट सकेगें। कवि के शब्दों में शरणार्थियों की सारी समस्याओं का बयान उनका चेहरा कर रहा है–

" तुम्हें संगीन चुभती है, इधर हम चीख जाते है
सुनकर कारनामे सब यहाँ आँसू बहाते हैं–
सारी कथा शरणार्थी का चेहरा बयान करता हैं,
जो मृत्यु संवरण करता यह, जिहाद उसे महान करता है,"

'एक कंठ विषपायी' में युद्धोत्तर परिणामों में शरणार्थियों
की समस्या को उकेरा गया है दूसरे नागरिक द्वारा क्षेत्र
विशेष का युद्ध में बर्बाद हो जाना तथा वहाँ की जनता को अनेक कठिनाइयों का सामना करना
पड़ता है कवि के शब्दों में–

"मेरे उत्तरवासी
सब सम्बन्धी बेघरबार हो गये

सब शरणार्थी

सब शरणार्थी''[77]

सर्वहत शरणार्थी के रूप में देवलोक में प्रवेश करता है जिसके माध्यम से शरणार्थियों की बाधित स्वतन्त्रता एवं अस्तित्वहीनता का प्रतिपादन करता है कवि के शब्दों में–

'' मैं सुनता हूँ

मैं सब कुछ सुनता हूँ

सुनता ही रहता हूँ

देख नहीं सकता हूँ

सोंच नहीं सकता हूँ

और सोंचना मेरा काम नहीं

उससे मुझे लाभ क्या

मुझे तो आदेश चाहिये

मैं तो शासक नहीं

प्रजा हूँ

मात्र मृत्य हूँ

इसलिये केवल सुनना मेरा स्वभाव।''[78]

एक नागरिक पीड़ा भरी आवाजों में अपनी

विस्थापित हो जाने की व्यथा का खुला वर्णन मिलता है–

''इन हत्यारों ने हमले

रक्षा का आश्वासन देकर लूट लिया

भूमिछिन गई

आँखों का सारा आकाश खो गया।''[79]

'शरणार्थी शिविर' नामक कविता में कवि देवराज दिनेश ने शरणार्थियों की आन्तरिक एवं ब्राह्य वेदना को चित्रित किया है–

''अनतं वेदना किसे बता सके

न एक झोपड़ी कि सिर छुपा सके

न एक वस्त्र है शरीर ढक सके

महान शीत आ गया

गगन वितान तान कर खड़ा रहा।''[80]

''स्वदेश में बसे महान नागरिक

उन्हें पता लगा कि हम गुलाम है,

सब शरणार्थी

सब शरणार्थी''[77]

सर्वहत शरणार्थी के रूप में देवलोक में प्रवेश करता है जिसके माध्यम से शरणार्थियों की बाधित स्वतन्त्रता एवं अस्तित्वहीनता का प्रतिपादन करता है कवि के शब्दों में–

'' मैं सुनता हूँ

मैं सब कुछ सुनता हूँ

सुनता ही रहता हूँ

देख नहीं सकता हूँ

सोंच नहीं सकता हूँ

और सोंचना मेरा काम नहीं

उससे मुझे लाभ क्या

मुझे तो आदेश चाहिये

मैं तो शासक नहीं

प्रजा हूँ

मात्र मृत्य हूँ

इसलिये केवल सुनना मेरा स्वभाव।''[78]

एक नागरिक पीड़ा भरी आवाजों में अपनी

विस्थापित हो जाने की व्यथा का खुला वर्णन मिलता है–

''इन हत्यारों ने हमले

रक्षा का आश्वासन देकर लूट लिया

भूमिछिन गई

आँखों का सारा आकाश खो गया।''[79]

'शरणार्थी शिविर' नामक कविता में कवि देवराज दिनेश ने शरणार्थियों की आन्तरिक एवं ब्राह्य वेदना को चित्रित किया है–

''अनतं वेदना किसे बता सके

न एक झोपड़ी कि सिर छुपा सके

न एक वस्त्र है शरीर ढक सके

महान शीत आ गया

गगन वितान तान कर खड़ा रहा।''[80]

''स्वदेश में बसे महान नागरिक

उन्हें पता लगा कि हम गुलाम है,

गुलाम कान दीन है न धर्म है,

गुलाम के रहीम हैं न राम हैं।''[81]

युद्ध के बाद पड़ोसी देशों के शरणार्थी बहुत बड़ी संख्या में सीमा से जुडे दूसरे देशों में प्रवेश करने लगते है इससे दूसरे देश की जनसंख्या में एकाएक वृद्धि हो जाती है, जिसके दुष्परिणाम दूसरे देश की जनसंख्या को प्रभावित करते हैं। एक नजर हम स्वतन्त्रता संग्राम में विस्थापित विहार के नागरिकों की बदनसीबी को देखे कि वह पशुवत जीवन जीने के लिये मजबूर हैं; विभाजन के समय ये लोग पाकिस्तान चले गये। 1971 में पूर्वी पाकिस्तान में संग्राम छिड़ा जो आज बंगलादेश है ने पाकिस्तानी फौजी सरकार का साथ दिया वह अपने को विहारी इसलिये कहते हैं क्योंकि 1971 में विहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश की सीमा से लगे क्षेत्र से भागकर वह पाकिस्तान गये और वहीं बस गये। उनके सामने यह विकट समस्या तब आई जब वह जाकर पाकिस्तान में बसे, वहीं पूरी तरह से अपने को पाकिस्तान समझ लिया। विहार की सीमा से पूर्वी पाकिस्तान था अतः वहाँ बसने में आसानी हुई किन्तु वहाँ के बंगला भाषी मुसलमानों ने उन्हें अपनी विरादरी से अलग रखा। नवाज शरीफ चाहते थे, जो क्षेत्र बेनजीर के अधीन था इन्होंने खालिरा जिया से स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि यहाँ पर पहले से ही 10 करोड़ से ज्यादा अप्रवासी अवैध रूप से रह रहें हैं इससे हमें भारी आर्थिक और सामाजिक समस्याओं से जूझना पड़ा है अतः उन्हें बसा पाना सम्भव नहीं है आज तक इस समस्या का समाधान नहीं हो पाया। आधुनिक कवि श्री बृजराज सिंह तोमर ने 'बांग्ला विजय' काव्यकृति में शरणार्थियों की समस्या को दिखाया है और यह भी स्पष्ट किया है कि बांग्लादेश के उदय होने पर भारत को भी इन शरणार्थियों का बोझ उठाना पड़ा था।

''बालक वृद्ध युवा नर नारी

अपने–अपने प्राण बचाने

घुसने लगे हिन्द सीमा में

और चला यह क्रम दिन रात

इनकी भोजन–वास व्यवस्था

हेतु नित्य कोटिक मुद्राएँ

व्यय होतीं, जिसने भारत का

अर्थ तन्त्र ही दिया मरोड़''[82]

बांग्ला देश के उदय होने के बीच जो कार्यवाही चली उसमें लगभग एक करोड़ शरणार्थियों भारत में प्रवेश करने लगें किन्तु भारत शरणागत के सिद्धान्त पर अटल बना रहा और शरणार्थियों के भारत व्यय का वहनअतिथि सत्कार की भाँति किया गया इनमें वह लोग भीशामिल थे जो पूर्व पाकिस्तान में अपनी प्यारी–मातृ भूमि को छोड़कर चले गये थे किन्तु दुर्दिनके दिनों में इसी मातृ–भूमि के आंचल में शरण मिली। कवि के शब्दों में– ''पर शरणार्थि–समस्या अब तक और हो चुकी थी विकाराल बड़ी कठिनता से भारत उनका करता आया प्रतिपाल पाक, हिन्द, बांग्ला देश के क्रूर कर्म, कठिनाई, क्लेश यह था उचित विश्व में इनकों करे प्रचाारित भारत देश एतदर्थ अक्टूबर में करगयी इन्दिरा जी प्रस्थान और विदेशों में भारत कीकठिनाई का किया बखान।''83

पाकिस्तान को अमेरिका और चीन आदि देश राजनीति के रंग में पोषित कर रहे थे बंगाल देश की पीड़ित जनता का ख्याल न करके वह पाकिस्तान के अस्त्र–शस्त्रों को भारत के खिलाफ प्रयुक्त होते देखना चाहते थे किन्तु भारत बंगला देश की समस्या का तुरंत निदान खोजने में लगा रहा कवि के शब्दों में–

''जहाँ कहीं भीगयी इन्दिरा कहा उठा कर भुजा विशाल बंग–प्रश्न का राजनीति सम्मत हो समाधान तत्काल परिस्थिति बंग देश में इस प्रकार की हो तैयार जिससे शरणार्थी सुरक्षित ससम्मान जाएँ निजधाम''84

2– भुखमरी की समस्या–

'एक कंठविषपायी' में भुंखमरी की समस्या को दिखाया गया है युद्धोपरांत विकसित विभीषिका से धिरा से घिरा सर्वहत भंखा है जो इस पीड़ा को झेल रहा है कवि के शब्दों में–

''दो रोटी पाने कीआशा में

इतना सब रक्त स्त्राव सहकर भी

यहाँ तक चला गया।

बोलो ....

तुम मुझकों रोटी दे सकते हो ?''[85]

'क्रान्तिदूत सुभाष' में स्वतन्त्रता के पश्चात की युद्धोत्तर स्थिति को सूक्ष्म दृष्टि से चित्रित किया है कि नजाने कितने सैनिक भूख और प्यास से नष्ट हो गये कविके शब्दों में–

'' कितने सैनिक गहन विपिन में राह भूलकर नष्ट हुये। कितनेसैनिक भूख–प्यास से होकर विकल–विनष्ट हुये।।''[86]

देश को आजाद हुये कई वर्ष गुजर चुके हैं किन्तु देश में भुखमरी का ताण्डव–नृत्य हो रहा है स्पष्ट है कि युद्ध में बिगड़ी हुई व्यवस्था को बनाना उसे सत्य के मार्ग से बाँधना बहुत मुश्किल होता है कवि के शब्दों में–

''आज मैं तुम्हें एक सत्य बताता हूँ

जिसके आगे हर सचाई

छोटी है। इस दुनिया में

भूंखे आदमी का सबसे बड़ा तर्क

रोटी है।''[87]

अंधायुग में भारती जीने सैनिक की दुर्दशा का वर्णन किया है जिसमें वहीं मूंग सैनिक भिखमंगे के रूप में सामने आता है–'' प्रहरी, इस भिक्षुक को/किसने यहां आने दिया?''88 अंधायुग में भरती जी ने युधिष्ठिर के राज्य में भीख माँगते बच्चों की टोली का वर्णन किया है–

''भिखमंगे......... गन्दे बच्चों की

एक बडी भीड़ उस पर ताने कसती

पीछे–पीछे चली आती है।''[89]

3– युद्ध बन्दियों की समस्या–

''युद्धरत दो पक्षों कीविजय–पराजय क्षति और प्राप्ति का लेखा जोखा जहाँ युद्ध काल में और युद्धोपरांत विश्व भर के समाचार पत्रों में प्रमुखतया छपता है वहीं युद्ध बन्दियों के समाचार भी मुख्यपृष्ठों पर स्थान पाते हैं। युद्ध बन्दी मात्र अपने देश और स्वजनों को ही नहीं वरन् विश्व कीसभी मानवतावादी संस्थाओं एवं व्यक्तियों के लिये चिन्ताकाकारण होते हैं। वास्तव में युद्ध बन्दीके अभागे सैनिक होते हैं जो अपनी मातृ भूति कीरक्षा करते–करते असहाय हो शत्रु शक्ति के हाथों में पड़ जाते हैं।''90 अब तक समाप्त नहीं होगा तब तक युद्ध बन्दियों की समस्या बनी रहेंगी, युद्ध में भाग लेने वाले सैनिक कभी विजयी पक्ष के होंगे तो कभी अविजयी। ''युद्ध का सम्बन्ध राज्यों से होता है न कि युद्धबन्दियों से जो दुर्घटना वश ही संघर्ष में फंस जाते हैं।''91
युद्धबन्दियों की समस्या प्राचीनकाल से रही है रामायण एवं महाभारत दोनों में इस पर विचार किया गया है और आधुनिक कवियों ने भी इसे अपने काव्य में स्थान दिया है इस समस्या को हम बांग्ला विजय काव्यकृति में देख सकते हैं–

''एक ब्रिगेड कमाण्डरबन्दीकिया
और कुछ अधिकारी
मची खलबची शत्रु–व्यूह में
शुरू हुई भगदड़ भारी।''[92]

''पूर्वोत्तर में स्थित है जो
सिलहट का संभाग विशाल
ब्रिगेडियर राना अधीन था
पाक अनी का फैला जाल
जुड़े विकट जुटट्‌ान, अंत में
बाजी रही हमारे हाथ
किया समर्पण था राना ने
अपने सभी सैनिकों साथ''[93]

4– प्रदूषण की समस्या–

आज का युद्ध आणुविक युद्ध है जिसमें शस्त्रों कीव्यापक छोड़ हमारने वायुमण्डल में विभिन्न प्रकार कीरेडियों धर्मी किरणों का प्रभाव मानव जीवन के लिये संकट बनगयी है। सुरगों में विस्फोट आदि वातावरण में ध्वनि–प्रदूषण करते हैं, ये ध्वनियॉ वायुमण्डल में तरगें उत्पन्न करती है जो कि मनुष्य के कान के पर्दो से टकराकर श्रेवणेन्द्रियों को उत्तेजित कर क्षति पहुंचाती हैं। रेडियों धर्मी प्रदूषण बहुत खतरनाक है यह बुरीतरह श्रंखलावृद्ध होकरस्वयं फैलता है जापान के नागासाकी तथा हिरोशिमा में अब भी अपंग एवं कुरूप बचचे पैदा होते है परमाणु बम परीक्षण भी हानिकारक किरणे छोड़ते हैं इसी प्रकार परमाणु ऊर्जा संयत्र भी लापरवाही के कारण विकिरण छोड़ सकते हैं। वायु प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण विभिन्न वैज्ञानिक आविष्कारों के प्रयोगात्मक विस्फोटों से जो रेडियों धर्मी धूल फैलती है। वह वनस्पतियों को भी भारी हानि पहुँचाती है। अर्जुन के अग्नि वाण के प्रभाव से

वनस्पतियों पर पड़ने वाले प्रभाव का चित्रण किया गया है—"झुलस—झुलसकर गिर रही हैं वनस्पतियाँ।"[94]

5— बेरोजगारी की समस्या—

बेरोजगारी के लिये हम द्वितीयविश्व युद्ध का उदाहरण ले सकते है, सन् 1939 में जब द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारम्भ हुआ तब सेना में बहुत अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ी। इस अवसर में अच्छे वेतन के लोभ मं पड़कर बहुत से व्यक्तियों ने अपने पैतृक कर ली। परिणाम यह हुआ कि पहले से विद्यमान बेकारों कीसंख्या में और अधिक वृद्धि हो गई। सन् 1947 में जब भारत दो भागों में बंट गया तो लाखें व्यक्तियों को अपना कारोबार छोड़कर की आग को पर्याप्त सीमा तक प्रज्जवलित किया।

6— महंगाई की समस्या—

युद्धोत्तर समस्या में मंहगाई की समस्या की विकराल रूप सामने आता है जिससे सामान्य नागरिक प्रभावित होता है। भारत चीनऔर भारत—पाकिस्तान युद्ध ने हमारे देखते—देखते हमारी अर्थव्यवस्था को कितना अस्त व्यस्त करदिया है जिसे आम नागरिक भुगत रहा है।

7— भूमि की उर्वरा शक्ति का ह्रास होना—

युद्ध के पश्चात 'शस्य श्यामलाल' भूमि बंजर धरती में बदल जाती है जहां खरपवार भी नहीं उगसकते, तो खाद्यान वस्तुओं की खेती कैसे की जा सकतीहै। कवि शील ने युद्ध में प्रयुक्त एटम बम के दुष्परिणाम को निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया है जिसका सीधा सम्बन्ध भूमि भूमि के बंजर हो जाने से है—

"एटम से जर्जर हो धरती,
फिर दूब नहीं उपजा पाई
विष के कीड़ों से डसी गयी
खेती न अभी तक लहराई"[95]

विष के कीड़ों से डसीगयी के माध्यम से कवि ने जीवाणु युद्ध को प्रस्तुत किया है जिससे पूरी की पूरी खड़ी फलसें क्षति ग्रस्त हो जाती हैं। कवि इन्हीं एटक बंमों के प्रहार से नागासाकी को छार—छार होते तथा हिरोशिमा की बहार को खोते हुये देखा है—

"कल इसी नाश के पुतले ने
की नागासाकी छार—छार
कल इसी नाश के पुतले में
हर ली हिरोशिमा की बहार"[96]

'क्रान्तिदूत सुभाष' में भी प्राकृतिक सम्प्रदा के क्षरण की ओर कवि ने ध्यान आकृष्ट किया है—

"तरू—पल्लव, फल—फूल तथा तृण—झुलस—झुलस करनष्ट हुये।
वन—उपवन, वाटिका—खेल भी, जलकर पूर्ण विनिष्ट हुये।"[97]

8— पशु—धन की समस्या—

युद्ध में अश्व एवंगज सेना का प्रयोग होता है जिसमें हाथियों एवं छोड़ों की समस्या के साथ—साथ हमारी प्राकृति

आवश्यकताओं की पूर्ति करनेवाले पशु–पक्षियों को भी इस संकट से गुजरना पड़ता है।

'अंधासुनने' में कवि ने हाथियों को संकट ग्रस्त अवस्था में दिखाया है–

''डरे हुये हाथी चिग्हाड़ कर शिविरों को

चीरते हुये भागे''98

''इसी प्रकार '' घायल घोडे '' [99] का चित्रण भी किया गया है।

9–घायल/हताहत लोगों की समस्या–

युद्ध में सैनिक हताहत होते हैं उनके धरातलों की क्या स्थिति होती है इस सम्बन्ध में निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

''जिसके दिल का कोई टुकड़ा डटा हुआ सीमा पर एक साथ सैकड़ों गोलियां सीने पर खाती हैं,

बेटों के शहीद होने की जब चिटठी आती है,''[100]

'एक कंठ विषपायी' में सर्वहित अपनी घायल

अवस्था का जिक्र श्री ब्रह्मा जी के समक्ष करता है–

''जाते–जाते शिव के गणों ने

दक्षिण नगर–द्वार की गुफाओं में छिपे हुये

मुझको भी पकड़ लिया....

मेरे भी तन पर होड़ दिए

ये देखों.....'' [101]

युद्ध में वयोवृद्धों को भी कष्ट का सामना करना पड़ता है। ' एक कंठ विषपायी' में आसुरी वृत्ति से य क्त शंकर के गणों द्वारा प्रहार एवं घायल हुये ऋषियों –मुनियों का चित्रण मिलता है–

''वयोवृद्ध आंगिरस

कुशाश्वमुनि,

दोनों के शीश पर

प्रहार किया पाँवों से। दुष्टों ने भृगु जी की

दाढ़ी को नोच लिया।''[102]

'प्राचीन' काव्यकृति में गांधारी और कुंती आगे

बढ़ती है कि कर्ण की मां राधा वृद्धावस्था में पुत्रशोक अकेली ग्रस्त अकेली विलाप कर अपनी कोशिश से सम्पूर्ण वातावरण में विषाद की गहनता बढ़ा रहीं है कवि के शब्दों में–

''उस वृद्ध माता को

देखिए, अकेली विलाप कर रही हैं।

कर्णकी मुखाकृति हाय कैसी बनी है

कृष्ण चतुर्दशी के शशि की तरह !''[103]

युद्ध के समाप्त होने पर युधिष्ठिर स्वयं इस

बात से दुःखी है कि इस घृणित कार्य को करने का मैं अपराधी हूँ। वृद्ध माता –पिता की जीवित अवस्था में उसके युवा–पुत्र का प्राणान्त सबसे दुःख दायी होता है, इस स्थिति को कवि निम्न पंक्तियों के माध्यम से प्रस्तुत किया है–

"क्या सूझा कि राज्य का रखकर लोभ बिगाड़ दी मैने वृद्ध माता की मौत ? "[104]

10–गर्भस्थ बचचों पर प्रभाव–युद्धात्तर परिणाम यह सामने आये हैं कि जिसमें होने वाली नस्ल स्वस्थ्य एवं हष्ट–पुष्ट न होकर रोग ग्रस्त ण्वं अक्षक व्यक्ति किसी राष्ट्र का संचालन कैसे कर सकता है क्योंकि भष्विय आगे आने वालों के लिए ही होता है कवि के शब्दों में–

"माताएँ जनने लगी कोढ़ "[105]

11– अनाथ बच्चों की समस्या–

युद्ध चौतरफा वार करता है बच्चे जो दुष्सपरिणामों से परिचित नहीं होते उसका प्रभाव उन्हें झेलना पड़ता है, वह अपने पूरे के पूरे परिवार को खोकर अनाथों का जीवन को मजबूत हो जाते हैं कवि के शब्दों में–

"माताओं को शोक, युवतियों को विषाद हैं, बेकसूर बच्चे अनाथ होकर रोते हैं।"[106]

युद्ध में नादान बच्चों और शिशुओं की रक्तज–रंजित आत्माहुति दी जाती है।

12–पराजित पक्ष की स्त्रियों की समस्या–

युद्ध में विजय पक्ष पराजित राष्ट्र के प्रति शोषण की विभिन्न पद्धतियाँ अनाता है, उसका स्वार्थ इतना महान होता है कि वह स्वत्व की रक्षा के लिए नृशंतापूर्ण कार्य करता है पराजित पक्ष की स्त्रियों को बंधुत बना उनसे मजदूरी कराना, उनके परिश्रम से लाभ उठाते हैं तो कभी स्त्रियों को दास बनकर जीवन का अनन्द करते हैं, इन नारियों की स्थिति सममाज में अत्सन्त दयनीय होती है वे न तो यपने स्परूप को जानती है और न अधिकार को। प्राचीनकाल से विजयपक्ष अपनी क्रूरता के परिणाम स्वरूप इस पाषण अर्पित नारी की व्यथा प्रायः पाषणवत मूक ही रही है। सैनिकों के द्वारा किये गये क्रूर अत्याचार की स्मृति से ही आज कवियों ने हर पक्ष पर अपनी कलम चलाई हैं। पाक से बांग्ला देश की स्थापना के समय पाकिस्तान सैनिकों द्वारा बांग्ला देश की कन्याओं के साथ क्रूरता व्यवहार किया। कवि वृजराज सिंह तोमर ने बांग्ला विजय काव्य कृति में बलात्कार की समस्या को अपनी कृति के माध्यम से प्रस्तुत किया है–

"अभिभवक गण रहे तड़पते सबके सम्मुख सबके बीच लाये दुष्ट बलात घरों से बाजारों से इनकों खींच करुणा की पुकार सुनकर भी नहीं कर सका कोई त्रास, नित्य मसलते इन कवियों को कर्कश को पौरुष के पाषाण असमय के आघात अनवरत सह मुरझायी म्रियमाण रुग्णवेश ये प्राण शेष ये अपनी लुटा सहज मुस्कान इनकी घोर यांतनाओं का अंत यहाँ ऐसे आया दुष्टों ने आखिरी बार जब लथपथ की इनकी काया काम–कष्ट से पीड़ित कर दे ज्यादा कौन आज थी होड़ कौन अधिक तड़पा दे इनकी कोमल काया तोड़ मीरोड़ क्रूर कर्म था आज कर गया निर्लज्जता परिधि को पार वसनहीन वपु व्यथित प्रमर्दित करते दारुण हाहाकार

\+ + + + + +

और अन्ततः शक शरीर पर कद दी गोली की बौछार

ऐसे बंग हरिणियों का इन वीर ने वरों ने किया शिकार "[107]

पाक सैनिकों की क्रूरता की शिकार महिलाएँ बस एक ही प्रार्थना करती है कि हमसे कभी यह प्रश्न न पूँछा जाए कि पाक सैनिकों ने साथ कैसा–कैसा

सलूक किया कवि के शब्दों में–

"हाँ भैया यह नहीं पूछना,

कह कर युवती सिसक पड़ी

हुआ कंठ अवरूद देख

सैनिक को पीड़ा हुई बड़ी "[108]

13–शव–दाह की समस्या–

युद्ध में भयंकर जनहानि होती है किन्तु इसके पश्चात शव के दाह संस्कार की भयंकर समस्या सामने आती है क्योंकि उन्हें दफनाने वाले लोग ही नहीं बचते, पूरे के पूरे परिवार राज्य एवं राष्ट्र इसमें स्वाहा हो जाते हैं बची हुयी लाशों के ढेरों पर कौये और गिद्ध अपना भोजन मानकर नोचकर खाते है। 'प्राचीन में कवि ने महाराज शल्य के शव गिद्धों और कौआ को खाते हुये दिखाया है इसकी जिह्वा विशेष का उल्लेख इसलिए किया गया है कि युद्ध के मैदान में महाराज शल्य कर्ण के सेनापति बने किन्तु अपने कर्त्तव्य का निर्वहन न करके महारथी कर्ण के मनोबल को बराबर गिराते हुये उसके तेज को क्षीण करने लिए मनोवैज्ञानिक हथियार का प्रयोग किया था कवि के शब्दों में–

"कर्ण का तेज वध करने वाली

शल्य की जिह्वा को

देखिये कौआ खींच रहा है,

झपट कर गीधों का जूथ उसे बाँट रहा है। "[109]

14– आत्म हत्या की समस्या–

अंघायुग में युयुत्सु का चरित्र सबसे दयनीय दिखाई देता है क्यों कि वह अन्याय के विरूद्व युद्ध क्षेत्र में लड़ने वाले कर्त्तव्य शील योद्धा से अलंकृत किया गया दूसरी ओर सत्य का आश्रय लेने से अपराधी माना गया कौरव एवं पाण्डवों के अतिरिक्त, माता गांधारी की उपेक्षा ने उसे अर्द्व विक्षिप्त अवस्था में पहुँचा दिया। उसकी आत्मा को अपमान और उपेक्षा घायल कर देते है इस स्थिति से अपने को न संभल सकने के कारण वह आत्मघात का क्रूर मार्ग अपना लेता है सभी जगह से उपेक्षित युयुत्सु के पास एक यही मार्ग था जिसका वह वरण करता है कवि के शब्दों–

"महाराज

कर ली आत्म हत्या युयुत्सु ने

दौडों कृपाचार्य !

\+ \+ \+ \+ \+

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1— राष्ट्रीय प्रतिरक्षा—हरवीर शर्मा—पृष्ठ 359—सं.—1979—80

2— स्वातन्त्र्योत्तर—हिन्दी कविता—डॉ. गोविन्द रजनीश—पृष्ठ 271—सं. 1976—मंगल प्रकाश जयपुर

3— अन्धा युग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 83—1992—किताब महल इलाहाबाद

4— पूर्वोक्त पृष्ठ 24

5— संशय की एक रात—नरेश मेहता पृष्ठ 24—1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

6— पूर्वोक्त—पृष्ठ 73—74

7— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 111—1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

8— पूर्वोक्त—पृष्ठ 43

9— पूर्वोक्त—पृष्ठ 47—48

10— पूर्वोक्त—पृष्ठ 73

11— पूर्वोक्त—पृष्ठ 104

12— पूर्वोक्त—पृष्ठ 107

13— पूर्वोक्त—पृष्ठ 108

14— साहित्यिक निबन्ध— डॉ. किशोर काबरा—पृष्ठ 144—संस्करण 2000—भारत भारती प्रकाशन दिल्ली

15— क्रान्ति दूत सुभाष—विनोदचन्द्र पाण्डेय 'विनोद' पृष्ठ 105—संस्करण 1995—साहित्य प्रकाशन दिल्ली

16— अंतस्तल का पूरा विप्लव अँधेरे में द्वारा संपा. निर्मला जैन—अँधेरे में—मुक्तिबोध—पृष्ठ 141—संस्करण 1994—राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली

17— संसद से सड़क तक से उद्धृत पटकथा—धूमिल—पृष्ठ 108—संस्करण 1990—राजकमल प्रकाशन दिल्ली

18— पूर्वोक्त—पृष्ठ 109—110

19— पूर्वोक्त—पृष्ठ 113

20— नाटक जारी है—लीलाधर जगूड़ी—पृष्ठ 105—संस्करण 1994—किताब घर दिल्ली

21— मुक्ति प्रसंग—राजकमल चौधरी—पृष्ठ 24— संस्करण 1988—वाणी प्रकाशन दिल्ली,

22— विश्व शांति परिषद—पुस्तिका—जनवरी 1981 पृष्ठ 6

23— अखण्ड ज्योति—संपा.—भगवती देवी शर्मा—पृ. 11—अप्रैल 1973

24— पूर्वोक्त—पृष्ठ 12

25— कुरुक्षेत्र—रामधारी सिंह दिनकर—पृष्ठ 77—संस्करण 2000—राजपाल एण्ड संस दिल्ली

26— संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृष्ठ 24—25—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

27— पूर्वोक्त—पृष्ठ 51

28— पूर्वोक्त—पृष्ठ 68—69

29— प्राणगीत—नीरज—पृष्ठ 89—संस्करण 1985—आत्माराम एण्ड संस दिल्ली

30— बांग्ला विजय—वृजराज सिंह तोमर—पृष्ठ 13—14—संस्करण 1992—गोपाल प्रकाशन टिकार जनपद हरदोई

31— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 12—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

32— पूर्वोक्त—पृष्ठ 20

33— प्रतिज्ञा पुरुष—रामदास गुप्त 'विकल'—पृष्ठ 99

34— परशुराम की प्रतीक्षा—रामधारी सिंह दिनकर—(शीर्षक शान्तिवादी)—पृ. 57—संस्करण 1999—लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद

35— प्राचीना—उमाशंकर जोशी—रूपांतर—भोलाभाई पटेल.........पृष्ठ 75—संस्करण 1968—ज्ञानपीठ प्रकाशन कलकत्ता

36— पूर्वोक्त—पृष्ठ 73

37— पूर्वोक्त—पृष्ठ 63

38 आधुनिक काव्य नवीन सांस्कृतिक चेतना—डॉ. राजपाल शर्मा—पृष्ठ 161—संस्करण 1991—पाण्डुलिपि प्रकाशन दिल्ली

39— प्राचीना—उमाशंकर जोशी—रूपांतर—भोलाभाई पटेल.........पृष्ठ 75—संस्करण 1968—ज्ञानपीठ प्रकाशन कलकत्ता

40— पूर्वोक्त—पृष्ठ 73

41— जयद्रथ वध—मैथिली शरण गुप्त—पृष्ठ 25—प्रकाशन साहित्य सदन झाँसी

42— नीति—शीर्षक नमन शहीदों को—कमलेश रानी अग्रवाल—पृष्ठ 32—संस्करण अक्टूबर 1999—भारत विकास परिषद

43— विकलांग विभूतियों की जीवन गाथाएं—विनोद कुमार मिश्र—पृष्ठ 300—संस्करण 2000—किताब घर दिल्ली

44— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 40—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

45— पूर्वोक्त—पृष्ठ 47

46— पूर्वोक्त—पृष्ठ 83

47— पूर्वोक्त—पृष्ठ 39—40

48— पूर्वोक्त—पृष्ठ 84

49— क्रान्तिदूत सुभाष—विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद'—पृष्ठ 105—संस्करण 1995- साहित्य प्रकाशन दिल्ली

50— लावा और फूल—शील—पृष्ठ 77

51— प्राचीना—उमाशंकर जोशी—रूपांतर—भोला भाई पटेल........पृष्ठ 45—संस्करण 1968—ज्ञानपीठ प्रकाशन कलकत्ता

52— पूर्वोक्त—पृष्ठ 45

53— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 63—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

54— धर्म और समाज—डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन—पृष्ठ 275—संस्करण 1975—प्रकाशन सरस्वती विहार दिल्ली

55— पूर्वोक्त—पृष्ठ 285

56— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 94—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

57— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 98—99—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

58— परशुराम की प्रतीक्षा—रामधारी सिंह 'दिनकर'—पृष्ठ 25—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

59— क्रान्तिदूत सुभाष—विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद'—पृष्ठ 115—संस्करण 1995—साहित्य प्रकाशन दिल्ली

60— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 50—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

61 पूर्वोक्त—पृष्ठ 53

62— पूर्वोक्त—पृष्ठ 30

63— पूर्वाक्त—पृष्ठ 55

64— पूर्वाक्त—पृष्ठ 66—67

65— पूर्वाक्त—पृष्ठ 84

66— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 99—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

67— पूर्वाक्त—पृष्ठ 134

68— प्रतिज्ञा पुरुष—रामदास गुप्त 'विकल'—पृष्ठ 54

69— त्रिजटा—शिववचन चौबे—पृष्ठ 65—संस्करण 1998

70— जय भारत—मैथिलीशरण गुप्त—पृष्ठ 41

71— युद्ध—मैथिलीशरण गुप्त—पृष्ठ 45—46

72— परशुराम की प्रतीक्षा—रामधारी सिंह 'दिनकर'—पृष्ठ 11—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

73— पूर्वोक्त—पृष्ठ 15

74— कुरुक्षेत्र—रामधारी सिंह दिनकर—पृष्ठ 27—संस्करण 2000—प्रकाशन राजपाल एण्ड संस दिल्ली

75— अग्निसंभवा—वृजराज सिं तोमर—पृष्ठ 23—संस्करण 1992—गोपाल प्रकाश टिकार जनपद हरदोई

76— यंत्र युग—हरि जोशी—पृष्ठ 74—संस्करण 1975—राष्ट्रीय प्रकाशन मन्दिर भोपाल

77— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 117—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

78— पूर्वोक्त—पृष्ठ 118

79— पूर्वोक्त—पृष्ठ 117

80— भारत मां की लोरी—देवराज दिनेश—पृष्ठ 78—(शीर्षक शरणार्थी शिविर)—आत्माराम एण्ड संस दिल्ली

81— पूर्वोक्त—पृष्ठ 79

82— बांग्ला विजय—वृजराज सिंह तोमर—पृष्ठ 51—संस्करण 1992—गोपाल प्रकाशन टिकार जनपद हरदोई

83— पूर्वोक्त—पृष्ठ 53

84— पूर्वोक्त—पृष्ठ 54

85— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 53—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

86— क्रान्तिदूत सुभाष—विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद' पृष्ठ 105—संस्करण 1995—साहित्य प्रकाशन दिल्ली

87— संसद से सड़क तक से उद्धृत पटकथा—धूमिल—पृष्ठ 114—संस्करण 1990—राजकमल प्रकाशन दिल्ली

88— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 84—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

89— पूर्वोक्त—पृष्ठ 84

90— युद्धोपरान्त—वीर सिंह—पृष्ठ 13—संस्करण 1983—तिरुपति प्रकाशन हापुड़

91— पूर्वोक्त—पृष्ठ 13

92— बांग्ला विजय—वृजराज सिंह तोमर—पृष्ठ 256—संस्करण 1992—गोपाल प्रकाशन टिकार जनपद हरदोई

93— पूर्वोक्त—पृष्ठ 260

94— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 85—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

95— लावा और फूल—शील—पृष्ठ 77

96— पूर्वोक्त—पृष्ठ 77

97— क्रान्तिदूत सुभाष—विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद'—पृष्ठ 106—संस्करण 1995—साहित्य प्रकाशन दिल्ली

98— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 63—64—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

99— पूर्वोक्त—पृष्ठ 64

100— राष्ट्रधर्म—संपा. आनन्द मिश्र 'अभय'—पृष्ठ 74—संस्करण जनवरी 2000

101— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृष्ठ 53—संस्करण 1997—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

102— पूर्वोक्त—पृष्ठ 46—47

103— प्राचीना—उमाशंकर जोशी—रूपांतर भोला भाई पटेल......—पृष्ठ 68—संस्करण 1968—ज्ञानपीठ प्रकाशन कलकत्ता

104— पूर्वोक्त—पृष्ठ 51

105— लावा और फूल—पृष्ठ 77

106— परशुराम की प्रतीक्षा—रामधारी सिंह 'दिनकर'—पृष्ठ 57—(शीर्षक शान्तिवादी)—संस्करण 1999—लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद

107— बांग्ला विजय—वृजराज सिंह तोमर—पृष्ठ 145—46—संस्करण 1992—गोपाल प्रकाशन टिकार जनपद हरदोई

108— पूर्वोक्त—पृष्ठ 256

109— प्राचीना—उमाशंकर जोशी—रूपांतर भोला भाई पटेल.......—पृष्ठ 75—संस्करण 1968—ज्ञानपीठ प्रकाशन कलकत्ता

110— अंधायुग—धर्मवीर भारती—पृष्ठ 84—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद

111— पूर्वोक्त—पृष्ठ 30

सप्तम परिवर्त्त

आधुनिक युद्ध परक काव्यों का शिल्प विधान एवं काव्य रूप की भिन्नता

अ- भाषा
ब- संवाद योजना
स- विम्ब विधान
द- प्रतीक योजना
य- उपमान योजना

अब तक वे अस्त्र

दूसरों के लिए वियद्व काम आऐगें ''[110]

युद्ध के बाद खण्ड़ित व्यक्तियों में आत्म हत्या की प्रवृति बहुत तीव्र हो जाती है इसी प्रकार अश्वत्थामा भी अपने खण्डित अस्तित्व से विक्षुब्ध होकर आत्मघात करके अपनी करके अपनी पीड़ा शान्त कर लेना चाहते हैं कवि के शब्दों में–

''आत्मघात कर लूँ ?

इस नपुंसक अस्तित्व से

छुटकारा पाकर

यदि मुझे

पिघली नरकाग्नि में उबलना पड़े

तो भी शायद

इतनी यातना नहीं होगी ! ''[111]

सप्तम परिवर्त

आधुनिक युद्ध परक काव्यों का शिल्क विधान एवं काव्य रूप की भिन्नता–

काव्य विधान काव्य का विज्ञान है। कविता करने की विधि से लेकर कविता–सम्बन्धी गुण–द्वोषों का विधि ावत जान उसके भीतर आ जाता है, और उस ज्ञान का आत्म प्रकाश काव्य–शिल्प है। काव्य रूप तथा नशल्य–विधान में निराकार और साकार का अन्तर है। काव्य रूप को हम यदि बीज मन्त्र कहें, तो काव्य शिल्प उस मन्त्र का दृश्य मान प्रभाव है। जिस प्रकार संगीत सीखने वाला व्यक्ति किसी राग का विधान सीखकर जन उसे माता है तो वह उसी निराकार विधान को साकार करने का प्रयास करता है, उसी प्रकार मूर्तिकार जब मूर्ति गढ़ता है, तो मूर्ति निर्माण संबधी अपने ज्ञान को मूर्तिमान करता है। विधान को मूर्त करने का यहीं विधान शिष्य है। इस प्रयास की सबक मूर्ति में विधमान सौन्दर्य से मिलती है, या अपने ह्रदय पर पडे प्रभाव से हम उसे जान सकते हैं। मूर्ति को देखकर कभी कभी यह विचार भी आता है कि और सब तो सुन्दर है, किन्तु एक आंख कुछ छोटी हो गयी, या अंग विशेष ठीक नहीं रहा। सौन्दर्य की यह त्रुटि वस्तुतः प्रयास की अपूर्णता है, शिल्प की कमी है। श्रेरू शिल्पकार की मूर्ति में सौन्दर्य का हास नहीं हो सकता। इस प्रकार शिल्प न केवल त्रुटि परिहार करता है। अपितु सौन्दर्य–वृद्दि करके द्विगुठित लाभ देता है। काक शिल्प कवि की कविता को दोष मुक्ति करने के साथ ही अकर्षक भी बनाता काव्य शिल्प कार जब है।

किसी भी रचना के शिल्प–विधान पर विचार करते समय शिल्प का अन्वेषण दो रूपों में किया जाता है। पहले रूप में यह कि रचनाकार ने कथावस्तु को किस दृष्टि से नियोजित किया है और उसको उसमें कहां तक सफलता मिली है। रचना आरम्भ करने से पहले कवि यह विचार कर लेता है और रचना इस ढंग में सम्पन्न करता है कि उसका मूल भाव या मूल प्रयोजन सिद्ध हो जाये। दूसरे रूप में कवि द्वारा काव्य में प्रयुक्त भाषा, कथन–शैली, अलंकार, छन्द योजना या कलात्मक पक्ष कहलाता हैं। पक्ष कवि के भाव जगत को नियोजित करता

है और इन दोनों पक्षों के सुन्दर सामंजस्य से ही रचना के शिल्प विधान में निखार आता है। युद्ध परक काव्यों के शैल्पिक समर्थ्य का अध्ययन निम्न शीर्षकों में, अर्न्तगत प्रस्तुत है–

1– भाषा

2– संवाद योजना

3– विम्ब–विधान

4– प्रतीक योजन

5– उपमान योजना

(अ) भाषा–

भाषा अभिव्यक्ति का सर्व समर्थ माध्यम है। प्रत्येक युग का कवि युग की परिस्थितियों एवं सन्दर्भों के बीच युग की आवश्यकता के अनुरूप, नयी भाषा की खोज करता है। आधुनिक युग से पूर्व ब्रज–भाषा ही सर्वात्कृष्ट भाषा थी लेकिन परिस्थितियां बदली, युगीन चेतना ने नई करवट ली फलतः काव्य में भी नये भावों एवं विचारों का उदय हुआ। पहले से चली आ रही काव्य भाषा में इन भावों एवं विचारों को वहन करने की क्षमता नहीं थी। वस्तुतः भाषा कथ्य के ही अनुरूप अपना रूप अदलती है। इस बात को आधुनिक कवि भली भांति समझतें थे और इसी लिए युगीन कवियों ने भाषा प्रयोग पर विशेष बल दिया। स्पष्ट, सहज एवं स्वभाविक भाषा प्रयोग ने काव्य को जन–जीवन से जोड़ दिया। इस युग के कवियों ने भाषा के संस्कार के क्षेत्र में महत्व पूर्ण कार्य किया है। सत्य तो यह है कि भाषा के क्षेत्र में आलोचना युग के कवियों का योगदान युगांतकारी रहा है। यह हम देख चुके है कि आलोच्य युग में आधुनिक भावबोध तथा युगीन परिवेश की परिवर्तन शीलता के फलस्वस्प काव्य की विषय वस्तु में भी पर्याप्त परिर्वतन हुआ। इस नवीन काव्य वस्तु तथा युगीन भावबोध को पुरानी भाषा वहन करने में समर्थ हो ही नहीं सकती थी। इसी तथ्य को लक्ष्य रखकर आलोच्क युग के कवियों ने नई भाषा की खोज की तथा नये अर्थवान शब्दों के निर्माण का प्रयास किया, साथ ही पुराने शब्दों का नया संस्कार किया तथा उसमें नयी ताजगी भरने की सफल कोशिश की। इस प्रकार एक ओर उसने भाषा को स्पष्टता एवं सहजता से युक्त कर उसे जन–सामान्य के लिए बोध गम्य बनाया तथा दूसरी ओर नवीन भंगिमा भी प्रदान की।

आधुनिक कवि काव्य को जन–सुलभ एवं जन–ग्रहना बनाने के आकांक्षी थे। वे चाहते थे कि कविता जन–के बीच पहुंच सकें तथा उसे सहज रूप में सभी ग्रहण कर सकें। इसके लिए कवियों की सीधी एवं जनव्यवहार की भाषा तथा यथार्थ जीवन के बीच प्रचलित मुहावरों एवं शब्दों के प्रयोंग पर भी बल दिया। आधुनिक कवियों ने जहां भाषा की सरलता एवं सुबोधता के प्रति विशेष आग्रह दिखाया है वहीं आधुनिक युग के कवियों ने अर्थवस शब्दों की समस्या को समझते हुये उसके खोज एवं निर्माण के प्रति अपनी विशेष रूचि दिखाई और युद्ध परक कविता के कवियों ने अभिव्यक्ति की सहजता को ध्यान में रखते हुये भाषा को जनभाषा के नजदीक पहंचाया है, उसमें लोक शैली एवं सपाट बयानबाजी कें प्रति विशेष आग्रह व्यक्त किया है तथा उसमें नवीन भंगिम भरी है। वस्तुतः आलोच्क युग के कवि कथावस्तु एवं काव्य भाषा के सृजन के प्रति हमेशा सजगा एवं सचेत रहा है।

आलोचक युग की कविता में भाषा के बदलते स्परूप की चर्चा निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत आसानी से की जा सकती है–

1– ओजपरक भाषा

2– व्यंग्यपरक भाषा

3– भावात्मकता के स्थान पर बौद्विक एवं वैज्ञानिक भाषा का चयन

4– ध्वनियों का प्रयोग

5– भाषा में परूष भावों की अभिव्यक्ति

6– शब्द योजना

ओजपरक भाषा–

युद्ध परक काव्यों में ओज परक भाषा ही प्रयुक्त होती है, क्योंकि ऐसे वातावरण में नायक अपार उत्साह से भरे होते है।

'राम की शक्ति पूजा' में लगभग पूर्ण भाषा ही ओज गुण युक्त है। ओजगुण से युक्त भाषा में संयुक्ताक्षरों एवं लम्बे समस्यों वाले कर्ण कटु शब्दों का प्रयोग अपेक्षित है राम की शक्ति पूजा में प्रथम पंक्तियों में ही कवि ने ओजपूर्ण भाषा में राम–रावण के युद्ध के विभीषण रूप का चित्रण किया है, परन्तु युद्ध भीषण संघर्ष के बाद भी अनिवार्णित ही रहता है। निम्न पंक्तियों में भाषा युद्धोंचित ओज गुण से उर्जस्वित एवं विलष्ट है–

''आज का, तीक्षण–शर–विधृत–क्षिप्र–कुर, वेग प्रखर,

शतशेललसम्वरण शील, नीलनभ–गर्ज्जित–स्वर

प्रतिपल–परिवर्तित–व्यूह–भेद–कौशल–समूह–

राक्षस–विरूद्व प्रत्यूह–कुद्व–कपि–विषम–छूछ, ''[1]

भाषा में युद्ध के सजीव वर्णन को क्षमता है, सामस्कि पदावली का प्रयोग दृष्टि गोचर है। युद्ध प्रसंग में संजीवता लाने के लिए महाराणा ध्वनियां संयुक्ताक्षर व 'ट' वर्ण का प्रयोग किया है। युद्वोचित भाषा ओजगुण से युक्त क्लिष्ट एवं संसकृतनिष्ट–

''विच्छु रितवहिन–राजीवनयन–हत–लक्ष्य–बाण,

लोहितलोचन–रावण–मदमोचन–महीयान,

राघव–लाघव–रावण–वारण–गतयुग्म–प्रहर,

उद्वत–लंकापति–मर्दित–कपि–दल–बल–बिस्तार,

अनिमेष–राम–विश्वजिडिव्य–शर–भइन्ग–भाव,

विद्वाइग–बद्व–कोदण्ड–मुष्टि–खर–रुधिर–स्त्राव, '' [2]

'संशय की रात' में कवि ने लक्ष्मण के माध्यम

से शक्ति एवं वर्चस्व तथा कर्म का पक्ष रखने में जो भाषा अपनाई है उसमें ओज–परक भाषा ही प्रस्तुत हुई है–

'' किन्तु

किन्तु यह असम्भव है
बन्धु ! यह असम्भव है
कर्म और वर्चस को
हीन सके कोई भी
अब तक हम जीवित है। [3]

'एक कंठ विषपायी' में युद्ध के लिए आतुर इन्द्र की वाणी वीर भाव है जिसके ओज परक उद्गार निम्न पंक्तियों में दृष्टिव्य है–

"देखा प्रभु !
महादेव की महाशक्ति का दंभ निहारा ?
––जैसे हम कृमि–कीट सदृश हो
और धमन्यों में हम सब की
रक्त नहीं पानी बहता हो।" [4]

'अंधायुग' में पुत्र–शोक से पीड़ित गांधारी ओजमय वाणी में कृष्ण से कहती है–

" तुम यदि चाहते तो रुक सकता था युद्ध यह
मैंने प्रसव नहीं किया था कंकाल वह
इंगित पर तुम्हारी ही भीम ने अधर्म किया
क्यों नहीं तुमने वह शाप दिया भीम को
जो तुमने दिया निरपराध अश्वत्थामा को
तुमने किया है प्रभुता का दुरुप्रयोग " [5]

2– व्यंग्य परक भाषा–

युद्ध परक काव्यों में व्यंग्य शैली की मुखरता सर्वाधिक दिखाई देती है। युद्ध के मैदान में एवं इससे बाहर सैनिक एवं असैनिक पक्ष अपने–अपने पक्ष की श्रेष्टता एवं दूसरे पक्ष की न्यूनता को सीधे शब्दों में न कहकर उल्टे या टेंढे शब्दों में व्यक्त करता है जो नैतिक,सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक, विसंगतियां, अन्तविरोध, मिथ्याचारों, असमजसों, अन्याय और अविचार आदि को बड़ी गहराई से पकड़ता है। हँसता और मुस्कराता है पर हँसी प्रसन्नता की नहीं, कसक की होती है। जब कवि में भावावेश की स्थिति प्रबल हो जाती है तो वह अपने आवेश को साधारण शब्दों में या साधारण शैली में व्यक्त नहीं कर पाता। ऐंसी स्थिति में वह व्यंग्यात्मक का आश्रय लेता है। नये कविता ने जीवन और समाज के हर पहलू को झांक–झांक कर देखा है जहां उन्हें ऐसे पक्ष दिखाई दिये है। जिनमें आवेश या आक्रोश की स्थिति आई है। आलोच्य युग का कवि सामान्य जन–जीवन से जुड़कर अपनी रचना करता है। क्योंकि वह युद्ध जैसे वीभत्सकारी धनुना को खुले ख रूप में प्रकट करते उसके दुष्परिणामों से परिचित कराना भी है। प्रथम विश्व युद्ध के बाद काव्य में, व्यंगोंक्तियों की प्रधानता मिली इन्हीं व्यंगोंक्तियों को माध्यम बनाकर आधुनिक कवियों ने सभ्यता, संस्कृति एवं सामाजिक व्यवस्था पर तीव्र व्यंग्य किये

हैं।

आधुनिक कवियों ने अपने भावों को आक्रमण बनाने के लिए व्यंग्य किसी अस्त्र से कम नहीं लगता। इसे प्रभावत्मक दृष्टि से व्यक्त करने के लिए कवि ने मिथक का सहारा लिया है। युद्ध काव्यों में व्यंग्य परक भाषा के उदाहरण निम्नलिखित है–

' राम की शक्ति पूजा' में विभीषण राम को युद्ध के लिए उत्साहित करते हुये, युद्ध से पलायंन करते राम को अपना हवाला देते हुये कि आपने युद्ध त्याग दिया तो मैं लंका का राजा बन चुका ?–

" मैं बना किन्तु लंकापति, धिक, राघव, धिक–धिक! " [6]

' एक कंठविषपायी' में कवि में युद्ध काल में शासन व्यवस्थाके ऊपर अपने वाले संकट को तथा प्रजातन्त्र प्रणाली के परिवर्तनशील नियमों की गतिविधि पर बड़ा व्यंग्य किया हे–

" क्या कहते हो ?
देवराज,
क्या यह भी लौकिक नेताओं का प्रजातंत्र है,
जो जब चाहे
इच्छाओं से परिवर्तन कर
नियमों को अनुकूल बना ले। " [7]

शासक वर्ग जो युद्ध को आमन्त्रित करता है और सामन्य जन उसके शिकार बनते है, उन्हें यह युद्ध न चाहते हुये भी लड़ना पड़ता है इस पर सर्वहित का व्यंग्य है–

"आप लोग,शासक है
और शासकों को कहीं
रक्त की कमी नही हुआ करती है।
आप लोग चाहें तो मेरे लिये
रक्त का समुन्दर भर सकते है "[8]

'अंधायुग' में युद्धोत्तर परिणामें से आहत एवं बृद्ध याचक की घटना को देखकर यव्यंग्य भव से कहते है –

"सो गया ।
इसीलिये शेष बचे है हम
इस युद्ध में
हम जो योद्धा थे अब लुक–छिपकर
बूढे निहत्थें का
करेंगे वध।" [9]

3–भावात्मकता के स्थान पर बौद्विक एवं वैज्ञानिक भाषा का चयन–

वैज्ञानिक आविष्कारों ने जीवन को इतना गतिमय बना दिया कि नया कवि पुरानी कविता की भाव सवंलित शैली

और भावुकता को छोडकर बौद्धिकता की और उन्मुख हो गया है । कल्पना शाल काव्य विज्ञान की प्रगति और प्रयोगों से निरन्तर संघर्ष करता रहा, फिर भी उसमें बौद्धिकता इतनी प्रबल हो गई कि धर्म और ईश्वर पर विश्वास नही रहा गया। आलोच्य काव्य–कृतियों में भावुकता के स्थान पर बौद्धिकता अधिक मिलती है आधुनिक कवि जिस ओर भी देखता है उसकी शुस्क बौद्धिकता सदैव उसके साथ लगी रहती है। भावुकता को व्यक्त करने के अवसर पाकर भी कवि उन्हे अपनी बौद्धिकता के कठोर पाश में बांध देता है। युद्ध परक रचनाओं के प्रयुक्त भावात्मकता के स्थान पर बौद्धिक एवं वैज्ञानिक भाषा के प्रयोग दृष्टव्य है –

"में इस रेडियों से भगाकर अखबार में बुला रहा हूँ में इसे दो आलोचकों के बीचखडा करके कवियों की धारा में धुला रहा हूँ । ....नाटक जारी है ।

मगर यह आदमी कहीं से भी नही बनता (पेज85) तो क्या में इसे दूसरे आदमी के क्षेत्र से लडा दूं"[10]

"आप सती को जीवन देना नही चाहते तो फिर अब युद्ध के अलावा कोई और विकल्प नही है' एककंठ विषपायी

और समस्या का यह अन्तिम समाधान " [11] (पेज–109)

4–ध्वनियों का प्रयोग–

ध्वनि शब्द प्रायः व्यंजक शब्द व्यंग्यार्थ, व्यंजना व्यापार यएवां व्यंग्यात्मक काब्य के लिये प्रयुक्त होता है । जिस प्रकार चने के बीज में बीजत्व सक्ति विद्यमान होती है,उसी प्रकार शब्दों के अन्तस में ध्वननय एवं द्योत्तन शक्ति विद्यमान होती है। कवि अपने सोंच और अनुभव को अभिव्यंजना के कोमल तन्तुओं में बांधने के शब्दों को नियोजित कर लेता है कि जो सार्थक और वीणा की तरह झंकृत हो । कविता में गुंथे हुये शब्द जानदार होते है और इन शब्दों के अन्तस में विद्यमान अर्थ तत्व अनुरणित होते है इन्हीं अर्थतत्वों के अनुरणित होने से काब्य भाषा का ध्वनि सौन्दर्य उसी प्रकार यखिल उठता है जिस प्रकार फूलों के गुच्छों से लदी टहनियां ।

आलोच्य युग के कवियों ने युद्ध परक काब्यों में ध्वनिययों का प्रयायेग किया है क्यों कि अस्त्र–शस्त्रों की टकराहट,रथें का चलना, वाद्ययन्त्रो का प्रयोग,व्यवस्था की टूटन आदि विभिन्न यप्रकार यकी ध्वनियों का सृजन करता है। ध्वनि सौदर्न्य से युक्त निम्न पंक्तियों दृस्टव्य है –'राम की शक्ति पूजा' में विभीषण का ओजपूर्ण कथन राम पर निष्प्रभावी रहता है क्यों कि महाशक्ति द्वारा अन्याय पक्ष–ग्रहण से राम के ह्रदय को ठेस लगी और ऑसुओं के गिरने में ध्वन्यात्मकता विद्यमान है –

"उत्तरी याय महाशक्ति रावण से आमन्त्रण।अन्यास जिधर है उधर शक्ति !कहते छल–छल"[12]

महाशक्ति का प्राकट्य एवं उसके द्वारा राम को विजय–विषयक आशिष दिये जाने का वर्णन है जिसमें लक–लक एवं मन्द स्वर वन्दन जैसे ध्वन्यायत्मक शब्दो का प्रयोग मिलता है –

"कहकर देखा तूवीर ब्रह्मशर रहा झलक,
ले लिया हस्त, लक–लक करता वह महाफलक,"
मस्तक पर शंकर। पदपद्मों पर श्रृद्धाभार
श्री राघव हुये प्रणत मन्द स्वर बन्दन कर।"[13]

निम्न पंक्ति में निराला श्री की आन्तरिक –ध्वनि योजना दृष्टव्य है [14]

''राघव–लाघव–रावण–तारण–गत युग्म प्रहर,निराला द्वारा यरावण की तामसिक शक्ति को खल–खल ध्वनि द्वारा सार्थक प्रयोग किया है –

''फिर सुना–हँस रहा अट्टाहास रावण खल खल भावित नयनों से सजल गिरे दो मुक्ता–दल।''[15]

5–भाषा में परूष भावों की अभिव्यक्ति –

काव्यों में ओज, वीरता ,युद्ध काब्यों में पुरुष भाव ही मुख्य रूप से व्यक्त होते है युद्ध के प्रसगों में कोमल भावों की विशेष आवश्यकता नही होती क्यों कि वह विरोधी इस उत्पन्न करते है । राम की शक्ति पूजा में निम्न पंक्तियों में हनुमान के अप्रतिक वर्चस्त का चित्रण मिलता है जो पौरूष और पराकम का चित्रण करने में सफल है –

''वश्रांग तेजघन बना पवन यको महाकाश
पहूंचा,एकादशरूद्र क्षुब्ध कर अट्टहास।
रावण–महिमा श्यामा विभावरीअन्धकार,
यह रूद्र राम–पूजन–प्रसाद तेजःप्रसाद,''[16]

'एक कंठ विषयायी'में इन्द्र के कथन में परूष भाव की अभिव्यक्ति दृष्टव्य है –

''युद्ध के सिवा
अब कोई भी विकल्प अवशेष नही है
आज्ञा दें
महादेव शंकर यका पूजन अब युद्ध स्थल में ही होगा ''[17](पेज)

दिन कर के काब्य यका मूल स्वर राष्ट्रीयता जागरण का स्त्र है उनका मानना है कि सच्चे काब्य में परूष भावों की अभिव्यक्ति होती है ।चीन द्वारा देश के पराजित होने पर निम्न को इसी परूष भाव की अभिव्यक्ति द्स्टव्य है –

''सामने देश माता यका भव्य यचरण है ,
जिहा पर जलता हुआ यएक बस प्रण है,
काटेगें उरि का मुण्ड कि स्वयं कटेगें
पीछे,परन्तु,सीमा से नही हटेगें''[18]

6–शब्द योजना–

युद्धपरक आधुनिक भाषा शिल्प पर यविचार यकरते समय प्रस्तुत कविताओं का शब्द–ययोजना पर यविचार करना आवश्यक है ।युद्धपरक कविताओं की काब्य–भाषा का गठन विषयानुसार हुआ है । इस प्रकार कवि के समझ भाषा का एक विशाल शब्द भण्डार उपस्थित रहता है साधारण बोलचाल की भाषा के अतिरिक्त ऐतिहासिक एवं पौराणिक शब्दो का भी प्रयोग किया गयया है जो कविता के शब्द भण्डार को विशेष रूप से समृद्ध करते है आलोच्य कविताओं में कुछ नये शब्दों का निमार्ण किया गया है कुछ विचित्र प्रकार के नियम–विहीन शब्दों का भी प्रयोग किया गया है संस्कृत तत्सम शब्दों का प्रयोग राम की शक्ति पूजा, असाहयवीण, अंधेरे में,दिखाई

देता है अन्यय कृतियों में इनका अभाव दिखाई देता है ।

युद्ध काव्यों में प्रयुंक्त शब्दों को हम निम्नवत अलग–अलग देखेंगे–

संज्ञा शब्दो का प्रयोग–

''राघव, रावण जानकी, यौमित्र, हनुमान, कटुता, शंकर, प्रलयंकर,स्त्रियां,चिकित्सक''[20]

''जमाता, शंकर, वीरिणी, दक्ष, कन्या, स्त्री, महादेव, पक्षी, लाडली, हॅसी''[21]

जानकी मिथिला ,रावण, लक्ष्मण, जटायु, अंगद, भरत, राम, सरयू, लंगा ''[22]

सर्वनाम का प्रयोग–

''वे, ये, यह, तुम,में, उससे, वह, [23]

''यह, वह, उस, में, वे, आप, हमको,''[24]

''हम, तुम, हम, कौन, उसको, ये, में,''[25]

''वह, हमको, में, तुम, यह, उनसे, कौन,''[26]

विशेषण शब्दो का प्रयोग–

''आसन दिया, क्रतकृत्य हुआ, असाध्य, अभियन्त्रिक कारूवाद्य''[27]

''लहुलुहान होना, जहरीली चीखो, त्रिशूली पहाड, दृढपटाती लाश''[28]

''अकुए फूटना, कसरत करना, इन्तजार करना, कॉपता था,[29]

''अडां देना ,आहमारना, इशारा करना, गले लगाना ''[30]

मुहावरे एवं लोकोक्तियों–

''आलोक जगा, अलग–अलग संगीत सुना, युगपलट गया ''[31]

''वे एक दूसरे से दांता किलकिल कर रहे, अपने चेहरे की राख दूसरों की रूमाल से झाडना ''32

''आह भरना, इश्तिहार रखना, कसम खिलाना, जेब से निकालना, चक्की मशीन में डालना, चेहरे पर मासूमियत उतारना''33

लक्षण व्यंजना –

''अलस अंगडाई लेकर मानो जाग उसे थी वीण्य''[34]

''गेरूआ मौसम उडते है अंगार''[35]

''वह तीन लिखता है और लोग उसे गुट समझते है ''[36]

''तुम मेरी पूजा करो उग्रतारा''[37]

सूक्तियां–

''युद्ध ऐतिहासिक फेंन है ''[38]

''युद्ध मन्त्रणा नहीं दर्शन है ''[39]

''युद्ध किसी भी पीढी के लिये दायित्व है ''[40]

''ज्ञान जो समर्पित नही,अधूरा है ''[41]

"मर्यादित आचरण कवच है "[42]

"वे जिसकी पीठ होंकते है उसके रीढ की हड्डी गायब हो जाती है । "[43]

" जनतन्त्र एक ऐसा तमाश है जिसकी जान मदारी की भाषा है "[44]

रंगबोधक शब्दो का प्रयोग –

" जो काली दुबली मटमैली देहों के " [45]

" समझौते की सफेद चादर के नीचे " [46]

" हां याद आया रक्त ! लाल–लाल " [47]

" कोकाकोला के नीले गफास में " [48]

" अब राख ही बच गया है पीला मवाद "

" लाल–लाल कुहरा, "[49]

" युद्ध बोधक शब्द–

" बाण, धनुष, खड्ग, शिरत्राण, युद्ध यात्रा, सेनाऐं, रण निनाद, भेरियां, युद्ध घोष, इंडिया। " 50

" त्रिशूल, पाशो, युद्ध, रक्तपात " [51]

अंग्रेजी शब्द–

" बटन होल, रडार, ट्रेजड़ी, मिस्टर, मशीन " [52]

" एटम बम, ब्लैक आउट, टैंक, राइफल, मास्क [53]

" स्टेज " [54]

" ऐक्टर, फेक्टर, पार्टी, एडवर्ड, टिकट घर, पेंटेट, रिहर्सल, स्टूल, पोस्टर " [55]

संस्कृत शब्द–

" शतशेल सम्बरणशील, कटिबन्ध, तूणीर, धरण, रलथ, सुग्रीवाडवाद " [56]

" सर्वकर्म फलना, सदा, दाता, त्वमेव, परमेशान, कृपां, ब्रह्मणे, परमात्ने, नमों, भावाय, देवाय, श्री कंठाय, दयासिन्धों, महेशान, रक्षित, सततं, नाथ, त्वमैव, करुणानिधे " [57]

रवड़ी बोली–

" निर्णय, शासन, सुरक्षा, निराशा, राष्ट्र धर्म, देशहित, शान्ति, क्रान्ति " [58]

" साष्ट्रांग, रक्त, परिश्रम, चौराहा, नगरवासी, बदरंग, गुफाओं, शिष्टाचार, उर्वरा, " [59]

" बजट, सीढ़ियां, मौजूदा, निर्भर, समाचार, उजाला, प्रक्रिया, सार्वजनिक, आलोचकों, " [60]

फारसी–

" गैर–जरूरी, जिन्दा, वाजिब़, मज़बूरी, खून, औरत, आजादी, अजनबी, अंकुएं, तस्वीरों, दरबाजे, दरबे "61

" बदनामी, फौरन, उफ, "[62]

" खत, ऐतराज, रोज, इन्तजार, ग़लती, खारिज, सजायापत्ता, चीज, जिन्दगी, ज़ायका, फर्ज, रोजी, हिदायत,मंजिलों इरादा, सड़के, " [63]

" अखबार, तोहफें, दफ्तरों, दरख्वास्त्रे, बाजार, गुलफान, नशा, "[64]

युद्ध परक कविताओं में प्रमुख उपर्युक्त शब्दावली विशेष, मुहावरे सूक्तियों, आदि से इन कविताओं की मुख्य विशेषताओं को समझा जा सकता है। शब्द प्रयोग की दृष्टि से युद्ध परक रचनाओं में एक विकास यात्रा दिखाई देती है। प्रारम्भ में जहां तत्सम प्रधान पौराणिक शब्दों का प्रयोग हुआ है वहीं सामयिक कविताएं जन–साधारण की बोली के अधिक निकट हैं।

7– वाक्य विन्यास–

वाक्य विन्यास में लम्बी और छोटी दोनों प्रकार रचनाएं युद्ध परक आधुनिक काव्य में मिलती हैं। 'निराला' की 'राम' की शक्ति पूजा' एक वाक्य सोलह पंक्तियों के बाद समाप्त होता है लेकिन छोटे छोटे वाक्यों की ओर ही झुकाव अधिक रहा है। कुछ अपवादों के अतिरिक्त प्रायः लघु–वाक्य–योजना ही मिलती है। यह कविता पद्य से गद्य की ओर बढ़ी है अतः बोलचाल के वाक्य विन्यास एवं कविता के वाक्य–विन्यास बहुत कुछ एक से प्रतीत होते हैं।

रवड़ी बोली–

" स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर–फिर संशय रह उठता जग–जीवन में रावण–जय भय," [65]

\+ + + + +

" लख्मण !

जैसा उचित समझाओ

बात कर लो, " [66]

\+ + + +

" जिसके कारण

मेरा माथा–नीचा है सारे समाज में, "[67]

\+ + + +

" रक्त उबल रहा है, " [68]

\+ + +

" ज्वालामुखी पिघल जान के उपरान्त " [69]

" भीड़ बढ़ती रही, चौराहे चौड़े होते रहे। "[70]

" बहुत समय पहले आयी थी " [71]

" इस नाटक की गूंगी हैसियत का

मुख्य कायर हूँ। " [72]

संस्कृत–

" तीक्षण–शर–विधृत–क्षिप्र–कर, वग प्रखर, " [73]

" शत–सहस्त्र पल्लवन–पतझरों ने जिसका नित रूप संहारों "[74]

"नमस्ते भगवान रुद्र, भास्करामित तेज से

नमो भवाय देवाय रसायांनु मयायते " [75]

" देवदेव महादेव लौकिकाचार कृत्प्रभो

ब्रह्मा त्वामीयवरं शंभुं जानीमः कृपया तव " [76]

फारसी–

" देखो–ये भयभीत

और शंकर हिंसक हैं।

लेकिन इसके बावजूद फिर " [77]

\+ + +

" हमने उफ़ तलक नहीं की " [78]

\+ + +

" फौरन निकल जाओ " [79]

\+ + +

अखबार के मटमैले हाशिये पर " [80]

\+ + + +

" खुशफहम इरादे थे। " [81]

\+ + +

" सोये हुये लावारिस " [82]

\+ + +

" मुझे उसकी कविता से कोई ऐतराज नहीं। " [83]

\+ + + +

" एक सज़ा यापता राग में बदल देता है" [84]

लोक भाषा–

" फोड़े की टीस पटा जाती है " [85]

\+ + + +

" संजय तनिक रुको " [86]

\+ + +

" अब लुक–छिप कर, बूढे निहत्थों का करेगें वध " [87]

\+ + + + +

" हमारी लोक–हँसाई——की " [88]

\+ + + +

" सती को बनाकर गोट चाल जो चली है " [89]

\+ + + +

"केवल लाँछना की ठठरियाँ " [90]

\+ + +

" खेत की मेड़ पार करते हुए " [91]

\+ + + +

'ब' संवाद योजना–

नाटकीय कार्य व्यापार को गतिशीलता देने वाला तत्व 'संवाद' कहलाता है। संवाद एक से अधिक लोगों की उपस्थिति का सुचक हैं। नाटक में कथावस्तु की सक्रियता और चरित्र का प्रकाशन बहुत कुछ अंशों में संवाद पर ही निर्भर होता है। युद्ध परक काव्यों में संवाद पात्रों के युद्धमय मनोभावों को व्यक्त करने वाले तथा गतिशील है। संवाद का प्रत्येक शब्द अपना महत्व रखता है किन्तु कहीं–कहीं निरर्थक शब्दावली का प्रयोग दिखाई देता है। संवादों में स्वाभाविकता, शिष्टता, सार्थक शब्द–योजना, औचित्य अभिनय संभावना, वैविध्य, प्रतीकाव्यकता, गीतात्मकता जैसे गुण उनकी प्रभविष्णुता में वृद्धि करते हैं।

आधुनिक युद्ध परक कृतियों में रचनाकारों ने संवाद योजना पर थी ध्यान दिया है। दुष्यंत कुमार नरेश मेहता , धर्मवीर, भारती के संवाद विशेष रूप से गतिशील हैं इसके अतिरिक्त यदा–कदा असाध्यवीणा, अंधेरे में, पटकथा, आदि में भी संवादों की योजना की गई है।

1– संवादों में नाटकीयता–

संवादों में नाटकीयता की पद्वति का आश्रय लेकर कथा का विकास पात्रों के वार्तालाप के माध्यम से किया जाता है। इस पद्धति को 'एक कंठ विषपायी' 'संशय की एक रात' अंधायुग में प्रचुर मात्रा में तथा 'असाध्यवीणा ' 'अंधेरे में' 'राम की शक्ति पूजा' में भी इस की अभिव्यक्ति मिलती है।

'राम की शक्ति पूजा' में नाटकीयता की रशबियां पाई जाती है, कविता की इतिवुत पद्धति में नाटकीय कार्य गुंथते हैं।

" देखों, बन्धुवर सामने स्थित जो यह मुधर
शोभित रात–हरित–गुल्म–तूण से श्यामल सुन्दर,
पार्वती कल्पना है इसकी, मकरन्द–विन्दु,
गरजता चरण–प्रान्त पर सिंह वह, नहीं सिन्धु, " [92]

' अंधायुग' में कवि ने दृश्य पृथक–पृथक स्वरों के माध्यम से संबादों में नाटकीयता के चित्र उपस्थित किये हैं। प्रथम अंक में हम प्रहरी के भय में देख सकते हैं–

"प्रहरी ! सुनते हो
कैसी है ध्वनि यह
भयावाह ?
प्रहरी ? सहसा अधियारा क्यों होने लगा
देखो तो
दीख रहा है कुछ ?

प्रहरी ! अंधे राजा की प्रजा कहाँ तक देखे ?

दीख नहीं पड़ता कुछ

हाँ, शायद बादल है '' [93]

स्थिति की गम्भीरता को कवि ने गिद्धों की

पंखध्वनि द्वारा प्रस्तुत किया है–

'' प्रहरी ! लो

सारी कौरव नगरी

का आसमान

गिद्धों ने घेर लिया

प्रहरी ? झुक जाओ

झुक जाओ '' [94]

संवाद में हम देखते है कि नाटकीय परिस्थितियों के अनुसार स्वर अपनी परिवर्तन प्रक्रिया को बनाये रखते हैं जो नाटकीय संवादों की स्थिति के अनुकूल और आवश्यक है।

'संशय की एक रात' में संवाद लम्बे–लम्बे तथा कई–कई पृष्ठों तक चलते हैं प्रथम सर्ग में राम–लक्ष्मण का एक अति संक्षिप्त संवाद है तथा द्वितीय सर्ग में राम, नील, जामवंत, छाया के बीच संक्षिप्त संवादों में नाटकीय विद्यमान है–

'' राम– पहले कब देखा ?

नील –कुछ दिन हुए।

राम– आज ?

नील– वृष्टि शुरू होने पर। '' [95]

' एक कंठ विषपायी' में इन्द्र से ब्रह्मा के प्रश्न करने पर कि यह कौन है, सर्वहत का संवाद नाटकीयता से युक्त है–

'' में।

मैं कौन हूँ––––?

––––शायद मैं राजा हूँ

––शायद मैं शासन का प्रतिनिधि हूँ

––या मैं राज्य की प्रजा हूँ

या शायद मैं कुछ भी नहीं हूँ

और सब कुछ हूँ। '' [96]

2– संवादों में कवित्व एवं गीत–

यों तो संवादों में कवित्व एवं गीत का प्रयोग नाटक परम्परा की वस्तु है किन्तु आलोच्य कृतियों में इस

नवीन में इस नवीन पद्धति का प्रभाव दिखाई पड़ता है, क्योंकि प्राचीन –काव्य प्रणाली उन्होंने वहीं ग्रहण की । 'अंधायुग' के अंक के शुरूवात कथा गायन से होता है इसका प्रयोग पूरी विषय वस्तु को जोड़ने के लिए किया गया है। इस प्रकार के संवाद युद्ध परक कृतियों में यदा–कदा ही मिलते हैं। यह अप्राकृतिक प्रवृत्ति युद्ध परक कविताओं से दूर है। आलोच्य कृतियों में यह संवाद प्राप्त नहीं होते।

3– संवादों में लयात्मकता–

संवादों में लयात्मकता आधुनिक युद्ध–परक कविता में स्वीकृत है। विचारक मानते हैं कि– " काव्य लय, अर्थ और संगीत में ऐसा शब्द है जिसके आरोह–अवरोह, सम्भ वैषम्भ, संघात–व्याघात सभी मिलकर प्रवाह उत्पन्न करते है ताकि प्रयोग में लाया गया प्रत्येक उपादान सक्रिय होकर कविता को विशिष्ट अर्थवत्ता और व्यंजना दे, उसकी प्रभाव वान्निति को अधिक सघन और गव्यात्मक बनाएं।" [97]

डा0 जगदीश गुप्त ने शब्द एवं अर्थ एवं अर्थ लय के स्वरूप को स्पष्ट करते हुये लिखा है– " जिस प्रकार ध्वनि जिस प्रकार ध्वनि अथवा शब्द खण्डों का फिर–फिर कर आना क्रमिक रूप से लय के विभिन्न प्रकारों को जन्म देता है। उसी प्रकार अर्थ खण्डों का क्रमिक ग्रथित आवर्तन–प्रत्यवर्तन अर्थ की लय के विविध रूपों की सृष्टि की करता है। " [98]

युद्ध परक कृतियों के संवादों में लय की अनुरंव्रकता एड सुखकर वातावरण का सृजन करती है– राम की शकित पूजा से लय दृष्टव्य है–

" कह हुए मौन शिव, पवन–तनय में भर विस्मय
सहसा नभ में अज्जना–रूप का हुआ उदय, " [99]

' अंधायुग' में भारती जी ने स्वर एवं संगीत का विशेष ध्यान रखा है क्योंकि नाटक की सफलता इस पर केन्द्रिय रहती है। कवि ने अंधायुग के निर्देश में लिखा है– " जैसे एक बार बोलने के लिए कोई मुंह खोले, किन्तु उसी बात को कहने में, मन की भावनाएं कई बार करवटें बदल लें, तो उसे सम्प्रेषित करने के लिए लय भी अपने भी अपने को बदल लेती है। कहीं कहीं लय का परिवर्तन मैने जल्दी–जल्दी ही किया है– उदाहरण के लिए पृ0 79–80 पर संजय के समस्त संवाद एक विशिष्ट लय में है, पृष्ठ 81 पर संजय के संवाद की यह लय बदल जाती है। " [100]

पथम अंक में चिंतातुर धृतराष्ट्र की तरह जब विदुर बढ़ते हैं उनके पैरों की आहट पाकर धृतराष्ट्र 'कौन संजय' उच्चारण करते है जो बहुत ही स्वभाविक लगता है उसके स्वर कंपन से दर्शक के मन संचार हो जाता है–

" धृतराष्ट्र कौन संजय ?
विदुर नहीं !
विदुर हूँ
महारज।
विहवल है सारा नगर आज
बचे–खुचे जो भी दस–बीस लोग

कौरव नगरी में हैं

अपलक नेत्रों से

कर रहे प्रतीक्षा हैं,

संजय की। " [101]

इससे धृतराष्ट्र की संशय शीलता एवं व्याकुल मन, स्थिति का पता चलना है। एक ही व्यक्ति की मना स्थिति प्रस्तुत करने के लिए परिस्थितियों के अनुसार कई स्तरों पर अपने लय को परिवर्तित करती रहती है। अश्वत्थामा के शब्दों में लय परिवर्तन निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है–

"कितना सुनसान हो गया है वन

जग रहा है केवल मैं ही यहां

इमली के, बरगद के, पीपल के

पेड़ो की छामाएं सोई है........" [102]

युद्ध परक आधुनिक काव्यों में संबादों में लयत्मकता मिलती है इस दृष्टि से शोध पटक सभी रचनाओं का महत्व है।

4– अभिनय–

आधुनिक युद्ध परक काव्य कृतियों में साध्य आंगिक, वास्विक, सात्विक और आहार्य चारों प्रकार के अभिनय के सामयिक संकेत मिलते है जिन्हें मैं युद्ध परक कृतियों के माध्यम से व्यक्त कर रही हूं–

भूमिका– नाटयको लोकवृत्तानुकरण अथवा तीनों लोको का अवानुकीर्तन कहा गया है। जीवन की सुख दुखात्मक परिस्थितियों के परिवेश में मनुष्य के मन अंगों एवं शनी की जैसी क्रिया प्रतिक्रिया होती है उसी के अनुरूप मन, अंग और वाणी आदि के द्वारा हाव–भाव लीला या उद्वत चेष्टा आदि का पात्र द्वारा कलात्मक भावपूर्ण प्रदर्शन प्रेक्षक को अभिभूत कर अपने साथ रस देश में ले जाता है, इसी लिए यह अभिनय होता है। " [103]

भारतीय नाटक शास्त्रियों ने अभिनय को मुख्यतः चार वर्गों में विभक्त किया है– आंगिक, वाचिक, सात्विक, और आहार्य। [104]

'एक कंठ विषपायी' से आंगिक अभिनय का दृश्य दृष्टव्य है–

" और सत्य के संरक्षक वे शिवशंकर हैं।

जो कि एक शव के कारण

लड़ने को उधत !

न्याय माँगता है जिनका अन्यास अप्रतिहत ! " [105]

" शंकर का वाचिक अभिनय दृष्टव्य है–

" कहदेना विष्णु और ब्रह्मा से,

संध्यतक

सती में न आई यदि चेतनता

दिग्दाह रुधिर के वर्षण से साथ–साथ

पूरा ब्रह्माण्ड भस्म कर दूँगा। " [106]

5– संवादों में वैविध्य–

युद्ध परक आधुनिक काव्य के संवादों के वैविध्य दिखाई पड़ते है। आधुनिक युद्ध परक रचनाओं का आध ार रामायण एवं महाभारत है इन महाकाव्यों में युद्ध का विशद वर्णन मिलता है और युद्ध वीरोत्याह का चित्रण भी इसलिए आधुनिक युद्ध परक काव्य में उत्साह परक संवाद दिखाई देती है। वहां कहीं पराजय के क्षण आते है वहां क्रोध का मनोभाव 'विजय' पक्ष के खिलाया' अपमान' ईर्ष्या, विद्वेषहीनता और प्रति हिंसा के कारण उत्पन्न छोटा है इसे हम क्रोधव्यंजक संवाद कहते सकते है। युद्धोत्तर परिस्थितियों में जूझते सैनिक एवं सामान्य जन की विवशता, असहायता, अकिंचनता, बार–बार की असफलता, अरक्षित भविष्य मानव मन में दैन्य की भावना को जन्म देते है। जो दैन्य परतु संवाद के अर्न्तगत आते है। युद्ध–भूमि में विजय पाने की अभिलाषा में जब सैनिक या प्रधान सेनानायक योजना वह तरीके से असत्य का अनुसरण करतें है तो उनके हृदय में ग्लानि एवं मस्ताप से युक्त संवादों का वर्णन मिलता है। आदर्शत्मिक संबाद वहां दिखाई देते है जहां मानवता, संस्कृतिक जातीयता देशभक्ति, राष्ट्रभक्ति, की भावनायें प्रकट हुयी हैं। युद्ध सूर्यवीरों द्वारा ही लडे जाते हैं। युद्ध के कारण एक ही होते हैं। जिन पर विविध सम्वाद प्राप्त होते हैं।

" शंकर,
देवलोक की सीमाओं में घुस आये है––
और आपके सहयोगी ब्रह्मा हमको
रक्षा की भी अनुमति देना नहीं चाहते। " [107]

'संशय की एक रात' में संवाद योजना अत्यन्त विस्तृत है और कहीं अति संक्षिप्त। ज्यादातर संबाद लम्बे–लम्बे , कई कई पृष्ठों तक चलते हैं। इसी से एक उदाहरण दृष्टव्य है–

"सम्भव था
सब कुछ सम्म्वथा
यह किसी अन्य का
उपनिवेश हो
यह स्वीकार नहीं अब
किसी मूल्य पर। " [108]

' स ' विम्ब योजना विधान–

आचार्य पं0 रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों" में– " काव्य का उपास्थिति काम है। कल्पना में विम्ब गया मूर्त उपस्थित करना –" [109]

वह सब कुछ जिसका हमें किसी इन्द्री के द्वारा प्रत्याक्षी करण होता है विम्ब कहलाता है। इन्द्रियों विम्ब का प्रथम गुण माना जाता है। वह वस्तु की अनुकृति नहीं हैं उसके सामान्तर एक नयी और आभूत पूर्वकृति होती है। विम्ब के साथ एक पूरा परिवेश होता है। विम्ब निर्माण कि प्रकृिया सामान्य नहीं होती किन्तु विम्ब एक नये अर्थ सौन्दर्य का उदघाटन करता है। उदाहरण के लिए प्रसाद की यह पंक्तियां है– "

अरूण यह मधुमय देश हमारा जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा सरस ताम रस गरम विभा पर नाच रही तरु शिखा मनोहर छिटका जीवन हरियाली पर मंगल कुम–कुम सारा अरुण यह मधुमय देश हमारा– " [110]

इस छन्द को पढ़ने से संध्या का नील गुलाबी बेसाहार छितिज रक्त कमल के प्रस्फूटित कोश की सद्यः आभा उस पर अध झुकी टहनी की कांपती हुई परछायी और उसके आस–पास दूवीढल कि हरियाली विखरी हुयी मांगलिक अनुस्वान की रोली ये सभी दृश्य विम्ब के रूप में दृष्टिगत होने लगते है। अतः विम्ब वह शब्द चित्र है जो कल्पना के द्वारा ऐन्द्रीय अनुभव के आधार पर निर्मित होता है। विम्ब वादी कवि एजरा पाउन्ड में विम्ब की परिभाषा इस प्रकार दी है–

" विम्ब वह है, जो काल की तत्कालिता में बौद्धिक और भावनात्मक संसृष्टि को ऊँचा स्थित करता है। " 111

–काव्यात्मक विम्ब के सम्बन्ध में जो व्याख्याएं दी गई है उसके आधार पर विम्ब की विशेषताए इस प्रकार हो सकती है–

1– विम्ब वस्तुओं के आंतरित सादृश्य का प्रत्यक्षी करण है। " [112]

2– विम्ब एक अभूर्त विचार अथवा भावना की पुनर्रचना है। " [113]

3– विम्ब एक प्रकार का शब्द चित्रण है। " [114]

4– विम्ब ऐं प्रिय माध्यम के द्वारा आध्सात्मिक अथवा तार्किक सत्यों तक पहुंचाने का एक मार्ग है। " [115]

5– विम्ब दो विरोधी संवेदनाओं अथवा अनुभूतियों का आंतरिक तनाव है।" [116]

विम्ब मनुष्य के सम्पूर्ण भाव व्यापार और चिंतन क्रिया में किसी रूप में अनिवार्यतः सम्बद्ध होती है। ऐंन्द्रिय संवेदन के द्वारा अपने आस–पास यथार्थ को जानना सुलभ होता है। बाहय संवेदन दृश्य जो अनुभान्य विम्ब के रूप में परिवर्तित हो जाता है। विम्ब एकता रह से सेतु का कार्य करता है। क्योंकि यह एक विचार को दूसरे विचार तक पहुंचाने में समर्थ है। अभूर्त अथवा शुद्ध चिंतन का आधार भी विम्ब ही होता है।

जब कोई अपनी काव्यकृति में मन के सहज, गति शीलता तथा जटिल सर्वगों की भाषा के जीवन्त माध्यम के द्वारा शाब्दिक पुनः निर्माण करता है उसे समीक्षा के क्षेत्र में आधुनिक पदावली में विम्ब विधान' कहलाते है। अनवरत चलने वाली इस प्रक्रिया से ज्ञातया अज्ञात रूप से एक सतत् अन्वेषण शील रचनाकार के मानव–मन की गहरी पीड़ा और आत्मबोध का भावना हेती है। इस प्रक्रिया से कविता में चित्रित एक फूल या पक्षी केवल फूल या पक्षी न रह कर अधिक जटिल और दुर्बोध मानवीय स्थितियों के द्योतक बनकर सामने आते हैं।

विम्ब की अपरिहार्यता– ' पल्लव की भूमिका में सुमित्रा पंत जी उस के लिए ' चित्र भाव' शब्द का प्रयोग किया है–

" कविता के लिए चित्रभाषा की आवश्यकता पड़ती है। उस शब्द सस्वर होने चाहिये, जो बोलते हैं। सेब की तरह जिनकी रस, मधुर, लालिमा भीतर न समा सकने के कारण झलक पड़े, जो अपने भाव को अपने ही ध्वनि में आंखों के आगे चित्रित कर सके, जो झंकार में चित्र, चित्र में झंकार हो, जिनका भाव–संगीत विशुद्धारा की तरह रोम–रोम में प्रवाहित हो सके, जिसका सौरभ ही सांसे द्वारा अंदर पैठकर हृदय काश में समा जाए। जापान की द्वीप मालिका की तरह जिस की छोटी–छोटी पंक्तियां अपने अन्तस्तल में सुलगी ज्वालामुखी को दबा

न सकने के कारण अनन्त श्वासों – छवास के भूकम्प में कापती रहे। " [117]

विम्ब की अपरिहार्यता काव्य में इसलिये आवश्यकता है क्योंकि विम्ब ही मन के अचेतन स्तर को सहयोग प्रदान करता है। विम्ब प्रेषणयिता के लिए भी आवश्यक है। साधारणी करण जिस प्रकार कविता के लिए आवश्यकता है उसी प्रकार बिम्ब रचनात्मक कल्पना सृष्टि में सहायक है। 'पल्लव' की भूमिका के ऊपर काव्य में विम्ब रसानुभूति की प्रक्रिया को प्रमाणित करते हैं। इस सम्बन्ध में आर्चाय रामचन्द्र शुक्ल का मत उल्लेखनीय है– " रसनुभूति प्रत्यक्ष या वास्तविक अनुभूति से सर्वथा कोई अर्न्ततृप्ति नहीं है, बल्कि उसी का एक उपात्त और अवदात्त सदस्य है। " [118]

ऐन्द्रिय सवैदन तथा वैदिकधारणाएं प्रत्यक्ष अनुभूति के भीतर ही मष्टि होती है। रसात्मक संवेदना की अनुभूति इन्हीं सूक्ष्म विम्बों के द्वारा होती है। रस व्यापार में ये विम्ब प्रवीभूत अनुभूति के ठोस जीवित कणों के रूप में बने रहते हैं। उस आनंद की शक्ति तीव्रता का निर्धारण विम्बों के स्वरूप और क्षमता के आधार पर ही किया जा सकता है।

वस्तुतः शुद्ध काव्य की उक्ति सामान्य तथ्य कथन या सिद्धान्त रूप में नहीं होती। कविता वस्तुओं और व्यापारों का विम्ब–ग्रहण कराने का प्रयत्न करती है अर्थ के ग्रहण करने भाव से उसका काम नहीं चलता है। विम्ब –ग्रहण जब होगा वह विशेष व्यक्ति का ही होगा, सामानय जाति का नहीं। काव्य में मात्र अर्थ ग्रहण से ही काम नहीं चल सकता विम्ब ग्रहण आवश्यकता होता है। यह ग्रहण से ही काम नहीं चल सकता विम्ब ग्रहण आवश्यक होता है। यह विम्ब का ग्रहण निर्देष्टि, गोचर और मूर्त–विषय का ही हो सकता है।

निराला ने काव्य के रूप में और अरूप में पूणर्षक के अर्न्तगत प्रायः सभी कलाओं के लिए मूर्त को आवश्यक बताया है। उनका मानना है कि तमाम भिनताओं के भीतर एक भाव साम्य होता है। उनके अनुसार सौंन्दर्य रूप और भावनाओं के आदान–प्रदान में विम्ब विधान आवयश्यक होता है। विम्ब के द्वारा ही कविता और कला भूर्त रूप लेती है। ज्यों का त्यों चित्र उतर जाता है। कविता का काम कल्पना में मूर्त भावना को उपस्थित करना है। बुद्धि के सामने कोई विचार लाना नहीं है। अतः कविता के लिए विम्ब सृष्टि कलाकार की सबसे बड़ी उपलब्धि ा है। एक अच्छा विम्ब सृजित कर देने से उस कविता का महत्व सत्गुणित हो जाता है। प्राचीन कविता चरित्र–चित्रण पर अधिक बल देती थी। परन्तु आधुनिक कविता विम्ब विधान पर बल देती है।

संदर्भ और संवेदना के आधार पर विम्ब विधान–

वैसे तो विम्ब चयन के क्षेत्र असंख्य है आलोचकों ने कई प्रकार से विम्बों का वर्णीकरण भी किया है किन्तु इस प्रकार के वर्गीकरण अपने आप में पूर्ण नहीं कहे जा सकते क्योंकि आलोचकों की व्यक्तिगत अभिरूचि के आधार परयह वर्गीकरण पृथक–पृथक हुए हर एक वर्गीकरण में कुछ न कुछ तथ्य छूट गए। पाश्यात्य समीक्षा के क्षेत्र में विम्बों के वर्गीकरण की दो प्रमुख पद्धतियां पाई जाती है।

1– विषय वस्तु और मूल स्त्रोंतों के आधार पर

2– विम्बों के गुण धर्म तथा रूपगत तथा भिन्नताओं के आधार पर एक नया बर्गीकरण मनोविश्लेषण वादी आलोचकों का है जिनके अनुसार स्वप्न स्मृति तथा उपचेतन सिद्धातों से विम्ब का वर्गीकरण किया जा सकता है। कतिपय आलोचकों ने प्रियता के आधार पर विम्बों का वर्गीकरण किया है, किन्तु हमने आधुनिक युग के युद्ध

काव्यों को ध्यान में रखकर विम्ब विधान का एक नया वर्गीकरण स्वीकृत किया है तो इस प्रकार हो सकता है–

विम्ब विधान–

(अ) हर्ष, उल्लास के वीरोचित विमब

(i) अस्त्र शस्त्र सम्बन्धी विम्ब

(ii) वीरों की वीरोचित मुद्राओं के विम्ब

(iii) पर एवं परिधान सम्बन्धी विमब

(iv) ध्वज विम्ब

(ब) विषाद शोक एवं पराजय के विम्ब

(i) अस्त्र–शस्त्र लुष्ठित होने का विम्ब

(ii) पराजित सेनाओं की शोक मुद्राएं

(iii) भंग एवं क्षीण अंग एवं अस्त्र

(iv) ध्वज विम्ब

(स) सत्यासक के आधार पर विम्ब पर विधान

(i) धार्मिक विम्ब

(ii) न्याय सम्बन्धी विम्ब

(iii) नैतिक विम्ब

(द) असत्याधारित विम्ब विधान

(i) अधार्मिक विम्ब

(ii) अन्याय सम्बन्धी विम्ब

(iii) अनैतिक विम्ब

(य) शिल्प सौन्दर्य मूलक शिल्प विधान

(i) प्राकृतिक विम्ब

(ii) पौराणिक विम्ब

(iii) ऐतिहासिक विम्ब

(iv) प्रतीकात्मक विम्ब

(अ) हर्ष उल्लास के वीरोचित विम्ब–

इस वर्ग के विम्बों में मूल रूप से विजेता की विजय श्री की भावना होती है। युद्ध से सम्बन्धित कविताओं में अधिकांश विम्ब इसी वर्ग के अर्न्तगत आते है। कवियों ने योद्धाओं के हर्ष, उल्लास और उनके भीतर उमड़ने वाले ज्वार का उदघाटन करने के लिए विम्बो का चयन किया है। उदाहरण के लिए कतिपय बिम्ब दृष्टव्य है–

" मेरा रंग दे बसन्ती चोला

जिस गंगा में रंगे वीर शिवाने मां का बन्धन खोला

जिस रंग में रंगे प्रताप ने जननी जय जय बोला।

यही रंग हल्दी घाटी में भी था खुलकर खेला। " [119]

" हुमक–हुमक के लगे चलाने तीर तबर बरछे भाले समर भयंकर वीर हुये वे महाकाल से मतवाले। किन्तु इध

र ये दोनों क्षत्रिय भर भुज में चण्डी कातेज अरि के कटे–फटे अंगों से लगे सजाने अनेक –सेज। " [120]

(1) अस्त्र शस्त्र सम्बन्धी विम्ब–

युद्ध मूलक कविताओं में इस वर्ग के विम्बों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। युद्ध की कल्पना आते ही अस्त्रों शस्त्रों का ध्यान आना स्वाभाविक है फिर युद्ध कोई कल्पना हुये है उनमें अस्त्र–शस्त्र की ही प्रधानता रही है। यहां तक की आज के वैज्ञानिक युग में भी अणु अस्त्रों का प्रयोग प्रारम्भ हो गया है। युद्ध काव्यों में इनका प्रयोग और इनकी उपस्थिति एक प्रकार से अनिवार्य होती है। मारक दूरी वाले अस्त्र–शस्त्र ही एक बड़ी सीमा तक युद्ध को प्रभावित करते है। युद्ध प्रधान काव्यों में से कतिपय विम्ब प्रस्तुत किये जा रहे है जिनमें अस्त्र–शस्त्रों का सन्दर्भ प्रमुख रूप से परिलक्षित है–

" कठिन कुठार, त्रिशूल, तड़ित, तलवारों की झन्कारों, गदाघात, प्रतिघात, धनुष प्रव्यज्चाकी तलवारें। " 121

" भयंकर तोपों से विकराल

छूटते गोले छह लाल

फूटते समर भूमि पर

जैसे शत–शत धूमकेतु

हो खंड–खंड

गिरते धरती पर

मोर्टार गरजते निरन्तर

उगल रहे गोले प्रलयंकर

ज्यों उल्का, पविपात भयंकर

गगड़–गगड़ गड़ टैक दैत्य सम। " [122]

(ii) वीरों की वीरोचित मुद्राओं के विम्ब–

युद्ध बहुत कुछ वीरों के मनो वेगों पर आधारित होता है केवल अस्त्र–शस्त्र ही नहीं लड़ते बल्कि वीरों के अन्दर उठने वाले भावावेगों, भाव मुद्राओं, अंगों के परिचालन, भ्रुव निश्रेय, बांहों के फडकनें, भुज दण्डों के ठोंकने के साथ–साथ हर्ष उल्लास की अनगिनत मुद्राऐं युद्ध काव्यों में विम्बों के रूप में दृष्टि गोचर होती है जो युद्ध के व्यापार को मूर्तित करती है। युद्ध काव्यों के कतिपय प्रसंग उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किये जा रहे हैं जिनमें अंग संचालन और मुद्राओं के विम्ब दृष्टि गोचर होते हैं–

" आह ! तीसरा नेत्र

रक्त का प्यासा कब से। " [123]

" संग्राम सिंधु लहराता है

सामने प्रलय घहराता है

रह–रह कर भुजा फडकती है

बिजली सी नसे कटकटी हैं

चाहता तुरत मैं कूद पड़ूं,

जीतूं कि समर में डूब मरूं। "[124]

(iii) पट एवं परिधान सम्बन्धी विम्ब–

युद्ध में निमग्न वीरों के वस्त्रों कटि में बांधे हुये फेरे शीश पर बंधी हुई पगड़िया आदि की मनोहारी छवियों को कवि ने युद्ध के प्रसंग में व्यक्त किया है। युद्ध के समय वस्त्रों के फहराने एवं उनके उल्लास पूर्ण प्रदर्शन में भी कवियों ने रूचि ली है। युद्ध से सम्बन्धित पट एवं परिधान के कतिपय विम्ब यहां पर प्रस्तुत किये जा रहे हैं–

" कहा पार्थ ने उत्तर ! उतरो रथ से सत्वर जाकर।

सबके उत्तरीय तुम ले लो धीरे से जा–जाकर।।

कृपाचार्य का श्वेत वस्त्र फिर और कर्ण का पीला।

अश्वत्थामा दुर्योधन का लेकर कपड़े नीला।। " [125]

" दृढ़ जटा–मुकुट हो विपर्यष्ट प्रतिलट से खुल " [126]

(iv) ध्वज विम्ब–

युद्ध में ध्वज का एक विशेष महत्व होता है। प्रायः सैनिक अपने सेनापति को ध्वज के माध्यम से पहचानते थे। ध्वजा प्रायः रछो, अश्वों तथा गजों पर प्रतिष्ठित हेती थी और वह सम्पूर्ण सेना अपने ध्वज को ऊंचा रखने के निर्मित्त अपनी जान पर खेल जाती थी। ध्वजा येद्धा का वह चिहन विशेष होता है जो उसकी शक्ति का ज्ञापक होता है युद्ध में प्रत्येक पक्ष का अपना ध्वज प्रतीक होता है इसके उदाहरण निम्न लिखित है–

" बल विवेक दम परहित घोड़े, कृपा क्षमा समता की डोर चल फहराते सत्य अहिंसा, ध्वजा–पताका यश सब ओर " [127]

" ध्वजा धरे

धक धायें धायें

धावा करते " [128]

(ब) विषाद शोक एवं पराजय के विम्ब–

युद्धाओं के भीतर अनुभूतियों का होना स्वाभाविक है जिस प्रकार युद्ध में हर्ष और उल्लास की भावनाएं काम करती हैं उसी प्रकार पराजय में निराला, चिन्ता आदि की मन स्थिति का होना स्वाभाविक है। विचार और निराशा को दृश्वद अनुभूतियों का विम्ब विधान इस प्रकार है–

" श्तय धनु–गुण है, कटिबन्ध स्त्रस्त–तूणीर–धारण, दृढ जटा–मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल फैला पृष्ठ पर, बाहुआ पर, वक्ष पर, विपुल उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशान्धकार, चमकती दूर ताराएं ज्यों हो कहीं पार।"[129]

" प्रचंड कोलाहल हुआ रात में

उसमें सुनिर्वाध सशस्त्र घूमकर

चुन–चुन कर मारा वीरों को,

जैसे अख्य में कोई भयंकर लकड़हारा,

डाल–डाल को काट रहा हो महावृक्ष की

इस तरह पांचाल लक्ष्मी का विनाश करके

सब शवों का ढेर किया जिसने

उसके कृत्यों को न्याय

कहेगा कौन सिवा धीर युधिष्ठिर के ? " [130]

(i) अस्त्र शस्त्र लुठिठत होने के विम्ब–

पराजित योद्धाओं अथवा पराजित सेनाओं के अस्त्र–शस्त्रों के टूटने और खण्डित होने तथा उनके अस्त्र व्यस्त होने अथवा पराभूत होने का वर्णन भी युद्ध काव्यों में मिलता है जो उनकी पराजित मनो दशा को व्यक्त करता है। म्यानों का झुकना या मुड़ना बाणों का निष्फल होना और अस्त्र शस्त्र टूट कर गिरने का चित्रण निम्न लिखित पंक्तियों में दृष्टव्य है–

" सन् सन् सन् सनन्न सन् बोली लोहे पर लोहे की मार गिराते टूट कर बरछी भाले कढी दुधारी और कटार।

चेत उठा काली का खप्पर दलों में हाहाकार,

कहीं नुचे अवयन यदि शर से कहीं बह चली शोषित धार। " [131]

" साध–निशाना फिर जैसे ही बटन दबाया

इन्द्र वज्र सा ती–दस राकेट तत्क्षण छूटा,

और शत्रु के एक टैंक पर ऐसा बैठा

उडी धज्जियां उसका पुर्जा टूटा " [132]

" फंसा कर्ण का रथ जैसे कुरुक्षेत्र में

फॅसे टैंक मरु में त्यों ही दुश्मन के भारी

इनमें से सैनिक के अंजर पंजर करके

दो चालू हालत में दुश्मन से पकडे थे। " [133]

(ii) पराजित सेनाओं की शोक मुद्राएं–

पराजित योद्धाओं की मनोदशाओं को अनेक शोक मुद्राओं से अभिव्यजिंत किया गया है। मुंह छिपाना, पलायन, शोक कराहने की मुद्राऐं अंग भंगिमाओं की लज्जित चेष्टाओं आदि का निरुपण युद्ध के प्रसंगों में पाया जाना स्वाभाविक है। मनोदशाओं को मुद्रित करने में कवियों ने भंगिमाओं को ही आधार बनाया है और इस प्रकार अनुभाव योजना का सुन्दर संकेत निम्नलिखित विम्बों में देखा जा सकता है–

" मेघनाद ने कसकर मारी सांग कि जो थी जग विख्यात लक्ष्मण वपु के साथ ही गिरी भूमि पर काली रात थमा युद्ध, रावण दल गरजा, मचा राम–दल हाहाकार विकल हुआ उर रामचन्द्र का, विचल कर उठा शोक अपार। "[134]

" टूटा रथ सारथी गिर पड़ा घोडे वही हो गये ढेर

कटी भुजाएँ, जांघे टूटी, फटा पेट अन्त्रालि बिखेर।

उडा मुंड, गिर रूंड धूलि पर हुआ धूल ही खोकर प्राण

जग विद्रावल रावण से यो मिल सिसकते जग को त्राण। " [135]

(iii) मलिन एवं विपर्यय की स्थिति में वस्त्र–

शोक एवं पराजय की स्थिति में योद्धाओं और सेनाओं और सेनाओं के धराशायी होने पर उनके वस्त्रों का मलिन होना अथवा धूल–धूसरित होना रक्त रजित होना अथवा वस्त्रों का यथा स्थिति में न होना या वस्त्रों का विपरीत अंगों में पहुंच जाने आदि के वर्णन भी युद्ध काव्यों के लिए पराजित मनोदशाओं को व्यक्त करने वाले होते हैं, ऐसे विम्ब भी युद्ध काव्यों में विम्बत हुये हैं–

" खाली हाथ

नंगे पाँव

रक्त सने

फटे हुए वस्त्रों में

टूटे रथ के समीप। " 136

(iv) ध्वज विम्ब–

पराजय की स्थिति में ध्वज जो किसी भी सेना के कीर्तमान होते हैं उनका अस्त–व्यस्त होना या झुकना आदि वर्णित होते हैं। शत्रु सेनाऐं पराजय की दशा में अपने ध्वजों को उतार लेते है अथवा उनके ध्वज अदृश्य हो जाते हैं। इस प्रकार के विम्बों के कतिपय उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे है–

" कह दो उनसे जगा कि उनकी

ध्वजा धूल में सोती है

सिंहासन है शून्य सिद्धि,

उनकी, विधवा सी रोती है। " [137]

(स) सत्या सत्य पर आधारित विम्ब विधान–

विम्बो का दूसरा वर्गीकरण प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में सत्या–सत्य के आधार पर निरूपित कार्य किया है। युद्धो का आधार ही सत्य के लिए न्याय, नैतिकता के समर्थन में एक जुट होना तथा व्यक्ति समाज और धर्म राज्य के स्वत्व के लिए संघर्ष करना होता है। व्यक्ति के सम्पत्ति सम्बन्धी विवाह हो अथवा अस्तिव सम्बन्धी या सुरक्षात्मक अथवा किसी राष्ट्रकी सीमाओं को लेकर या उसकी स्वतत्रता को लेकर जो युद्ध किये जाते है उनके पीछे यही मनोवृत्तियां कार्य करती है जिनका विश्लेषण हम निम्नलिखित उपबन्धों के अर्न्तगत करेगें।

(i) धार्मिक विम्ब–

युद्धों का एक कारण धार्मिक स्वतन्त्रता, धार्मिक, आस्था और धर्म के प्रति लोक जीवन की आस्था को दिया जाता है। युद्ध के पीछे धार्मिक आस्था और अधार्मिक आस्था का द्वन्द्व चलता है, यहां तक कि ये आस्थाऐ कहीं कहीं विक्षिप्त का रूप ले लेती हैं और युद्धों को धार्मिक जेहर (धर्मयुद्ध) के रूप में जोड़ दिया जाता है। कवि अथवा कलाकार का दायित्व धर्म के प्रति आस्था उत्पन्न करना होता है। अतएव उसके काव्य का नायक वहीं होता है जिसका पक्ष धर्म का होता है, यही कारण है कि अधिकांश महाकाव्यों के नायक राम है रावण नहीं।

निम्नलिखित पंक्तियों में धार्मिक विम्बों का रूप देखा जा सकता है–

" जहाँ शस्त्र बल नहीं,

शास्त्र पछतात या रोते हैं।

ऋषियों को भी सिद्धि

तभी तप से मिलती है,

जब पहरे पर स्वयं

धनुधरी राम खड़े होते है। " [138]

(ii) न्याय सम्बन्धी विम्ब–

धर्म की ही भॉति न्याय भी एक ऐसा मूल्य है जिसके लिए अधिकाश रूप में संघर्ष अथवा युद्ध की स्थितियां उत्पन्न हो जाती है। धर्म अधर्म की ही भॉति न्याय अन्याय भी ऐसे सतत् मूल्य है जिनका प्रत्यक्ष या परोक्ष सम्बन्ध ा युद्ध काव्यों में हो रहा है। न्याय के पक्षधर अन्याय को मिटने के लिए संगठित होते रहे और उनका चेतना न्याय के लिए प्राण अर्पित करने न भी प्रसन्नता का अनुभव करती रही राष्ट्रीय स्वतन्त्रता का संग्राम भी अन्यायपूर्ण सत्ता को मिटाने के लिए न्यायोचित अधिकार दिलाने के लिए व्यक्तिगत और राष्ट्र के स्वदश्य स्वातंत्राकी भावना को प्रदान करती है। आधुनिक हिन्दी कविता में न्याय की पक्षधरता को लेकर ऐसे प्रसंगों का संयोजन किया गया है निम्न लिखित बिम्वों के माध्यम से ये बाते स्पष्ट हो जाएगी–

" सत्य का ताप

बड़े संयम और श्रम से मिलता है

जिसमें उद्घाटित होता है सत्य

उसे सृजन का सुख मिलता है,

किन्तु सृजन से पहले की पीड़ाओं जैसी

पीड़ा इसमें भी होती है" [139]

नैतिकता विमब– कविता से नीति का सम्बन्ध चिरकाल से चला आ रहा है नीति और उपदेश शैली को लेकर भक्तों और सन्तों ने नैतिक मूल्यों को ही जीवन में उतारनें के लिए प्रयत्नशील रहे हैं। आधुनिक युग की कवि भी नीति की अपेक्षा नहीं कर सकी अर्थात धर्म और सत्य के साथ नैतिकता का सहज अनुबन्ध होता रहा है। आधुनिक कविता में यद्यपि यथार्थ के स्वर मुख्य रूप से व्यंजित हुये है। किन्तु आदर्श की सर्वथा उपेक्षा किसी काल में भी संभव नहीं है आधुनिक काल यद्यपि नाना विसंगतियों का काल नैतिक मूल्यों में भी अपाधापी है।जीवन से तो जैसे यह मूल्य तियेहित ही हो गये हो किन्तु कविता कला के साथ नैतिकता को नहीं छोड़ पाते। आदर्श वादी चिंतकों का भी यही मानना है कि नैतिकता के बिना कविता अधूरी हैं। अतः नैतिक मूल्यों को लेकर आध ुनिक युग का कवि भले ही वही मात्रा में उदासीन दिखाई पडता हो किन्तु कवि और उसका रचना संसार नैतिकता विरोधी नहीं करता। इसे तो हर हाल नैतिक मूल्यों का पक्षधर होना ही है। युद्ध काव्यों में नैतिक विम्बों का जाना नितांत स्वाभाविक है निम्न लिखित बिम्ब इसी बात को विन्हित अभिव्यक्ति करते है–

" जब कोई भी मनुष्य

अनासक्त होकर चुनौती देता है इतिहास को
उस दिन नक्षत्रों की दिशा बदल जाती है। " [140]

असत्याधारित विम्ब विधान–

अ– अधार्मिक विम्ब– युद्ध काव्यों में धार्मिक विम्बों का होना जिस प्रकार अपरिहार्य है उसी प्रकार अधार्मिक विम्बों का भी पाया जाना स्वाभाविक है। क्योंकि युद्ध में दो पक्ष होते है पक्ष और प्रति पक्ष दोनों कभी भी धार्मिक नहीं हो सकते भले ही दोनों अपने–अपने दृष्टि कोण से अपने को धार्मिक मानते है। किन्तु किसी दूसरे का अधार्मिक होना। इन्हीं के बीच द्वन्द्व होता है। द्वन्द्व ही संघर्ष का मूल है। अतः आधुनिक हिन्दी काव्यों में जहां कहीं युद्ध के प्रसंग है वहीं पक्ष प्रतिपक्ष में से किसी एक का अधार्मिक होना भी स्वतः सिद्ध है। यहां कतिमय अधार्मिक भावना से सम्बन्धित विम्बों का अवलोकन करें–

"उठाओ शस्त्र
विगतज्वर युद्ध करो
निज्कियता में ही
मानव–अस्तित्व की सार्थकता है। " [141]

(ब) अन्याय सम्बन्धी विम्ब– युद्ध प्रायःन्याय की पक्षधरता के लिए लड़े जाते है किन्तु जिस प्रकार धर्म और अधर्म पक्ष और प्रति पक्ष के मूल्य हो सकते है। उसी प्रकार न्याय और अन्याय क्रम भी सतत् रूप में जीवन घटना चक्र में बना रहता है। किसी एक पक्ष का अन्याय पूर्ण होना स्वाभाविक है। यदि दोनों पक्ष न्यायोचित मार्ग पर हो तो शायद युद्ध की संभावनाएं ही नहीं होगी। किन्तु ऐसा होना दुर्लभ है। सारा संसार न्याय के पथ पर चले कोई भी अन्याय का रास्ता न स्वीकार करें इस प्रकार की सर्वमयी और सर्वन्याय प्रिय स्थिति तो अभी तक किसी भी राष्ट्र की नहीं देखी गई। समुन्नत और विकसित राष्ट्रों में भी युद्ध के बादल मडराते है भले ही उनका ग्रह युद्ध न होकर किसी अन्य पडोसी या किसी अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं से सम्बन्धित है। अतएव आधुनिक हिन्दी काव्यों में युद्ध के प्रसंगों में अन्याय का उल्लेख हुआ ही है और ऐसे विम्बों का अभाव नहीं हैं। यहां पर कतिपय उदाहरण दृष्टव्य है–

"निणर्य क्षण में विवेक और मर्यादा
व्यर्थ सिद्ध होते आये हैं सदा
हम सब के मन में एक अन्ध गहवर है।
बर्बर पशु, अन्धा पशु बास नहीं करता है, " [142]

अनैतिक विम्ब– जिस प्रकार नैतिक और मर्यादा युद्ध काव्यों का विषय बनी है उसी प्रकार अनैतिकता और मर्यादा भी युद्ध काव्यों में प्रतिविम्ब हुई है। कोई भी युग क्यों न रहा हो धर्म सत्य और नैतिकता के मार्ग में बाधाएं अवश्य उत्पन्न हुई हैं और इन बधाओं के रूप में अधर्म, असत्य, अनैतिकता कार्य करती रही हैं। ऐसी प्रतिक्रियाएं कवियों में व्यक्त की है जिसमें अनैतिक मूल्यों को स्थान मिला है। आधुनिक युद्ध काव्य भी इससे अछूते नहीं है। आधुनिक युद्ध कवितायें इस प्रकार के विम्ब विधानों का रूप देखिये–

" धर्मराज होकर वे बोले

'नर' या 'कुंजर'
मानव को पशु से
उन्होंने पृथक नहीं किया
उस दिन से मैं हूं
पशु मात्र, अन्ध–बर्बर पशु। '' [143]

(य) शिल्प सौन्दर्य मूलक शिल्प विधान– सम्बन्धी विम्ब विधान आधनिक हिन्दी कविता शिल्प प्रधान कविता हो गई है। आधुनिक हिन्दी कवियों ने युद्ध के प्रसंगों को जिस सम्मोहक और विस्मय विमुग्ध करने वाले शिल्प प्रयोगों के माध्यम से विम्बित किया है उनमें से प्रमुख विम्ब इस प्रकार वर्गीकृत किए जा सकतें है–

(अ) i– अलंकृत विम्ब– कविता में शब्द ही मुख्य व्यापार के अंग है कवि को जो भी दृश्य विम्बित करने होते है उनमें वह शब्द का सहायता से कुछ अलंकारों का आश्रय लेता है। और उन अलंकारों की सहायता से कही समान धर्मी विम्ब रचना है कहीं अलाकारों की सहायता से उर प्रेक्षाओ की कमनीय घाटियों में पहुंचकर कल्पनाओं के माध्यम से विम्बों कोउदधाटित करता है कहीं कहीं सादृश्य विधान चुनता है कहीं उपनाओं में कल्पनाओं को ढालता है। इस प्रकार सर्वत्र अलंकृत विम्बों का प्रयोग कवि को करना होता है धर्मवीर भारती ने अलंकारों के माध्यम से यहां एक विम्ब प्रस्तुत किया है–

'' कचले हुए सांप सठ
भयांवह किन्तु
शक्ति हीन मेरा धनुष है यह
जैसा है मेरा मन '' [144]

उक्त कथन में माध्यम से धनुष की तुलना कुंठित मन और कुचले हुये सांप से की है, वहीं मन की तुलना कुचले हुए सांप और भयावाह किन्तु शक्ति हीन धनुष से की गई है। प्रस्तुत पंक्तियों के माध्यम से कवि एक योद्धा की विकृत, कुंठित मनःस्थिति का विम्बन किया जिसे बड़ी कुशलता के साथ अभिव्यक्ति दी है।

युद्ध काव्यों में रूपक तो जैसा प्राणतत्व हो युद्ध के रूपक बड़े लम्बे भी चलते है। ये रूपक सांग रूपकों में भी बदल जाते हैं। लम्बे सांग रूपक के लिए धर्मवीर भारती का 'यह युग एक अंधा समुद्र है' दो पृष्ठों की लम्बाई वाला सांग रूपक है। युद्ध का 'एक रूपक निम्न लिखित पंक्तियों में भी देखा जा सकता है– जो युग सवने रण में मिलकर बोया है, जब वह अंकुर देगा, ढंक लेगा सकल ज्ञान, '' [145]

उत्प्रेक्षा का कौशल भी युद्ध को मूर्ति करने में सर्वाधिक सहायक सिद्ध हुआ है। धर्म वीर भारती ने महाभारत के प्रसंग से यहां पर जिस विम्ब धार्मिता को व्यक्त किया है। उससे भी उत्प्रेक्षा अलंकारों का विशेष महत्व है–

'' नर रक्त से वह तलवार उसके हत्यों में चिपक गई थी ऐसे
जैसे वह उगी हो
उसी के भुजमूलों से। '' [146]

मानवीय अलंकार का प्रयोग कवियों ने युद्ध को सजीव रूप देने में किया है। युद्ध में कहीं साक्षात विजय

श्री रणचण्डी के रूप में उपस्थित है। कभी कविता कलेवा के लिए कभी कपाली नर मुडो का रक्त पीने के लिए उपस्थित होती है। विकराल सैन्य समूहों का सजीव चित्रण, इसी मानवीय शैली के माध्यम से कवियों ने किया है धर्मवीर भारती ने भी इसी शैली को अपनाया है। अमूर्त भावों को अमूर्त रूप देते हुये धर्मवीर भारती ने प्रस्तुत पंक्तियों 'अर्ध सत्य' और भविष्य को मानवीय करण के रूप में इस रूप में प्रस्तुत किया है।–

" एक अर्द्ध सत्य ने युधिष्ठिर के
मेरे भविष्य की हत्या कर डाली है। " [147]

मृत्यु और काल का मानवी करण कर रूप देते हुए कवि भारती जी ने इस प्रकार अभिव्यक्ति दी है–

" और मौत ने मुझे बांह पकडकर किनारे खीच लिया है
आधीरात काला और पीला वेश धारण किये काल घूमा करता है। " [148]

(ii) प्रतीकात्मक विम्ब–

विम्बों की रचना में जहां अलेकार सहायक सिद्ध होते है वहीं प्रतीक भी विम्ब निर्माण में अनुकूल वातावरण उपस्थित करते है।भावनाएं सूक्ष्म हो अथवा जटिल उनकी अभिव्यंजना में प्रतीक उपयोग सिद्ध होते हैं। धर्मवीर भातीय तथा आधुनिक प्रयोगवादी कवियों ने दोनों प्रकार के विम्बों का प्रयोंग प्रतीकों के माध्यम से किया है। ध र्मवीर भारती ने मोहान्ध के लिए अन्धे का प्रतीक चुना है जैसे अन्धा व्यक्ति कुछ देख नहीं सकता ठीक–ठीक पहंचान नहीं कर सकता वैसे ही मोह से ग्रस्त व्यक्ति भी एक प्रकार की अन्धता अथवा जडता में होता है जिन्हें स्थितियों का ठीक–ठीक ज्ञान नहीं होता–

" अंधों से शोभित था युग का सिंहासन " [149]

इसी प्रकार महाप्राण 'निराला' ने 'राम की शक्ति पूजा' में 'अग्नि' को प्रतीकात्मकता प्रदान ही है। अकेली जलती हुई मशाल का विम्ब मानव की अदम्य जिजी विषा और संघर्ष का प्रतीक हैं। महाप्राण निराला के शब्दों में–

" है अमानिशा उगलता गगन घन अंधकार, खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन–चार, अप्रतिध्त गरज रहा पीछे अम्बधि विशाल, भूधर ज्यों ध्यान–मगन, केवल जलती मशाल। " [150]

(iii) पौराणिक विम्ब–

कविता का पुराण के साथ घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। आधुनिक युग विज्ञान का युग है, विज्ञान के कारण पौराणिक मान्यताऐं टूटी हैं किन्तु आधुनिक कवियों ने पौराणिक कथाओं मनोनिहित सत्यों को विम्ब के रूप में चुना है। प्रसाद की 'कामायनी' और निराला की 'राम की पूजा' में पौराणिक विम्ब प्रमुख रूप से प्रयुक्त हुये हैं। 'कामायनी' के द्वारा कवि ने आधुनिक और 'राम की शक्ति पूजा' के द्वारा राम के संशय ग्रस्त का सूक्ष्म निरूपण किया हैं। इन कवियों में पौराणिक कथानकों से प्रतीक चुने है, इसी क्रम में आधुनिक हिन्दी काव्य 'अभिशप्त शिला' में भी पौराणिक पात्रों को नये प्रतीको के माध्यम से तथा पौराणिक विम्बों से प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार के विम्ब विधान में संस्कृतियों का गहरा रंग है। पौराणिक विम्बों में देवासुर संग्राम, आदि पौराणिक विम्ब प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हुये है।

'अभिशप्त शिला' के कवि डा0 ललित ने बसन्त को कामदेव का मित्र मानते हुये शिव के माध्यम से काम

के नष्ट होने और उसके फिर–फिर जीवित हो उठने का मनोवैज्ञानिक संकेत करते हुये पौराणिक विम्ब की रचना की है–

" फूल में त्रिशूल चुभते हैं

और चुभने से फूलों की सुगन्ध फैल जाती है दिगंत में वृत पुष्प से सहस्त्र बीज झरते हैं। और एक बीज का पुष्प से झरते हैं। और एक बीज का विराट रूप है बसंत में–

" शिव के उस ताण्डवी प्रलय में भी
लास्य अनुप्राणित रहता है प्राण
ध्वसं में, धरा में, ध्वान्त चेतना में
प्रलय समुद्र में अशेष रहता है काम
इससे त्रिशूल में महत्ता है त्रिनेत्र की
क्योंकि ये त्रिनेत्र हैं
विरूपता का चिहन नहीं
महाकाल शिव की विशिष्ट महाचेतना है। " [151]

(iv) ऐतिहासिक विम्ब–

काव्य विम्बों में संवेदना का जैसे–जैसे विस्तार होता जाता है, वैसे–वैसे जीवन के सभी क्षेत्रों को कविता में स्थान मिलता हैं। युद्ध तो जीवन की यथार्थ भूमि से जुड़े ही होते हैं। जहां कहीं युद्ध हुये उनकी जीत–हार का उल्लेख इतिहास का विषय बन जाता है। इतिहास बनने के लिए भी युद्ध किये जाते है, अपने इतिहास को अक्षुष्ण परम्परा, संस्कृत की संरक्षा एवं इतिहास को पूर्व जीवन देने कू लिए मानव सभ्यता युद्धों की ओर बढ़ती रहीं है। अतः इतिहास की जीत–हार की घटना वसी पात्रों आदि का विम्बों में प्रयोग किया जाता रहा है। चाहे आशोक का कलिंग युद्ध रहा हो और चाहे आधुनिक युग का हिरोशिया या नागासाकी का युद्ध अथवा पडोसी राष्ट्रों के मध्य सीमाओं पर युद्ध, सभी प्रभाव युद्ध काव्यों और एतिहासिक काव्यों में नितान्त स्वाभाविक है। आधुनिक हिन्दी कवियों ने युद्ध जीवन को इतिहास के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है–

" तड़प रही घायल स्वदेश की शान है।
सीमा पर संका में हिन्दुस्तान है। " [152]

" चित्तौड़–सिंहसन के समीप धूलों में–
सोये है जो रणबली, उन्हें टेरो रे !
\+ \+ \+ \+
विक्रमी तेज, असि की उददाम प्रभा को,
राणा प्रताप, गोविन्द, शिवा, सरजा को, " [153]

आधुनिक युद्ध परक हिन्दी कविता में विम्बों के अध्ययन से इस बात का पता चलता है कि ये विम्ब भक्ति कालीन और रीतिकालीन विम्बों से भिन्न प्रकार के हैं। आधुनिक काल के कवियों ने यथार्थ के प्रति एक नया दृष्टिकोण लेकर चले हैं। इन विम्बों में आधुनिक यथार्थ तेजी से बदलते हुये जीवन–मूल्य और जीवन की विविघ

का क्षेत्र व्यापक रूप से प्रति विम्बित हुआ है। इन विम्बों के अध्ययन से ये भी पता चलता है कि आधुनिक कवियों ने विम्बों के माध्यम से जिन युद्ध चित्रों का निर्माण किया है वे यथार्थ को अधिक अभिव्यक्त देते हैं। विम्बों के अध्ययन से आधुनिक कविता की युद्ध परक उपलब्धियों और सम्भावनाओं पर प्रकाश पड़ता है। पुराने रोमांटिक विम्बों के स्थान पर आधुनिक, वैज्ञानिक और यात्रिक सभ्यता का परिचय भी उन विम्बों से मिल जाता है। कहीं रासायनिक रंग है, कहीं वायुमण्डल पर तैरती हुई अणु युग की परछाइयाँ हैं, कहीं यात्रिक उपकरणों की प्रति स्पर्धा है, सभी कुछ मिलकर आधुनिक हिन्दी कविता में युद्ध के विम्बों की तलाश करने पर पता चलता है कि यह नये विम्ब जीवन और सभ्यता के खण्डहरों को फिर से नई रोशनी प्रदान करने वाले हैं।

मौलिक, ऐतिहासिक, यथार्थपरक, विस्तृत जीवन के समान धर्मी, प्रभावशाली विम्बों को विकसित करने में आधुनिक कविता ने जिस कलात्मकता और बिचित्र पद्धति को प्रयुक्त किया है वह उनके विम्ब धर्मी प्रयोक्ता होने का पर्याप्त प्रमाण देता है। विम्ब विधान के विकास में युद्ध काव्यों का अध्ययन करने के ओजस्वी पक्षों के उद्घाटन में तथा वीरता मूलक उत्साह धर्मी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देने में और राष्ट्रीय बलिदान तथा उत्सर्ग की भावना जगाने में युद्ध प्रधान काव्यों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। एक दूसरी महत्वपूर्ण उपलब्धि मुझे ये भी प्रतीत हुई की युद्ध काव्यों में प्राचीन विम्ब विधानों की परिधि ने एक नई भाव–भूमि लेकर नये प्रकार की व्यंजन्य शक्ति को बढाया है। एक तीसरी महत्व पूर्ण बात मुझे ये भी लगी कि पूर्ववीं शोध कविताओं और आलोचकों द्वारा जो विम्ब विधान किये गये हैं वो अधिकांश रूप से मध्यकालीन कविता की ओर विशेष रूप से युद्ध परक कविता की प्रवृत्ति यथार्थों मूलक एवं समकालीन जीवन को रूपयित करने वाली सिद्ध होती है।

(र) प्रतीक योजना–

काव्य में प्रतीक कविता की अनुभूतियों को संप्रेषणीय बनाने, अर्थ और भाव को एक निश्चियत दायरे में सीमित करते है। प्रतीकों की निकटता ध्वनि व शब्द शक्ति से अधिक होती हैं। मूलक मानव मन प्रतीकों का व्यापक क्षेत्र है जिसमें ज्ञान–विज्ञान, दर्शन, कला, धर्म, विस्तार प्रतीक को साहित्य कोश में इस प्रकार परिभाषित किया गया है– " प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य (गोचर) वस्तु के लिए किया जाता है जो किसी अदृश्य (अगोचर) विषय का प्रतिविधान, उसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है। " [154]

डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त लिखते हैं– " अर्थों की विविधता प्रतीक शब्द की व्यापकता सिद्ध करती है। हमारे जीवन के भी भिन्न प्रकार से हुआ हैं। हमारे सामाजिक या राजनैतिक जीवन में हमारे गौरव का सूचक कोई रंग , आकृति या चिहन प्रतीक कहलाता है। जैसे किसी संस्था का व्यापारिक चिह्न, किसी समाज की कोई मुद्रा, किसी राष्ट्र की पताका, कोई रंग या आकार। धार्मिक क्षेत्र में पत्थर या धातु की मूर्तियां किसी परम सत्ता के प्रतीक रूप में पूजी जाती हैं। इसी प्रकार साहित्य क्षेत्र में किसी भाव या प्रति निधित्व करने वाले शब्द प्रतीक कहलाती हैं। " [155]

आधुनिक काल के कवियों ने भी आने काव्य में प्रतीक का सहारा लिया हैं। यह स्वाभाविक ही था क्योंकि किसी भी अदृश्य वस्तु की प्रस्तुती करण के लिये दृश्य प्रतीक किया जाये। आधुनिक कविता में प्रतीक योजना पर अधिक बल दिया गया है। साथ ही प्रतीकों की विविधता के भी दर्शन होते हैं।

(i) पौराणिक प्रतीक–

युद्ध काव्यों में पौराणिक प्रतीक मिलते हैं, इन प्रतीकों में पौराणिक आख्यानों, चरित्रों एवं गाथाओं के सथ परिवेश की जटिल संवेदनाओं से संग्रहीत किया जाता हैं। पौराणिक प्रतीकों में कवि व्यक्तित्व की अन्तः प्रेरणा दो रूपों में मिलती है प्रथम वर्तमान मूल्य संकट की स्वीकृति तथा दूसरा वस्तु स्थिति के समभावना पक्ष को संकेतिक करने के लिए।

" मैं रथ का टूटा हुआ पहिया हूँ
लकिन मुझे फेंकों मत !
क्या जाने कब
इस दरूहॅ चक्र व्यूह में
अक्षौहिली सेनाओं को चुनौती देता हुआ
कोई दुस्साहसी अभिमन्यु आकर घिर जाये " [156]

\+ + + +

" जिसे पहुँचने के द्वारा, हम सब साथी मिल
दण्डक वन में से लंका का
पथ खोज निकल सके प्रतिपल " [157]

(पप) युद्ध, शान्ति, तटस्थल, निर्भीकता, विवेकशीलता, त्रासदी आदि के प्रतीकों में नवीनता–

युद्ध के वीभत्स रूप को व्यंजित करने वाले प्रतीक निम्न हैं–

"जिस तरह बाद के उतरती गंगा
तट पर जाती विकृत शव अधरवाया
वैसे ही तट पर अश्वथामा को
इतिहासों ने खुदनया मोड अपनाया " [158]

\+ + + +

" बुद्ध या गाँधी के चेले
कहाँ तक रोक पाएँगें युद्ध
बदलेगें सबका सब
ये करोड़ों युयुत्सु जो बढ़ रहे हैं
पीछे न लौटने के लिए " [159]

वर्तमान के सुन्दर भविष्य को सजाने का सुखद अनुभव समाप्त हो जाता है और उनकी जगह कंधे पर बन्दूक आ जाती है यह बन्दूक विद्रोह की शक्ति की प्रतीक है–

" ओ हो,
बन्दूक वा––––
वजनदार राइफल
यही खूब" [160]

' अंधायुग' में संजय वटस्थल का प्रतीक है–

" मैं संजय हूँ

जो कर्मलोक से बहिस्कृत है

में दो बड़े पहियों के बीच लगा हुआ

एक छोटा निरर्थक शोभा– चक्र हूँ

जो बड़े पहिये के साथ घूमता है

पर रथ को आगे नहीं बढ़ाता " [161]

विदुर निर्भीकता एवं विवेक शीलता के प्रतीक है–

" कृष्ण का अनुगामी, भक्त और नीतिज्ञ

पर मेरी नीति साधारण स्तर की है

और युग को सारी स्थितियाँ असाधारण हैं " [162]

अश्वथामा युद्ध की त्रासदी से आहत जिसके परिवर्तन को देखकर कृतवर्मा भयभीत है–

" भय लगता है

मुझको

उस अश्वत्थामा से। " [163]

(पपप) मोह विषय का प्रतीक–

संजय को सत्य के प्रति मोह का प्रतीक माना गया है–

" वह संजय भी

इसे मोह–निशा से घिरा कर

है भरक रहा

जाने किस कंटक–पथ पर"[164]

युयुत्सु के सम्पूर्ण जीवन की विषाद परक व्याख्य कवि ने निम्न पंक्तियों में प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत किया है–

" मैं हूँ युयुत्सु

मैं उस पहिये की तरह हूँ

जो पूरे युद्ध के दौरान रथ में लगा था

पर जिसे अब लगता है कि वह गलत हैकि वह धुरी में लगा था

और मैं अपनी उस धुरी से उतर गया हूँ" [165]

(पअ) हास्य भक्ति एवं जन सामान्य के प्रतीक–

'अंधायुग' में दोनों प्रहरी दास्य भक्ति के प्रतीक

है, जन सामान्य के प्रतीक है–

" सूने गलियारे–सा यह जीवन बीत गया

क्योंकि हम दास थे

केवल वहन करते थे आज्ञाएं हम अन्धें राजा की
नहीं था हमारा कोई अपना खुद का मत,''[166]

'सेशय की एक रात' में हनुमान सामान्य जन के प्रति निधि के रूप में यूद्ध की अनिवार्यता को सिद्ध करते हैं उनकी वाणी में शोषितों और पीडितों की वेदना झलकती है, यह लघु मानव किसी शक्ति से पराजित नहीं होना चाहते–

'' हम साधारण जन
युद्ध प्रिय थे कभी नहीं
और न लंका युद्ध लड़ेगें
युद्ध भाव से
महाराज !
साम्राज्य वृत्ति के द्वारा
हम साधारण जन
अर्द्धसभ्य कर दिये गये।
हमने राक्षस–रथ खेंचे
हासभाव से।'' [167]

'एक कंठ विषपायी' में सर्वहत आधुनिक प्रजा का चलता–फिरता दर्पण है–

'' प्रजा हम थे
हमने उफ तलक नहीं की
शासन के गलत–सलत सलत्त झोंको के आगे भी
फसलों से विनती हम बिछे रहे निर्विवाद'' [168]

(अ) संकीर्णता एवं शक्ति के प्रतीक–

'अंधायुग' सत्ता लोलुप गांधारी एवं धृतराष्ट्र इस संकीर्ण भावना से जकडे हूये हैं–

'' याद मुझे आता है
तुमने कहा था अनिवार्य है
क्योंकि उससे ही जय होगी कौरव दल की '' [169]

'' शंकर–––––कैलासनाथ
जो मेरे साथ–साथ
सृष्टि के महान–
और गुढतम दायित्वों के पालन में
योगदान देते हैं, '' [170]

(ल) उपमान योजना–

उपमान योजना परपेय से ग्रहीत अलंकारित रूप हैं। न सूखने वाले जल की उपमा वैदिक ऋषि–मुनियों

में जीभ के जल से दी थी, आग की लपटों को सींग घुमाते हुये पशु से और एक–एक दिन ह्रास करने वाली उषा आदि के वर्णन के लिए उपमान योजना की थी। साधारण रूप से उपमान विधान में प्रस्तुत में प्रस्तुत और अप्रस्तुत और अप्रस्तुतों के माध्यम से वस्तु का सादृश्य विधान नियोजित रहता है। उपमान योजना में वस्तु चयन प्रक्रिया परक भी है तथा विज्ञान एवं अन्य विषयों से सम्बन्धित भी। विज्ञान से सम्बन्धित उपमानों की योजना वैदिक दृष्टि से सम्पन्न होने पर भी उसमें प्रस्तुत विषय प्रायः विसमृत हुआ सा दिखाई देता है। 'अंधायुग' में ध र्मवीर भारती को सटीक उपमानों को संयोजित करने की सफलता प्राप्त है निम्न पंक्तियों में तोड़ी हंयी मर्यादा के लिए 'कुचले हुये अजगर सी' उपमान को प्रस्तुत किया है–

" मर्यादा मत तोड़ों
तोडी हुंई मर्यादा
कुचले हुये अजगर सी
गुंलिका में कौरव वंश को लपेट कर
सूखी लकड़ी सा तोड़ डालेगी" [171]

इसी प्रकार अश्वत्थामा के भवशेष जीवन के लिए 'रोगी मुर्दे' जैसा व बासी थूक' के उपमान प्रस्तुत किये हैं–

"मैं यह तुम्हारा अश्वत्थामा
कायर अश्वत्थामा
शेष हूँ अभी तक
जैसे रोगी मुर्दे के
मुख में शेष रहता है
गन्दा कफ
बासी थूक
शेष हूँ अभी तक मैं " [172]

मनुष्य की चेतना हरत आँखों के लिए 'कच्चे आमों की गुठली' जैसे उपमान सार्थक और सटीक भावों को ग्रहण कराने में सक्षम हैं–

" आँखों के कटोरे से दोनों साबित गोले कच्चे आमों की गुठली–जैसे उछल गए।"173

(i) अलंकार योजना–

अभिव्यकित के प्रकारों में वैविध्य का आना स्वाभाविक है।काव्य में तो अलंकार प्रधान उक्तियाँ ही प्रमुख रूप से भावाभिव्यक्ति का साधन मानी जाती है। कवियों ने शब्द और अर्थ में अलंकारों का सगुंम्फन करके जो कलात्मक अभिवक्तियाँ दी हैं जो शिल्प के श्रेष्ठ उदाहरण हो गये हैं–

उपमा–

" अतः पुर में मरघट की–सी खामोसी " [174]

" तुम अब भी उस क्षण में जीते हो
जो कि एक काला–सा धब्बा है" [175]

छाया–सा

अनुज यह सदा पीछे लगा रहा।" [176]

" फड़का पर नभ को उड़े सकल ज्यों देवदूत,

देखते राम, जल रहे शलभ ज्यों रजनी चर, " [177]

रूपक–

" जाने किसकी लोथों पर जा उतरेगा,

यह नरभक्षी गिद्धों का भूख–बादल "[178]

" उस वंचक के पदों में

सर्प बन सौमित्र–रेखा। "[179]

" एक अशुभ–आकृति

चक्षु–पटल पर उतरती है" [180]

" भावित नयनों से सजल गिरे दो मुक्ता–दल" [181]

श्लेष–

" मध्यरात्रि के इस निर्णय

जाने कितने सूर्य

आज ही

कल के लिए मर चुका।"[182]

पुनरुक्ति प्रकाश–

" ननहें–नन्हें पंखों की कातर आवाजें

अन्तःपुर गूँज रही हैं।" [183]

दृष्टांत–

" धृत से अनल मृगजाल से तृषा बुझाना

चाहे नागराज को भुजाओं से उपारना।

विभ्रम विभोर हो चकोर चाहे अग्नि भोग,

गीध होके चाहे विष्णु–वाहन पछारना।

चाहे रंग में फिरंग में रंगा में रंगा ये अंध मानों,

तम की तलाश में तिमिर का भी त्रासना।

याकि जिन्दगी से तंग मतिमंद ये पतंग,

चाहे पैठ के दवाग्नि में भी देह धारना।।" [184]

<u>असंगति अलंकार–</u>

" मरते समय क्या तुमने इस नरपशु अश्वत्थामा को

आपने ही चरणों पर धारण किया

अपने ही शोणित से मुझको अभिव्यक्त किया? ''[185]

मानवीकरण–

''उगलता गगन घन अंधकार,

अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल, ''[186]

उत्प्रेक्षा–

'' श्वेत, मौन, उदास

माताएं–

एक असफल साँझ रक्तिम

ग्रीष्माकाश में

असमाप्त होने के लिए होती रहे

आधी रात तक।''[187]

निष्कर्षतः युद्ध परक काव्यों का शिल्प–विधान समग्रतः सफल तथा विषयानुरूप है। शिल्प के धरातल पर युद्ध परक कविता में एक जोशीली भाषा एवं ललकार भरी आवाज दी, जिसे सुनकर शत्रु का दिल दहल उठता हैं। भाषा को असरदार बनाने के लिए नयी शब्दावली, प्रतीक, विम्ब अलंकार एवं व्यंग्य का सहारा लिया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1— अनामिका से उद्धृत—'राम की शक्ति की पूजा'—निराला—पृ. 109—संस्करण 1992—राजकमल प्रकाशन दिल्ली
2— पूर्वोक्त—पृ0 109
3— 'संशय की एक रात—नरेश मेहता—पृ0 16—संस्करण 1999—लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
4— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार—पृ0 105—संस्करण 1997लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
5— अंधायुग— धर्मवीर भारती—पृ0 53—संस्करण 1992—किताब महल इलाहाबाद
6— अनामिका से उद्धृत— राम की शक्ति पूजा—निराला—संस्करण 1992 राजकमल प्रकाशन दिल्ली
7— एक कंठ विषपायी— दुष्यंत कुमार— पृ0 108—संस्करण 1997— लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
8— पूर्वोक्त— पृ0 123
9— अंधायुग—धर्मवीर भारती— पृ0 37—संस्करण 1992 किताब महल इलाहाबाद
10— नाटक जारी है—लीलाधर जगूड़ी— पृ0 85—संस्करण 1994 किताब घर दिल्ली
11— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार— पृ0 109—संस्करण 1997 लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
12— अनामिका से उद्धृत—राम की शक्ति पूजा—निराला— पृ0 114—संस्करण 1992 लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
13— पूर्वोक्त— पृ0 117—18
14— पूर्वोक्त— पृ0 109
15— पूर्वोक्त—पृ0 111
16— पूर्वोक्त—पृ0 112
17— एक कंठ विषपायी— दुष्यंत कुमार— पृ0 103—संस्करण 1997 लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
18— परशुराम की प्रतीक्षा—रामधारी सिंह 'दिनकर'— पृ0 14—संस्करण 1999 लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
19— अनामिका से उद्धृत— राम की शक्ति पूजा—निराला— पृ0 109—10—संस्करण 1992 राजकमल प्रकाशन दिल्ली
20— अंधायुग—धर्मवीर भारती— पृ0 20, 46, 61, 39—संस्करण 1992 किताब महल इलाहाबाद
21— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार पृ0 11, 14, 17, 38, 52—संस्करण 1997— लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
22— संशय की एक रात—नरेश मेहता— पृ0 4, 5, 6, 20, 54, 65—संस्करण 1999— लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
23— अनामिका से उद्धृत— राम की शक्ति पूजा—निराला— पृ0 111, 112, 113, 116—संस्करण 1992— राजकमल प्रकाशन दिल्ली
24— अंधायुग—धर्मवीर भारती— पृ0 11, 12, 14, 15, 23—संस्करण 1992— किताब महल इलाहाबाद
25— संशय की एक रात—नरेश मेहता— पृ0 5, 11, 14, 19—संस्करण 1999— लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
26— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार— पृ0 11,12, 13, 15, 17, 57—संस्करण 1997—लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
27— असाध्यवीणा और अज्ञेय—संपा. रमेशचन्द्र शाह— पृ0 33, 34, 36— संस्करण 2001—नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
28— मुक्तिप्रसंग—राजकमल चौधरी— पृ0 20, 26, 29—संस्करण 1988— वाणी प्रकाशन दिल्ली
29— संसद से सड़क तक से उद्धृत— पटकथा—धूमिल— पृ. 99, 100, 102—संस्करण 1990— राजकमल प्रकाशन दिल्ली
30— नयी कविता की लम्बी कविताएँ—डॉ0 राम सुधार सिंह—पृ. 274—संस्करण 1993— राधा पब्लिकेशन्स दिल्ली
31— असाध्यवीणा और अज्ञेय—संपा—रमेशचन्द्र शाह— पृ. 38, 44—संस्करण 2001 नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
32— पटकथा—से उद्धृत—धूमिल— पृ. 118, 114—संस्करण 1990 राजकमल प्रकाशन दिल्ली
33— नयी कविता की लम्बी कविताऐं—डॉ0 रामसुधार सिंह (लुकमान अली पृ0 सौमित्र मोहन)— पृ0 277—संस्करण 2001— राधा पब्लिकेशन्स दिल्ली
34— असाध्यपीणा और अज्ञेय—संपा रमशचन्द्र शाह— पृ0 43—संसकरण 2001 नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
35— अंतस्थल का पूरा विप्लव अंधेरे में—संपा निर्मल जैन— पृ0 151—संस्करण 1994 राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
36— नयी कविता की लब्बी कविताऐं—डॉ0 रामसुधार सिंह— (लुकमान अली सौमित्र मोहन)— पृ0 283—संस्करण 1993 राधा पब्लिकेशन्स दिल्ली
37— मुक्तिप्रसंग—राजकमल चौधरी— पृ0 28—संस्करण 1988— वाणी प्रकाशन दिल्ली
38— संशय की एक रात—नरेश मेहता— पृ. 69—संस्करण 1999— लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
39— पूर्वोक्त— पृ0 71
40— पूर्वोक्त— पृ0 67
41— अंधायुग—धर्मवीर भारती— पृ. 18—संस्करण 1992— किताब महल इलाहाबाद
42— पूर्वोक्त— पृ0 76
43— पटकथा— संसद से सड़क तक से उद्धृत—धूमिल— पृ. 110—संस्करण 1990— राजकमल प्रकाशन दिल्ली
44— पूर्वोक्त— पृ0 105
45— संशय की एक रात—नरेश मेहता— पृ0 62—संस्करण 1999— लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
46— पटकथा— संसद से सड़क तक से उद्धृत—धूमिल— पृ. 107—संस्करण 1990— रातकमल प्रकाशन दिल्ली
47— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार— पृ0 122—संस्करण 1997— लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
48— मुक्प्रिसंग—राजकमल चौधरी— पृ0 11, 18—संस्करण 1988— वाणी प्रकाशन दिल्ली
49— अंतस्थल का पूरा विप्लव अँधेरे में—संपा निर्मला जैन— पृ0 112, 122, 153, 149, 144, 139—संस्करण 1994— राधकृष्ण प्रकाशन दिल्ली
50— संशय की रात—नरेश मेहता— पृ0 5, 32, 87, 91—संस्करण 1999— लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
51— एक कंठ विषपायी—दुष्यंत कुमार— पृ0 58, 24, 50—संस्करण 1997— लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
52— संसद से सड़क तक से उद्धृत—पटकथा—धूमिल—पृ0 102, 103, 107, 119, 125—संस्करण 1990— राजकमल प्रकाशन दिल्ली
53— मुक्तिप्रसंग—राजकमल चौधरी— पृ0 13, 14, 15, 16—संस्करण 1988— वाणी प्रकाशन दिल्ली
54— अंधायुग—धर्मवीर भारती— पृ0 23—संस्करण 1992— किताब महल इलाहाबाद
55— नाटक जारी है— लीलाधर जगूडी— पृ0 81, 84, 87, 88, 92, 94, 96—संस्करण 1994— किताब घर दिल्ली

56– अनामिका से उद्धृत– राम की शक्ति पूजा–निराला– पृ0 109–संस्करण 1992– राज कमल प्रकाशन दिल्ली
57– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार– पृ0 79–80–संस्करण 1997– लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
58– पटकथा–धूमिल– संसद से सड़क तक से उद्धृत– पृ0 117–संस्करण 1990– राजकमल प्रकाशन दिल्ली
59– मुक्तिप्रसंग–राजकमल चौधरी– पृ0 20–संस्करण 1988– वाणी प्रकाशन दिल्ली
60– नाटक जारी है–लीलाधर जगूडी– पृ0 81, 83, 85–संस्करण 1994– किताब घर दिल्ली
61– पटकथा– धूमिल– पृ0 101, 102, 103– संस्करण 1990–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
62– एक कंठ विषपायी– दुष्यन्त कुमार– पृ0 19, 54, 120–संस्करण 1997– लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
63– नाटक जारी है– लीलाधर जागूडी– पृ0 81, 82, 83, 84, 87, 89–संस्करण 1994– किताब घर दिल्ली
64– मुक्तिप्रसंग–राजकमल चौधरी– पृ0 15, 22, 25– संस्करण 1988–वाणी प्रकाशन दिल्ली
65– राम की शक्ति पूजा–निराला– पृ0 110– संस्करण 1992– राजकमल प्रकाशन दिल्ली
66– संशय की एक रात–नरेश मेहता– पृ0 8– संस्करण 1999– लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
67– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार–पृ0 11–संस्करण 1997–लाकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
68– अंधायुग–धर्मवीर भारती– पृ0 17–संस्करण 1992– किताब महल इलाहाबाद
69– मुक्तिप्रसंग–राजकमल चौधरी– पृ0 12–संस्करण 1988– वाणी प्रकाशन दिल्ली
70– पटकथा–धूमिल– पृ0 102– संस्करण 1990– राजकमल प्रकाशन दिल्ली
71– असाध्यवीणा और अज्ञेय–संपा0 रमेशचन्द्र शाह– पृ0 33–संस्करण 2001– नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
72– नाटक जारी है–लीलाधर जगूडी– पृ0 81–संस्करण 1994– किताब घर दिल्ली
73– राम की शक्ति पूजा– निराला– पृ0 109–संसकरण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
74– असाध्यवीणा और अज्ञेय–संपा0 रमेशचन्द्र शाह– पृ0 37–संस्करण 2001–नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली
75– एक कंठ विषपायी– दुष्यंत कुमार– पृ0 80–संस्करण 1997–लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
76– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार पृ0 79
77– पूर्वोक्त–पृ0 130
78– पूर्वोक्त–पृ0 120
79– पूर्वोक्त–पृ0 54
80– पटकथा–धूमिल– पृ0 104–संस्करण 1990–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
81– पूर्वोक्त– पृ0 101
82– मुक्तिप्रसंग–राजकमल चौधरी– पृ0 11–संस्करण 1988– वाणी प्रकाशन दिल्ली
83– नाटक जारी है–लीलाधर जगूडी– पृ0 81–संस्करण 1994–किताबघर दिल्ली
84– पूर्वोक्त– पृ0 83
85– अंधायुग–धर्मवीर भारती– पृ0 95–संस्करण–1992–किताब महल इलाहाबाद
86– पूर्वोक्त–पृ0 69
87– पूर्वोक्त–पृ0 37
88– एक कंठ विषपायी–दुष्यंत कुमार– पृ0 19– संस्करण 1997–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
89– पूर्वोक्त–पृ0 29
90– संशय की एक रात –नरेश मेहता– पृ0 76–संस्करण 1999– लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद
91– पटकथा –धुमिल– पृ0 99–संस्करण 1990–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
92– राम की शक्ति पूजा –निराला– पृ0 115–16–संस्करण 1992–राजकमल प्रकाशन दिल्ली
93– अंधायुग –धर्मवीर भारती– पृ0 13– संस्करण 1992–किताब महल इलाहाबाद
94– पूर्वोक्त– पृ0 14
95– संशय की एक रात –नरेश मेहता– पृ0 35–संस्करण 1999–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
96– एक कंठ विषपायी –दुष्यंत कुमार– पृ0 49–संस्करण 1997–लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद
97– कविता की तीसरी आँख –प्रभाकर श्रोत्रिय– पृ0 46–47
98– नयी कविता स्वरूप और सीमाएं– पृ0 89
99– राम की शक्ति पूजा–निराला– पृ0 112
100– अंधायुग– धर्मवीर भारती– निर्देश से
101– पूर्वोक्त–पृ0 15
102– पूर्वोक्त–पृ0 54
103– रंगमंच लोक धर्मी –नाट्य धर्मी डा0 लक्ष्मी नारायण भारद्वाज– पृ0 4–संस्करण 1992 के0 एल0 पचौरी प्रकाशन
104– पूर्वोक्त– पृ0 4
105– एक कंठ विषपायी –दुष्यंत कुमार– पृ0 107
106– पूर्वोक्त– पृ0 98
107– पूर्पोक्त–पृ0 116
108– संशय की एक रात –नरेश मेहता–पृ0 66
109– चिंतामणि –रामचन्द्र शुक्ल– पृ0 228
110– चन्द्रगुप्त–जयशंकर प्रसाद–पृ0 77
111– इमेजिस्म–एस.के. कोफमैन
112– द प्वाइट इमेज–सी.डे. लेविस–पृ. 19
113– सोमूलेशन्स–टी.ई. होम–पृ0 281
114– प्वाइट प्रोसेज–जार्ज व्हेले–पृ0 145
115– प्रॉब्लम्स ऑफ आर्ट–सुसैनक के. लेनर–पृ0 132

116— सेलेक्टेड एसे—एलेनटेट—पृ0 83
117— पल्व की भूमिका का— सुमित्रानन्दन पंत— पृ0 17—18
118— चिंतामणि भाग एक, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल— पृ0 256
119— राष्ट्र धर्म —आनन्द मिश्र 'अभय'— पृ0 29 फरवरी 1999
120— राम राज्य —बलदेव प्रसाद मिश्र— पृ0 59—संस्करण 1985 गीता प्रकाशन हैदराबाद
121— प्रतिज्ञा पुरुष —रामदास गुप्त 'विकल' पृ0 93
122— बांग्ला विजय —बृजराज सिंह तोमर पृ0 83—84—संस्करण 1992 गोपाल प्रकाशन टिकार हरदोई
123— एक कंठ विषपायी —दुष्यंत कुमार— पृ0 78
124— रश्मिरथी —रामधारी सिंह— पृ. 49
125— विराट—डा. रमाशंकर पाण्डेय— पृ. 200—संस्करण—1973 सरस्वती पुस्तक सदन वाराणसी
126— राम की शक्ति पूजा— पृ0 110 निराला
127— रामराज्य —बलदेव प्रसाद मिश्र— पृ. 88
128— बांग्ला विजय—वृजराज सिंह तोमर— पृ. 84
129— राम की शक्ति पूजा —निराला— पृ. 109—10
130— प्राचीन —उमाशंकर जोसी रूपां— भोला भाई पटेल— पृ. 35 संस्करण 1968— ज्ञान पीठ प्रकाशन कलकत्ता
131— रामराज—बलदेव प्रसाद मिश्र— पृ. 60
132— बांग्ला— विजय सिंह तोमर— पृ. 111
133— पूर्वोक्त— पृ. 112
134— रामराज्य —बलदेव प्रसाद मिश्र— पृ. 86
135— पूर्वोक्त— पृ. 89
136— अंधायुग—पृ. 27 भारती
137— काव्य शिल्प के आयाम—सुलेख शर्मा— पृ. 93 संस्करण 1971
138— परशुराम की प्रतीक्षा —रामधारी सिंह दिनकर— पृ. 43 (आज कसौटी पर गाँधी की आग है)
139— एक कंठ विषपायी— दुष्यंत कुमार— पृ. 132
140— अंधायुग —धर्मवीर भारती— पृ. 21
141— पूर्वोक्त— पृ. 34
142— पूर्वोक्त—पृ. 19
143— पूर्वोक्त—पृ. 29
144— पूर्वोक्त—पृ. 53
145— पूर्वोक्त—पृ. 61
146— पूर्वोक्त—पृ. 16
147— पूर्वोक्त—पृ. 33
148— पूर्वोक्त—पृ. 18
149— पूर्वोक्त—पृ. 11
150— राम की शक्ति पूजा —निराला पृ. 110
151— अभिशप्त शिल्प डा. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित ललित— पृ. 54
152— परशुराम की प्रतीक्षा —दिनकर— पृ. 40 (लोहे के मर्द)
153— पूर्वोक्त पृ. 16
154— हिन्दी साहित्य कोश— पृ. 471
155— साहित्यक निबन्ध —डा. गणपति चन्द्र गुप्त— पृ. 518
156— अंधायुग —धर्मवीर भारती पृ. 53
157— आधुनिक कविता की यात्रा —डा. शम्भूनाथ चतुर्वेदी— पृ. 23 संस्करण 1983
158— अंधायुग —भारती— पृ. 38
159— आधुनिक कविता की यात्रा —डा. शम्भूनाथ चतुर्वेदी— पृ. 133 संस्करण 1983 — संदर्भ सूची से गायब
160— अंतस्थल का पूरा विप्लव संपा.— निर्मला जैन— पृ. 31
161— अंधायुग —भारती— पृ. 58
162— पूर्वोक्त पृ. 58
163— अंधायुग— पृ. 36
164— पूर्वोक्त— पृ. 25
165— पूर्वोक्त— पृ. 58
166— पूर्वोक्त— पृ. 23
167— संशय की एक रात— पृ. 65
168— एक कंठ विषपायी— पृ. 120
169— अंधायुग— पृ. 21
170— एक कंठ विषपायी —पृ. 64—65
171— अंधायुग— पृ. 16
172— पूर्वोक्त— पृ. 29—30
173— पूर्वोक्त—पृ0 63
174— पूर्वोक्त—पृ0 15
175— एक कंठ विषपायी —पृ0 124

176. संशय की एक रात– पृ0 124
177. राम की शक्ति पूजा– पृ0 111
178. अंधा युग– पृ0 15
179. संशय की एक रात– पृ0 6
180. एक कंठ विषदायी– पृ0 37
181. राम की शक्ति पूजा– पृ0 111
182. संशय की एक रात– पृ0 87
183. एक कंठ विषपायी– पृ0 16
184. क्रान्तिमहारथी – पृ0 123
185. अंधायुग– पृ0 95
186. राम की शक्ति पूजा– 110
187. संशय की एक रात–पृ0 43

अष्टम परिवर्त्त

मूल्यांकन एवं उपसंहार

अ- मूल्यांकन के आधार

ब- मूल्यांकन की उपलब्धियाँ

स- मूल्यांकन की सीमाएँ

मूल्यांकन एवं उपसंहार–

(1)– मूल्यांकन के आधार–

आधुनिक हिन्दी कविता में जिस प्रमुख समस्या को कविता में अभिव्यक्ति मिली है वह युद्ध है। युद्ध ने जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। यथार्थवादी दर्शन स्वीकार करता है कि हम आज की उन वास्तविकताओं को कविता में व्यक्त करें जो सच के धरातल पर जीवन और जगत को प्रभावित करती है। आधुनिक युग बोध के लिए आवश्यक है कि हम यथार्थ की पकड़ को पहचानें। आज का मानव युद्ध से पूरी तरह से आक्रान्त है। राजनीति भी युद्धोन्मुखी हो गई है, व्यक्ति का जीवन हो या समाज का वह जटिलताओं से घिरा हुआ है। साहित्य में अनुभव के क्षेत्र आते हैं। अनुभव के क्षेत्र समय और देशकाल के आधार पर परिवर्तित भी होते रहते हैं। आधुनिक लड़ाइयों का स्वरूप आज नैतिक नियमों, मानवीय सिद्धान्तों और आदर्शों को ताक में रखकर रात के अन्धेरे में खन्दकों एवं खाइयों में छिपकर दुश्मन को येन–केन–प्रकारेण धोखे में डालकर युद्ध किया जाता है। नितान्त शुद्ध अवसर का प्रयोग करना, छल, प्रपंच, अफवाह, षड्यन्त्र, चालाकी, धूर्तता, मक्कारी, दगाबाजी के साथ दुश्मन के हर राज का पता लगाया जाता है। दुश्मन के दोस्तों को कूटनीति से अपने पक्ष में कर लिया जाता है। दुश्मन की छोटी गलती को भी प्रचार द्वारा बढ़ा चढ़ाकर बतलाया जाता है और युद्ध की घोषणा कर दी जाती है। युद्ध विषयक सामग्री (बम वर्षा, युद्ध पोतों का और हवाई जहाजों का परस्पर घमासान संघर्ष, खाइयां खोदना रास्ता पुल बनाना, राइफलों से शत्रु सेना का मुकाबला इत्यादि) साहित्य में अपना स्थान ले रही है, इतना ही नहीं साहित्य के क्षेत्र में जीवन के वास्तविक संघर्ष को व्यक्त करना भी एक प्रकार की वास्तविकता है। ये युद्ध कहीं वैचारिक स्तर पर कहीं भावात्मक स्तर पर कहीं भौतिकता के लिए कहीं अर्थ आदि के संघर्षों के रूप में स्थान ग्रहण करते हैं। अतः आधुनिक कवियों का युद्ध से अलग हटकर काव्य रचना करना स्वाभाविक प्रतीत नहीं होगा। युद्ध अनस्तित्व, मृत्यु, आतंक, आक्रमण सभी कुछ तो इस युग में पूरी तरह से व्याप्त है। अतः इस वैचारिक धरातल को छोड़कर कोई कवि या संवेदनशील रचनाकार नहीं रह सकता। युद्ध की विकरालता ने जहां सभ्यता और संस्कृति पर खतरा खड़ा कर दिया है, वहीं कविता के यथार्थोन्मुख होने की भी व्यवस्थाएं उत्पन्न की हैं।

'रामायण' और 'महाभारत' दो भारतीय संस्कृति के महान महाकाव्यों में युद्ध की विभीषिका मुख्य रूप से चित्रित हुई है। भूमि, अर्थ और नारी ही युद्ध के केन्द्र बिन्दु रहे हैं। आधुनिक युग तो युद्ध के नए–नए अनुसंधानों और आणुविक प्रयोगों से बुरी तरह से आक्रान्त है। आज का जीवन चारों तरफ से भायाक्रान्त है। आतंकवाद और युद्ध ने हर क्षेत्र को जर्जर कर दिया है। अतः साहित्य सृजन में विशेष रूप से काव्य जैसी संवेदनशील विद्या से युद्ध के त्रासद विम्बों का व्यक्त होना सहज स्वाभाविक और समकालिक यथार्थ को चित्रित करता है। 'महाभारत' और 'रामायण' के पौराणिक प्रसंग युद्ध परक काव्यों के लिए प्रेरक सिद्ध हुए हैं, साथ ही द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति विश्व इतिहास की एक युगान्तकारी घटना थी। वस्तुतः 1945 का वर्ष जर्मनी और जापान द्वारा शत्रु के समक्ष आत्म–समर्पण, हिटलर की आत्महत्या, मुसोलिनी की हत्या, संयुक्त राष्ट्र का अभ्युदय और पश्चिमी शक्तियों द्वारा एशिया की भूमि के एक भाग पर परमाणु बम के प्रयोग का वर्ष था। जिसने विश्व राजनीति के तनावों, चिन्ताओं और अनिश्चितताओं से आच्छादित वातावरण को जन्म दिया। विश्व युद्धों के प्रभाव से भी आधुनिक युग और आधुनिक हिन्दी कविता अछूती नहीं रह सकी। ऐसी स्थिति में जहां आधुनिक हिन्दी

के कवि ने कथानक तो पौराणिक लिए किन्तु उनमें आधुनिक युग की समस्याओं को अभिव्यक्त देने के लिए एक नई शैली को चुना। उनमें प्रमुख रूप से 'राम की शक्ति पूजा' सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, 'अन्धा युग' डॉ. धर्मवीर भारती, 'संशय की एक रात' डॉ. नरेश मेहता, 'एक कण्ठ विषपायी' दुष्यंत कुमार की रचनाओं में आधुनिक समस्याओं की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति मिलती है। 'राम की शक्ति पूजा' में निराला ने रावण को अत्याचार, क्रूरता एवं अन्याय के प्रतीक अंग्रेजी शासन के रूप में तथा राम को सत्य, न्याय एवं राष्ट्रीयता के संरक्षणकर्ता के रूप में प्रस्तुत किया है। आज के विश्व जीवन में भी विक्षिप्तता, अनास्था, कुण्ठा एवं उदासीनता दिखाई पड़ती है यही अनास्था महाभारत के अभिशप्त पात्र अश्वत्थामा में भी थी। इसी बर्बरता को चित्रित करने के लिए कवि ने 'अन्ध ा युग' के अश्वत्थामा को प्रतीक रूप में चुना गया है। 'असाध्यवीणा, 'पटकथा', 'अंधेरे में', 'मुक्ति प्रसंग', 'नाटक जारी है'। में आंशिकरूप से सशक्त एवं भावात्मक युद्ध को कुशलता के साथ व्यक्त किया गया है।

(2)– मूल्यांकन की उपलब्धियाँ– प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध की मूल परिकल्पना यह है कि आधुनिक हिन्दी कविताओं में युद्ध के सन्दर्भों को लेकर देशकाल और दार्शनिक तथा वैचारिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया गया है। युद्ध के मनोविकारों को लेकर जीवन को उदात्त और व्यापक स्तर पर देखने की चेष्टा की गई है।

1– युद्ध के समर्थक जिन्हें हम युद्धवादी कह सकते हैं, यह बात बड़े जोर–जोर से फैलाते हैं कि शान्ति और न्याय की स्थापना के लिए युद्ध जरूरी है युद्ध के बाद ही सच्ची शान्ति आती है। लेकिन सच तो यह है कि पराजित राष्ट्र कभी अपनी पराजय का समझौता नहीं कर सकता और वह अपना प्रतिशोध कभी न कभी लेता है। सैनिक हार का प्रतिशोध सैनिक विजय से लिया जाता है और इस प्रकार युद्धों का सिलसिला चलता रहता है– पाकिस्तान द्वारा बार–बार की जाने वाली सैनिक कार्यवाही इसी भावना का प्रतिफलन है।

2– मानव जाति के विकास के लिए युद्ध को एक अनिवार्यता के रूप में निरूपित किया गया है वह ये मानते हैं कि युद्ध से मनुष्य में साहस, अनुशासन, सहनशक्ति, आपसी भाईचारा, त्याग आदि उदात्त भावनाओं का विकास होता है।

3– 'शान्ति और युद्ध' को प्रत्येक धर्म स्थायी सिद्धान्त के रूप में स्वीकार करता है, इस सन्दर्भ में कोई भी ध र्म अपवाद नहीं है।

4–युद्ध का अनियन्त्रित रूप पूरी मानवता को भोगना पड़ता है। इससे मनुष्य के मूलभूत अधिकारों का उससे हनन होता है और मानव हितों पर प्रत्यक्ष और अप्रक्ष्य प्रभाव पड़ता है।

5–युद्ध से पूर्व आक्रमण करने वालों के साथ सद्भावना, मित्रता, समझौता और निःस्वार्थ सेवा का भाव दिखाकर उसे युद्धमय कार्यवाही से रोका जा सकता है।

6– आधुनिक हिन्दी कवि पौराणिकता से नहीं मनोवैज्ञानिक और आधुनिक युग चेतना से प्रभावित है।

7– रचनाकारों का मूल दृष्टिकोण परम्परावादी नहीं, बल्कि जनतांत्रिक है।

8– अभिजात्य संस्कृति के स्थान पर जनवादी और लोक संस्कृति को प्रश्रय दिया गया है।

9– बौद्धिक सामर्थ्य, वैज्ञानिक और दार्शनिक बोध आधुनिक काल के रचनाकारों का केन्द्रीय बिन्दु है।

10– युद्ध परक कविताओं की संरचना और शिल्प विधान गीत कविताओं से कुछ भिन्न प्रकार है।

11– आधुनिक कविताओं का युद्ध से सघन और बहुस्तरीय सम्बन्ध है। युद्ध घटना के रूप में नहीं है, बोध और

चेतना के रूप में रचनात्मक गहराई के आयाम को प्राप्त करता है। कवि आत्मगत संवेदना को युद्ध के प्रसंगों को फैलाने और संक्रान्त करने का प्रयत्न करता है।

(3)– मूल्यांकन की सीमाएं–

युद्ध के सभी तत्वों पर विचार करने से ऐसा प्रतीत होता है कि युद्ध मानव जाति की अनिवार्य घटना है। बड़े आश्चर्य की बात है कि ऐसा होने पर भी काव्य में वर्णित युद्धों पर समग्रता से मूल्यांकन परक शोध कार्य नही हुआ। ऐसे में इस शोध–प्रबन्ध में भी अधिकृत विचार व्यक्त कर पाना कठिन हो रहा है। वैसे तो भारतीय दर्शन में किसी भी बात को सत्य मानने के लिए अनेक प्रकार के प्रमाणों को स्वीकार किया जाता है किन्तु सांख्य दर्शन में केवल तीन प्रमाणों –'प्रत्यक्ष', 'अनुमान' एवं 'शब्द' को ही स्वीकार किया गया है। समस्या ये है कि अधिकृत शोध के लिए 'प्रत्यक्ष' और 'अनुमान प्रमाण' तो उपलब्ध ही नहीं हो सकते केवल 'शब्द प्रमाण' के आधार पर ही कुछ विचार किया जा सकता है। उसमें भी विडम्बना ये है कि कवि कल्पना और भावना के आधार पर काव्य रचना करते हैं। अतः उनके शब्दों को कैसे प्रमाण माना जाए। फिर भी ग्रन्थ में जहाँ कहीं वेद प्रमाणित ग्रन्थों जैसे–'रामायण', 'महाभारत' के शब्दों को प्रमाण मानकर चर्चा की गयी है उनको कोरी कल्पना मानना भूल होगी।

आधुनिक कवियों के लिए तो यह कहा जा सकता है कि उनके काव्य और ऐतिहासिक सत्य में सामंजस्य न हो किन्तु यह बात ऋत्वम्भरा प्रज्ञा सम्पन्न कवियों जैसे महर्षि बाल्मीकि जी एवं भगवान वेदव्यास के काव्यों रामायण एवं महाभारत पर लागू नहीं होती। ये कृति त्रिकालदर्शी होते हैं अतः वहाँ काव्य और इतिहास में एकत्व होता है। जब समाज का चारित्रिक पतन हो जाता है तो किसी भी आधार पर उसको युद्ध की विभीषिका से बचा पाने का उपाय समझा पाना असम्भव हो जाता है। भारतीय जनता के संस्कार, सभ्यता और संस्कृति तीनों ही इस समय नष्ट प्राय हैं। संस्कार (चित्त का आस्तिक भाव) मुगलों के शासन काल में ही नष्ट हो गया था, सभ्यता (समष्टि के प्रति कृतज्ञ भाव) अंग्रेजी शासन काल में बलिदान हो चुका था और बची–खुची संस्कृति (परम्परागत चारित्रिक प्रेम) आधुनिक राजनेताओं की आचरण हीनता और अदूरदर्शिता के कारण बलिदान होती जा रही है। ऐसे में युद्धों के बारे में क्या सच है क्या गलत है और आज के सन्दर्भ में आधुनिक कविता में उन्हें कैसे व्यक्त किया जाए यह वास्तव में कवि के लिए बहुत बड़ी चुनौती है। वैसे यह स्पष्ट है कि लोग अपनी आसुरी वृत्ति का परित्याग कर दैवी प्रकृति को ग्रहण कर लें तो युद्ध रोके जा सकते हैं। इस दृष्टि के पक्ष में इस शोध–ग्रन्थ में काफी कुछ कहा गया है।

परिशिष्ट

अ- आलोच्य कृतियों की सूची
ब- सहायक सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची
स- संस्कृत सहायक सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची
द-अंग्रेजी सहायक सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची
य-पत्र-पत्रिकाएँ

परिशिष्ट

1—आलोच्य कृतियों की सूची
2—सहायक सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची
3—संस्कृत सहायक सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची
4—अंग्रजी सहायक सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची
5—पत्र—पत्रिकाएँ

अ— आलोच्य कृतियों की सूची—

1—राम की शक्ति पूजा —निराला
2—अंधायुग—धर्मवीर भारती
3—संशय की एक रात—नरेश मेहता
4—एक कंठ विषपायी —दुष्यन्त कुमार
5—कुरुक्षेत्र —रामधारी सिंह दिनकर
6—लकड़ी का बना रावण —मुक्तिबोध
7—जिन्दगी का रास्ता —मुक्तिबोध
8— जमाने का चेहरा — मुक्तिबोध
9—वीरबाला कुँवर अजबदे पवाँर —डा0 महेश दिवाकर
10—वीरांगना अवन्तीबाई लोधी— धम्मन सिंह 'सरस'
11—क्रान्तिमहारथी—धर्मपाल अवस्थी
12—अंधेरे में —मुक्तिबोध
13—असाध्यवीणा—अज्ञेय
14—पटकथा—सुदामा प्रसाद पाण्डेय 'धूमिल'
15—मुक्तिप्रसंग —राजकमल चौधरी
16—नाटक जारी है —लीलाधर जगूड़ी

ब—सहायक संदर्भ ग्रन्थों की सूची—

1—नई काव्य प्रतिभाएँ —उषा गुप्ता
2—राष्ट्रीय चेतना के प्रेरक स्वर —प्रेम लता मोदी
3—चर्चित राष्ट्रीय गीत—नरेश चन्द्र चतुर्वेदी
4—कारगिल की हुँकार—डा0 सुनील जागी, रजेश जैन 'चेतन'
5—देशभक्ति की कविताएँ —नरेन्द्र सिंन्हा
6—बाँग्ला विजय —बृजराज सिंह तोमर
7—यन्त्र युग —हरि जोशी
8—मेरा देश बुलाता होगा —शान्ति स्वरूप 'कुसुम'
9—काव्य परम्परा और नई कविता की भूमिका – डा0 (श्रीमती) कमल कुमार
10—समकालीन कविता के बारे में —नरेन्द्र मोहन
11—मानव मूल्य और साहित्य —धर्मवीर भारती
12—तुलसी की सामाजिक चेतना —रमेश कुन्तल
13—आज का हिन्दी साहित्य संवेदना और दृष्टि—डा0 रामदरश मिश्र
14—गीतम—वीरेंन्द्र मिश्र

15—उर्मिला —बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

16—नये प्रतिनिधि कवि —हरिचरण शर्मा

17—कितनी नावों में कितनी बार —अज्ञेय

18—धूप के धान —गिरिजा कुमार माथुर

19—चाँद का मुँह टेढ़ा है —मुक्तिबोध

20—विश्वास बढ़ता गया — शिवमंगल सिंह सुमन

21—उदय पथ — श्री शील

22—नील कुसुम —रामधारी सिंह दिनकर

23—महाप्रस्थान —नरेश मेहता

24—युगचारण दिनकर — सवित्री सिन्हा

25—लुकमान अली तथा अन्य कविताएँ —सौमित्र मोहन

26—नईकविता में राष्ट्रीय चेतना डा0 देवराज पथिक

27—माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में राष्ट्रीयता —सुरेन्द्र यादव

28—मुक्तिबोध रचनावली —मुक्तिबोध

29—हुँकार — रामधारी सिंह 'दिनकर'

30—चक्रवाल —रामधारी 'दिनकर'

31—बेला — सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

32—आधुनिक हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियाँ —डा0 ओमप्रकाश शर्मा

33—अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति — डा0 डी0 सी0 चतुर्वेदी

34—पिघलते पत्थर — रांगेय राघव

35—तार सप्तक —पूँजीवादी समाज के प्रति —अज्ञेय

36—रामराज्य — डा0 बलदेव प्रसाद मिश्र

37—क्रान्ति दूत सुभाष — विनोद चन्द्र पाण्डेय

38— देहान्त से हटकर —शीत युद्ध —कैलाश बाजपेयी

39—रश्मिरथी —रामधारी सिंह दिनकर

40—दिनकर का रचना संसार —डा0 छोटेलाल दीक्षित

41—ओ अप्रस्तुत मन — भरत भूषण अग्रवाल

42—अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति — बी0 एल0 फड़िया

43—अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध —सुरेशचन्द्र पंत

44—गजानन माधव मुक्तिबोध सृजन और शिल्प —डा0 रणजीत सिंह

45—शस्त्र परिचय —मेजर श्यामलाल

46—उन्मुक्त — सियाराम शरण गुप्त

47—तालाब में डूबी छः लड़कियाँ —हथियार —विष्णु नागर

48—कल्पान्तर —यन्त्र दैत्य —गिरिजा कुमार माथुर

49—परशुराम की प्रतीक्षा — रामधारी सिंह दिनकर

50—बोले रक्त शहीद का —बलवीर सिंह करुण

51—युद्ध कौशलात्मक भूगोल, यौद्धिक, अर्थशास्त्र, सैन्य मनोविज्ञान नागरिक सुरक्षा और भारतीय सैन्य कनून का सरल अध्ययन — डा0 बी0 के0 टण्डन और चौधरी नरेन्द्र सिंह

52—किस्से अरबों हैं —बन्दूक मनोविज्ञान — श्री सोमदत्त

53—कला और संस्कृति — डा० वासुदेव शरण अग्रवाल
54—संस्कृति के चार अध्याय —रामधारी सिंह 'दिनकर'
55—समय देवता —दूसरा सप्तक —नरेश मेहता
56—सिद्धान्त और अध्ययन —डा० गुलाब राय
57—आधुनिक हिन्दी काव्य—डा० भागीरथ मिश्र, डा० बलभद्र तिवारी
58—आधुनिक महाकव्य —विश्वम्भर 'मानव'
59—नील—रामधारी सिंह दिनकर
60—साहित्य कानया परिप्रेक्ष्य — डा० रघवंश
61—धारके इधर—उधर —हरिवंश राय बच्चन
62—जागा मेरा देश — विन्ध्य कोकिल भैयालाल व्यास
63—अन्तर्राष्ट्रीय सम्बनध —पी० रसतागी
64—भारत की विदेश नीति —डा० के० पी० मिश्र
65—निराला —ओंकार शरद
66—हिन्दी प्रबन्धों में जीवन दर्शन —डा० गायत्री जोशी
67—रामधारी सिंह दिनकर और उनका —तारक नाथ बाली कुरूक्षेत्र
68—आधुनिक हिन्दी कविता सर्जनात्मक — डा० रामदरश मिश्र सन्दर्भ
69—बीसोत्तर कविता के हीरक हस्ताक्षर —डा० दुर्गा प्रसाद ओझा
70—असाध्यवीणा —मूल्याँकन —विनोद कुमार मंगलम —विनोद कुमार मंगलम
71—असाध्यवीणा और अज्ञेय —रमेशचन्द्र शाह
72—सामाजिक मनोविनोद —रामबाबू गुप्त
73—जयभारत —मैथिली शरण गुप्त
74— सैरन्ध्री—मैथिलीशरण गुप्त
75— हिन्दी काव्य पिछला दशक —गोबिनद रजनीश
76—कविता का पूरा दृश्य माधव हाड़ा
77—चिन्ता —डा० हरद्वारी लाल शर्मा
78—समाज मनोविज्ञान —हंसराज भटिया
79—असामान्य मनोविज्ञान —हंसराज भटिया
80—नई कविता में आक्रोश —पुष्पा भार्गव
81—अंतस्तल का पूरा विपलव—निर्मला जैन
82—अनमोल वचन महापुरुषों की अमृतवाणी
83—राष्ट्रीय प्रतिरक्षा —हरवीर शर्मा
84—स्वतन्त्र्योत्तर हिन्दी —डा० गोविन्द रजनीश कविता
85—साहित्यिक निबन्ध —डा० किशोर काबरा
86—कुरुक्षेत्र—रामधारी सिंह दिनकर
87—प्राणगीत—नीरज
88—प्राचीन—उमाशंकर जोशी
89—आधुनिक कला नवीन सांस्कृतिक चेतना —डा० राजपाल शर्मा
90—जयप्रकाश वध —मैथिलीशरण गुप्त
91—विकलांग विभूतियों की जीवन गांथाएँ—विनोद कुमार मिश्र

92—लावा और फूल—शील
93—धर्म और समाज—डा0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन
94—त्रिजटा—शिववचन चौबे
95—युद्ध—मैथिलीशरण गुप्त
96—अग्नि संभवा—बृजराज सिंह तोमर
97—भारत माँ की लोरी—देवराज दिनेश
98—युद्धोपरान्त—वीर सिंह
99—नयी कविता की लम्बी कविताएँ —डा0 रामसुधार सिंह
100—कविता की तीसरी आँख —प्रभाकर श्रोत्रिय
101—रंगमंच लोकधर्मी नाट्य धर्मी—डा0 लक्ष्मी नारायण भरद्वाज
102—चिंतामणि—रामचन्द्र शुक्ल
103—परशुराम की प्रतीक्षा—रामधारी सिंह दिनकर
104—भारत का परमाणु विस्फाटे —रामकृष्ण सुधारक
105—आधुनिक नीति काव्य का शिल्प —विधान मंजु गुप्ता
106—हिन्दी प्रबन्धों में जीवन दर्शन डा0 गायत्री जोशी
107—नई कविता की भाषा काव्य शास्त्रीय सन्दर्भ में— डा0 हरिप्रसाद पाण्डेय
108—छायावादोत्तर काव्य प्रवित्तियाँ — टी0 एन0 मुरली कृष्ण
109—समकालीन हिन्दी कविता —डा0 देशराज सिंह भाटी
110—कारगिल संघर्ष—डा0 कृष्ण कुमार रत्तू
111—अभिशप्त शिल्प—डा0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित 'ललित'

स— संस्कृत सहायक सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1— रामायण भाग—एक— वाल्मीकि
2— रामायण भाग—दो— वाल्मीकि
3— काव्यादर्श— दण्डी
4— काव्यालंकार—सूत्रवृत्ति—वामन
5— मार्कण्डेय पुराण— गीता प्रेस गोरखपुर
6— विष्णु पुराण— गीता प्रेस गोरखपुर
7— शौनक वृहद देवता— चौखम्बा संस्कृत सीरिज
8— काव्य प्रकाश—मम्मट
9— महाभारत—विराट पर्व—श्रीपाद दामोदर सातवलेकर
10— महाभारत—भीष्म पर्व—श्रीपाद दामोदर सातवलेकर
11— महाभारत—द्रोण पर्व—श्रीपाद दामोदर सातवलेकर
12— महाभारत—शल्य पर्व—श्रीपाद दामोदर सातवलेकर
13— महाभारत—शान्ति पर्व—श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

द— अंग्रेजी सहायक सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1— इण्टरनेशनल रिलेशन्स— श्लीचर
2— पॉलिटिकल आइडियाज— सी0डी0 ब्रंग्स
3— द बैग ग्राउण्ड आफ इण्टरनेशनल रिलेशन्स— चार्ल्स हौज एस

4– एम्पेरीलिज्म ए स्टडी–जे0ए0 हॉबसन

5– इंडिया एण्ड द कोल्ड वार– के0पी0एस0 मेनन

6– साइक्लॉजी ए स्टडी आफ मेण्टल लाइफ–आर0ए0 वुडवर्ड

7– थ्योरी एण्ड मैथेड इन द सोशल साइंस–ए0एस0 रोज

य– पत्र–पत्रिकाएँ

1–नीति–संपा0 –सुरेन्द्र बधवा, अक्टूवर 1999

2–दैनिक प्रताप –समाचार पत्र, 1962

3–राष्ट्रीय सहारा –" "2002

4–आज–समाचार पत्र, 2001

5–राष्ट्र धर्म–संपा–आनन्द मिश्र 'अभय' फरवरी 1999

6–विश्व शान्ती परिषद पुस्तिका –जनवरी 1981

7–अखण्ड ज्योति –अप्रैल–1973 (मासिक)

8–नीति–(मासिक) भारत विकास परिषद

9–राष्ट्र धर्म –जनवरी 2000

10–अहिंसा का अमोघ अस्त्र –1984 –यशपाल जैन

11–नित्यनूतन (पाक्षिक) –अगस्त 2000

12–दैनिक आज–जन0 2000

13–अखण्ड ज्योति–अगस्त 1981 (मासिक)

14–आलोचनात्मक (त्रैयमासिक) सित0 1968

15–राष्ट्रवाणी –सित0, अक्टूबर 1968

16–हंस–मार्च 1947

17–नीति–(मासिक)– अक्टूबर 1999

18–नित्यनूतन–जून 2000

19–राष्ट्रधर्म–मार्च 2002

20–विकल्प–(वार्षिक)

21–आजकल–मधुवती

22–भाषा–अभिप्राय

23–गगनांचल–सम्मेलन पत्रिका

24–आलोचना –वैचारिक्त

25–समालोचक –साक्षात्कार

26–नया प्रतीक–अक्षय

27–युवा, रश्मि–शिल्वर

28–संचेतना –वर्तमान साहित्य

29–पूर्णिमा–हिन्दुस्तान

30–जनपद आन्दोलन अंक –नव भारत टाइम्स

31–विश्व भारती पत्रिका –नई दुनिया

32–परिषद पत्रिका –जनसत्ता

33–परामर्श–सरिका

34–कादम्बिनी–मासिक, संपा–राजेन्द्र अवस्थी अक्टूबर 1976